श्रीकृष्ण बांकेविहारी ।

भूमिका ।

महाशय,

यह हमारी प्रथम भेंट है जिसे ले हम आपलोगोंकी सेवामें उपस्थित होते है, आशा है कि आपलोग इसे ग्रहण कर हमें उत्साहित करेंगे। इस उपन्यासका प्लौट Plot हमारे शिक्षक, उपदेशक तथा गुरु स्वर्गवासी श्रीमान् पण्डित सेवाराम तिवारीजीने संक्षेपसे कहा था जिसे हमने उपन्यासाकारमें लिख दिया है। यह उपन्यास उनहीका चिन्ह स्वरूप है। हम पण्डित धनुषधारी तिवारी बी० ए तथा पण्डित केशवराम भटजी को अनेक धन्यवाद देते है जिन्होंने इस पुस्तकके लिखनेमें हमें सहायता दी है। हम बाबू रामकृष्ण वर्म्माजी को भी धन्यवाद देते है जिन्होंने इस पुस्तकको छाप कर प्रकाशित किया है। पुस्तक छापनेका अधिकार भी हमने उन्हीं को दे दिया है।

आपका प्रेमाभिलाषी

गिरिजानन्दन तिवारी,

विहार।



प्रथम अध्याय ।

हमारा उपान्यास सन १७८० ईस्वीके फरवरी माससे आरम्भ होता है ।

कूल कछार कुञ्ज, जहां देखिये चहलपहल दिखाई देती है। नाना भांतिके फूल फूलकर अपने अपने तरङ्गोसे जगतको आनन्दित कर रहे हैं। भ्रमरगण आमकी डालियों पर मधुमाते हो गूंज रहे है। प्रेमो अपने प्रियपात्रसे मिलनेको उत्कंठित हो रहे है। पाठक आप यह न समझें कि आज कलकी तरह उस समय भी प्लेगका रोग वसन्तमें भारतको गारत करता था। नहीं, उस समय वृद्धसे बालक, नर से नारी, मनुष्यसे पक्षी तक, और कहां तक कहें वृक्ष फल फूल सबही इस ऋतु में मस्त हो जाते थे।

आज राय दुनीचन्दके यहां वसन्तका जलसा जमा हुआ है। जलसे का हाल लिखने के पहले हमें राय साहबका परिचय पाठकोंको दे देना अवश्य है। रायसाहबका रङ्ग गोरा, बाल अलर्वट फेशन, रङ्गीली आंखें, बदन नाजुक, वय अनुमान २० वर्ष थी। बड़े धनवान गयानिवासी राय

मानिकचन्द्रजीके पुत्र थे। हालमें पिता के परलोक सिधारने पर आप उनकी कुल सम्पत्तिके मालिक हुए थे। परिवारमें केवल माता स्त्री और एक वर्षका बालक था। इनही के यहां आज शहरकी नामवर नामवर रंडियोंका गाना हो रहा है। मित्रगण भी गानेका मज़ा लूट रहे हैं। बीबी चुन्नी की वाहवाही हो रही है, सबके सब चुन्नी के हाव भाव पर लट्टू हो रहे हैं। राय दुनीचन्दका कहनाही क्या है तन मन धन अर्पण करनेको तय्यार हैं। दो बजते बजते गाना समाप्त हुआ। निमंत्रितगण अपने अपने घर गये। रायसाहब भी सेज पर जा लेटे, पर उन्हें नीद क्यों आने लगी? आँख बन्द करतेही चुन्नीजानकी मूर्त्ति सामने आ खड़ी हुई। वही गाना वही भाव, सब बातें याद आने लगीं। करवट बदलते रात बीत गई। चान्दनी मलीन हो चली, चक्रवाककी जोड़ी नियराने लगी, तारागण पीले हो चले, पक्षी सब चीत्कार करने लगे, पूर्व्व दिशामें प्रकाश भी फैल गया पर हज़रतकी नींद न आयी।

दूसरा अध्याय।

जैसे तैसे दिन बीता सन्ध्या हो चली। राय साहबने साबुन मलकर स्नानकिया। सुन्दर रेशमी कोर की धोती, क़मीज़ पर रेशमी कोट पहन, अलबर्टवालोंकी सुदरी बना ऊपर टोपी धर, घड़ीमें सोनेकी चेन लगा, पुट्ट डाल,

अतर लगा पान चाभ अपने यार गोपीनाथको साथ ले हवा खाने चले। जिस समय आप चुन्नोके कोठेके नीचे पहुँचे कुछ अँधेरा हो गया था। चटसे सबकी नज़र बचाकर कोठेपर चढ़ गये। वो चुन्नोकी मांने उठकर राय साहब को सलाम किया और चुन्नोसे भी सलाम कराया। आपलोगोंकी गुफ़्तगू लिखने के पहले हमे चुन्नोजानके बारे मे कुछ लिखदेना ठीक है। चुन्नोका रङ्ग गोरा काले काले लम्बे बाल, बदन सुडौल, क़द नाटा था। वयस अनुमान १९ वर्षका था। चुन्नोकी मां ने हँसकर पूछा "कहिये मिजाज तो अच्छा है ?"

रा०—जी हां, पर चुन्नोके विना चैन कहां ?

चु०मां—(हँसकर) क्या ख़ूब, अगर यही बात है तो चुन्नोको नौकर रख लोजिये।

रा०—माहवारी तनख़ाह क्या लोगी ?

चु०मां—अजो पर्सो ख़ां बहादुरके भतीजेने २००) माहवारी देनेका पैग़ाम भेजा था पर चूंकि नजीर मीयां इन्हें (चुन्नोको देखाकर) पसन्द नहीं, इससे इनकार किया और आपसा कौन है, चुन्नो भी आपको चाहती है आप २००) ही दे दीजिये, पर नाच मुजरा माफ रहेगा।

रा०—लीजिये २००) एक महीनेका पेशगी। आज रातको १० बजे हम आयेंगे। यह कह रायसाहबने घरका

रास्ता लिया, और यहां मां बेटीमें यों बातें होनें लगीं।

मां॰—देखा, मुयेको कैसा चकमा दिया ?

चु॰—पूरा उल्लू फँसा है।

मां॰—पहले उससे फ़रमाइश मांग लेना तब पीछे कोई बात करना।

इधर मां बेटीकी बातें हो रही थीं उधर राय साहब घर जा भोजनकर घर में कहकर चले आये कि हमें आज गोपीनाथकी जलसे में शरीक होना है इससे घर सोने न आऊंगा। किवाड़ बन्द रहें।

बंगले पर आ कपड़े से लेस हो नौकर साथ ले आप चुन्नीके मकानपर चले, वहां पहुँच कर देखते हैं तो चुन्नी-जान इनहीके आसमे बैठी है। धानी साड़ी पहने हुए है। बालोंकी लटें उनकी गोरे मुखड़े पर लटक रहीं है।

सब किनारे हुईं, किवाड़ा बन्द हुआ, चुन्नीको अकेला पा मस्त हो राय साहबने कईएक बोसे लिये। और चुन्नीने भी बोसेका उत्तर बोसेहीसे दिया। फिर क्या था चुन्नी धाक़िया बनकर शराब पिलाने लगी। दूनीचन्द भी मस्त हो गये। चुन्नीने जो जो मागा राय साहबने देनेका क़रार किया। हाथा पाईं होने लगी। उसके बाद क्या हुआ इसको लिख हम अपनी लेखनीको कलङ्कित नहीं किया चाहते। पाठक, कहिये उसके बाद क्या हुआ, आपका

समझमें आया वा नहीं ! यदि न आया हो तो उपन्यास रख दीजिये; इसमें मेरा दोष नहीं, वा किसी रङ्गीले पाठकसे पूछिये ।

तीसरा अध्याय ।

कभी चुन्नी रायसाहबको मुजरा सुनाती, कभी मुजरेके नखरे में फंसाती, कभी और कुछ रङ्ग लाती, कभी रूठ जाती, कभी वस्ल से किनारा खैंचती और आंखके अन्धे गांठके पूरे उसे मनाते । दूनीचन्दको चुन्नीने पूरे तौर पर फांस लिया । पहले मोतियोंकी कौड़ी मंगाई सो उसने ला दी । कभी चौपड़ कभी ताशकी बाजी लगती, कभी बुलबुल कभी तीतर की लड़ाई होती, कभी आम कभी केला भेजता, कभी बागोंकी सैर कराता, कभी कोकेन खिलाता, यानि रात दिन दुनीचन्दका रहना वहीं होने लगा। न मां की सुध, न जोरूकी पर्वाह, न लड़कीका ख्याल था, ध्यान था केवल एक चुन्नीका। ज़मीनदारीकी आमदनी कम हो चली, पासका रूपया निबट गया। व्यय अधिक होने लगा, कर्ज़की नौबत पहुँची । धड़ाधड़ तमस्सुक लिखा जाने लगा, पर दुनीचन्दको कुछ न दिखाई देता था। इसी तरह कईएक महीने बीते, अब दुनीचन्दको चुन्नीके फंदेमें छोड़ उनके घरपर चलिये, देखें वहा क्या रङ्ग नज़र आता है ।

चौथा अध्याय।

दुनीचन्दकी स्त्री का नाम चम्पा था। जब चम्पा १२ ही वर्षकी थी कि ईश्वरेच्छा से पुत्र जनी। पुत्र का नाम लक्ष्मीचन्द रक्खा गया। अब लक्ष्मीचन्द एक वर्षका है और चम्पा १४ वर्षकी है। कम वयसमें पुत्र हो जाने से चम्पाकी सुन्दरतामें कुछ भी कमी न हुई थी, पुत्रका लालन पालन चम्पाकी सास याने दुनीचन्दकी मां करती थी। दाई दूध पिलाने पर नौकर थी।

चम्पाको भी दुनीचन्दकी बदचलनीका हाल ज्ञात हो गया था। बिचारी रात दिन अपने पतिका हाल सुन सुन कुढ़ा करती थी। पाठक, काम बड़ा प्रबल है, जिसने योगिराज शिवजी, ब्रम्हा, आदि ऋषि मुनि जो फल मूल खा समय व्यतीत करते थे उनको भी सताया है; दुबला कुत्ता भी जिसके गलेमें घड़ेका घेरा पडा है, शरीरमें पिल्लू पड गये हैं, मृतप्राय कुतियाके साथ साथ फिरा करता है, तो चम्पा जो कि स्त्री थी और स्त्रियोंकी पुरुषसे अठगुणी कामचेष्टा रहती है उसपर खाने पीनेका सुख, फिर काम क्यों न सतावे? चम्पा रात दिन कामाग्निसे जला करती थी। इसने दुनीचन्दको राहपर लानेकी बड़ी बड़ी युक्तियां कीं पर वे ऐसे बहके थे कि सिवाय चुन्नीके चम्पा सुहाती ही न थी। रंडीबाज़ोंकी स्त्रियों का जो हाल सदा से होता

आया है वही हाल चम्पाका भी हुआ। चम्पाकी दाईका नाम पर्वतिया था। यह चम्पाकी विश्वासपात्री थी। इसीकी दूतीपनेसे चम्पा भी बिगड़ गई। इसके पड़ोसमें एक माली रहता था। उसीसे चम्पाकी आशनाई हो गई। उधर दुनीचन्द चुन्नीसे मजा उड़ाते थे, इधर चम्पा रमललवा मालीसे जवानीका सुख लूटने लगी। चम्पाका शरीर हर स्थानसे रसीला था। रङ्ग रूप बास सब था, पर भ्रमर दुनीचन्द इसे छोड़ धतूरे रूपी चुन्नीपर मरकते थे। यदि दुनीचन्द अपनी स्त्रीसे प्रेम करते तो बेशक उन्हें युवावस्थाका सुख प्राप्त होता। जैसे राय साहबको चुन्नीने फांस लिया, तैसे ही रमललवाने भी चम्पाको गांठ लिया। रमललवा का लोहा चम्पा पर जम गया।

पाचवां अध्याय।

चम्पाको रमललवा से पूरा प्रेम हो गया, पर छिपा छिपा होनेके कारण कभी कभी भेंट होनेमें बाधा होती थी। अब दोनोको यह धुन समाई कि बाहर भाग चलें जिसमे यह बाधा मिट जावे। रमललवाने प्रस्ताव किया कि तुम अपने कुल गहने लेकर चलो चलो। चम्पा राजी हो गई। संयोग पा चम्पा अपने गहने और जवाहिरात, जो उसके कब्जे में थे ले, रमललवाके साथ चम्पत हुई।

जिसमें कोई पीछा न करे, यह समझ दोनोंने सड़क छोड़ पगडंडी का रास्ता लिया। चम्पा, जिसे पैदल चलनेका अभ्यास कभी न था दोही कोस जाते जाते थक गई और उसके पैर फूल गये। इससे बैठ गई। लाचार रमललवा पासके गांवसे डोली कहार खोज लाया। उसपर चम्पाको बिठा दूरकेस्टेशनका रास्ता लिया। रेलपर सवार हो दोनों आरा पहुँचे और वहा मकान भाड़ा ले रहने लगे। अभी महीना भर भी न हुआ होगा कि रमललवाका जी चम्पासे भर गया। अब वह ग़फूरन खानगीके यहां आने जाने लगा। दूसरा महीना अभी पूरा होने भी न पाया था कि इनदोनोंमे खटपट हो गई। एक दिन रातके समय चम्पाको सोता छोड़ कुल माल ले रमललवाने अपनी राह ली। जब चम्पा सो कर उठी तो रमललवा नहीं! सन्दूक देखा तो ख़ाली! लगी फूटफूट कर रोने। अच्छे घरकी स्त्री, कभी दुःख देखा नहीं, पागल की तरह हो गई। सुध बुध सब जाती रही। क्या करे कुछ बात समझमें न आती थी। कुछ दिन चढ़े मकान मालिकका आदमी किराया मांगने आया। चम्पाके पास क्या था जो देती, टाल बटाल करने लगी। नौकरने जा मकान-मालिक को, खबर दी। उसने शीघ्रही आ रुपया मांगना शुरू किया; पर चम्पाके पास जो था वह तो रमललवा लेकर भाग गया था, दे तो कहांसे? चुप रह

गयी। मकान मालिकने जो वर्तन बिछावन कपड़े उसके पास थे छीन लिये और मकानसे बाहर निकाल दिया। चम्पाने रोते रोते एक तरफ़को राह ली। चम्पा रोओ, यह तुम्हारे बुरे कार्य्य का फल है। कुलकी मर्य्यादाको तिलाञ्जली देनेहारीं, यार के साथ भागनेवाली स्त्रियोंकी यही दशा होती है। यह दशा तुम्हारी ही नहीं हुई है वरन बहुतेरियोंकी यही दशा हुई है कि जब यार का जी भर गया, फिर क्या, उसने उसे त्याग दिया और आप नौ दो ग्यारह हुए। चम्पा। इतनेहीमें तुम्हारे दुःखका अन्त नहीं, आगे और बड़े बड़े दुःख भोगने होंगे। ठीक है "जस करनी तस पार उतरनी"।

छठवां अध्याय।

चम्पाको जब मकान-मालिकने निकाल दिया तो उसने रोते रोते एक तरफको राह ली। कहां जायगी, क्या करेगी, उसे इसकी कुछ सुध न थी। घरसे न कभी निकली, न आराही नगरमें उसका कोई परिचयी था कि जिसे वह अपनी कहानी सुनाती। जिधर पैर उठा, आगे बढ़ती चली। राहमें किसीने देख हँस दिया, किसीने सीटी बजा दी, किसीने ताली बजाई, कोई हँसकर पूछ बैठा "अजी तुम्हारा मकान कहां है?" कोई उससे कुकर्म्म करने के बदले रुपया देने को तय्यार हुआ। चम्पाकी सुन्दरता देख

विलासियोंके मुंहमें पानी भर आता था। पर चम्पा किसी बातका उत्तर न दे सीधी चली जाती थी। यद्यपि यार के संग निकल आयी थी पर तौभी अभी वह ऐसी न हो गयी थी कि इन दुष्टोंके फेरमें पड़ जाये। आगे चलकर देखें इसके दुष्ट कर्म्मोंसे और क्या क्या फल इसे भोगने पड़ते हैं।

आरा नगर की छोरपर एक धर्म्मशाला तो थी, पर वहां पर सदाव्रत का ठिकाना न था। टूटा फूटा एक घर मात्र था। इसकी निकट बग़लमें सटा हुआ शिवजीका स्थान था, नीचे एक नदी बहती थी, किन्तु समयके फेरसे अब नदी भी सूख गयी थी। नदीमें स्वामी ज़मीनदारों ने हल जोतवा डाला था; गायके चरने तककी जगह न छोड़ी थी। पूर्व्व ओर एक तालाव था जिसकी चारो तरफ पक्की चहार-दीवारिया थीं; तब उसका जल भी स्नान करने योग्य न था। उसीसे नहा कूएपर केवल जलमात्र पी, निराहार धर्म्म-शाले के एक कोनेमें पड रही। रातभर नींद न आयी। एकतो भूमिमें सोनेका अभ्यास नहीं, दूसरे मच्छड़ोकी भन-भनाहट, चम्पासी सुकुमारीको नींद आये तो कहासे? पेट-में चूहे भी कूदते थे। पेटही बड़ा पापी है। जितने कर्म्म है सब पेटही कराता है। उसने कईएक वेर रातको चाहा कि तालावमें डूबकर प्राण त्याग दें, पर आशाने उसे ऐसा करनेसे रोक दिया। आशाही एक ऐसी वस्तु है जिसकी विना मनुष्य

एक क्षण भी नहीं जी सकता। पुत्र पिता स्त्री सब मरने पर मनुष्य आशाहीके बल बचता है। आप बूढ़ा हो जाता है किन्तु आशा बराबर नवीन बनी रहती है। मरनेतक भी यह पिंड नहीं छोड़ती। इसीने चम्पाको आत्मघात करने न दिया। वह सोचने लगी कि यदि आज भोजनकी न मिला तो कल अवश्यही मिल जायेगा। पाठक, यह वहीं भूखी पड़ी है, कोई पूछनेवाला तक नहीं है।

भोर होते चम्पा ने फिर चलना आरम्भ किया। अनु-मान एक कोसके गयी होगोकि मारे भूख प्यासके थक कर बैठ गई। फूट फूट कर रोने लगी। मारे लाजके किसीके पूछने पर भी कुछ न कहती थी। ऐसेही रोते रोते १० बज गये। उसी समय एक स्त्री पालकी पर आयी। कहार भी ग्रीष्मके तापसे तापित हो उसी स्थानमें बैठ गये। चम्पाको रोते देख उस आयी हुई स्त्रीके चित्तमें कुछ दया आयी। उसे पास बुलाकर हाल पूछने लगी। चम्पाने भी संक्षेप में अपना हाल बता दिया किन्तु घर और पति का पता ठीक न कहा। आयी हुई स्त्री की अवस्था कोई ५५ वर्षकी होगी, ताड़ गई, सोची कि सोनेकी चिड़ियाको किसी ढबसे फँसाना चाहिये। बस एक चालाकी सोच जाल फैलाया, और बोली कि, मेरा घर काशीजी में है। मेरी एक कन्या ठीक तुम्हारेही अनुहार की थी, पर काल के गाल में पड़ गयी।

जो तुम मेरे घर चलती तो मैं तुम्हें अपनी कन्या बनाकर रखती। ईश्वरकी दयासे मुझे किसी बातकी कमी नहीं है।" चम्पाने आगा पीछा न सोच उसकी बात मान ली और उसके साथ चलने को तय्यार हो गयी। आयी हुई स्त्रीने कुछ मेवे अपने पाससे निकाल उसे खानेको दिये और कहारोंसे पानी मंगा उसे पिलाया। यथा समय सब स्टेशन पर पहुँचे। टिकट सेकेण्ड क्लासका ले रेलपर सवार हुईं। कुशलपूर्व्वक बनारस पहुँची। पाठक, अब चम्पाको यहां कुछ दिनके लिये छोड चलिये, देखें रायसाहब की क्या दशा है, जिन्हें उनकी चोकी भाग आनेके पहलेही छोड़ आये है।

सातवां अध्याय।

"भड़ुआ किसका साला, रंडी किसकी जोय" यह कहावत भी ठीक हुई। जब चुन्नीने देखा कि दुनीचन्दपर पूरा अधिकार हो गया, तो दूसरे तीसरे भी आने लगे। दुनीचन्दसे जो मिलने वाला है मिलेहीगा बस यह सोच चुन्नी कभी मुजरा, कभी शिर में पीड़ा, कभी बुखार, कभी कुछ कभी कुछका बहाना कर राय साहबको टलावा दे दूसरोंसे मिलने लगी। फरमाइशमें जहां देर हुई, बस फिर क्या, ऐसी रूठ जाती कि उनके लाखों उपाय करनेपर भी न मानती और अकेली जा पड़ती। यह हारकर घर चले आते। चुन्नीकी फटकार बढ़तीही जाती थी, और इधर

इनका ऋण भी बेतहाशा बढ़ने लगा। आज मेवेवाले तक़ाज़ाको आते, कल डाक्टरका बिल पहुँचता, भोरको कपड़ेवाले मांगते, सन्ध्याको बर्फवाले तक़ाज़ा करते। किसीने तमस्सुक को नालिश की नोटिस दी, किसीने दो चार खरी खरी सुनाई, यहां तक कि उनका दिनको घर से बाहर निकलना भारी हो गया था।

रायसाहबको नशेने बेतहाशा दुर्बल कर दिया था, दिन भर आप नशेहोमें चूर रहते थे। जब आप सोकर उठे पैख़ाने से छुट्टी पा पहले अफीम खा लेते थे तब जल-पान किया फिर भोजन तक बराबर दमपर दम गांजा झोंका करते थे। भोजनकर दो पहरको आराम करते थे। सोकर उठने पर मदक चलती थी। फिर शामको शराब पीना तो अवश्यही था। दूसरे सूजाक, गर्मी, बाघी एक न एक बीमारी बराबर बनीही रहती थी जिससे शरीर मृतप्राय हो गया था।

एक दिन आप चुन्नीके यहां पहुँचे तो वहा देखते क्या है कि वह बैठी एक मनुष्य से हँसी कर रही है, इन्हें यह देख बड़ा रंज हुआ। चुन्नीने इनकी कुछ पर्वाह न की, उससे अठखेलियां करतीही रही। रायसाहबसे रहा न गया आपेसे बाहर हो गये, कुछ कहही बैठे। चुन्नीने भी इनको मुहतोड़ जवाब देना शुरू किया। यहांतक नौबत पहुँची कि चुन्नीने रायसाहबको मकान से निकल जाने कहा।

क्रोध से भरे घर आये, जैसे तैसे रात बीती। भोर होतेही ज्ञात हुआ कि चम्पा गायब। थोड़ी देरमें रमल्लवाके भी भाग जानेका हाल ज्ञात हुआ। यह समाचार सारे नगर में फैल गया कि राय दुनीचन्द की स्त्री रमललवा मालीके साथ भाग गयी। नगर भरमें जिससे सुनिये यही चर्चा कर रहा है। किसीने कहा ठीक हुआ, "अजी दुनीचन्दने तो अपनी स्त्रीको एक दम छोड़ही दिया।" किसीने कहा "चम्पाको ऐसा न चाहता था, पतिके अपराध करने पर भी स्त्रीको कुलकी मर्य्यादा त्यागना ठीक नहीं।" हज़ारों तरह की बाते होती थीं। जिसके जो जीमें आता था, कहता था। रायसाहब भी मारे लाजके समाजमें मुंह दिखाना न चाहते थे। चुन्नीने भी निकाल दिया। चम्पा भी भाग गयी। सोचा कि जमीनदारी किसी के हाथ में देदेना चाहिये, जो पुत्रके वयःप्राप्त होने तक उसे देख भाल सके और आप मूंड मुड़ा निकल चले।

आठवां अध्याय।

राय दुनीचन्दने यद्यपि सहस्त्रों प्रकार की बुराइयां युवावस्था को उमगमें आकर कर डाली थीं, नशेमें रात दिन चूरही रहते थे, पर तौभी बुद्धि एकदम हवा खाने चली न गयी थी। सोचा, कि पुत्र अभी बालक है, ऐसे मनुष्य को अधिकार देना चाहिये जो स्वार्थी न हो, सुयोग्य

हो। रंडीबाज़ी करने से इन्हें इस बातका ज्ञान पूरे तौर पर हो गया था कि रंडीबाज़ी में नानाप्रकार के दुःख तो होते हैं पर बहुतसी बातों की अभिज्ञता भी प्राप्त हो जाती है। रायसाहब को अच्छे बुरे की पहचान हो गयी थी। ठीक है, मनुष्य खोकर सीखता है। रायसाहबने विचारा कि महल्ले के रईस बाबू गणपतलालको सब सौंप चल देना चाहिये, पर यह राय भी ठीक न जँची।

गणपतलाल जातिका अग्रवाल था। था तो धनी पर पूरा मक्खीचूस। न बैठने को अच्छी जगह, न सोनेको अच्छा घर, केवल पुराने समय का एक मकान था जो उसके परदादाके चचा ने बनवाया था। उसीमें उसके यहा की स्त्रिया रहती थीं। बाहर के अलंगमें जिसमें एक दालान था, आप बैठा करते थे। मकान मिट्टीका बना था। दालान में एक चौकी और एक चारपाई थी। उसी चारपाई पर गणपत पड़ा रहता था। द्वार पर दो एक नौकर रहते थे वेही सब प्यादेगिरी से लेकर दीवानगिरी तक और पनभरे से लेकर मुसाहब तक का काम करते थे। आपको चाण्डू पीने का अभ्यास था। गणपत की इच्छा सदा यही रहती थी कि किसी मनुष्य की बढ़ती न हो, महल्लेवाले हमारेही कहने पर चलें। सबको दम दिया करता था, काम पड़ने पर दायें बायें झाँकने लगता था। गभीर ऐसा था कि क्या स-

जाल जो नरी बात कोई ताड़ ले। जरा कोई कहने के बाहर हुआ कि बस अब कहां जाइयेगा? सोच लिया, इस को इसका फल चखाना चाहिये। जब अवसर पाया धर दबाया। सच तो यह है कि यह मनुष्यरूप मे एक राचस था। जो कभी दो मनुष्य किसी बातकी लिये न्याय कराने को आपके यहां आते तो आपकी .बन जाती। महीने दो महीने तक दोनो को प्रात: सन्ध्या बुलाते, पर न्याय के नाम "जय श्रीकृष्ण।"

लाचार वे सब भी हार, दांव देकर घर बैठ रहते थे। जो कभी किसीने आपके यहा थाथी धरी, फिर उसका निकलना कैसा? आप ब्राह्मणों से बड़े अप्रसन्न रहते थे, क्यों? इसके कईएक कारण थे; सबसे पहला कारण यह था कि आपके पुत्रगण तो मूर्ख, फिर ब्राह्मणके बच्चे पढ़ें क्यों? ब्राह्मण जन्मसे लेकर मरे तकमें क्यों लेते हैं? ब्राह्मणका मान क्यों होता है? और सबसे बड़ा कारण तो यह था कि इनके नाना ब्राह्मणोंही के कारण ग़ारत हो गये थे। गणपतकी कर्तूतों को स्मरण करके रायसाहबने अपनी सम्पत्ति ऐसे मनुष्यको देनी उचित न समझी; फिर दें तो किसे दें। जो लङ्कापतिको दें तो यहभी ठीक नही क्योंकि यह पुराना गिरहकट था। छेदीमलके मस्तक में विकार था। विचारकर देखा तो गणेशप्रसादही इसके योग्य ठहरा।

उसे बुला लड़कीका हाथ पकड़ा दिया, बहुत नीच ऊंच समझा मुख्तारनामा उनके नाम लिख दिया। ऋणकी सूची उन्हें बतादी। आप तीर्थका बहानाकर घरसे चल-दिये और हरिद्वार में जा मूंड मुड़ा लिया। अपने किये कर्मोंका प्रायश्चित्त करने लगे और रात दिन ईश्वर भजन में बिताने लगे। अब उस किसी बातकी चिन्ता न थी; एक ईश्वरका नाम था। सच है, मुई नारि घर सम्पति नासी। मूंड मुड़ाय भये सन्यासी।

नवां अध्याय ।

गणेशप्रसादने राय दुनीचन्दकी जमींदारीका अधि-कार पा सब जमीनदारी ६० हजार में ठीका करदी और एक वर्षकी पेशगी लेकर ऋण चुका दिया। जो ऋण बचा उसे दूसरे वर्ष देनेका वादा कर महाजनको राजी कर लिया। सब सामान ठीक कर दिया गया। लक्ष्मीचन्द्र भी चन्द्रमाकी नाईं दिन दिन बढ़ने लगा। लक्ष्मीचन्द्रकी दादी जिसे पुत्र पुत्रवधूके चले जाने पर बड़ा दुःख हुआ था, केवल पौत्रको देख अपना जीवन रक्खे थी। पाचवें वर्ष लक्ष्मीचन्द्रका चूड़ाकरण हुआ और विद्यारम्भ भी उसी वर्ष हो गया। गुरु पढ़ानेको रक्खे गये। लक्ष्मीचन्द्र जो एक होनहार लड़का था, थोड़ेही दिनों में हिन्दी पढ़ गया। सातवें वर्ष जनेऊ हुआ और अंग्रेजी की शिक्षा होने लगी।

दूसरे वर्ष चौथे क्लासमें नाम लिखाया गया। सेकेंड लैंग्वेज संस्कृत दिलाई गयी। शिक्षकगण लक्ष्मीचन्द्रकी नम्रता, बुद्धि, सज्जनशीलता से प्रसन्न रहते थे। यथासमय प्रवेशिका परीक्षा (Entrance Examination) पहुँची। जांच में लक्ष्मीचन्द्रका नम्बर सबसे अधिक आया। प्रवेशिका भी समाप्त हुई। फल भी निकल गया। प्रथमश्रेणी मे लक्ष्मीचन्द्र पास हुआ। १० रूपये मासिक वृत्ति भी मिलने लगी। इन रूपयों को उसे पर्वाह तो न थी पर परीक्षामें (Scholarship) वृत्तिका मिलना गौरव की बात थी। लक्ष्मीचन्द्रका हौसला दूना हो गया, एफ० ए० में पढ़ने को लालसाने गोड पकड़ा। बांकीपुर में मकान किराये पर लिया गया। दो नौकर, रसोइयां, प्यादा और एक टमटम भेजदी गयी। इनकी दादी भी वहीं इसके साथ रहती थीं। पटना कालिज (Patna College) में नाम लिखाया गया। अध्ययन ठीक होने लगा। सब प्रोफेसर इससे प्रसन्न रहते थे। १५ वर्ष की अवस्था में Second year सेकेंड इयर में उन्नति मिली। जबसे पटने में लक्ष्मीचन्द्र पढ़ने गया था, अपने घर नहीं आया था। लेक्चर (Lecture) कम्प्लीट Complete हुआ। फीस भेजी गयी। नियत तिथिको एफ, ए, की परीक्षा समाप्त हुई। लक्ष्मीचन्द्र और इनकी दादी बाद परीक्षा घर चले आये। परीक्षाका फल निकला, फिर लक्ष्मीचन्द्रने First Division प्रथमश्रेणी में पास किया।

लक्ष्मीचन्द्रके विवाह की बात बहुत स्थानों से आने लगी। बड़े बड़े धनवानों ने अपनी अपनी कन्याओंके विवाहका संदेसा भेजा। भला ऐसेको कन्यादान करना कौन न चाहेगा? धन, विद्या, रूप किसी बातकी कमी लक्ष्मीचन्द्र में न थी। गणेशप्रसादने राजा केशवसेन C I. E. राजगृहनिवासी की कन्यासे सगाई पक्की कर ली। पर विवाह न किया। यह कह दो वर्ष विवाह रोक दिया कि जब लक्ष्मीचन्द्रकी अवस्था १८ वर्षकी हो जायेगी तब विवाह करेंगे।

गर्म्मीकी छुट्टीके बाद July जुलाई में फिर कौलेज खुला। लक्ष्मीचन्द्रने भी बी०ए० Join जोयन किया। पढ़ना होने लगा।

दशवां अध्याय।

पटने में आजकल विद्याधरी की वाहवाही हो रही है। इस वेश्याको बनारस से आये अभी दो ही महीने हुए हैं, पर सारे पटने में एक धूम मच गयी है। सारे मुजरे नाचके सफरदाई तक घबरा गये हैं। दश पांच स्थानो से नित्य गानेके लिये बुलाहट आती थी, जिनमें दो एक स्वीकार कर शेष लौटा दिया जाता था। विद्याधरीके बारे में लिखनेकी हममें सामर्थ्य नहीं, इससे सरस्वती देवीका आवाहन करले तो अच्छा है।

हे देवि, तूने जिस बुद्धिको दे वाल्मीकि मुनिसे रामायणकी रचना कराई, व्यासजीसे महाभारत में रम्भाका वर्णन कराया, कविशिरोमणि कालिदास से रघुवंश और शकुन्तला लिखवाई, जिस बुद्धिके प्रतापसे शेक्सपियर मिल्टनने पुस्तकें लिखडालीं, जिसके प्रभावसे उपन्यास में रेनल्डका नाम अजर हो गया, उसी बुद्धिका एक अंश भी हमें दे, जिसमें विद्याधरीका रङ्ग रूप वर्णन कर सकें।

विद्याधरी अप्सराके तुल्य थी। रङ्ग गोरा, बाल लम्बे काले और किञ्चित् घूंघरवाले थे। उभरे सरोजसे उरोज, जांघें भरी और पिण्डलियां चमकीलीं थीं। अङ्गप्रत्यङ्गसे रस टपकता था। यह मानों हुस्नकी नदी, रूपकी राशि और सुन्दरताका भंडार थी। इसके नयन बड़े और कटीले थे। मानों विधाताने इसे रच अपनी बुद्धिका परिचय दिया था। विद्याधरीका वयस इस समय ३० वर्षका था पर देखनेवाले २५ वर्षसे वेशी नहीं कह सकते थे। इसे सादगी पसन्द थी। रात दिन गहनोंसे लदा रहना न चाहती थी। यह नहीं कि इसके पास गहनोंकी कमी थी। दो तीन लाखके गहने इसके पास थे। दह बारह लाख रुपया बङ्कमे जमा था, पर तौभी सिवाय रङ्गीन साड़ी, कानमें बिजली, गलेमें कंठसरी और हाथमें कङ्कणही पहरा करती थी। ठीक है, ईश्वरने जिसे रूप दिया है उसे शृङ्गारकी

आवश्यकताही क्या है। "नहीं मोहताज जेवरका जिसे खूबी खोदाने दो।" जो किसी काली चुड़ैलका शृङ्गारही कर दिया जाये तो क्या ? यही कहना पड़ेगा, कि "ईंट लिये मुसकात भतीर ये भागिनी भौनमें भूतसी ठाढ़ी।"

गाने नाचने में भी यह अद्वितीया थी। बड़े बड़े गवय्ये भी इसका गाना सुन दांतो उंगलियां काटते थे।

ग्यारहवां अध्याय ।

रमललवाकी सुध बहुत दिनसे नहीं ली है। पाठक, चलिये देखें आज कल कहां है और क्या करता है।

चम्पाका माल असबाव ले, रमललवा आरासे छपरा भाग गया। अपने घर गयाजी न आ सका। उसे दुनो-चन्द्रका डर था कि वहां जानेपर न जाने क्या न क्या दुःख झेलने पड़ें। पर यहां तो रङ्ग ही दूसरा हो गया था, जिसको उसे कुछ भी सुध न थी।

छपरे में आ रमललवाने अपनेको कायस्थ बताया। मकान भाड़ेपर ले उसमें रहने लगा। वकरीदन नामी मालजादीसे दोस्ती हो गयी। शराब कवाव चलने कटने लगा। गहने धड़ाधड़ बिकने लगे। आतशकको बीमारी ऐसी हुई कि नाक कट कर गिर गई। शरीरमें भी कोढ़के चिन्ह दिखाई देने लगे। पासका कुल निवट गया। रुपया आये तो आये कहांसे ? चोरी करने पर कमर बांधी।

कहावत ठीक है, सौ चोरकी एक सावकी। अन्तमें पकड़ा गया। महीनों हाजतमें रह मजिष्ट्रेट द्वारा तीन महीनेके लिये बड़े घर भेजा गया। वहांसे मुक्त हो भीख मांगने लगा, पर भीख भी भरपेट नहीं मिलती थी। ऐसेको कोई भीख भी देना नहीं चाहता था। लाचार उसने दूसरे नगरमें चल पेट पालना ठान छपरेसे कूच किया। हाथमें ठकनी जिसमें कौड़ी, चने, पैसे पड़े थे, लिये, मांगते खाते राह ली। इसको अपने कियेका फल पूरा मिल गया। अच्छे कुलमें दाग लगानेवाले, कुलवधुओंको भगा ले जानेवालोंकी यही दशा हुआ करती है। रमललवा, ठहर, तेरे शरीर में पिल्लू पड़नेवाले है, तब तेरे लगाये पेड़ोंका फल तुझे खानेको मिलेगा।

बारहवां अध्याय।

गणेशप्रसादको रायसाहबने अधिकार क्या दिया मानों गणपतलालके कलेजेमें किसीने छुरी मारी। इसी धुनमें रहने लगा कि किसी प्रकार बापका बदला बेटेसे लेना चाहिये। हमारे ऐसे धनवानके रहते दुनीचन्द्रने सब अधिकार एक अदने गणेशप्रसादको दे हमारी बड़ी मानहानि की। लक्ष्मीचन्द्रका विद्यानुराग भी एक प्रकार उसके हृदयमें कांटासा चुभता था। बस, बदला लेना जीमें ठान उसने भी बांकीपुरकी यात्राकी। बांकीपुरके बाकर गंज

महल्लेमें आपका एक मकान भी था, उसीमें जा, गणपतने डेरा जमा दिया। लक्ष्मीचन्द्रके साथ उसका एक मित्र भी रहने लगा था, उसीसे अपने मेलजोल पैदा किया। मित्रका नाम जयचन्द्र था। टुक कहानीकी शृङ्खला छोड़ जयचन्द्रके बारेमें भी कुछ लिख देना ठीक है।

जयचन्द्रकी अवस्था वर्ष सोलह एककी होगी। रङ्ग-गेहुँआ, कद साधारण, न लम्बा न नाटा था। तीसरे कक्षामें पढ़ता था, पर पढ़ना नाममात्रही का था। यहांसे वहां, वहांसे यहां दिनभर घूमा करता था। भडुओंकी वजादारी इसे भाती थी। यह बिना सिद्धान्तका मनुष्य था। आगे पीछेका सोच विचार इसे न था। केवल लक्ष्मीचन्द्रकी बातोंका सेकेंड (अनुमोदन) किया करता था। बराबर बेहूदी बका करता था। गणपतलालने इसीको पहिटा और पूरे तौरपर जड दिया कि लक्ष्मीचन्द्रको वेश्याके यहां फंसाना चाहिये। जयचन्द्र भी वे आगा पीछा सोचे तय्यार हो गया।

जयचन्द्रके फेर में पड लक्ष्मीचन्द्रकी भी चाल चलन बिगड गयी। पढ़ना लिखना काम हो चला। जहां नयन बाणसे घायल हुए फिर पढ़ना कोसों दूर हुआ। लक्ष्मीचन्द्रने भी विद्याधरी की प्रशंसा सुनी थी, वहीं जानेकी इच्छा की। टमटम पर सवार हो पटना शहर पहुंचे। विद्याधरीके यहां थोडी देर बैठ कुछ सलामी दे बांकीपुर

लौट आये। इन दोनोंके चले आनेके बाद गणपत भी वि-द्याधरीके यहां पहुँचा। इसने उसे पूरे तौरपर जड दिया कि लक्ष्मीचन्द्र धनी है और आपही मालिक है।

तेरहवां अध्याय।

दूसरे दिन लक्ष्मीचन्द्र फिर विद्याधरीके यहां पहुँचा। पहले दिन इसने अपना मकान बांकीपुर में होना बताया था। मुजरा सुना गया, मुजरेका पैगाम लक्ष्मीचन्द्रने किया रुपया भी पूरा देनेको तय्यार हुआ, पर विद्याधरीने स्वी-कार न किया। यह कह टाल दिया कि मेरे शिरमें आज अत्यन्त पीड़ा है। लक्ष्मीचन्द्र भी वापस आया, पर बेचैन था। जी उसपर पूरे तौरसे आ गया था।

इधर विद्याधरीके ऊपर भी इसका पूरा असर पड गया था। लक्ष्मीचन्द्रका चेहरा एक मनुष्यसे ऐसा मिलता था कि देखने हारा यह न कह सकता था कि कौन कौन है। उसी मनुष्यसे विद्याधरीकी प्रथम भेंट हुई थी। यह बात बड़ों की कही हुई है कि स्त्री अपने प्रथम भेंट करने-वालेको कभी नहीं भूलती। अपने प्राण देनेको उपस्थित हो जाती है पर उसपर आंच नहीं आने देती। यह नहीं कि वह दूसरों से मुलाकात न करे, पर उसके प्राणकी रक्षा सदा चाहती है। यही हाल ठीक विद्याधरीका था। उ-सके हृदय में नानाप्रकारके तरङ्ग उठते थे। वह यही सो-

चती थी कि जबसे वेश्यावृत्तिमें प्रवृत्त हुई हूँ तबसे किसीको संभोगवासनासे रुपया मिलने पर वञ्चित नहीं किया है पर न मालूम इससे दूर रहने की इच्छा क्यों होती है। इसे देख हृदय में प्रेम क्यों उमड़ आता है। रुपया भी देनेको तय्यार है पर आत्मा क्यों नहीं चाहता है। दोनों पर दोनों का असर पड़ गया था। लक्ष्मीचन्द्र बराबर कहता था; विद्यावरी स्वीकार न करती थी।

बातचीत करते करते विद्याधरीने लक्ष्मीचन्द्रके पिताका नाम जन्मभूमि सब मालूम कर लिया। माताका हाल पूछने पर कहा, "जब मैं वर्ष दिनका था तो माता मेरी मर गयी," विद्याधरी यह सब बातें सुन काठ हो गयी। बहुत देर तक चुप हो रही,मानो निर्जीव है। काटो तो लहू नहीं। थोड़ी देर बाद लक्ष्मीचन्द्रको कल दस बजे दिनको आने कह, उठकर दूसरे कमरे में चली गयी। वहां जा फूट फूट कर रोने लगी और सोचती रही। पाठक, यह क्या सोचती थी यह आगामी अध्याय में ज्ञात होगा। लक्ष्मीचन्द्र भी बांकीपुर चला आया।

थोड़ी देर बाद गणपत विद्याधरी के यहां पहुँचा, उसने इसे जूतियां लगवा निकलवा दिया। हड़बड़ भागनेसे सीढ़ीपर से गिर पड़ा। पैर टूट गये, जिससे जन्म भरके लिये लङ्गड़ा हो गया।

चौदहवां अध्याय।

राम राम कर रात कटी। भोर हुआ, दिनके नौ भी बज गये। लक्ष्मीचन्द्रने टमटम कसवाई। बांकीपुर से पटने जाते ४-५ मिनट लगते हैं। नौ बजकर पन्द्रह मिनट पर लक्ष्मीचन्द्रने कूचकिया। ठीक १० बजे विद्याधरीके यहां पहुँचा। आज उसका चेहरा पीला हो रहा था। आंखें डरावनी हो रही थीं। लक्ष्मीचन्द्रको बिठा इधर उधरकी दो चार बातें कर "आप यहां ठहरें और यह कुंजी रक्खें, मैं अभी आती हूँ" यह कह चली गयी। दूसरे कमरे में जा एक बन्द लिफाफा अपने नौकरको दे कहा कि "इसे शीघ्र जा जिलाधीशको दे आ" और एक तमंचा ले अपनी छातीमें लगा दाग दिया। दमभर में प्राण पखेरू उड़ गये। बन्दूक का शब्द होतेही घरके सब नौकर दौड़ आये, कमरे में देखते है तो विद्याधरी मरीपड़ी है। सबने लक्ष्मीचन्द्रको घेर, कहना आरम्भ किया कि इसीने हमारी स्वामिनीको मारा है। आगकी नाईं यह समाचार सारे पटने में फैल गया; पुलिस भी आयी। आतेही उसने लक्ष्मीचन्द्रकी मुश्कें बांध ली। लक्ष्मीचन्द्रकी विचित्र दशा थी, मुँहपर हवाइयां उड़ती थीं। सारे भीड़के विद्याधरीका घर भर गया था। उसी समय (District Magistrate) जिलाधीश मय पुलिस सुपरिन्टेंडेंटके पहुँच गये। लक्ष्मीचन्द्रको बँधा पा उसकी

मुश्कें खुलवा दीं और कहा यह निर्दोष है। और अपने पाससे एक लिफाफा निकाल, मनुष्यसमूहको ओर देख, पढना आरम्भ किया।

ओ:—महाशय, मैं राय दुनीचन्द्र गयानिवासी की स्त्री हूं। मेरा पहिला नाम चम्पा था, पतिके कुचलनसे मेरी यह दशा हुई। मेरे पति एक वेश्यासे ऐसे फँस गये कि मेरी कुछ भी सुधि न लेते थे। उस समय मेरी युवावस्था थी। कामाग्निसे दग्ध होने लगी। एक समय रसललवासे भेंट हो गयी। कुललज्जा को त्याग उसके संग निकल भागी, पर उसने भो माल असबाब ले मुझे राहकी भिखारिनी बना अपनी राह ली। बडे बड़े दु:ख झेल सरस्वती वेश्याके साथ बनारस गयी। (पाठक, जो स्त्री चम्पाको बनारस ले गयी थी, यही सरस्वती थी)

सरस्वती बनारसकी एक नामी वेश्या थी। दालकी मण्डीमें इसका एक पक्का मकान था, उसीमें ले जाकर मुझे रक्खा। बडी सेवाएं कीं। वड़े बडे गवइये रखकर मेरी गानविद्याकी शिक्षा होने लगी। चम्पासे मेरा नाम विद्याधरी हो गया। थोड़े दिनमे में गाने नाचने में अद्वितीया हो गयी। बनारस में बहुत धन उपार्जन किया। काल पा सरस्वती भी मर गयी। मैं ही उसकी कुल सम्पत्ति की अधिकारिणी हुई। पटनेके मनुष्योंकी तारीफ सुन यहां आयी। यहां भी मेरे रूप और गानेके कारण बड़ा धन मिला।

मेरा पुत्र लक्ष्मीचन्द्र जिसे मैं केवल एक वर्षका छोड़ घरसे भाग आयी थी यहां आने लगा। इसे देख मेरे हृदयमें स्नेह उत्पन्न हो गया। पर जिसे एक वर्षकी अवस्था में देखा था उसे युवावस्थाके सौन्दर्यसे विभूषित होनेपर चीन्ह लेना कब सम्भव था। लक्ष्मीचन्द्रने भी अपना पता ठीक ठीक न बताया था। लक्ष्मीचन्द्रने मुलाकातकी इच्छा प्रकट की। मैंने किसी मनुष्यको धन मिलने पर विषय-वासनासे वंचित नहीं किया था। मनुष्य कैसाही कुरूप वृद्ध क्यों न हो, धन देनेपर मेरे साथ भेंट कर सका। पर लक्ष्मीचन्द्रमें रूप गुण धन सब रहने पर भी इसे स्वीकार क्यो न किया? हो न हो यह ईश्वरने मुझे बचालिया। हाय, मैं ऐसी पापिनी हुई कि पुत्र जिसे नौ महीने पेटमें रक्खा वह भी मिलने की इच्छा करे। काल पुत्रसे इसका ठीक हाल ज्ञात हो गया, मेरे अपत्य प्रेमका कारण खुल गया, चाहा कि इसे छातीसे लगा लूं। पर ऐसा न कर सकी। अब मैं अपना-जीवन रखना नहीं चाहती। लक्ष्मीचन्द्र फिर यहीं बैठा है। मेरा १२ लाख रुपया (Benares Bank) बनारस बंकमें जमा है, और जो सम्पत्ति मेरे पास है, मैं कुल पुत्रको दे जाती हूँ। आप आकर कुल उसे दे दें, और मैं गोली मार अपना जीवन समाप्त करती हूँ। आपकी दासी

चम्पा उपनाम विद्याधरी।

थोडी देर सब चुप रहे, इतने में एक फकीर निकल आया और सबको सम्बोधन कर कहने लगा। मैंही राय दुनीचन्द्र हूँ, मेरेही कारण यह सब लीला हुई है। मैंही इसका मूल हूं। मै अपने पापमय जीवनको रखना नहीं चाहता। यह कह उसने अपनी छातीमें छुरा घुसेड़ लिया और वहीं अपना जीवन समाप्त किया।

राय दुनीचन्द्रके मरतेही एक कोढ़ी भीडसे निकल आया और कहने लगा कि मैंही रमललवा माली हूँ। जैसे मैंने राय साहबके कुलमें कलङ्क लगाया वैसे मेरे शरीर में भी पिल्लू पड़ गये।

पन्द्रहवां अध्याय।

इस घटनाका विचित्र प्रभाव सब पर पडा। लक्ष्मी-चन्द्रको ऐसी शिक्षा मिल गयी कि कभी न भूला। वेश्याके यहां जानेका साहस टूट गया। जिलाधीशने चम्पा का कुल धन लक्ष्मीचन्द्रको दिलवा दिया। इसने पिता राय दुनीचन्द्रकी दाहक्रिया की, पर माताको केवल गङ्गामें प्रवाह कर दिया। दोनोंके अर्थ ब्राह्मणों को पूरा दान दिया और पिताका श्राद्धकर गयाजी अपने घर चला आया।

लक्ष्मीचन्द्रका पढ़ना समाप्त हो गया। एक वर्षके बाद इसका विवाह केशवचन्द्रकी कन्या तारासे सानन्द हो गया, यह भी लक्ष्मीसी स्त्री पा सुखसे रहने लगा। गणेशप्रसादने

कुल हिसाब उसे समझा दिया। लक्ष्मीचन्द्रने इसकी परि-श्रमके बदले इसे एक लाख रुपया दे अपना मुनीम बना लिया।

वर्षके भीतर लक्ष्मीचन्द्रको पुत्र उत्पन्न हुआ, जिसे देख माता पिता दोनों सुखी होते थे।

इति।

नईकिताबें ! नईकिताबें !!

बुढ़े मुँह मुहाँसे

लोग ! देखें ! ! तमासे ! ! !

[प्रहसन]

श्रीराधाचरण गोस्वामी की हास्यमयी
लेखनी से लिखित ।

"घास पात जे खात है तिनहि सतावत काम ।
माल मलीदा खात जे तिनके मालिक राम ॥"

काशी ।

भारतजीवन यन्त्रालय में मुद्रित हुआ ।

सम्बत् १९५१ ।

दूसरी बार १०००]   [मूल्य =)

"बुढ़े मुँह मुहाँसे लोग देखें तमासे।"

(प्रहसन)

प्रथमाङ्क—प्रथम गर्भाङ्क

स्थान

तालाब के ऊपर नीम के पेड़ की छाँह।

मौला—अरे यार! अबको साल पीर की दर्गाह में कितनी सिन्नियां चढ़ाईं, पर किसी से कुछ नहीं भया। दस मन गेहूँ भी घर में नहीं आये, मर्जी गुसैंयां की।

कलु०—अरे कहीं मेह के बिना भी गेहूँ होय हैं? देखें लाला अब के कहा करें?

मौला—और क्या करेंगे? भेज थोड़ेही छोड़ देंगे।

कलुआ—तो तू कहा करैगो?

मौला—मैं क्या अपनी ऐसी की तैसी करूँगा, अब के मर जाता तो अच्छा था। कहीं लाला ने हल और बैल नीलाम करा लिये, तो फिर भी मरे। जाने खुदा लाला की क्या मर्जी है। बाप दादे की झोंपड़ी भी कहीं न छोड़नी पड़े।

कलु०—लाला तो इतमें आवें हैं, अच्छा तो आज मैं भी तेरी ओर होकर दो चार बातें कहने में कसर न करूंगो।

(लाला नारायणदास का प्रवेश)

मौला—लाला साहब। सलाम।

नारा०—(वृक्ष के नीचे बैठकर) अरे मौला तू तो बड़ा बदमाश है किस्त क्यों नहीं देता बे? (माला जपते हैं)

मौला—अजी लाला साहब! अबकी फसल का हाल तो आप अच्छी तरह जानते हैं।

नारा०—अरे हमें इससे क्या? तुम्हारी फसल हो, चाहे न हो!

मौला—जी यह तो ठीक है, पर आप तो हमारे मां बाप है।

नारा०—मर कम्बख्त! सरकार तो हमें न छोड़ेगी। बतला किस्त देगा या नहीं?

मौला—लाला साहब! हम आपके सदा के रैयत हैं आप हमारे ऊपर मिहरबानी न करेंगे, तो फिर हम कहां जायँगे? मैं तो इस वक्त बारह आना से ज्यादा कुछ नहीं दे सक्ता।

नारा०—तू कुछ भला आदमी थोड़ाही है, तुझ से दो रुपये बारह आने लेने हैं, उसमें फक्त बारह आने देता है। कल्लू—!

कल्लू—जी।

नारा०—इस बेईमान को पकड़कर जमादार के पास तो ले जा।

कल्लू—जो हुकुम (मौला से) चल बे!

मौला—लालाजी मैं बड़ा गरीब असामी हूँ, आपही की बदौलत खा पीकर इतना बड़ा हुआ, अब कहां जाऊँ?

नारा०—ले जा न। खड़ा क्यों है?

कल्लू—(धक्का देकर) चल बे!

मौला—दुहाई लाला साहब की! दुहाई जमीदार की (कल्लू से) क्यों बे तू कहता था कि मैं तेरी ओर से दो चार बातें कह दूँगा, कुछ कहता क्यों नहीं?

कल्लू—तो तू तनक हट जा, (लाला से) लाला साहब!

नारा०—क्या रे?

कल्लू—हुजूर अबकी बेर मौला को छोड़ दीजिये।

नारा०—क्यों?

कल्लू—याने जा छोरी से अब के निकाह कियो है, वाकू आपने कभी देखो है?

नारा०—नहीं।

कल्लू—लालाजी! वाके रूप को आपसे कहा बड़ाई करूँ, वाकी उमर उन्नीस बरस की होगी। अब तक कोई लड़का बालो भी नाय भयो। और रँग वाको सोने को सो दम दम करै है।

नारा०—(माला जल्दी जपते २) एँ एँ क्या कहता है ?

कल्लू०—जी आपसे कुछ झूठ थोड़ेही कहूँ हूँ, आप वाको देखें तो कह दीजिये।

नारा०—(सोचकर) मुसल्मानियों के मुंह से प्याज की ऐसी दुर्गन्ध आती है कि जी मिचलाने लगता है।

कल्लू—लालाजी। वो ऐसी नहीं है।

नारा०—(साचकर) यवन। म्लेच्छ। मुसल्मान। क्या पर लोक भी नष्ट करना है ?

कल्लू—लालाजी, मुसल्मान से कहा है ? आपने ही तो कई वेर मोसे कही कि ठाकुरजी महाराज गोपिन के सँग रास करते हैं।

नारा०—दीनबन्धो। "यथानियुक्तोऽस्मि तथा करोमि" और फिर स्त्री ? उनकी जात क्या ? वह तो साक्षात् प्रकृति स्वरूपा हैं। ऐसा तो हमारे शास्त्र में भी कहा है। बड़ी सुन्दरी है ? एँ अच्छा मौलाकू बुला लो।

कल्लू—मौला ? ह्यां आ।

मौला—हुकुम।

नारा०—अच्छा आज बारह आने ले करके तुझे छोड़ दें तो फिर बाकी कब देगा ? सच बतला।

मौला—लालाजी गुसैंया करैं तो डेढ़ महीने के भीतरही दे दूँगा।

नारा०—अच्छा तो बारह आने के पैसे दीवानजी को दे आ।

भोला -(आनन्द से) जो हुकुम लाला साहब। (स्वगत) बचा। बारह आने के पैसे तो गाँठ में हैं, और दो रुपये अँगोछे में बँधे हैं, जो बहुत मारपीट करते, तो सब दे देता। (प्रगट) सलाम लाला साहब।

(प्रस्थान)

नारा०—ओ कल्लू।

कल्लू—जी।

नारा०—इसको तू हाथ कर सकेगा?

कल्लू—जी क्यों? बीस पचीस रुपये खर्च करने पड़ेंगे।

नारा०—बीस पचीस रुपये। क्या कहता है।

कल्लू—जी या से कम नहीं, जादा लगे, तब भी लग सकें क्योंकि आखिर तो वो गाँव की बहू है।

नारा०-अच्छा हम जब दीवानखाने में चलें, तब याद दिला देना, रुपये दिये जायँगे।

कल्लू—जी हुकुम।

नारा०—(नेपथ्य की ओर देखकर) यह कौन है? विद्याधर?

(विद्याधर का प्रवेश)

कौन? विद्याधर! प्रणाम! ये क्यों?

विद्याधर -क्या कहूँ, बडा दुःख हुआ, हमारी मांजो का परलोक हो गया! (रोदन)

नारा०—क्या कहा? ये कब हुआ?

विद्या०—आज चौथा दिन है।

नारा०—क्या हुआ था?

विद्या०—कुछ नहीं बहुत वृद्ध हो गई थीं।

नारा०—"हरेरिच्छा बलीयसी" भाई इसका सोच करना वृथा है।

विद्या०—यह ठीक है, अब मैं इस आपत्ति से जिसमें बच सकूं, वह आपको कर्त्तव्य है। जो कुछ हमारी ब्रह्मत्र भूमि थी, वह तो आपके बाग में दब गई है और—

नारा०—ओः! वो तो जो कुछ हुआ, उसकी अब क्या बात है।

विद्या०—जी हां, वह तो जो कुछ होना था, सो हो चुका "गतस्य शोचना नास्ति" वह तो ऐसे भी नहीं, वैसे भी नहीं, पर आपका बड़ा भरोसा रखते हैं। इससे जैसे बने इस ऋण से आपको रक्षा करनी होगी।

नारा०—महाराज! यह हमारा बड़ा कुसमय है, अभी थोड़े दिनोंमेंही बीस पचीस हजार रुपये हमें सर्कारी खजाने में दाखिल करने पड़ेंगे।

विद्या०—जी आप राजा हैं, लक्ष्मी की कृपा से आपको

किस बात की कमी है ? आप तनक कटाक्ष कर दें तो हमारे से हज़ारों ब्राह्मणों का आप ऋण से उद्धार कर दें।

नारा०—मैं इस समय तुम्हारा कुछ उपकार कर सकूं, ऐसा तो नहीं मालूम पड़ता। तुम कुछ और उपाय करो, खैर जो कुछ बना, तो पीछे देखा जायगा।

विद्या०--लालाजी आप हमारे जमीन्दार हैं, राजा हैं, आपके आगे तो कुछ विशेष नहीं कह सकते। जो आप उचित समझें, करें, (दीर्घनिश्वास) तो मैं अब जाता हूँ।

नारा०—दण्डवत।

ओः इन्हीं लोगों ने मुझे खराब कर दिया, केवल दो। दो। दो। और दूसरी बात नहीं—अरे कल्लू !

कल्लू—जी।

नारा०—क्यों वे देखने में तो वह खूब अच्छी है न ?

कल्लू—लाला साहब ! आपको गङ्गा की याद है ?

नारा०—कौन गङ्गा ?

कल्लू—जी, वह मिसरों की लड़की, जाकू आपने—(आ-धोक्ति) फिर वह यहां से भाग गई।

नारा०—हां, वह लड़की देखने में अच्छी थी (दीर्घनिश्वास लेकर) सीताराम। सीताराम। प्रभो तुम्हीं सत्य हो। हां फिर उस गङ्गा का क्या हुआ ?

कल्लू—जी, अब तो वह बजारू हो गई। मौला की बीबी वा से भी अच्छी है।

नारा०—क्या कहता है? हां आज रात को ठीकठाक कर सकेगा?

कल्लू—जो आज न भयो, कल्ल पर्सों तक ज़रूर कर दूँगो।

नारा०—देख! कुछ रुपये का लोभ मत करना, जो खरच लगैगा मैं दूँगा।

कल्लू—जो हुकम (स्वगत) लाला जो ऐसे पागल न हों तो हम कैसे बचें।

नारा०—(नेपथ्य की ओर देखकर) अरे यह कौन है?

कल्लू—अजी ये नन्नो, और वाकी मां रामा है, जल लेने जाय है।

नारा०—कौन नन्नो वे?

कल्लू—वही चैना तेली की बेटी।

नारा०—ये चैना तेली की बेटी है? ये तो गूदर में गिदौरा है?

कल्लू—ये आज दो दिन भये सुसराल से आई है।

नारा०—(स्वगत) गई न शिशुता की झलक झलक्यो जोबन अंग। दीपत देह दुहूँन मिलि मनों ताफता रंग॥

संसार तव निस्तारपदवी न दवीयसी।
अन्तरा दुस्तरा नस्युर्यदिरे मदिरेक्षणाः॥

कल्लू—(स्वगत) अब दीखै और रंग लगो। बूढ़े होने से नीयत बिगड़ जाय है कोई बुरी भली चीज़ आगे हो कर गई कि बस फिर लार टपक पड़ी।

नारा०—अरे कल्लू!

कल्लू—जी हां।

नारा०—अरे इसका कुछ कर सक्ता है?

कल्लू—जी ये कछू सहज बात नहीं है ये बड़े आदमी के घर व्याही है।

(घड़ा लेकर नन्नी और रामा का प्रवेश)

नारा०—अरी बही बहू ये लड़की कौन है?

रामा—ये कहा लालाजी! आपने मेरी नन्नी कू नांय पहचानी।

नारा०—अरे ये तुम्हारी वही नन्नी है, अहा ठीक, ठीक, ईश्वर करै ये जीती रहै। इस्का व्याह कहां हुआ है?

रामा—जी याको व्याह आगरे नत्था तेली के घराने में भयो है।

नारा०—हां हां वह बहुत भला आदमी है। जमाई कैसो है?

रामा—(सगर्व) जमाई देखने में बहुत अच्छो है। आगरे में मदर्से में लिखे पढ़े है। लाठ साहब ने वाकू कई बेर इनाम दियो, और अब बरसमें दिन वाकू किताब मिलै है।

नारा०—तो जमाई प्रयाग मेंही रहता है ।

रामा—हां, अब के बडो कहा सुनो भई, तब कहीं नन्नो आई। बड़े घर में लड़की देवे से यही तो आफत है।

नारा०—हां, ये तो ठीकही है (स्वगत) इस लडकी का नवयौवन उपस्थित है, उसमें भी इसका पति विदेश में रहता है । यदि इतने पर भी मैं इसे बस न कर सका, तो धिक्कार है (प्रगट) अरी नन्नो ज़रा इधर तो आ, तुझे अच्छी तरह देखूं तो सही बालकपन में तुझे देखा था, अब तो तू इतनी बड़ी हो गई कि पहचानी भी नहीं जाती ।

रामा—जा बेटी सरम क्यों करे है ? लालाजी कू आगे बढ़ कर राम राम कर तेरे ताऊ लगे हैं ।

नन्नो—(आगे बढ़कर राम राम करके स्वगत) अरे गज़ब! ये बुड्ढा कुछ कम थोड़ेही है। ये तो मुझे खाये जाता है। अरे ग़ज़ब ! ये क्या यह तो मेरी छातीही की तरफ देख रहा है—मर कम्बख़्त !

नारा०—(धीरे धीरे) अमी हलाहल मद भरे श्वेत श्याम रतनार। जियत मरत झुकि झुकि परत जिहि चितवत इक बार ॥

रामा—आपने क्या कही ?

नारा०—नहीं और कुछ नहीं, यही कि यह यहां कितने दिन और रहैगी ?

रामा—ये यहां महीने भर रहैगी।

नारा०—(स्वगत) बस तभी तो काम बनैगा। अर्जुन ने अठारह दिन में ग्यारह अक्षौहिणी सेना को युद्ध में वध कर डाला। मै क्या एक महीने में एक तेली की लडकी को बश नहीं कर सकूंगा (प्रगट) राम! राम! राम! सब तुम्हारी इच्छा!

रामा—लालाजी आपने कहा कहो?

नारा०—मैने कहा चैना कहां है?

रामा—वे नोन लेने भरतपुर गये हैं।

नारा०—आवैगा कब?

रामा—चार पांच दिन में आने को कह गये है, लालाजी! तो अब हम जल भर लावें।

नारा०—अच्छा जाओ।

रामा—आ बेटो! आ!

(नन्नो और रामा का प्रस्थान)

नारा०—(स्वगत) चैना के न आते यह काम हो जाय, तो अच्छा (नेपथ्य की ओर देखकर) अहा! नन्नो क्या सुन्दरी है! कविजन नवयौवना स्त्री को मरालगामिनी कहते हैं, सो मिथ्या नहीं (प्रगट) अरे कल्लू!

कल्लू—जो (स्वगत) लाला अबकी फिर मारे पड़े।

नारा०—अबे इधर आ, इस बाबत कुछ कर सक्ता है ?

कल्लू—लाला साहब । यह मैं नहीं कर सकूंगी पर मेरी मौसी कर सके तो मैं नहीं कह सकूं ।

नारा०—तो जा दौड़कर अपनी मौसी से कह आव और देख इसमें जो खर्च होगा सो मैं दूँगा :

कल्लू—जो हुकम. तो मै चली (जाते जाते) लाला आज कलपविर्छ हैं । देखे कल्लू कू आज का मिलै ? (प्रस्थान)

नारा०—(स्वगत) प्रभो, आपकी इच्छा, नन्नी का क्या चमत्कार रूप है, और थोडी थोडी चञ्चल भी है, देखें क्या हो ?

(ख़िदमतगार का लोटा धोती लेकर प्रवेश)

नारा०—अब चलें सन्ध्या पूजा पाठ का समय हुआ (उठ कर) दीनबन्धो । जो आपकी इच्छा । आः इस नन्नी को यदि हाथ में कर सकूं ।

(दोनों का प्रस्थान)

जवनिका पतन ।

प्रथमाङ्क—द्वितीय गर्भाङ्क ।

(स्थान मौला के घर के आगे)

(मौला और छन्नो का प्रवेश)

मौला—क्या कहा ? पचास रुपैया ?

छन्नो मैं क्या झूठ कहती हूँ।

मौला—(क्रोध से) ऐसा लुच्चा हरामजादा क्या हिन्दुओं में और कोई है ? साला रैयत की जान लेता है, असामी का सब माल मता लूटकर पीछे से यह कहता है ? । देखू तो सर्कार के घर इन्साफ है कि नहीं ? अब के काफिर के मुंह मे हड्डी भर दूँ तब छोड़ूं । ऐसा मकदूर बचा का, मै गरीब हू तो क्या कसब कराऊँगा ? हमारे खानदान से नव्वाब हैदराबाद की नौकरी करते आये हैं, हमारी बहिन भाञ्जी ने कभी कसब नहीं किया, सो क्या मै अपनी औरत से कसब कराऊँ ? साला पाजी कहीं का ! ।

छन्नो—अब क्यों बिना बात को बकते हो ? जब वह कुछ करे तो जो मन में आवे सो कर लेना। ये देखो कलुआ की मौसी सितावो फिर आती है।

मौला—चुडेल का सिर फोड दूँ तो कलेजे में ठण्ढक हो।

छन्नो—मैं नेक हट जाऊँ देखूं वह यहां आकर क्या करे।

(दोनों हट जाते हैं)

[सितावो का प्रवेश]

सितावो—(चारोंओर देखकर) थू थू। मुसल्मान के घर में आकर के तो उलटो होय है। थू थू! मुर्गा के पङ्ख, प्याज के छिलका। छिः छिः! पर कहा करूँ लाला जाने कब ये पाप छोड़ेंगे। इतने बूढ़े हो गये पर अब तक मन में ज्वान पट्ठाही बने हैं। आज तीन बरस से नौकरी करूँ हूँ इतने दिन में कितने भले घर की बहू बेटी, राँड़, सुहागन, मैंने खराब करीं, कछू ठीक नहीं (हँसकर) फिर लाला भगत भी बड़े, दिन भर माला हाथ मेंही रक्खें, सोमवार को एकादशी को बर्त करें। आहा! कैसी भक्ती! (चिन्ता से) भला जो भई सो भई, यह तो ठीक करूँ कि या लुगाई को कुछ बुरी भली कर सकूंगी कि नहीं। चैना तेली की बेटी से यह सब बात नहीं बनेगी वो गरीब कङ्गाल की छोरी थोड़ेही है, जो दो चार रुपया देखकर नाचने लगे। और लाला ज्वान होते, तब भी कुछ बात नही, ननी गुस्सा होती, तो हंसी में बात टाल देती। अच्छो देखूं यह कहा कहै। (ऊँचे स्वर से पुकारकर) अरी छन्नो, घर में है?

[नेपथ्य से]

अरी कौन है?

[छन्नो का प्रवेश]

छन्नो—सितावो ! कहा खबर है ?

सितावो—मौला कहा है ?

छन्नो—वो तो खेत में हल चलाने गया है।

सितावो -(स्वगत) आफत कटो वह आदमी है कि राक्षस है (प्रगट) तो छन्नो ! अब मोसो सच्च सच्च कह दे।

छन्नो—मैं क्या कह दूँ ?

सितावो—तू कहा कहेगी ? सोने के गहने पहर, मोती चुग, ह्यां बाँदी ही करके रहेगी ?

छन्नो—बहना। अपने अपने नसीब की बात है। तू मुझ से जवान खसम छोड़कर बुड्ढे खसम के पास रहने की कहे है, काल कूं वो मर जायँगे, तो मैं क्या करूँगी?

सितावो - ये सब अपने अपने भाग की बात है। इन बातन से कहीं काम चले है। ये देख पचीस रुपया लाई हूँ जो ये बात करे तो कह—रुपया दूँ। न करे तो तैसी कह, मैं जाती हूँ।

छन्नो—तनक ठहरो, इतनी जल्दी क्यों करती हो ?

सितावो—जल्दी न करूं, तो कहा करूँ, जो करनी है तो फिर देर मत कर।

छन्नो—(विचारकर) अच्छा ला, रुपया दे !

सितावो—देखियो, पीछे से इन्कार न हो।

छन्नो—इसको कुछ फिकर मत करो। मैं सभा कूं तुम्हारे घर आऊँगी। ला रुपया दे द। तो फिर यह बात किसी को मालूम न हो।

सितावो वाह शाबाश। यह भी कछू बात है। यहँ कोई सुनैगो, तो हमें जितनी लाज होगी, तुम्हें तो उतनी नहीं। हम हिन्दू तू मुसल्मान तुम्हारे जातपाँत तो नहीं तुम्हारे एक खसम मर जाय तो झट दूसरो खसम कर लो।

छन्नो—अच्छा हम तो रॉड होकर के दूसरो निकाह कर लेती हैं, हिन्दू क्या करते हैं? अच्छा जो चाहें सो करो, ला रुपया ला?

सितावो—यह ले।

छन्नो—(रुपये गिनकर) ये तो एक कम बीस रुपये भये।

सितावो - हां छै रुपया मेरी दस्तूरी।

छन्नो - ना, ना, ये बात न होगी, दो रुपये ले ले।

सितावो—ना, ना, में चार रुपया लूंगी।

छन्नो—अच्छा तो दो रुपये फेर दे।

सितावो - ये ले—और देख संझा कू या बगीचा मे आय जैयो, मै ह्वासे तोकू ले जाऊंगी।

छन्नो—अच्छा, तो तू अब जा?

सितावो—देख ये कोई ऐरे गैरे के रुपया नहीं हैं ये रुपया छलछन्द करके नहीं पचैंगे, तो अब मैं जाऊँ हूँ।

[प्रस्थान]

(मौला का प्रवेश)

मौला—(नेपथ्य की ओर देखकर क्रोध से) हरामजादी का सिर फोड़ूं तो मजा हो, गुसैंया! यह काफर मुसल्मान की इज्जत खराब करैगा। देखियो मै कहे देता हूँ, सो याद रखना, होशयार रहना, साला हाथ न लगाने पावै।

छनो—तुमसे ज्यादा मैं समझती हूँ।

[प्रस्थान]

(विद्याधर पण्डित का प्रवेश)

विद्या०—(स्वगत) बहुत लकड़ी की जरूरत है, तो यह सूखी इमली न कटा डालें? हाय बालकपन में इस वृक्ष के नीचे कितना खेल कूद करते थे, वह याद करतेही चित्त चञ्चल हो जाता है (बड़ी लम्बी साँस लेकर) जाने दो इन बातों के सोच विचार से क्या होगा (पुकारकर) अरे मौलाबकस!

मौला—महाराज! क्या कहते हो?

विद्या०—अरे देख! यह इमली का पेड़ कटाना है तू काट सकेगा?

मौला—काट क्यों नहीं सकूंगा ?

विद्या०—तो अपनी कुल्हाडो लेकर हमारे संग चल।

मौला—क्यों महाराज! लाला ने तुम्हें मां के दिन के लिये क्या दिया ?

विद्या०—अरे इन बातों से क्या काम ? देना तो एक ओर जो दस बीस बीघे ब्रह्मोदक जमीन थी, वह भी छीन ली और अब विपत्ति के समय में जाकर कहा तो कहने लगे कि हम आजकल बड़ी खटपट में हैं, कुछ नहीं दे सकते, फिर जब बहुत कहा, पांच रुपये देने लगे (दीर्घनिश्वास) सब परमेश्वर करता है।

मौला—(सोचकर) महाराज! ज़रा इधर आना, तुमसे कुछ बात कहूँगा।

विद्या०—क्या बातचीत है ? यहीं कह न ?

मौला—यहां नहीं—इधर।

विद्या०—चल।

(दोनों गये)

(सितावो और छन्नो का फिर प्रवेश)

सितावो—छन्नो! वा बगीचा में नहीं।

छन्नो—तो फिर मुझे कहां ले चलेगी, बता ?

सितावो—देख! ये पीपर के ऊपर महादेव को मठ है ना, ह्वां चलनो पड़ैगो, बस तू चार घडी रात गये या

पेड़ के नीचे ठडी रहियो, फिर मैं आऊंगी, जैसे बताऊं तैसे करियो ?

छत्रो—अच्छा तो तू जा कोई को खबर न हो।

सितावो—ऐसी तू कौनसी बाह्मन बनिया है जो इतनी डरे है।

छत्रो - सो हम जो कुछ हों, मेरा आदमी सुन लेगा, तो हम तुम दोनों की गर्दन काट डालेगा ?

सितावो - (डरकर) ये तो सच है मौला बड़ा राच्छस है। तो मैं अब जाऊँ।

[प्रस्थान]

छत्रो –(मन में) देखूं आज रात में क्या तमाशा हो, अब चलूं खाना पका लूं।

[प्रस्थान]

(विद्याधर और मौला का फिर प्रवेश)

विद्या०—राम ! राम ! बुढ़ापे में भी यह रंग ? तिसमें भी मुसल्मानी । राम । राम । सचमुचही कलियुग आ गया । मौला—देख हमारी बात में खूब हुशियार रहियो। इसमें हमारी तेरी दोनों की बन पड़ेगी)

मौला—जो हुकुम, इसकी कुछ फिकार मत करो।

विद्या०—तो अब चल, कुल्हाड़ी कहां है ?

मौला—कुल्हाड़ी खेत में पड़ी होगी, चलो।

(इति प्रथमाङ्क)

द्वितीयाङ्क—प्रथम गर्भाङ्क ।

स्थान लाला नारायणदास का दीवानखाना ।

(लाला नारायणदास बैठे हैं)

नारा०—(स्वगत) आः । क्या आज दिन नहीं कटैगा? (जंभाई लेकर) दीनबन्धु दीनानाथ! आपकी इच्छा। खिताबो कहतो है कि नन्नी का मिलना मुशकिल है क्या कमवखती है! ऐसा उमदा सोने का कमल निकाल न सका। हा। ससागर पृथ्वी को जीत करके अन्त में अर्जुन को क्या प्रमिला के हाथ से पराभव होना पड़ा? जो हो इस समय मौला की लुगाई को जो निकाला यह भी कुछ थोड़ा आनन्द नहीं है । यह भी देखने में बुरी नहीं है, उम्र थोड़ी और नवयौवन के मद से एकबार गिरी पड़ती है शास्त्र में लिखा है कि यौवन में कुकुरी भी धन्य है (चारोओर देखकर) ओः । अब भी दो तीन घड़ी दिन होगा। क्या गजब ।

(रामनारायण बाबू का प्रवेश)

कौन रामनारायण हो क्या? आओ भाई! आओ, कब आये ?

राम०—(प्रणाम करके बैठकर) जी कल रात्रि को आया ।

नारा०—तो कहो क्या खबरें हैं, सुनें तो ।

राम०—जी सब अच्छी खबरें हैं, बहुत दिन से घर नहीं आया सो अबकी महीने भर की छुट्टी लेकर आया हूं।

नारा०—अच्छा किया। हमारे मथुरादास से भी मुलाकात हुई थी ?

राम०—जी मथुरादास से तो इलाहाबाद में रोजही मुलाकात होती थी।

नारा०—क्यों तुम तो दारागञ्ज में न रहते हो ?

राम०—जी रहता था, पर अब चौक में मकान ले लिया है।

नारा० अच्छा मथुरादास का लिखना पढ़ना कैसा होता है ?

राम०—जी, चाचाजी, ऐसा क्लेवर लड़का तो और कालेज में दूसरा नहीं।

नारा०—ऐसा क्या लड़का कहा भाई ?

राम०—जी, क्लेवर अर्थात् सुचतुर अकलमन्द।

नारा०—हां ठीक, ठीक, यह तुम्हारी अंग्रेजी का लफ़्ज़ है। भाई। यह सब हमारे सुनने में अच्छा नहीं मालूम पड़ता। ज़हीन या चालाक कहने से हम समझ सकते हैं, अच्छा रामनारायण। तुम बड़े सीधे लड़के हो, मथुरी कोई अधर्म की बात तो नहीं सीखता।

राम०—जी, अधर्म्म क्या ?

नारा०—यही, ब्राह्मणों की निन्दा, गङ्गाजी में स्नान करने से घृणा, यही सब किरिष्टानी मत !

राम०—जी यह सब तो मैं आपसे ठीक ठीक नहीं कह सकता।

नारा०—नहीं मैं जानता हूँ, मथुरी ऐसा काम कभी न करैगा वह मेरा लड़का है न। सीताराम! सीताराम! अच्छा हमने सुना है कि इलाहाबाद में अंग्रेजी पढ़े लिखे लोग सब एकाकार हुये जाते हैं। कायथ, ब्राह्मण, बनियां, खत्री, कलवार, चमार सब एक जगह बैठते उठते हैं और खाना पीना भी करते हैं? भाई! यह सच है?

राम०—जी बहुत झूठ भी नहीं है।

नारा०—क्या मुशकिल है। हिन्दूधर्म्म की मर्य्यादा अब नहीं रहैगी, और रहेगी फिर क्या? कलियुग का प्रताप तो दिन दिन बढ़ताही है (दीर्घनिश्वास लेकर) सीताराम!

(कल्लू का प्रवेश)

कौन?

कल्लू—जी! मैं कल्लू (एक ओर खडा हो जाता है)

नारा०—(इशारे करता है)

कल्लू—(इशारे करता है)

नारा०—(मन से) आः! आज क्या सन्ध्या नहीं होगी (प्रगट, अच्छा रामनारायण। सुनते है कि इलाहाबाद

मे कोई २ बडे आदमी हिन्दू मुसल्मान बावर्ची रखते हैं।

राम०—जी हां सुना है कि कोई कोई रखते है।

नारा०—थू। थू! क्या कहा? हिन्दू होकर मुसल्मान की रोटी खाते हैं राम। राम। छिः! छि!

कल्लू—(मन म) मुसल्मान की रोटी खाने से तो जात जाय और वाकी लुगाई रखने से कछू नाय। वाह। वाह! लाला साहब की बडी समझ!

नारा०—मथुरी को अब बहुत दिन प्रयाग नहीं रक्खूंगा।

राम०—जी अभी मथुराप्रसाद को कालिज छोड़ाना किसी तरह मस्लहत नहीं हैं।

नारा०—क्या कहा? और ज्यादा अंग्रेजी पढाकर क्या अपने कुल में कलङ्क लगाना है? और 'मरा बैल भी कहीं घास खाते देखा है' कहकर क्या बाप दादो का श्राद्ध तर्पण भी बन्द कराना है?

(नेपथ्य में शङ्ख, घण्टा, मृदङ्ग, करताल बजते हैं)

नारा०—आओ भाई, ठाकुरदर्शन करें।

राम०—जो हुकुम, चलिये।

(दोनों गये)

कल्लू—(स्वगत) अब लालाजी तो गये (चारोंओर देखकर) थोडी देर आराम तो करूँ (गद्दी के ऊपर बैठ जाता

है) क्या नरम मजे को बिछौना है। याके ऊपर बैठ के नींद आमने लगे है (ऊँचेस्वर से) अबे गणेशो।

(नेपथ्य में कौन ?)

कल्लू - अबे मैं कल्लू । अरे गनेसो एक चिलम तमाखू खवा वे।

(नेपथ्य मे)

ठहरा खवाऊँ।

कल्लू --(तकिया का सहारा लेकर) (स्वगत) अहा ! कैसी मौज की चोज है । लाला लोगही मजा करो करें। मजे में दूध मलाई रबडी खानी, और तकिया पर सहारो देकर बैठे रहे, यासे ज्यादा और कौन सुखी है ?

(तम्बाकू लेकर गणेशी का प्रवेश)

गणेशी —अबे ये क्या ? तू तो यहां बैठो है ?

कल्लू — अबे एकवेर मौज के जनम तो सफल कर ले। ला हुक्का ला, लाला की फर्शी ले आ तो, तो और मजा हो (हुक्का लेता है)

गणेशी - अबे तेने लाला को सो हुक्का पोनो कहां से सीखो वे ? आहा हा।

कल्लू —आहाहा ! तू एकवेर मेरो शरीर तो दाब दे।

गणेशी—चल साले। मैं क्या तेरो नौकर हूं ? आहाहा।

कल्लू—अबे तेरे हाथ जोड़ूं, आ। अच्छा तू एकबार मेरो आँग दाव दे, फिर मैं तेरो आँग दाव दूंगो।

गणेशी—आहाहा। अच्छा। तो आ।

कल्लू—हुक्का उठा दूँ, आ।

गणेशी—(शरीर दाबता है)

कल्लू—चल बे कोई ऐसे भी दाबै है? आहाहा!

गणेशी—क्यों अब अच्छो लगै है? आहाहा!

कल्लू आज यार खूब मजा कियो। आहाहा।

गणेशी—(नेपथ्य के आगे देखकर) भाग बे भाग। ये देख लाला आये।

(हुक्का लेकर हँसते हँसते गया)

कल्लू—(उठकर) बुड्ढे ने या वखत आय करके सब रङ्गत बिगाड़ दीनो। आहा! आज तो बुड्ढे को ठाठ देखकर हँसी आवे। यह घेरदार पाजामा, यह चिकन को चपकन। यह बनारसी सेला, और यह कलाबत्तू का ताज। आहाहा!

(नारायणदास का पुनः प्रवेश)

नारा०—अबे कल्लू।

कल्लू—हो आयो!

नारा—अबे वो आ गई होगी?

कल्लू—जी वे अब तक आ गई होंगी, आप चलें।

नारा०—जा तू आगे जाकर देख आ।

कल्लू—जो हुक्म।

(प्रस्थान)

नारा०—(स्वगत) ये ताज खूब माथे पर खुला है, मुसल्मान औरतें इसको खूब पसन्द करती हैं। और इससे यह भी तो एक मतलब बना कि गञ्जी चांद ढक गई (उच्चै.स्वर से) अरे गणेशी।

(नेपथ्य में)

जो आया!

नारा०—हमारा हातबक्स और शीशा तो ले आ। (स्वगत) देखूं तनक अतर तो लगा लूं। मुसल्मान मर्द औरत बच्चे अतर को खुशबू खूब पसन्द करते हैं और छोटी शीशी अपने संग भी ले चलेंगे। क्या जानें उसके बदन में प्याज की बू आती हो, बस थोड़ा सा अतर लगा कर दूर हो जायगी।

(बक्स और शीशा लेकर गणेशी का प्रवेश)

नारा०—(शीशे में मुख देखकर अतर की शीशी लेकर बक्स फिर बन्द करके) ये ले जा, और जो कोई आवे तो कह देना कि लालाजी जप करते हैं।

प्रस्थान।

नारा०—(घूमकर) आः कल्लू तो अब तक नहीं आया बड़ा पाजी है न?

(कल्लू का पुनः प्रवेश)

क्या हुआ बे ?

कल्लू—मौसी वाकू ले गई है, आप चलिये।

नारा०—तो चलो।

(दोनों का प्रस्थान)

द्वितीय गर्भाङ्क।

स्थान—बाग में टूटा फूटा शिवमन्दिर।

विद्याधर और मौला का प्रवेश।

विद्या०—अबे मौला।

मौला—जी।

विद्या०—अबे यही तो शिवाला है, अभी तक तो कोई आया दीखता नहीं। खैर तो हम इस पीपल के पेड़ पर अभी छुप कर बैठे रहें।

मौला—आपकी जैसी मर्ज़ी हो।

विद्या०—पर देख मैं जब तक इशारा न करूँ तू चुपचाप बैठा रहियो।

मौला—पण्डितजी बैठा तो रहूँगा पर मेरे सामने कहीं लुगाई पै हाथ लगाया, के कुछ बेइज्जती या जबर्दस्ती करेगा तो माले का इसी वक्त सिर फोड़ दूँगा और मुझे कुछ उसकी टहगत भी नहीं है, मैंने दूसरे गाँव में ठिकाना कर लिया है।

विद्या०—(स्वगत) आदमी क्या है, साक्षात् यमदूत है, उसे भी आज गुस्सा है, न मालूम क्या कर बैठे (प्रगट) देख भीला, इस तडका भड़कों से काम न चलेगा, तो सब बात बिगड़ जायगी, तू ज़रा चुप होकर बैठा रह।

भीला—अरे जाओ पण्डित। इस वक्त मुझे गुस्सा चढ़ा है, हाथ पाँव काटे जाते है, एक वक्त साला मिले, तो साले का सिर फोड दूँ और गॉव छोड़ जाऊं।

विद्या०—तो फिर मै इस बीच में नहीं हूँ जो मेरी बात न सुनेगा, तो मैं चला (गमनोद्यत)

भीला—अरे ठहर पण्डित। इतना गुस्सा क्यों होता है? अच्छा जो मैं कई दिन तक चुपचाप बैठा रहूँ, तो फिर तो उसे मजा चखा दूंगा?

विद्या०—फिर क्यों नहीं?

भीला—अच्छा तो चलो तुम जो कहोगे, सो करूंगा।

विद्या०—तो इस पेड़ पर चुपचाप बैठा रह।

[दोनो गये]

(सितावो और छन्नो का प्रवेश)

छन्नो—अरी वहन, सितावो। मुझे कहा ले आई? वहन मुझे बड़ा डर लगता है। साप खाय जायगा, कै क्या होगा कुछ कह नहीं सक्ती।

सितावो—अरी ये महादेव को मन्दिर है न। और दो चार पाच कोस नही चलनो पड़ैगो, तू यहा ठहर जा। लाला तोलों आये जायँ हैं।

छन्नो -ना वहन अँधेरा है डर लगता है। इस जगल में कैसे दो जनें रहेंगे?

सितावो—(मन में) झूंठ नहीं कहै है, जो अन्धकार है शरीर काँपै है, फिर यहां भूत को डर भी है (पीछे फिर कर देखकर) आ: अब तो आते दीखते नही।

छन्नो तू यहा वैठीरह, मै तोजातोहूं (जाना चाहतो है)

सितावो—(छन्नो का हाथ पकड़कर) जा मर छिनाल मैं रहकर कहा करूंगो? (मन में) हाय! मेरो कहा अब वो समय है, पलै पान कोई खाय है (प्रगट) तू वहना! थोड़ी देर और ठहर। लाला आयहो समझ।

छन्नो - ना वहन! मुझे तेरे रूपया पैसा नही चहिये, मेरे मर्द को कहो ये वात मालूम हो गई तो मुझे जीती न छोड़ेगा।

सितावो—अरी क्यों झूंठ झूंठ डरपै है? भला वो कैसे जानेगो? वो का यहा देखने आवेगो? फिर डर काहे को? तनक ठहो रह (सचकित मन में) अरी दैया या मन्दिर में तो कछू खटका भयो? राम! राम! राम! (छन्नो को पकड़ लेती है)

छन्नो—(दुःखित होकर) तू नहीं छोड़ती तो मत छोड़, क्या करूँ जो खुदा करेगा, सो होगा, तो चल इस मठ में घुस चलें, नहीं तो कोई इधर उधर से देख लेगा।

सितावो—ना, ना ना, यहीं अच्छी हैं (मन में) आः कहो बूढो डोकरा मर तो नहीं गयो।

छन्नो—(चकित होकर) देख बहन, ये कौन दो जाने आते हैं! मै तो या मठ में छिप जाती हूँ।

सितावो—ना री ना! यही ठडी रहना। मोकू तो लाला से दिखाई पडे हैं (देखकर) हां ये तो वेही है, और संग में कलुआ भी है। चलो। प्रान बचे।

छन्नो—ना बहना। मै तो जाती हूँ।

सितावो—अरो ठडी रह, जायगी कहां?

(लाला नारायणदास और कल्लू का प्रवेश)

सितावो—वाह लाला! ठडे ठडे कब से पांव दूख गये हैं। आपने इतनी देर कर दीनी, हम तो अब तक चली जातीं।

नारा०—हा कुछ देर तो जरूर हो गई लेकिन हमारी जान साहब तो तशरीफ ले आई (मन में) ओः! मुसल्मान होने से क्या बिगड़ गया ये लडकी रूप में तो साक्षात् लक्ष्मी है। घूडे पर गुलाब का फूल है। (प्रगट कल्लू से) अबे तू आगे जाकर खड़ा हो जा, देख कोई इधर आवे नहीं।

कल्लू—जो हुकुम ।

नारा०—अरी सितावो ! यह तो बड़ी शर्म करती है, क्या हमारी तरफ देखना भी नहीं (कनों से) जान एक दफा अपने गुले रुखसार से कुछ शीरीं कलाम तो फर्माओ कि यह जिन्दगी मजे में कटै । हरे २ इसमें शर्म क्या ?

कल्लू—(मन में) अब हरे हरे क्यों ? अल्लाह अल्लाह कहो।

नारा०—हा ! यह नूरजहां क्या मौला के घर में अच्छी लगती है । यह तो बादशाह की बेगम होती तो खुलती 'कहीं कहीं गोपाल की गई सिटक्की भूल । काबुल में मेवा करी व्रज में टेंटो फूल ॥'

हाय ! चन्दे आब चन्दे माहताब । तुम्हारी नाजनी सूरत देखकर मेरा दिल कली कली खिल गया आहा।

सितावो—(मन में) लाला आज मरे कल दूसरा दिन, पर तब भी हँसी ठट्ठा नहीं भूले । राम में आग लाईं आग ! अरे राम ! (प्रगट) लालाजी ! ये तो गाँव की मुसल्मान हैं, यह का यह सब समझै है ।

नारा०—अरी तू चुप रह न ?

सितावो—जो हुकुम ।

छक्को—अरी सितावो बहन ! मैं तेरे पाँवों पड़ूं, तू मुझे यहां से ले चल ।

सिताबो - अरी मर। हजार दफा वही बात? लाला ने इतनो कही, पर तब भी तेरो मन नहीं चलै। हज़ार कहो, पर आखर तो मुसल्मान है न। कहनावत है न, 'मुसल्मान अच्छा ईमान' लाला साहब कूं देख कै कितनी ब्राह्मण, कायस्थ की बेटी दौडें हैं तू तो मुसल्मान है. तेरे जात है कि पांत हे? कै धरम करम है? यह समझ, कि बडे भाग जो लाला की नज़र में चढी।

छन्नो - ना बहन। मैं बडी देर से घर छोड करके आई हूँ, मेरा आदमी आवैगा, मोकू खोजैगा, मैं तो जाती हूँ।

नारा० - (आञ्चल पकड़कर) जानमन् जानान् जान, जान सलामत। तू जायेगी, तो मैं अभी जाऊँगा तू मेरी जान, तू मेरे कलेजे का टुकडा, तू मेरे चौदह पुरखों की मा।

(पूर्वी)

मेरे तू जिय में बसत नवलप्रिया प्रानप्यारी।
तूही जीवन तूही प्राण, तूही सकल गुणनिधान।
तो समान और नहि मेरे हितकारी।

देखो। बूढा समझकर मत डरना, तुम जो चली जाओगी, तो मैं अभी मर जाऊँगा।

कल्लू—(स्वगत) बुड्ढा ताजगञ्ज का, बुड्ढी मैनपुरी की।

सितावो—लालाजी। छन्नो कू डर लगै है कहीं कोई जाकू देख न ले, तो या समा मन्दिर में चले जाओ न।

नारा०—(चिन्ता करके) ऐ ! मन्दिर में? हां तो खण्डित महादेव में तो शिवत्व नहीं इसकी तो व्यवस्था भी ले ली है । फिर क्या इस परी के लिये हिन्दूधर्म क्या चीज़ है ।

(नेपथ्य में गम्भीर स्वर से)

भला बदमाश बेईमान ! भला !

[सब को भय]

नारा०—(त्रास से चारोंओर देखकर) आं-आ-आ आ मैं नहीं, मैं नही ! अरे बाप रे ! यह क्या ? कहा जायँ ।

सिताओ—(काँपकर) राम ! राम ! राम ! मे तो पहिले सेही जानैहो राम ! राम ! राम !

नारा०—अरे कल्लू ! इधर आ !

कल्लू (काँपकर पहले) बचूं तो ।

(नेपथ्य में हुङ्कारध्वनि)

मि०—ई ई ई । (ज़मीन पर गिरकर मूर्च्छा आ जाती है)

नारा०—सीताराम ! सीताराम ! अरे राम ! क्या होगा ?

(नेपथ्य में] देख न, क्या होता है ?

नारा०—(हाथ जोड़कर कातर होकर) भाई ! मैं कुछ नहीं जानता, दुहाई है सर्कार की, मुझे माफ करो (साष्टाङ्ग प्रणिपात)

(मुंह ढांपकर मौला का वेग से प्रवेश, कल्लू को थप्प मारना, और उसका जमीन पर गिरना फिर नारायणदास को जमीन पर गेरकर उस्की पीठ पर बैठकर घूंसे मारना और सितावो को लात मारकर भागना)

नारा०—आह रे ए ए।

(नेपथ्य में) विद्याधर का 'करमगति टारी नाहि टरे गाना और प्रवेश।

कल्लू—अरे ये विद्याधर पण्डित आये, अरे अबकी बचे ब्राह्मन के पास भूत प्रेत नही आवे हैं (हाथ झुलाकर अरे भाई। भूत को हाथ बड़ो कड़ो है।

विद्या०—अरे लाला साहब। हैं ऐसे पड़े हैं, क्यों? क्या हुआ? ऐं?

नारा०—(विद्याधर को देखकर उठकर) विद्याधर महाराज है? अरे भाई आज भूत के हाथ से मर चुके थे, और क्या? तुम आ गये, बड़ा अच्छा हुआ।

सिताबो—(होश में आकर) राम। राम। राम।

कल्लू—अरी मौसी। भूत चलो गयो, अब डर नहीं, उठ।

सितावो—(उठकर) वो गयो। आः अब प्राण बचे। तो चल बेटा, अब यहां कहा करेगे। मैं बचो रहूँगी तो बहुत नौकरी मिल जायेंगी (विद्याधर को देखकर) अरे राम। यह तो मिस्सरजी हैं।

विद्या०—लालासाहब। मैं इधर होकर जाता था, आदमी के चिल्लाने का शब्द सुनकर इधर चला आया कहिये तो यह बात क्या है? आप इस समय यहां कैसे? और ये लोग क्यों आये? और ये तो सीता की बहू दिखलाई देती है।

नारा०—(स्वगत) एक ओर बचा, तो दूसरी ओर आफत क्या करूँ (प्रगट विनयपूर्वक) भाई। तुम तो सब जानते हो, मुझे लाजों मत मारो। मैंने जैसा काम किया, वैसा फल पाया। तो देखो भाई। तुम्हारे हाथ जोड़कर कहता हूँ कि मुझे यह भिक्षा दो कि यह बात किसी को खबर न पड़े। बुड्ढी उम्र में इन बातों की चर्चा होने से हमारी इज़्ज़त आबरू सब मिट्टी में मिल जायगी। तुम भाई हमारे घर के हो, और ज़्यादा क्या कहूँ?

विद्या०— यह क्या लाला साहब। आप बड़े आदमी राजा हैं मैं गरीब ब्राह्मण हूँ और जब से आपने हमारी वह ब्रह्मोत्तर ज़मीन ले ली, तब से दिन भर में खाने को भी नहीं जुड़ता तब भला मैं आपका 'आत्मीय' कैसा हो सकता हूँ।

नारा०—बस, बस, रहने दो भाई! मैं कहता हो तुम्हारी वह ज़मीन फेर दूँगा, और देखो! तुम्हारी मा के श्राद्ध में

मैंने कुछ थोड़ाही बहुत दिया था, सो अब तुम को नगद पचास रुपये और दूँगा, पर इतना काम करो कि आज का यह कर्म किसी को मालूम न पड़े।

विद्या०—(हँसकर) लाला साहब! काम बहुत बुरा है इससे कहनाही पड़ता, पर आपने जब ब्राह्मण को कुछ दान करना स्वीकार किया है, तब इसका एक प्रकार प्रायश्चित हो गया। तब फिर मुझे इस बात के प्रसंग करने से क्या काम? इसके लिये आप निश्चिन्त रहें।

(स्वभाविक वेष से मौला का प्रवेश)

मौला—लाला साहब! सलाम!

नारा०—(अत्यन्त व्याकुल होकर) ऐ यह क्या? यह फिर क्या सर्वनाश हुआ चाहता है?

मौला—(हँसकर) लाला साहब! मैंने घर में आकर छ्री को तलाश किया तो सब ने कहा कि इस फूटे मन्दिर की ओर सितावो के साथ गई है, तब ढूंढते २ यहां आया मुझे क्या मालुम थो कि आप मुसल्मान होना चाहते हैं? छ्नो तो छ्नो इससे अच्छी २ परीजाद आपके लिये ले आता। इसके लिये आपने इतनी तक लीफ क्यों करी? तोबा! तोबा!

नारा०—(सोचकर नम्र होकर) भाई मौला ! मैंने सब समझ लिया, भाई मैंने तेरे ऊपर जैसा जुल्म किया, वैसी सज़ा पा ली। अब ज्यादा रहने दे, माफ कर, मे तुझे भी कुछ दूँगा, पर भाई ! यह बात किसी को मालूम न पड़े, यह मुझे माँगा दे। भाई मौला ! मैं तेरे हाथ जोड़ूं।

मौला—यह क्या लालाजी ! आप तो मुसल्मानों को इतनी गालियां देते थे, अब तो आप खुद मुसलमान होना चाहते थे, इससे बढ़कर और क्या मजे की बात है। तो यह बात तो मैं अपने बिरादरीवालों से कहूंगा।

नारा०—ग़ज़ब ! क्या कहता है मौला। भाई विद्याधर ! अबकी तो मैं खूब मारा पड़ा, तुम नहीं बचाओगे, तो और कुछ तजवीज नहीं है। तो एकबार मौला से तुम दो बातें समझाकर कह दो।

विद्या०—(कुछ हँस करके) अबे मौला ! इधर आव, देख एक बात कहूँ।

(मौला को एक तरफ ले जाकर चुपचाप बातचीत करना)

नारा०—सीताराम ! सीताराम ! ऐसी आफत में भी आदमी पड़ता है। एक तो बेइज्जती दूसरे जात का डर। मुझे तो इस वक़्त ऐसा दुःख है कि पृथ्वी से दो टुकड़े

हो जायें और मै उसमें समा जाऊँ। अब कान पकड़ता हूँ, ऐसा काम कभी नहीं करूंगा।

छन्नो—(आगे बढ़कर हँसकर) क्यों? लाला साहब। क्या अब मुसलमानी अच्छी नहीं लगती?

नारा०—हट दुष्टिनी! अभागी। तेरे लियेही तो मेरी यह कम्बख्ती आई।

छन्नो—यह क्या लालाजी। मै तो तुम्हारी कलेजा थी, और न जाने क्या २ थी। और अब मुझे दूर करते हो।

नारा०—फक्त तुझकोही दूर नहीं करता, यह बुरा काम ही आज से दूर किया। इसमें भी यदि नारायणदास को चेत न हो, तो इसके समान और कोई गधा नहीं।

कल्लू—(सब को सूचन करके) ओ मौसी। तो कल्लू को रोजगार तो गयो।

सिताबी - उठ बेटा। जीते रहेंगे, तो भीख माँग खायेंगे, कौन जाने मुसल्मान की लुगाई कि संग भूत रहे है अब मै ऐसे काम में कभी हाथ न दूँगी।

विद्या०—लालाजी। आप मौला कूं दो सौ रुपया दे दीजिये, तो अभी सब झगडा मिट जाय।

नारा०—दो सौ रुपये। हे राम! धन से भी गया। विद्याधर भाई। कुछ कमती बढ़ती में न होगा?

विद्या०—जी नहीं इससे कम में किसी तरह न होगा।

नारा०—(सोचकर) अच्छा तो चलो, इतनाही दूँगा। मैंने सोचकर देखा तो इस कर्म की यही दक्षिणा उचित थी, जो हो भाई। तुमलोगो से आज खूब उप देश मिला। यह उपकार मैं सदैव मानूंगा। मै जैसा महापापी था, वैसाही दण्ड भी पाया। अब भगवान से यही प्रार्थना है कि ऐसी दुर्मति फिर कभी न हो। बस मेरी वही कहावत हुई कि—

"बुढ़े मुंहमुहँसि लोग देखें तमासे"

जवनिकापतन।

समाप्त।

कृष्णकुमारीनाटक ।

जिसे

रामकृष्णवर्म्मा

सम्पादक भारतजीवन बनारस

ने

हिन्दी रसिकों के शिक्षा और चित्तविनोदार्थ बङ्गभाषा
से शुद्ध आर्यभाषा में अनुवाद किया ।

काशी ।

भारतजीवन यन्त्रालय में मुद्रित हुआ ।

सन् १८९९ ई० ।

धन्यवाद ।

हम अत्यन्त कृतज्ञतापूर्वक प्रकाश करते हैं कि स्वर्गवासी बाबू राजकिशोर दे के पुत्र बाबू लालबिहार दे ने हमारी प्रार्थनानुसार इस ग्रन्थ के अनुवाद और प्रकाश करने की आज्ञा हमें देकर अनुगृहीत किया जिस्से हिन्दी के रसिकों को भी इसका आनन्द प्राप्त होगा और वे देखेंगे कि प्राचीन राजा महाराजाओं ने किस प्रकार प्राणसमर्पण कर धर्म्मरक्षा की है। हम अपने परम मित्र कलकत्ता निवासी बाबू व्रजनाथ पण्डित को भी विपुल धन्यवाद देते हैं कि उन्हों ने इस कार्य्य में हमारी विशेष सहायता की है। हम आशा करते हैं कि उक्त स्वत्वाधिकारी की आज्ञानुसार हम और भी अनेक ग्रन्थ हिन्दी भाषा में समयानुसार प्रकाश करते जायँगे।

रामकृष्ण वर्म्मा
सम्पादक भारतजीवन
बनारस।

भूमिका ।

पाठकों के प्रति यह विदित ही है कि जब से श्रीयुत भारतभूषण भारतेन्दु बाबू हरिश्चन्द्र ने और विशेषतः विद्वद् शिरोमणि लाला श्रीनिवासदासजी ने इस भारतवर्ष को छोड़ स्वर्गलोक को भूषित किया तब से अभागिनी हिन्दी में कोई भी नाटक उपन्यास अथवा कोई अपूर्व मनोहर ग्रन्थ देखने में न आया । नाटकों की जैसी कुछ दुर्दशा इनदिनों है वह केवल वेही लोग जान सकते हैं जो नाटक के गुण दोष और लक्षणों से अभिज्ञ हैं। इन दिनों यह परिपाटी पड़ गई है कि दो तीन पुरुषों की बात चीत अथवा रंगभूमि पर व्यर्थ ही हाथ पैर हिलाने ही को लोग नाटक कह देते हैं । स्वर्गवासी बाबू हरिश्चन्द्र जी ने इन दोषों के दूर करने और लोगों को नाटक के भेद लक्षण और लाभ समझाने के लिये "नाटक" नामक एक उत्तम ग्रन्थ लिखा था परन्तु आलसी लोग उसे कब देखते हैं। दूसरे यह ऐसा नाटक है कि इस में शृङ्गार, हास्य, वीर, करुणा, इत्यादि सब रसों का लेश है, धर्मरक्षा और मानरक्षा का तो यह आदर्शस्वरूप है । ऐसे नाटक की अत्यन्त आवश्यकता हिन्दी में जान हमने स्वर्गवासी माइ

केल मधुसूदनदत्त महाशय के ग्रन्थ का अनुवाद प्रकाश किया है । इससे हमारो कदापि यह इच्छा नहीं है कि हम कोई मुनाफा उठावें अतएव इसका मूल्य भी इतना स्वल्प रक्खा है कि छपाई का खर्च मात्र केवल निकल आवे, और हिन्दी के भण्डार में यह भी एक छोटा सा ग्रन्थ हो जाय । यदि हमारे पाठकों को इसके पढ़ने से किञ्चित् भी देशाभिमान मान और धर्म्मरक्षा का अङ्कुर हृदय में जमैगा तो हम अपने अनुवाद का परिश्रम सुफल समझेंगे ।

रामकृष्णवर्म्मा

सम्पादक भारतजीवन—बनारस ।

समर्पण।

श्रीमन्महाराजाधिराज गोस्वामी श्री १०८ महाराज

बालकृष्णलाल कृष्णकुमारी नाटक लेकर पेषु—

ता हूं क्योंकि खाली हाथ

आज मैं अत्यन्त हर्षपूर्वक (६

श्रीमान् की सेवा में उपस्थित हो

श्रीयुत के सन्मुख कैसे आज।

यह अभिप्राय है कि भारतवासी

विद्यानुरागी, महोदय सुभ्र सरोर

कितनी कृपा और अनुग्रह दृष्टि र

उदयपुर के उच्चवंश के उज्ज्वल न

में है जिसके श्रीमान् हो पू।"

मान मर्य्यादा और धर्म्मरक्षा

शिक्षा है अतएव "त्वदीयं र

ास।

स—

जयपुर के मन्त्री।

जयपुर का सखा।

भीमसिंह की रानी।

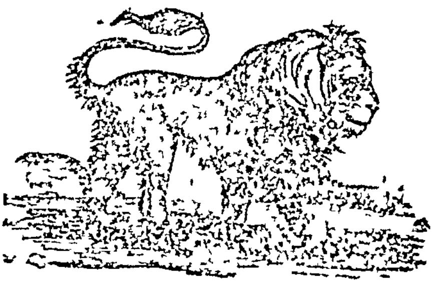
भीमसिंह की कन्या।

जकुल की पूज्य।

यपुर की वेश्या।

की सखी।

सी इत्यादि।



स्थान रङ्गभूमि ।

रङ्गशाला में नान्दी मङ्गल पाठ ।

दोहा ।

जयति प्रेम दोउ बरन जहँ बरनबिचार न होय ।
बरन हेत बरनहिं जहां बर नहि तन धन दोय ॥

सूत्रधार का प्रवेश ।

सूत्रधार—(आकाश की ओर देखकर) धन्य ईश्वर । इस घोर कलि कठोर के बीच में भी जहां चारोंओर से नीचगण बुद्धि, विद्या, चातुरी, राजनीति, कलाकौशल, राजश्रीर्त्ति, धर्म्मनिष्ठता इत्यादि को उच्छिन्न कर भारत को आरत कर रहे हैं तहां भी यह महाराज द्विजराज काशिराज की सभा महाराज भोज विक्रमादि की सभा की शोभा झलका रही है । (स्वगत, क्या कलि में सर्व प्रकार की विद्या यवन नीचों के भय से चारोंओर से चलायमान हो अन्नपूर्णा की नगरी में मुक्ति के हेतु मूर्त्ति धारण कर सभासद के व्याज से साक्षाद्विश्वनाथ स्वरूप महाराज काशीराज श्री १०८ ईश्वरीप्रसादनारायणसिंह वीरपुङ्गव के साथ सनाथ होने को उपस्थित हैं ? । तो इस अलौकिक शोभा को निज प्राणप्रिया को भी दिखाऊँ तो ठीक हो ।

(प्रकाश) अरी प्रिये । शीघ्र इधर तो आ ।

नटी—प्राणनाथ । क्या आज्ञा है? किस हेतु यह दासी स्मरण की गई?।

सूत्रधार—अरी प्राणप्रिये । अपने नेत्रों को तो सुफल करो देखो यह व.रुचि क अवतार वैयाकरणसिंह पं० श्री शिवकुमारमिश्र है। यह साक्षात् कालिदास घटकर्परादि कवि के मूर्त्तिसम पण्डित बेचनराम त्रिपाठी तथा यह पण्डित श्री लाप्रसाद तथा यह नृसिंहशास्त्री और यह उनके पुत्र महामहोपाध्याय गङ्गाधरशास्त्री हैं । यह दर्शनशास्त्र के आचा॰ श्रीकैलासचन्द्र शिरोमणि तथा यह पण्डित राममिश्रशास्त्री है। यह साक्षाद्वराहमिहाराचार्य्य के अवतार महामहोपाध्याय बापूदेवशास्त्री सी० आई० ई० तथा यह महामहोपाध्याय पूज्यवर पण्डित श्रीसुधाकर द्विवेदी हैं । यह देखो साक्षात् धन्वन्तरि वैद्यराज मूर्त्ति धारण किये अमृतशास्त्री बैठे हैं । प्रिये । आज तो मुझे महाराज विक्रम की सभा का सा आनन्दानुभव हो रहा है ।

नटी—प्राणवल्लभ । मेरा जी चाहता है कि ऐसे २ महानुभावों के सन्मुख हमलोग भी जहां तक हो अपने गुणों को दिखावें ।

सूत्रधार—प्राणवल्लभे !' यह तो मेरी भी इच्छा है कि इन्हें

कोई नाट्यलीला दिखाऊँ, पर कौन सा नाटक खेलूं यही विचार कर रहा हूं।

नटी—नाथ। बहुत से अद्भुत नाटक, शृङ्गार, हास्य करुणा वीर, अद्भुत, भयानक इत्यादि रस से, तथा समाज संशोधन, देशहितैषिता भारतदुर्दशाप्रदर्शन गुणों से भूपित हैं, चाहे जो खेलिये सब में मैं विख्यात हूं।

सूत्र०—प्रिये। नाटक तो सभी हैं परन्तु ऐसे २ गुणियों को रिझानेवाला नाटक तो अभी तक मेरे मन में कोई ने जँचा।

नटी—प्राणेश। नाटक के रसिकों के न होने से बहुत दिनों से जो नाटक नहीं खेला गया इससे क्या आप भूल गये? शकुन्तला, भारतजननी, नीलदेवी, भारतदुर्दशा इत्यादि सभी तो एक से एक उत्तम भरे पड़े हैं।

सूत्र०—हां ठीक है परन्तु ये विद्वज्जन, रासलीला इन्द्रसभा, पारसीलीला लैलीमजनूं, गुलबकावली तथा भारतजननी इत्यादि नाटकों से क्या प्रसन्न होंगे? जैसे भ्रमर नित्य नई २ सुमनवासना का रसिक होता है तैसेही विद्वज्जन नित्य २ नई २ कलाचातुरी के अनुरागी होते हैं सा प्रिये! इन्हें कोई नूतन नाटक जो देशहितैषिता इत्यादि गुणों से भूपित हो दिखाना चाहिये।

नटी—नाथ! यदि अपराध क्षमा हो तो कुछ निवेदन करूं।

सूत्र०—प्रिये निःशङ्क कहो।

नटी—नाथ। अनुपम जवाहिर वही है जिसके लिये सुन्दर जौहरी भी प्राण दे, सो स्मरण कीजिये कि ऐसे कुअवसर में भी विद्दर माइकेल मधुसूदनदत्त प्रणीत जिस कृष्णकुमारीनाटक के सीखने के लिये आप नाटकलीलापारङ्गत होकर भी रात दिन व्यग्र थे और वङ्ग भाषा मे होने के कारण उसकी लीला से वञ्चित थे, अन्त मे प्रार्थनापूर्वक बाबू रामकृष्णवर्म्मा सम्पादक भारतजीवन द्वारा हिन्दी में अनुवाद करा बड़े श्रम और प्रेम से अभ्यास कर मुझे भी अभ्यास कराया। हे प्राण वल्लभ। मै तो नाथ की आज्ञाकारिणी दासी ही हूं, जिसके लिये आज्ञा मिलेगी वही खेल कर दिखाऊंगी परन्तु मेरा मन तो वारवार पुराने नाटकों के खेलने से उपराम हो गया है, उत्कण्ट अभिलाषा तो यह है कि इसी नये अभ्यस्त नाटक को खेलूं।

सूत्र०—(नटी का हाथ धर के शास्त्रो में सत्य लिखा है कि पुरुषों की अपेक्षा स्त्रियों की चौगुनी वुद्धि होती है, धन्य प्रिये। आज ऐसे अपूर्व नाटक का स्मरण दिलाया कि जिसमे उत्तम कोई नहीं सो मेरा तो मन स्थिर हो गया अब विलम्ब न करना चाहिये।

नटी—नाथ। इस नाटक के उत्तम होने में तो कुछ सन्देह

नहीं परन्तु प्राणि मात्र में रुचि विचित्र २ होती है सो यदि आज भाग्यवश हम लोगों का खेल महाराज द्विजराज काशिराज श्रीईश्वरीप्रसादनारायणसिंह बहादुर G C S. I की सभा मध्य आनन्दजनक हुआ तो और भी अनेक नाटकों के अनुवाद के लिये हमलोग उक्त सम्पादक महाशय से निवेदन करेंगे।

सूत्र०—हां हां इसमें क्या कहना है, बस चलो अब विलम्ब न करो, सज्जित होकर अपने २ काम पर उपस्थित हो जायँ।

(दोनो जाते है)

इति प्रस्तावना।



कृष्णकुमारीनाटक।

प्रथम अङ्क।

प्रथम गर्भाङ्क।

स्थान जयपुर—राजगृह।

(राजा जगतसिंह और उनके पीछे पत्र हाथ में लिये हुये मन्त्री का प्रवेश)

राजा—आह! क्या आपत्ति है!!! क्या तुम हमें एक क्षण भी विश्राम न करने दोगे? तुम्हीं जाकर इसका जो कुछ हो सो कर डालो।

मन्त्री—महाराज! पृथ्वी का भार केवल शेष भगवानही उठा सक्ते हैं और किस्को सामर्थ्य है? श्रीमान् इतने विरक्त न होवें।

राजा—मन्त्रिवर। शेष भगवान के साथ हमारी तुलना कैसी हो सक्ती है? वे साक्षात् देवांश है और मैं तो केवल एक क्षुद्र मनुष्य मात्र ठहरा। आहार, निद्रा समय समय पर विश्राम, ये सब न होने से तो हमारा जीवन दुष्कर है सो देखो इस समय हमें आलस्य जान पड़ता है, न होय तो ये सब पत्र सन्ध्योपरान्त देख लिये

जायेंगी, इसमें कुछ हानि थोड़ेही है, यवनदल वा महाराष्ट्र सैन्य कुछ इसी समय तो आक्रमण करने आतेही नहीं।

(धनदास का प्रवेश)

अरे धनदास। आओ २ कहो ही तो प्रसन्न न?

धनदास—श्रीमान् के अनुग्रह से सब कुशल है, यह अधीन तो महाराज का चिरदास है, जहां श्रीमान् के चरणों की कृपा है वहां क्या कुछ अमङ्गल हो सक्ता है?

मन्त्री—(स्वगत) सभी विनाश होगा और क्या। इस सत्यानाशी के रहते क्या कोई काम होगा? अच्छा। चलो चलें, जिस पुरुष का चित्त कामकाज में नहीं लगता उससे काम कराना अत्यन्त कठिन है, चलो (जाता है)

राजा—कहो तो क्या हाल है?

धन०—(कुछ मुस्कुराकर) महाराज इस निकुञ्जवन के तो प्रायः सभी पुष्पों का रसपान श्रीमान् एक एक करके करही चुके हैं, रह गये वही भटकटैया और धतूरे इत्यादि बचे हैं सो इस जयपुर में तो महाराज के योग्य और कोई स्त्री दृष्टि नहीं पड़ती।

राजा—सो क्यों? क्या सागर भी कभी वारिशून्य हुआ है?

धन०—महाराज—अगस्त्य भगवान् के सोखने के सन्मुख क्या सागर में कभी जल ठहर सक्ता है?



पुनराव जयपूर महाराज
को कन्याकुमारी का चित्र
पट देता है ॥

राजा—अच्छा तो फिर कोई मेघवृष्टि का उपाय है ? हो तो बताओ ।

धन०—महाराज इसके लिये कुछ चिन्ता न करें इस पृथ्वी में एकही तो नहीं सात सागर हैं ।

राजा—सुनो धनदास । तुम्हारी यह बात सुनकर हमारा चित्त बड़ा चञ्चल हो गया है अच्छा कहो तो क्या उपाय है ?

धन०—जो उपाय की कथा पीछे कहूंगा तबलौं श्रीमान् इस चित्र को तो देखें । मैं इस समय इस चित्र को केवल देखानेही के निमित्त यहां आया हूं ।

राजा—(चित्र देखकर) आहा । यह किसकी प्रतिमूर्त्ति है धनदास ! ऐसा अलौकिक सौन्दर्य्य तो हमने कभी नहीं देखा ।

धन०—महाराज ! आपने क्या मैं तो जानता हूं कि ऐसा सुन्दर स्वरूप तो किसी ने भी इस संसार में न देखा होगा ।

राजा—सोई तो, आहा क्या चमत्कारिक स्वरूप है । अच्छा धनदास । यह तो बतलाओ कि यह कमलिनी किस सरोवर में खिली है ? यदि हमें यह विदित हो जाय तो हम वायु रूप होकर वहां पहुंचें ।

धन॰—महाराज! इस विषय में बहुत व्याकुल होने से क्या होगा? यह कुछ साधारण सी बात तो है ही नहीं। यह सुधा चन्द्रलोक में रहती है, इसके चारोंओर रात्रि दिन रुद्रचक्र घूमा करता है। इसके समीप मच्छड़ तक के पहुंचने की भी सामर्थ्य नहीं है।

राजा—अच्छा कहो तो क्या हाल है; कुछ सुनें भी तो।

धन॰—बहुत अच्छा महाराज।

राजा—तो कहता क्यों नहीं? डर किसका है?

धन॰—महाराज यह उदयपुर की राजकन्या है। इस राजकुमारी का नाम कृष्णाकुमारी है।

राजा—(ससम्भ्रम) हां! (चित्र देखकर) धनदास तूने जो कहा था कि यह सुधा चन्द्रलोक में रहती है सो यथार्थही है। आहा! जिस उच्चवंश में सैकड़ों राजसिंह का जन्म हुआ, जिस वंश के यशःसौरभ से भारतभूमि परिपूर्ण है, उस वंश में यदि ऐसी अनुपमा सुन्दरी कामिनी न होगी तो और कहां होगी? जिस विधाता ने नन्दनवन में पारिजात पुष्प को सिरजा है उसी ने इस सुन्दरी को उदयपुर के राजकुल में उत्पन्न किया है। आहा! देखो धनदास—

धन॰—महाराज।

राजा—तू इस वंश के आदिकारण बाप्पारावल का यथार्थ नाम जानता है ?

धन०—महाराज, नहीं।

राजा—उस महापुरुष को लोगों ने आदर से बाप्पा नाम दिया था, उनका यथार्थ नाम शैलराज था । आहा ! उनका शैलराजत्व इस चित्रपट सेही झलक रहा है।

धन०—कैसे महाराज ?

राजा—दुर्मूर्ख । साक्षात् भगवती मन्दाकिनी ने शैलराज के घर जन्म लिया था कि नहीं ?

धन०—(स्वगत) मछली तो बंसी में फँस गई है केवल किनारे खींच लेने को देर है।

राजा—देखो धनदास—

धन०—हां महाराज।

राजा—तुम यह चित्रपट हमें दे दो—

धन०—महाराज यह अधीन तो आपका बिना मूल्य का दास है, इसका तो सर्वस्वही महाराज का है परन्तु—

राजा—परन्तु क्या ?

धन०—महाराज यह चित्रपट इस दास का नहीं है, यदि मेरा होता तो इसी क्षण श्रीमान् की सेवा में समर्पण कर देता, हमारा एक मित्र उदयपुर से यहां आया है उसी ने मुझे यह चित्रपट बिक्री करने को दिया है।

राजा—अच्छा तो है, यदि तुमारे मित्र को यथोचित मूल्य दिया जाय तो वह दे देगा ?

धन०—(स्वगत) अब कहां जा सक्ता है ? अब ले लिया है (प्रकाश) जी हां सो क्यों न होगा ? उसे तो बेचना ही है। यथार्थ मूल्य पाने पर क्यों न देगा ? किन्तु जितना मूल्य यह मांगता है वह कुछ अधिक जान पड़ता है।

राजा—देखो धनदास। यह चित्रपट अमूल्यरत्न है। अच्छा बताओ तो तुम्हारा मित्र क्या और कितना चाहता है?

धन०—(स्वगत) हां अमूल्यरत्न है। तो फिर क्या चिन्ता है? (प्रकाश) महाराज वह बीस सहस्र रुपया मांगता है इससे कम तो किसी प्रकार स्वीकार नहीं करता मैं इसके पूर्वही श्रीमान् के बिना कहे उसे बहुत कुछ कह सुन चुका हूं। कई लोग उसे १६०००) रुपये पर्य्यन्त देते थे परन्तु इतने पर भी वह किसी प्रकार—

राजा—अच्छा, तो जो मांगता है सोही दिया जायगा हम अपने कोषाध्यक्ष को अभी पत्र लिख देते हैं, तुम उस से ये रुपये लेकर अपने मित्र को दे दो परन्तु यहां लिखने के लिये तो लेखनी और पत्र नहीं है।

धन०—महाराज मुझे आज्ञा हो तो मैं इसी क्षण सब कुछ प्रस्तुत कर दूं।

राजा—अच्छा लाओ।

धन०—जो आज्ञा, मैं अभी आया।

[जाता है

राजा—(स्वगत) हमें तो स्वप्न में भी यह ज्ञान नहीं था कि महाराज भीमसिंह के यहां ऐसी स्वरूपवती कन्या है (चित्र देखकर) हे राज्यलक्ष्मी। तू किस ऋषिवर के शाप से इस पृथ्वी में आकर बास करती है।

(लेखनी और मसिपात्र लिये धनदास का पुनः प्रवेश)

धन०—महाराज मैं ले आया (राजा का बैठना और पत्र लिखना—स्वगत) इस विचार के आरम्भही में खूब लाभ हुआ देखें अन्त पर्यन्त कैसे निभता है। कुशलता में तो त्रुटि होहीगी नहीं यदि और कुछ लाभ न हुआ यो हम समझेंगे कि चोर को रानिनिवास काही लाभ बहुत है और फिर इसमें सन्देह क्या ? व्यय कुछ भी नहीं और लाभ इतना, क्या कुछ कम है ?

राजा—यह लो (पत्र देते हैं)

धन०—महाराज आप साक्षात् कर्ण हैं।

राजा—तुमने जो हमें यह अमूल्यरत्न दिया इससे हम तुम्हारे अत्यन्त बाधित हैं।

धन०—महाराज! मैं तो आपका दास हूं देखिये यदि आप इस दास का कहना स्वीकार करें तो अनायासही यह स्त्रीरत्न श्रीमान् को प्राप्त हो जाय।

राजा—(उठकर) क्या कहा धनदास क्या हमारा ऐसा भाग्य है?

धन०—महाराज! इसमें कुछ सन्देह नहीं कि उदयपुर-राजकुमारी के पाणिग्रहण की इच्छा प्रकाश करतेही आपकी इच्छा फलवती होगी। आपके पूर्व पुरुषों का विवाह कईवेर इस राज्यवंश में हुआ है और आप स्वयं कुल, मान, रूप, गुण इत्यादि सभी प्रकार से राजकुमारी कृष्णा के योग्य पात्र हैं जैसे पञ्चालदेशाधिपति द्रुपद महाराज अपनी कन्या को पौरवकुलतिलक अर्जुन को देने के लिये व्यग्र थे उसी प्रकार महाराज भीमसिंह भी आपका नाम सुनतेही अत्यन्त व्यग्र होंगे।

राजा—हां उदयपुर के वंश में हमारे पूर्ववंशजों का विवाह हुआ था इसमें सन्देह नहीं, किन्तु महाराज भीमसिंह नितान्त अभिमानी है यदि वे इस विषय में असम्मत हुये तो फिर हमारी मानरक्षा कैसे होगी?

धन०—महाराज आप सूर्य्यवंशचूड़ामणि है आप सरीखे बड़े लोग प्राय: अपना गुण भूल जाते हैं इसी कारण

आप अपना माहात्म्य नहीं जानते क्या राजा जनकजी ने श्रीमहाराज रामचन्द्र को विमुख फेरा था ?

राजा—(कुछ सोचकर) अच्छा तू मन्त्री को तो बुला ला।

धन०—जो आज्ञा महाराज।

[जाता है।

राजा—(स्वगत) देखें मन्त्री की क्या अनुमति है क्योंकि इस विषय में सहसा हस्तक्षेप कर बैठना उचित नहीं, अहा! यदि भीमसेन इसमें सम्मत हों तब तो हमारा जीवन जन्म सुफल हो जाय। (बैठते हैं)

(मन्त्री के सहित धनदास का पुनः प्रवेश)

मन्त्री—देव, यदि आज्ञा हो तो ये दो चार पत्र इस समय श्रीमान् के सम्मुख पढ़ सुनाऊँ।

राजा—(हँसकर) न। न। यह सब सन्ध्योपरान्त देखा जायगा। इस समय बैठो, तुमसे हमको और कुछ बात करना है।

मन्त्री—(बैठकर) जैसी आज्ञा।

राजा—देखो मन्त्री, महाराज भीमसिंह को क्या कोई सन्तान सन्तति है ?

मन्त्री—जी हां है।

राजा—कै पुत्र, कै कन्या, कुछ जानते हो ?

मन्त्री - जी नहीं, इस आशीर्वादक ने तो केवल राजकुमारी कृष्णा ही का नाम सुना है।

धन० — क्यों महाशय, क्या राजकुमारी कृष्णा परम सुन्दरी है ?

मन्त्री—लोग तो कहते हैं कि स्वयम् याज्ञसेनी ने पुनः इस भूमण्डल में अवतार लिया है।

धन०—तो फिर महाशय, आप इस राजकुमारी के पाणि-ग्रहण का उद्योग हमारे महाराज के साथ क्यों नहीं करते ? महाराज भी तो साक्षात् नरनारायण के अवतार हैं !

मन्त्री—इसमें क्या सन्देह है ? परन्तु इस कार्य्य में कुछ थोड़ी बाधा है।

राजा—बाधा कैसी ?

मन्त्री—महाराज, मरुदेश के मृत अधिपति वीरसिंह के साथ इस राजकुमारी के पाणिग्रहण की बातचीत हुई थी परन्तु उनके अकालही में लोकान्तर प्राप्त हो जाने के कारण वह कार्य्य न हो सका, अब हम सुनते हैं कि उस देश के वर्त्तमान नरपति मानसिंह ने इस कन्या के पाणिग्रहण की इच्छा की है।

राजा—ऐसा ? वामन होकर चन्द्रमा पर हाथ ! यह बात तो सर्वत्रही राज्य भर में विख्यात है कि यह मानसिंह

किसो प्रकार हमारा साम्हना नहीं कर सकता सो अब यह कृष्णाकुमारी से विवाह करना चाहता है! क्या आश्चर्य है। दुरात्मा रावण क्या वैदेही का उपयुक्त पात्र था ? देखो मन्त्री तुम इसी क्षण उदयपुर को दूत भेजो हम इस राजकन्या को अवश्यही बरेंगे। (उठकर) यदि मानसिंह इसमें किसी प्रकार का विघ्न करे तो मैं उसे यथोचित दण्ड दिये बिना न रहूंगा।

मन्त्री—धर्मावतार! यह क्या आपस के विवाद का समय है ? देखिये देशबैरीदल चारोंओर दिन दिन प्रबल होते जाते हैं।

राजा—आह! देशबैरीदल। तुम तो मन्त्री देशबैरीदल की कथा बिचारते २ एकदम पागल हो गये हो! एक जो दिल्ली सम्राट् है सो तो विषहीन फणि है। और जो महाराष्ट्र राजा का हाल पूछो सो नितान्त लोभी है; कुछ द्रव्य देनेही से तो उसका सन्तोष हो जायगा। अच्छा तो जाओ अब यथाविधि दूत को भेजो, मानसिंह की क्या सामर्थ्य जो हमारे साथ विवाद कर सके!

धन०—(धीरे राजा से) महाराज इस दास को भेजनेही से सब कार्य्य हो जायगा।

तो एक सद्वंश के क्षत्रिय हो तुम्हारे जाने में हानि क्या है? (प्रकाश) देखो मन्त्री तुम धनदास को उदयपुर पहुंचा दो।

मन्त्री—जो आज्ञा महाराज—(धनदास के प्रति) तो आइये आप हमारे सङ्ग आइये इस विषय में जो कुछ कर्त्तव्य हो सो स्थिर किया जाय।

राजा—जाओ धनदास जाओ।

धन०—जो आज्ञा महाराज।

[मन्त्री और धनदास दोनों जाते हैं।

राजा—(टहलकर स्वगत) आहा! क्या यह बहुमूल्य रत्न हमारे भाग्य में है? अच्छा देखें विधाता क्या करता है? धनदास अत्यन्त चतुर मनुष्य है यदि उससे यह कार्य उत्तम रीति से न हुआ तो और कौन कर सकेगा?

(धनदास का पुनः प्रवेश)

धन—महाराज—

राजा—क्यों धनदास तू फिर लौट क्यों आया?

धन०—जी महाराज, मन्त्री महाशय के साथ हमारा एक बात में मेल नहीं मिलता इसी कारण मुझे श्रीमान् के सन्मुख पुनः आना पड़ा।

राजा—सो क्या बात है।

धन०—महाराज। इस दास का यह विचार है कि ऐसे कार्य्य में जाती समय थोड़ी सी सेना भी जो साथ हो तो उत्तम होगा किन्तु मन्त्री महाशय कहते हैं कि ऐसा करने से कुछ द्रव्य का अधिक व्यय होगा।

राजा—छि:। छि:। छि:। वृद्ध हो जाने से लोगों की बुद्धि ऐसीही हो जाती है तो क्या मन्त्री की इच्छा है कि तुम अकेलेही जाओ?

धन०—ऐसाही तो जान पडता है।

राजा—छि:। क्या लज्जा की बात है। एक तो महाराज भीमसिंह स्वयं अत्यन्त अभिमानी हैं दूसरे यदि इस विषय में कुछ त्रुटि हुई तो कुछ उलटाही सामान खडा हो जायगा।

धन०—जी इसमें क्या सन्देह है। यह दास भी तो यही कहता है।

राजा—अच्छा जाओ मन्त्री से कहो कि वह तुम्हारे साथ सौ घोडे, पांच हाथी, और एक सहस्र पैदल सिपाही कर दें। इस विषय में कृपणता करने से काम नहीं चलता।

धन०—महाराज आप प्रताप में इन्द्र, धन में कुवेर और बुद्धि में स्वयम् वृहस्पति के अवतार हैं, आपही विचारें कि जब सुरपति इन्द्र ने अमृतलाभ की इच्छा से समुद्र-

मथन किया था तो क्या वे इस महत्कार्य्य में अकेलेही प्रवृत्त हुये थे ?

राजा—देखो धनदास -

धन०—जी महाराज—

राजा—जिस प्रकार नल राजा ने राजहंस को दूत बनाकर दमयन्ती के समीप भेजा था उसी प्रकार हम भी तुम्हें भेजते है, देखो जिसमें हमारा यह उद्योग निष्फल न हो।

धन०—महाराज यदि आपके कार्य्य साधन में मेरे प्राण भी जांय तौभी मै प्रस्तुत हूं किन्तु श्रीमान् के चरणों में मेरा एक निवेदन है।

राजा—क्या ?

धन०—महाराज—जिस हंस को राजा नल ने दूत बनाकर भेजा था उसे तो सोने के पङ्ख थे । इस दास को तो कुछ भी नहीं है—

राजा—(हँसकर) यह लो तुम यह अँगूठी ग्रहण करो।

धन०- महाराज आप साक्षात् दाता कर्ण के अवतार है।

राजा—तो अब विलम्ब केहि काज ? तुम मन्त्री के निकट जाकर ऐसा उद्योग करो जिसमें आजही यात्रा हो जाय । जाओ अब विलम्ब मत करो—अब हम इस समय विलासकानन को जाते है। (प्रस्थान)



धनदास ३ ईश्वरआंवे के दूनाजमें जैचन्द महाराजसे अंगूठी
लेता है॥

धन० —(स्वगत) अब तुम्हारी जहां इच्छा हो जाओ — हमारी जो इच्छा थी सो हो गई (परिक्रमण कर) धनदास कोई साधारण मनुष्य नहीं है । कहां तो उदयपुर के चित्रलेखक से बिना मूल्यही वह चित्र ले आया कहां राजा के हाथ बीस सहस्र पर बेच डाला, यह क्या किसी सामान्य बुद्धिवाले का काम है? आहा! हा! हा! बीस सहस्र मुद्रा अहा! हा! हा! और तिस पर यह अंगूठी घलुये में। (देखकर) अहा! क्या बहुमूल्य रत्न इसमें जटित है हमारे प्रपितामह ने भी ऐसा बहुमूल्य मणि न देखा होगा! जो हो धन्य धनदास! कहां से ऐसी कुशलता सीखी? ज्योतिषी लोग कहते हैं कि जो ग्रह सूर्य्य भगवान की सेवा करता है सो उनके प्रताप से तेज लाभ करता है सो हम भी राजा के अनुचर है यदि हम राजपूजा में अर्थलाभ न करेंगे तो और कहां से करेंगे और यही तो चाहिये ही। अरे आज कल क्या नितान्त सरल होने से काम चलता है? कहीं पर झूठी प्रशंसाही करना होता है, कहीं बिना कारणही दोषारोप करना होता है कहीं दो पुरुषों के बीच झूठमूठ की बातें लगाकर विरोध बढ़ा देना होता है। यह तो संसार का नियमही है अर्थात् जैसे हो 'स्वकार्य्यम् साधयेत् धीमान् कार्य्यभ्रंशो

हि मूर्खता" ऐसा न करके जो अपने चित्त का हाल दूसरों से कह देता है सो क्या मनुष्य है? उस्का मन तो वेश्या का द्वार कहना चाहिये जहां कुछ भी आवरण नहीं है, जिस्को इच्छा हुई घुस गया, ऐसे पुरुष को तो इस लोक में अन्न मिलना कठिन है और परलोक में ——— अरे बाप। परलोक में निर्वंश और क्या? ओह। इस्को क्या चिन्ता है। चलो पहिले रुपया तो मूल करें फिर देखा जायगा अभी एकबार मन्त्री के यहां जाना है, अरेरे। यह तो बड़ा कण्टक बीच में है अच्छा देखनाहो तो है कि मन्त्री की कितनी बुद्धि है।

[प्रस्थान]

द्वितीय गर्भाङ्क ।

स्थान जयपुर—विलासवती का घर ।

(विलासवती)

विलास०—(स्वगत) क्या आश्चर्य है । जो महाराज ने आज इतना विलम्ब किया । इसका क्या कारण ? (दीर्घ-निश्वास लेकर) हाय । मैं इस लम्पट जगतसिंह पर इतनी अनुरागवती क्यों हो गई हूं । कहां तो मैंने विचारा था कि मै इस नवयौवन की छलना से उसे वश करूंगी कहां स्वयम् उसकी दासी हो गई । क्या मैं सारिका की नाईं उसके जाल मे फँस गई? यदि ऐसा नहीं है तो उन्हें न देखने से मेरा चित्त इतना चञ्चल क्यों हो जाता है ? (दीर्घनिश्वास) महाराज के आने का समय तो हो गया न जाने आज मेरा चित्त कैसा कैसा कर रहा है ? (दर्पण के निकट बैठती है)

(मदनिका का प्रवेश)

(प्रकाश) अरी मदनिके । देख तो सखि आज मेरा मुंह दर्पण में कैसा लगता है ?

मद०—सखि! जैसे विमल सरोवर में कनकपद्म खिला हो, अच्छा यह सब रहने दो; इस समय मैं जो कहने आई हूं सो पहिले जी लगाकर सुन लो ।

विला॰—क्या है सखि। जान पड़ता है कि महाराज आते हैं।

मद॰—फिर वही महाराज—महाराज क्या अब तुमारेही हैं जो आवेंगे?

विला॰—क्यों—क्यों—सो क्यों—कह तो क्या हुआ? सुनें तो।

मद॰—और क्या सुनोगी? यह जो धनदास है इसका हाल तो तुम जानती नहीं—उस चाण्डाल के सदृश क्या इस संसार में और कोई है?

विला॰—क्यों उसने क्या किया?

मद॰—और क्या करेगा? जब तक तुमने उसका उपकार किया तब तक वह तुम्हारा था पर अब तो कुछ और ही रंग जान पड़ता है।

विला॰—क्या कहा? मै तो उस का हाल कुछ भी नहीं जानती।

मद॰—जानही के क्या करोगी? अच्छा तुमने उदयपुर के महाराज भीमसिंह का नाम सुना है?

विला॰—क्यों, सुना क्यों नहीं? वे सूर्य्यवंशचूडामणि हैं उन्हें कौन नहीं जानता?

मद॰—तुम्हारा यही प्रियपात्र धनदास राजा को पुत्री कृष्णाकुमारी से महाराज के विवाह का उद्योग कर रहा है।

विला०—यह बात तू ने किस्से सुनी ?

मद०—क्यों ? क्या तुम इस नगर के बाहर रहती हो? यह हाल तो सभी जानते है कि काल प्रात:कालही धनदास पत्र लेकर उदयपुर को यात्रा करेगा—यह क्या ? यह तू रोने क्यों लगी? छि:! छि:। इसमें रोना काहे का? महाराज तो तुम्हारे स्वामी नहीं जो तुम्हें सतीत्व का भय हो ?

विला०—जा—तू यहां से जा—(रोती है)

मद०—सखी । यह क्या? तेरे नेत्रों से अश्रुधारा तो रुकती ही नहीं, सखि यदि मैं ऐसा जानती तो क्या यह वृत्तान्त मैं तुझसे कभी कहती? ए देखो धनदास इधर आता है।देखो सखि, यदि तुम इस विषय को निवारण किया चाहती है, तो इसकी चेष्टा करो केवल नेत्रों से अश्रुपात करने से क्या होगा ? तुम्हारे इस अश्रुधारा को देखकर क्या महाराज भूल जायेंगे या धनदास डर जायगा ?

विला०—अच्छा आओ सखि, हमलोग छिपकर खड़े हो जांय देखें धनदास यहां आकर क्या करता है ?

(आड़ में छिप जाती हैं)

(धनदास का पुनः प्रवेश)

धन०—(स्वगत) अहा । हा । मन्त्रीराम की तो इच्छा थी कि हमारे सङ्ग अधिक सेना न जाय किन्तु हमने ऐसी कुशलता की कि बचा को हार मान हमारीही बात माननी पड़ी—आहा । हा । चाहे राजा होय चाहे मन्त्री होय धनदास के फन्दे में सभी आ जाते हैं ।। मन्त्री महाशय शर्म्मा न हैं धन का लोभ कैसे छोड़ें । और इस सैन्यदल के मार्गव्यय के लिये जो धन इकट्ठा हाथ लगेगा वह सब अपनाही ठहरा और मार्ग में भी जो जहां मिला सब गटक ! जिसके साथ इतने लोग हैं उसे अब डर किसका है ? (कुछ सोचकर) विलासवती पर जो महाराज का प्रेम था सो तो दिन पर दिन घटताही जाता है । अब इससे क्या? इससे तो हमारा अब कुछ भी उपकार नहीं होता । परन्तु स्त्री बड़ी सुन्दर है। अच्छा तो अबकी बेर देखतेही है न (प्रकाश) कोई है ? विलासवती कहां है ? कोई बोलता नहीं।

(विलासवती का पुनः प्रवेश)

विला०—औं धनदास । क्या बिचारते थे कहो तो ?

धन०—यही तुम्हारा सौन्दर्य्य विचारते थे और क्या ?

विला०—हमारा सौन्दर्य्य । यह तुम्हें किसने सिखाया ?

धन०—सिखावेगा कौन ? हमारे इन्हीं दोनों नेत्रोंही ने सिखा दिया है ।

विला०—ठीक। ठीक। तुम तो धनदास इन दिनों बड़े रसिक हो गये हो।

धन०—जो रसिक न होंय तो क्या करें?—देखो गौरीचरण-स्पर्श से एक पाषाण भी महारत्न की शोभा पाता है तिसपर यह धनदास तो फिर तुम्हाराही दास ठहरा।

विला०—अच्छा धनदास—तुमने क्या महाराज के हाथ कोई चित्र २००००) पर बिक्री किया है?

धन०—ऐं?—नहीं तो—यह तुमसे किसने कहा?

विला०—कहने कौन आयगा? यह तो सत्यही है।

धन०—न, न—यह तुम्हे कहा किसने? भला तुम्हीं सोचो कि आजकल कोई किसी को बीस हजार रुपया दे देता है? क्या रुपये भी वृक्षों में फलते हैं कि तोड़ा और दे दिया?

विला०—अच्छा जाने दो यह अँगूठी तुमने कहां पाया?

धन०—(स्वगत इस वेश्या ने तो बड़ा प्रपञ्च आरम्भ किया। (प्रकाश) यह अंगूठी महाराज ने मुझे रखने वास्ते दिया है।

विला०—अच्छा कहो तो धनदास। बालू की भूमि जितने यत्न से मेघ के जल को रखती है जान पड़ता है कि तुम भी महाराज से कोई वस्तु पाने पर उतनेही यत्न से रखते हो।

धन०—क्या जानि भइ, तुम क्या कहती हो ? मुझे कुछ समझ नहीं पड़ता।

बिला०—सो क्यों समझ पड़ेगा। तुम सरीखा तो दूसरा सरल मनुष्य इस संसार भर में हई नहीं। मैं यह कहती हूं कि जैसे बालू की भूमि मेघ के जल को पातेही एकबार शुष्क कर जाती है उसी प्रकार महाराज से कुछ द्रव्यादि पाने पर तुम भी तो करते हो ? अच्छा यह भी जाने दो। एक बात और पूछती हूं कि तुम महाराज का विवाह उदयपुर की राजकन्या से कराने का उद्योग करते हो ?

धन०—(स्वगत) अरे! यह तो सभी चौपट हुआ। इस दुष्टिन ने यह सब हाल कहां से पाया ?

बिला०—क्यों उद्योगी महाशय ! चुप क्यों हो रहे ?

धन०—यह सब झूठमूठ की बातें तुमको किसने कहा ? कहो तो—

बिला०—झूठी बातें? इतने दिनोपरान्त मैंने तुम्हारे धूर्त्तपने का भेद पाया। जो जो बातें तूने हमसे कहीं है उन बातों को यदि महाराज सुनें तो तुझे उदयपुर न भेज कर साक्षात् यमपुर को भेज दें—

धन०—इस समय तो तुम जो कहो सोइ ठीक है। इसमें तुम्हारा क्या दोष है? यह कलि का धर्म्म है। कलियुग

है न ? आजकल जिसका उपकार करो सोई अपकार करने को उद्यत रहता है। तुम्हीं विचारो न कि तुम क्या थीं और अब क्या हो गईं ? इस समय जो तुम इस राज्य में इन्द्राणी की नाईं सुखभोग कर रही हो यह सब किसकी कृपा से है ? तो तुम हमारी चुगली न खाओगी तो चलेगा कैसे ? जो हमारा अपवाद तुम न करोगी तो और कौन करेगा ? तुम भी कलियुग की स्त्री हो न ?

विला०—हां ठीक है हम कलियुग की स्त्री हैं परन्तु तुम तो साक्षात् कलियुग के अवतारही हो । तुम हमको पुरानी बातें स्मरण कराया चाहते हो, परन्तु उन सब बातों को तुम्हीं मन में विचारकर देखो तो ? तुम्हीं ने न धन के लोभ से हमारा धर्म्म नष्ट कराया यद्यपि मैं निर्धन माता पिता की कन्या थी तौभी धर्म्म मार्ग पर तो थी। अच्छा तुम्हीं कहो कि किस दुष्ट वधिक ने इस पक्षी को फसाकर इस सोने के पिंजड़े मे बन्दकर रक्खा है (रोती है)

धन०—(स्वगत) अब इस स्त्री के सम्मुख अधिक बोलना ठीक न होगा क्योंकि यदि महाराज यह सब हाल पावेंगे तो पुनः निस्तार पाना कठिन होगा (प्रकाश) हम तो तुम्हारा हित छोड़ अहित कभी नहीं करते पर तुम तो हमारे ऊपर वृथाही दुखी होती हो।

विला०—अच्छा तो इस विवाह की बातचीत किसने उठाई ?

धन०—सो भला हम कैसे जाने ?

विला०—हम कैसे जाने। तुम्हीं तो इसके सब कर्त्ताधर्त्ता ठहरे सो तुम न जानोगे तो और जानेगा कौन ?

धन०—हा। हा। तुम स्त्रियों की बुद्धिही ऐसी है। और हम जो कर्त्ताधर्त्ता हुये भी होंगे सो भी तो तुम्हारे उपकार से खाली नहीं है। तुम क्या सोचती हो कि हम जायेंगे और यह विवाह हो जायगा ? इस विषय में तो तुम निश्चिन्त रहो। यहीं बैठे २ जब तुम्हें सम्वाद मिलेगा तब तुम जानोगी कि धनदास तुम्हारा कैसा हितैषी है।

(नेपथ्य में)—अजी इस घर में धनदास हैं? महाराज उन्हें बुलाते है।

धन०—एलो सुनो—अच्छा अब हम जाते हैं तुम इस विषय में कभी कुछ चिन्ता मत करो। यदि चेत् महाराज यह विवाह कर भी लेगे तो जबलों धनदास के शरीर में प्राण है तबलों तुम्हें कुछ भी चिन्ता नहीं है तुम्हारा जो यह नवयौवन और रूप है सो कुवेर का भण्डार है (स्वगत) अब रूप लेकर चाटो, लो हम तुम्हारा माथा ही खाने चले।

[जाता है।

विला०—(दीर्घ निश्वास ले कर स्वगत) अब न जाने क्या भाग्य में लिखा है ? कुछ कहा नहीं जाता क्या कारण है जो महाराज अभी तक नहीं आये ?

(मदनिका का पुनः प्रवेश)

मद०—क्यों सखि ! हमने जो कहा था जो सत्य निकला कि नहीं ? तो अब इसका उपाय क्या ठहरा ? इस विवाह के होने पर तो फिर तुम गईं।

विला०—तो फिर क्या उपाय किया जाय ?

मद०—उपाय तो हुई है कुछ चिन्ता मत करो, धनदास समझता है कि मेरे ऐसा कोई चतुर मनुष्य नहीं है किन्तु इसी वार तो देखना है कि बचा की कितनी बुद्धि है। आओ सखि हमारे संग आओ इस दुष्ट का प्रबन्ध कर देना कुछ बड़ी बात नहीं है।

विला०—अच्छा चलो—

[दोनों जाती हैं।

इति प्रथमाङ्क ।

द्वितीय अङ्क।

प्रथम गर्भाङ्क।

स्थान उदयपुर—राजगृह।

(अहिल्यादेवी और तपस्विनी का प्रवेश)

अहि०—भगवति। हमारे दुःख का हाल क्या पूछती हो? हम जो जीती बची है सो केवल भगवान एकलिङ्ग का अनुग्रह और तुम्हारा आशीर्वाद ही इसका कारण है। हा। महाराज का मुख देखनेही से मेरा हृदय फटा जाता है। भगवति। हमने कौन ऐसे पाप किये है जो विधाता हम से एक ही वेर इतता बाम हो गया है।

तप०—राजमहिषि। आप इतनी व्यग्र क्यों होती है? यह तो संसार का नियमही है कि कभी सुख, कभी दुख, कभी हर्ष, कभी विषाद होता ही है। लोक जिसे राजभोग कहते है वह केवल सुखभोगही तो नहीं है? देखो महासागर के यात्रियों को क्या सदा अनुकूलही वायु मिलती है? कितने मेघ, कितने झड, कितनी वृष्टि इत्यादि से उनकी शुद्ध गति में बाधा होती है सो क्या कोई गिन सकता है?

अहि०—(दीर्घ निश्वास लेकर) भगवति। जिसने वह

प्रलयझड़ देखा है वही जानता है कि वह क्या पदार्थ है। यदि हमारी दुरवस्था की कथा सुनो तो—

तप०—देवि! मै चिरकाल से उदासिनी हूं इस भवसागर का कल्लोल हमारे कर्णकुहरों में प्रवेश करनेही नहीं पाता परन्तु—

अहि०—(कातरस्वर से) भगवति! महाराज का खिन्न मुखकमल देख कर जीवन की इच्छा नहीं होती! हाय! वह सुवर्ण सा शरीर एक वेरही काला सा हो गया है! विधाता ने यह क्या साधारण बिडम्बना कीई है?

तप०—राजमहिषि!—सुवर्णकान्ति तो अग्नि के उत्ताप से और भी उज्ज्वल होती है सो आप की यह दुरवस्था आपके गौरववृद्धि के अतिरिक्त कभी ह्रासकारक नहीं हो सकती। देखो साक्षात् धर्म्मपुत्र युधिष्ठिर ने क्या क्या क्लेश और दुःख नहीं सहा।

अहि०—भगवति! मैं तो जानती हूं कि राजभोग की अपेक्षा यावज्जीवन वनवास करना अच्छा है! यदि राजपद सुखदायक होता तो क्या धर्म्मपुत्र राज्य-परित्याग करके महायात्रा में प्रवृत्त होते?

तप० हां—सो तो सत्य है। अच्छा राजमहिषि! हम आप से एक बात यह पूछती है कि आप ने कहीं

राजकुमारी के विवाह की भी स्थिरता की है कि नहीं ?

अहि०—क्या स्थिर करें—महाराज को क्या इन बातों पर ध्यान है ? (दीर्घ निश्वास लेकर) भगवति ! मैं आप से क्या कहूं मुझे ऐसा कोई समय अवकाश का नहीं मिलता कि महाराज से इसका प्रसंग छेड़ूं ॥

तप०—सो क्यों राजमहिषि ?—इस विषय में तो अवहेला करना किसी प्रकार उचित नहीं है। सुकुमारी राज कुमारी कृष्णा का यौवनकाल उपस्थित है यदि इस समय उसका विवाह न कर दोगी तो कब करोगी ? यह लो, महाराज इधर आते है।

अहि०—भगवति !—एकबेर महाराज का मुखकमल तो देखो—हे विधाता ! हिन्दूकुलकमलसूर्य्य को तू इस राहुग्रास से कब मुक्त करेगा ? हाय ! यह दुःख क्या सहा जाता है ! (रोती है)

तप०—देवि ! शान्त होओ इस समय आपको इतना चंचल होना उचित नहीं है। महाराज आप की यह अवस्था देख कर कितने दुखित होंगे सो आपही विचारें न !

अहि०—भगवति ! महाराज की यह दशा देख कर क्या और जीवित रहने की इच्छा होती है। हे विधाता !

हमने किस जन्म में कौन पाप किये थे जो तू हमें इतना कष्ट दे रहा है ? (रोती है)

तप०—(स्वगत) अहा । क्या पतिव्रता स्त्री पति का दुःख देख कर स्थिर रह सक्ती है ? (प्रकाश) महिषी । अब आप तनिक हट कर खड़ी हो जाँय और किञ्चित् शान्त होकर महाराज से भेट करें (हाथ धर कर) आइये हम दोनों जनें साथही एक कोने में खड़ी हो जायँ (आड़ में दोनों खड़ी हो जाती हैं)

(नौकर के सहित राजा भीमसिंह का प्रवेश)

राजा—रामप्रसाद !—

नौकर—महाराज !—

राजा—ये कई एक पत्र सत्यदास को दे आ और देख उन्हें कहना कि इन सभों का उत्तर आजही भेज देवें ।

नौकर—जो आज्ञा महाराज ।

राजा—जो जो उत्तर जिसे जिसे देना होगा सो हमने प्रत्येक पत्र के पीठ पर लिख दिया है ॥

नौ०—जो आज्ञा महाराज ।

राजा—(स्वगत) हे विधाता । क्या इसी को लोग राजभोग कहते हैं ? ॥

तप०—(आगे बढ़ कर) महाराज । चिरञ्जीवतु ।

राजा—(प्रणाम करके) भगवति । चिरकाल के उपरान्त

आपके चरणकमल का दर्शन करने से हम जैसे सुखी हुए सो कैसे कहें ! राजमहिषी कहां हैं ? वे यहां दिखाई नहीं पड़तीं ।

तप०—जो महाराज, वे अभी यहां थीं और अब आतीही होंगी ॥

राजा—भगवति । आप इतने दिवस लों कहा थीं ?

तप०—जी, मैं तीर्थपर्य्यटन और यात्रा करती फिरती थी महाराज का तो सर्व प्रकार कुशल है न ?

राजा—हां देखतीही हो । भगवान एकलिङ्ग के प्रसाद और आपके आशीर्वाद से राजलक्ष्मी अभी तक तो इसी राजगृह में है परन्तु इसके उपरान्त रहेंगी या नही सो कहना कठिन है ॥

तप०—महाराज ऐसा क्या कहते है मन्दाकिनी क्या कभी हिमाचल परित्याग करती है । कमला इस राजभवन में त्रेतायुग पर्य्यन्त से अवस्थिति करती हैं । शरद् काल के चन्द्र की नाई पुन: विपत्तिरूपि मेघ से मुक्त होकर अपनी शोभा से पृथ्वी को शोभित करती है यह विपुल राजकुल क्या कभी श्रीभ्रष्ट हो सकता है आप ऐसी बात कदापि चित्त में न विचारें ।

(अहिल्या देवी का पुन: प्रवेश)

आइये राजमहिषी आइये ।

अहि॰—(राजा का हाथ धर के) नाथ। इतने दिनों के उपरान्त जो आपने अन्त:पुर में पदार्पण किया तो यह इस दासी का परम सौभाग्य है॥

रा॰—देवि। हम तुम्हारे सन्मुख कितने अपराधी हैं यह विचारने ही से हम अत्यन्त लज्जित हैं किन्तु क्या करें हम किसी प्रकार स्वेच्छाकृत दोषी नहीं है। आओ प्रिये बैठो (तपस्विनी से) भगवति। आप भी आसन ग्रहण कीजिये (सब बैठते है)।

(नौकर का पुन: प्रवेश)

नौकर - धर्म्मावतार। मन्त्रीजी ने इस पत्र को श्रीमान् की सेवा में भेजा है।

राजा—क्या है देखें पत्र पढ़ के) आह। इतने दिनों के उपरान्त जान पड़ता है कि यह राज्य कुछ काल के लिये निरापद हुआ।

(नौकर का प्रस्थान)

अहि॰—नाथ यह कैसे हुआ ?

रा॰—महाराष्ट्र अधिपति के सङ्ग एक प्रकार सन्धि होने की बातचीत हो रही है उसने इस पत्रमें यह स्वीकार किया है कि वह तीस लच मुद्रा पाने से स्वदेश को

लौट जायगा । हे देवि । यह सम्वाद राजा दुर्योधन की नाईं मुझे हर्ष और शोक साथही देता है। प्रबल शत्रुदल ने जो यह प्रदेश त्यागा यह हर्ष का विषय है किन्तु जिस कारण से उसने यह देश परित्याग किया उसे स्मरण करने से एकक्षण भी प्राणधारण की इच्छा नहीं रहती। (दीर्घनिश्वास लेकर) हाय। हाय। भुवनविख्यात शैलराज के बंशोत्पन्न होकर भी एक दुष्ट जन, लोभी पामर के भय से हमें धन देकर देशरक्षा करनी पड़ी। धिक्कार है हमको। इससे बढ़कर हमारा और कौन सा अपमान हो सकता है?

तप०—महाराज! आप तो स्वयम् इन सब बातों के ज्ञाता है। देखिये द्वापर युग में चन्द्रवंशभूषण श्रीमहाराज युधिष्ठिरजी ने स्वयम् विराट् राजा के यहां सभासद के पद पर नियुक्त होकर काल व्यतीत किया है, और सूर्य्यवंशचूड़ामणि साक्षात् नल महाराज ने समय पड़ने पर सारथिपद ग्रहण किया है सो यह सब उस विधाता ही की लीला है—

राजा—हां—इसमें क्या सन्देह है?

अहि०—यह केवल भगवान एकलिङ्गजी का अनुग्रह है जो महाराष्ट्र अधिपति ससैन्य अपने देश को लौट गया—

राजा—(कुछ मुस्कुराकर) देवि! तुम क्या विचारती हो

कि उस नराधम ने हमारा सदैव के लिये परित्याग किया है? जहां बिल्ली एकबेर दूध की सुगन्ध पा जाती है तो क्या फिर उस स्थान को छोड़ना चाहती है? इसमें कुछ भी सन्देह नहीं कि जब उसका यह धन समाप्त हो जायगा तो पुनः आक्रमण करेगा।

तप०—महाराज। जो जगदीश्वर भूत भविष्य और वर्त्तमान का कर्त्ता है वही भविष्य में आपकी रक्षा करेगा, आप इस विषय में चिन्ता न करें।

अहि०—नाथ। यह जञ्जाल तो एक प्रकार निपटही गया। अब अपनी कृष्णा के विवाह का भी ध्यान कीजिये—

राजा—उसके लिये इतने व्यस्त होने की क्या आवश्यकता है?

अहि०—सो क्यों नाथ। इतनी बड़ी कन्या हो गई अब क्या उसे क्वारीही रखियेगा। (दूर नेपथ्य में वंशीध्वनि)

राजा—यह क्या? अहा। यह वंशी कौन बजाता है?

अहि०—(देखकर) यह देखो तुम्हारी कृष्णा अपने सखी के सङ्ग उद्यान विहार कर रही है।

तप०—आहा महाराज देखिये मानो वनदेवी अपने सहचरीगण को साथ लेकर वनभ्रमण कर रही है।

अहि०—नाथ! आपकी क्या यह इच्छा है कि कोई पाखण्डी यवन आकर इस कमलिनी को इस राज सरोवर से उठाकर ले जाय?

राजा—ऐसा क्यों प्रिये ?

अहि०—महाराज दिल्लीश्वर अथवा और किसी यवनराज तक जनरवरूपी वायुसंयोग से इस पद्म की सुगन्धि पहुंचने पर क्या रक्षा की आशा हो सक्ती है ? क्या आप को अपनेही पूर्ववंश की महाराणी पद्मिनी देवी का वृत्तान्त विस्मृत हो गया ?

(दूर नेपथ्य में वंसीध्वनि)

राजा—आहा ! क्या मधुरध्वनि है ।

(नेपथ्य में गीत)

मुरलिया कपट चतुरई ठानी । कैसे मिलि गइ नन्द नँदन को उन नाहिंन पहिचानी ॥ इक वह नारि बचन मुख मीठे सुनत श्याम ललचाने । जाति पाँति की कौन चलावे वाके अङ्ग भुलाने ॥ जाको मन मानत है तासों सो तहईं सुख माने । सूरश्याम वाके गुण गावत वह हरि के गुण गाने ॥ १ ॥

मुरली यह तो भली न कीन्ही । कहा भयो जो श्याम हेत सों अधरन पर धरि लीन्ही ॥ अंगुरी छुवत गह्यो इन पहुंचो कैसे दुरति दुराये । ओछो तनकहि में भरहानी तनकहिं बदन लगाये ॥ जो कुल नेक धर्म्म की होती दिन दिन होती भार । सूरदास न्यारे भये हम ते डोलत नन्द- कुमार ॥ २ ॥

तप० - अहा हा हा ! ! क्या सुधा की वर्षा है, महाराज मैं कभी २ ऐसा स्वर तपोवन के आकाश मार्ग में सुनती हूं और मुझे यही विश्वास था कि सुरसुन्दरियों के व्यतिरिक्त और किसी का ऐसा मीठा स्वर नहीं हो सकता।

रा०—अहा सोई तो, भला यह तो कहो कि कृष्णा की कितनी अवस्था हुई ?

अहि०—महाराज क्या आपको नहीं मालूम ? अबकी वर्ष कृष्णा ने पन्द्रहवें में पैर धरा है।

तप० - महाराज इस कलिकाल में स्वयम्वर की प्रथा तो उठही गई नहीं तो आपकी इस कृष्णा के पाणिग्रहण के लोभ से अबलों सहस्रों राजा आकर उपस्थित हुये होते।

राजा—(दीर्घश्वास लेकर) भगवति ! इस भारतभूमि में क्या अब वह श्री है? इस देश के पूर्व समय के वृत्तान्तों को स्मरण करके यह किसी प्रकार विश्वास नहीं होता कि हम मनुष्य हैं। जगदीश्वर क्यों हमारे प्रति इतना प्रतिकूल हो गया कुछ कहा नहीं जाता। हाय! हाय! जैसे कोई खारी तरङ्ग किसी मीठी नदी के जल में प्रवेश करतेही उसके स्वाद को नष्ट कर देती है उसी प्रकार इस दुष्ट यवनदल ने भी इस देश का सर्वनाश

कर डाला। भगवति! देखें ईश्वर कब इस आपत्ति से हमारी निवृत्ति करता है।

अहि०—हा! अदृष्ट! अब क्या वह समय है। स्वयम्बर समारोह तो दूर रहे इनदिनों जिस राजकुल में सुन्दरी कन्या जन्म लेती है उस कुल की मानरक्षा करनी अत्यन्त कठिन हो जाती है।

तप०—सो सत्य है। प्रभो! तुम्हारी इच्छा। महाराज भारत भूमि की यह अवस्था कुछ बहुत दिनों तक न रहेगी। जिस पुरुषोत्तम ने इस सागरनिमग्ना वसुन्धरा को वाराहरूपधारण कर उद्धार किया था वे क्या इस पुण्य भूमि को चिरकाल लों भूल जायेंगे? अद्यावधि चन्द्र सूर्य्य का उदय होता है, अब भी एक पाद धर्म वर्त्तमान है।

राजा—जो कुछ भाग्य में है सो होगा। देवि! तुम लक्ष्मी को एकबार यहां बुलाओ तो, बहुत दिन बीत गये मैंने पुत्री को भली प्रकार देखा नहीं।

अहि०—मैं अभी बुला लाती हूं।

तप०—महिषी आपके जाने की क्या आवश्यकता है, मैंही जाती हूं।

अहि०—(उठकर) नहीं भगवति! मेरे रहते आप क्यों जायेंगी।

राजा—(देखकर) लो किसी को भी जाना न होगा । यह देखो कृष्णा स्वयम् इधर चली आती है।

तप०—महाराज, अहा। आपका कैसा उत्तम सौभाग्य है! महिषी आपको भी मैं शतशः धन्यवाद देती हूं जो आपने ऐसा दुर्लभ रत्न प्राप्त किया है । अहा। आपने साक्षात् उमा को गर्भ में धारण किया है! पूर्व जन्म में आपने कितना पुण्य किया था सो कुछ कहा नहीं जाता।

महि०—(बैठकर और नेत्र डबडबाकर) भगवति। अब यह आशीर्वाद दीजिये कि यह पुत्री सुख से रहे इसका रूप लावण्य सच्चरित्र और विद्या बुद्धि देखकर मेरे मन में क्या २ कल्पना उठती है मैं क्या कहूं।

(कृष्णाकुमारी का प्रवेश)

आओ पुत्री आओ । बेटी, क्या तू भगवती कपाल-कुण्डला को नहीं चीन्हती?

कृष्णा—मां! भगवती के श्रीचरण के दर्शन अनेक दिनोपरान्त हुये हैं अतएव इन्हें प्रथम चीन्ह न सकी (प्रणाम करके) भगवति! आप इस दासी का अपराध क्षमा कीजिये।

तप०—वत्स चिरसुखिनी हो (रानी से) महिषी! जब मैं

तीर्थयात्रा को गई थी तब यह प्रफुल्लित कमलिनी केवल कलिका मात्र थी।

रा०—बैठो पुत्री बैठो, तू उस उद्यान में क्या करती थी बेटी?

कृष्णा—(बैठकर) मैं उस गुलाब के वृक्ष में जल देकर उस गान का अभ्यास कर रही थी जो मैंने आज सीखा है आपने बहुत दिनों से मेरे उद्यान में पदार्पण नहीं किया सो आज एकबेर चलिये; अहा! वहां जो अनेक प्रकार के फूल फूले है उन्हें देखकर आप अत्यन्त प्रसन्न होंगी।

अहि०—यह कौन फूल है बेटी?

कृष्णा—मां, यह गुलाब है इसे तुम्हारे लिये उद्यान से लेती आई हूं (माता के हाथ में देती है)

राजा—पूर्व समय में यह पुष्प इस देश में नहीं था जिस सर्प से यह पुष्परूपी मणि प्राप्त हुआ है उसी के विष से यह भारतभूमि प्रतिदिन दग्ध होती है (दीर्घश्वास लेकर) इस कुसुमरत्न को दुष्ट यवन लोगही इस देश में लाये (दूर दुन्दुभि की ध्वनि होती है)

सब—(चकित होकर) यह क्या?

राजा—रामप्रसाद?

(नेपथ्य में) आया महाराज।

(भृत्य रामप्रसाद का प्रवेश)

राजा—देख तो यह दुन्दुभिध्वनि क्यों होती है।

भृत्य०—जो आज्ञा महाराज। (जाता है)

राजा देखें, यह कौन सी नई विपत्ति उपस्थित हुई! क्या महाराष्ट्र अधिपति सन्धि अस्वीकार कर पुनः युद्ध में प्रवृत्त हुआ? (उठकर) हा। क्या इस समय ऐसीही मङ्गलध्वनि भारतवासियों के कर्णकुहर में प्रवेश करेगी? सुनते है कि किसी २ सागर में अनवरत रात्रि दिन आंधी चलाही करती है तो क्या इस देश की भी सोई दशा हो गई है? हाय! हाय!।

(भृत्य का पुनः प्रवेश)

क्या समाचार है?

भृत्य०—महाराज सब कुशलमङ्गल है। जयपुराधिपति राजा जगतसिंह राय ने किसी विशेष कार्य्य के निमित्त श्रीमान् के समीप दूत भेजा है।

राजा—हां—बडो कुशल। हमने समझा कि न जाने कोई दूसरो नवीन विपत्ति आई—जयपुराधिपति तो हमारे परम आत्मीय हैं। जगदीश्वर न करे कि कहीं उन्होंने विपत्ति में पड़कर हमारे पास दूत भेजा हो (तपस्विनी

से) भगवति। अब हमें विदा करो (रानी से) हमें पुनः राजसभा में जाना पड़ा।

अहि०—(दीर्घनिश्वास ले कर) जीवितेश्वर - इस दासी का इतना सौभाग्य कहां कि क्षणमात्र के लिये भी नाथ के सहवास का सुख प्राप्त करूं।

राजा—देवि। इस विषय में तुम्हारा आक्षेप करना वृथा है। हमने भली प्रकार विचार कर देखा है कि जिसे लोक नरपति कहते हैं वह वस्तुतः नरदास है। अतएव जिसे इतने लोगों को सन्तुष्ट करना है सो क्या क्षणमात्र के लिये भी विश्राम कर सकता है?

(भृत्य के साथ जाते हैं)

अहि०—भगवति चलिये - मैं भी जाती हूं (कृष्णा से) आ बेटी, हम तेरे उद्यान में एकबेर आज हो आवें—

कृष्णा—चलोगी मां? तो चलो—पिताजी मेरे उद्यान को देखने नहीं चले?

(सब जाते हैं)

द्वितीय गर्भाङ्क।

स्थान उदयपुर राजमार्ग।

(पुरुषवेषधारण किये मदनिका का प्रवेश)

मद०—(स्वगत) अहा। हा। हा! तुम्हारा नाम क्या है भई। हमारा नाम ? हमारा नाम मदनमोहन। अहा! हा। हा। ना ना; हंसने से बात बिगड़ जायगी (अपनी ओर देखकर) अच्छा तो हुआ। कौन पहिचान सकता है कि मैं विलासवती की सखी मदनिका हूं ? हा। हा। हा। दूर हो। कहां तो विचारती हूं कि अब न हंसूगी कहां अपनेही आप हसी चली आती है। सब से भारी धूर्त्तशिरोमणि तो धनदास है सो जब वही मुझे न चीन्ह सका तो अब कौन पहिचानेगा? विलासवती की यह इच्छा है कि यह विवाह किसी प्रकार न होने पावे—बस इतनेही से तो धनदास के मुख में कालिमा लग जायगी। देखें क्या होता है। सब विघ्नों की दादी तो मैंही हूं।।! और राजा मानसिंह के नाम से एक जाली पत्र भी कृष्णा की ओर से लिख लिया है। अहा। हा। हा। इस कुशलता से मैंने पत्र लिखा है कि मानसिंह उसे पातेही कृष्णा के लिये अत्यन्त उत्सुक होंगे। जैसे शिशुपाल के हाथ

से रक्षा पाने के लिये रुक्मिनीदेवी ने श्रीकृष्ण महाराज को पत्र लिखा था वैसेही मैंने भी लिख दिया है, अब देखें हमारे इस शिशुपाल के भाग्य में क्या लिखा है। यह लो धनदास मन्त्री के साथ इधर चला आता है मैंने जैसे इस मन्त्री को विलासवती का हाल सुनाया है उससे जान पड़ता है कि इसका मन हमारे राजा की ओर से एकदम फिर गया है; देखें उसकी क्या बातचीत होती है। (आड़ में छिप जाती है)

(सत्यदास और धनदास का प्रवेश)

धन०—मन्त्री महाशय, यौवनावस्था में मनुष्य क्या नहीं करता? सो यदि हमारे नरपति भी जो कभी २ कन्दर्प के आधीन हो जाते हैं सो कुछ आश्चर्य नहीं है, महाराज की अवस्था अभी थोडी है। विशेषता: —अच्छा आपही कहिये कि बड़े २ घरों में क्या २ नहीं होता?

सत्य०—हां सो ठीक है। किन्तु हम सुनते हैं कि जयपुराधिपति किसी विलासवती नामक बारवधू के इतने वश में है कि—

धन०—हा। हा! यह आप क्या कहते हैं। भ्रमर क्या कभी किसी पुष्प के वस में हुआ है?

सत्य —हम ने सुना है कि यह विलासवती कोई सामान्य पुष्प नहीं है।

धन०—(मन में) सो तो झूठ नहीं है, उसे देखने से क्या चित्त स्थिर रहता है? (प्रकाश) जो आप को यह किसने कहा, वह एक सामान्य स्त्री है, उस का क्या, आज है कल नहीं।

सत्य०—आप नहीं जानते, हमारी राजकुमारी कृष्णा महाराज भीमसिंह की जीवन स्वरूप है हमें किसी प्रकार विश्वास नहीं होता कि वे यह सब हाल पाने पर किसी प्रकार इस विवाह में सम्मत होंगे।

धन०—ऐसा क्या? क्या यह बात महाराज के सुनाने योग्य है?

सत्य०—सो सत्य है—यह बात निस्सन्देह कहने योग्य नहीं है? किन्तु जो बात दस कानों में पहुँच रही है उस को शतसहस्र जिह्वा को कौन रोक सकता है? इस विवाह की बात उठने पर लोक क्या क्या कहें और सुनेंगे कौन कह सकता है।

धन०—भला मैं यह पूछता हूं कि चन्द्रमा में कलङ्क कह कर क्या कोई उस की उपेक्षा करता है?

सत्य०—जी नहीं, किन्तु यह कलङ्क वैसा तो नहीं है? यह तो राहुग्रास है? इस से आप के नरपति के श्री की सम्पूर्ण रूप से विलुप्त होने की सम्भावना है।

धन०—(स्वगत यह तो बड़ी दिक्कत हुई; अथवा दिक्कत

तुम ऐसे स्थान में रह कर केवल लिखना पढ़ना ही सीखते हो ? क्यों, क्या तुम्हारे देश में पाठशाला नहीं है ? अच्छा जाने दो यह तो कहो कि तुमने राजकुमारी कृष्णा को कभी देखा है ?

मद०—जी देखा क्यों नहीं ? जो चन्द्रलोक में वास करता है क्या उसे अमृत देखना बाकी रहता है ?

धन०—वाह ! वाह अच्छा कहो तो तुम्हारे देखने में राजकुमारी का स्वरूप कैसा है ?

मद०—अहा ! भला क्या मेरी इतनी सामर्थ्य है कि मैं उस अपूर्व सौन्दर्य्य का वर्णन कर सकूं यह भी क्या विलासवती का स्वरूप है ?

धन०—एं किसका स्वरूप है ?

मदन०—क्या आप के कान में खूंट पड़ा है ? विलासवती, विलासवती !—सुना !

धन०—एं ! विलासवती कौन ?

मद०—विलासवती कौन ? आप नहीं जानते ? अहाहा !

धन०—(स्वगत) अरेरेरे उसका नाम इस दुष्ट ने कहां से सुना (प्रकाश) हम भला उसे कैसे जानें ?'

मद०—हम से झूठी चलाकी मत करो आप जो जो बातचीत मंत्री से कर रहे थे मैं सब सुन रहा था ।

धन०—(स्वगत) इस बात के अधिक छेड़ने में कुछ फल

न निकलेगा (प्रकाश) (धीरे से) देखो भइ मदन-मोहन ! तुमने जो सुना सो सुना किन्तु किसी दूसरे से इसका हाल मत कहना सुना।

मद०—क्यों ? इस में क्या हानि है ?

धन०—न भई देखो तुमको कुछ मिठाई खाने को देते हैं ये सब राज काज की बातें है, तुम को इस से क्या प्रयोजन है !

मद०—(कुछ रुष्ट होकर) तुम तो हमें कुछ पागल जान पड़ते हो, क्या तुमने मुझे निरा लड़काही समझ लिया है कि मैं मिठाई देख कर भूल जाऊंगा ?

धन०—तो अच्छा कहो भाई तुम्हारा सन्तोष क्या पानें से होगा ?

मद०—अच्छा तुम्हारे हाथ में जो यह अँगूठी है सो हमें देदो इसे पाने से फिर हम किसी से कुछ न कहेंगे।

धन०—क्योंजो अभी तक तो तुम हमें पागल बताते थे और अब तो तुम्ही पागल जान पड़ते हो, भला तुम इसे लेकर क्या करोगे ? यह क्या किसी को देने का पदार्थ है ?

मद०—अच्छा तो रहने दो हम राजमहिषी के पास जाते हैं। (जाना चाहती है)

धन०—अरे भाई ज़रा ठहरो २ बात तो सुन लो यह तुम

रुष्ट होके क्यों चले ? ज़रा बात तो सुन जाओ (स्वगत) इस बात के फैलने से सभी व्यर्थ हो जायगा। तो अब क्या करूं और यह अमूल्य अँगूठी :कैसे दूं, अब तो देना ही पड़ा—हाय २। यह अँगूठी कितने परिश्रम से महाराज से पाया था; अच्छा अब सोचने से क्या!

मद०—यह क्या ? आप रोते हैं क्या ? अहा हाहा।

धन०—(स्वगत) देखो तो इस लड़की ने हम को ठगा छी छी! अब क्या करूं ? दे दूं—अच्छा कार्य्य सफल होना चाहिये फिर तो महाराज से न जाने क्या २ लूंगा (प्रकाश) यह लो भाई देखो यह भेद किसी पर न खुले ॥

मद०—(अगूठी लेकर) बहुत अच्छा तो मैं जाता हूं।

(आड़ में खड़ी हो जाती है)

धन०—(स्वगत) दुरदुष्ट ! हतभाग्य ! न जाने किस दुष्ट का मुह देख कर आज प्रातः काल को उठा था, अब क्या, चलो घर चलें (जाता है)

मद०—(आगे बढ़ कर) (स्वगत) अहा हा हा। धन दास का दुःख देख कर बड़ी हँसी आती है। अहा हा हा! बचा जैसा धूर्त था वैसा ही उसने फल पाया। अभी क्या हुआ है इसे यथोचित शिक्षा न दूं तो मेरा नाम मदनिका नहीं! तो अब क्या करूं ? एक बार



[illegible]
से नहीं डरती पर शर्माती है।

स्त्रीवेष करके राजकुमारी कृष्णा से भेंट करूं पर अपने को क्या बताऊंगी ? (कुछ सोच कर) हां हां ठीक है, मरुदेश के महाराज मानसिंह की दूती कहूंगी। अहा हा हा। [जाती है।

तृतीयगर्भाङ्क।

(स्थान उदयपूर राजउद्यान)

(अहिल्या देवी और तपस्विनी का प्रवेश)

तप०—महिषी। यह परम आल्हाद का विषय है। जयपुर के राजवंश में भगवान अंशुमालि का एक महातेजोमय अंशस्वरूप है। अतएव इसमें कुछ सन्देह नहीं कि महाराज जगतसिंह कृष्णाकुमारी के उपयुक्त पात्र हैं।

अहि०—हां। यह तो अवश्यही स्वीकार करना होगा॥

तप०—मैं सुनती हूं कि इन महाराज की अवस्था अभी छोटी है और यह अत्यन्त धर्मपरायण और विद्यानुरागी पुरुष हैं॥

अहि०—आपके आशीर्वाद से यह सब सत्य होवे क्योंकि प्रचण्डवायु कमलिनी को छिन्न भिन्न कर देती है किन्तु मलय समीरण से उसकी शोभा द्विगुण हो जाती है, गुण[illegible] स्वामी के हाथ पड़ने से [illegible] की शोभा

रहती है (कुछ सोच कर) क्या आश्चर्य है, भगवती मै इस कृष्णा के विवाह के लिये कितनी व्यग्र थी सो क्या कहूं, किन्तु अब यह विचार कर कि इसका विवाह हो जायगा और यह मेरे पास से चली जायगी मेरा मन अन्दर से रो उठता है — (रोती हैं)

तप०— आहा । माता की आत्मा ऐसी ही होती है।

अहि०—भगवति । मैं अपने इस हृदय सरोवर के पद्म को किसके हाथ में दूंगी । इसे कौन उठाकर ले जायगा। जिस सारिका को मैंने प्राण की नाईं इतने दिनों तक पालन किया उसे मैं कैसे दूसरे के हाथ दूंगी। मैं इस जीवनाधार गृहमणि के चले जाने पर, भगवति कैसे जीती बचूंगी। (रोती हैं)

तप०—देवि । ये सब विधाता के नियम है। जहां २ कन्या हुई है तहां २ यह यातना सहनीही पडी है। देखिये, गिरीशमहिषी मेनका तो तीन दिन भी अपनी उमा का चन्द्रानन न देखने पाई थीं । सो इसकी चिन्ता करना वृथा है। चलिये अब हमलोग अन्त:पुर को चलें। जान पड़ता है कि महाराज अब तक राजसभा से उठे होंगे।

अहि०—जो आज्ञा—तो चलो। (दोनो जाती हैं)

(कृष्णाकुमारी और मदनिका का प्रवेश)

कृष्णा॰ क्या कहती है दूति ? तेरा यह हाल सुन कर मुझे बड़ा भय होता है। तू इतना क्लेश सह कर यहां आई है ?।

मद॰—राजनन्दिनि। जैसे पाले हुए पक्षी के पिंजड़े से उड़ जाने पर सब बनैले पक्षी उसके पीछे पड़ जाते हैं उसी प्रकार मेरी भी दशा हुई। किन्तु आपका चन्द्र बदन देखकर मैं अपना सब दुःख इस क्षण भूलगई हूं।

कृष्णा॰—अच्छा दूति। तुम्हारे मरुदेशाधिपति ने मेरे पिता के पास दूत न भेज कर तुझे मेरे पास क्यों भेजा ?

मद॰—राजनन्दिनी। आप अत्यन्त बुद्धिमती हैं, आप तो जानतीही हैं कि जो जिससे प्रेम रखता है वह उसका मन बिना पाये क्या किसी कार्य्य में कभी हाथ देता है ?

कृष्णा— हँस कर क्यों ? तेरे महाराज क्या मुझ से प्रेम रखते हैं ?

मद॰—राजनन्दिनि। हमारे महाराज आप से प्रेम रखते हैं या नहीं यह क्या पूछती हो ? हमारे महाराज तो रात्रिदिन केवल आपही को स्मरण किया करते हैं आपही के नाम की माला जपा करते हैं। उनका चित्त क्या किसी और कार्य्य में लगता है ?

कृष्णा०—क्या आश्चर्य है। उन्होंने तो मुझे कभी देखा भी नहीं। फिर क्या कारण है कि वे मुझ पर इतने अनुरक्त हैं ? अच्छा दूति। कह तो तेरे महाराज के कै रानियां है ?

मद०—राजनन्दिनि। हमारे महाराज का विवाह अभी तक हुआही नहीं उनकी यह प्रतिज्ञा है कि आपके अतिरिक्त वे किसी दूसरे का पाणिग्रहण न करेंगे।

कृष्णा०—हां। यह सत्य है ?

मद०—राजनन्दिनि। भला मैं क्या आप से मिथ्या भाषण करती हूं। प्रथम महाराज ने आपका स्वप्न में दर्शन किया तदुपरान्त लोगों से आपके गुणों की प्रशंसा सुनते ० वे मानो एक प्रकार उन्मत से हो गये है।

कृष्णा०—देखो दूति।—तुझे हमारी सपथ, सच कह तेरे महाराज देखने में कैसे है ?

मद०—राजनन्दिनी। उनके रूप का वर्णन मैं आप को कैसे सुनाऊं मैंने तो इन नेत्रों से वैसा स्वरूपवान् दूसरा पुरुष देखाही नहीं। आहा। उनका स्वरूप स्मरण करतेही चित्त अन्दर से लहर उठता है आहा। क्या वर्ण है। क्या शरीर का गठन है ! मानो साक्षात् कामदेव हैं। मै अपने साथ महाराज की तस्वीर लेती आई हूं—यदि आप देखा चाहेंगी तः मैं किसी

समय लाकर दिखला दूंगी आप उसे देखते ही जान जांयगी कि महाराज का कैसा स्वरूप है।

कृष्णा०—(स्वगत) इस दूती का कथन क्या सत्य है ? होना भी सम्भव है। (प्रकाश) अच्छा दूति। तू फिर किसी समय आकर मुझ से बात चीत कीजियो अब तो मैं जाती हूं मेरी सखियां सरोवर पर मेरे आसरे बैठी होंगी॥

मद०–जो आज्ञा—

कृष्णा०—(कुछ दूर जाकर) देख भूलियो मत, तुझ से हमको बहुत कुछ बात करना है॥ (जाती है)

मद०—(स्वगत) लोक विलासवती को अत्यन्त रूपवती कहते हैं किन्तु जो कहीं महाराज इस नारी रत्न को देख पावें तो फिर क्या उनका चित्त और कहीं लगे। आहा ! ऐसा स्वरूप क्या इस पृथ्वी तल पर कहीं है फिर गुण भी तो वैसाही है, "सोनो और सुगन्ध" इसीं में दीख पड़ता है (कुछ सोच कर) जो हो इसका मन एक बेर तो राजा मानसिंह की ओर फेरना ही चाहिये, नदी एक बार समुद्राभिमुखी होने से क्या फिर किसी ओर फिरती है ? (पुनः सोच कर) इसमें कोई सन्देह नहीं कि राजा मानसिंह का दूत अत्यन्त शीघ्र आनेवाला है वे क्या इस पत्र को पा कर

निश्चिन्त रहेंगी ? यह देखो महाराज भीमसेन इधर चले आते हैं तो मैं इस वृक्ष की आड़ में खड़ी हो जाऊं। (आड़ में खड़ी होती है)

(राजा, अहिल्यादेवी और तपस्विनी का पुनः प्रवेश)

तप०—महाराज ने राजदूत का नाम क्या बतलाया ?

राजा उसका नाम धनदास है वह पुरुष अत्यन्त गुणवान और बहुदर्शी है और स्वयं राजा जगतसिंह भी अत्यन्त गुणी पुरुष हैं, और यश भी वैसाही है ॥

तप०—महाराज, जो सच पूछिये तो आप पर भगवान एकलिङ्ग की असीम कृपा कहनी चाहिये। यह देखिये क्या आश्चर्य्य घटना है। कि उन्होंने रघुकुलतिलक श्रीरामचन्द्रजी को सुन्दरी जानकीजी के पाणिग्रहण की नाईं स्वयं उपस्थित कर दिया है। इससे अधिक कहिये और क्या आनन्द का विषय होगा।

राजा—यह सब आपही के आशीर्वाद का कारण है।

तप०—मेरी यह इच्छा है कि इस विवाह के कुशलपूर्वक समाप्ति के उपरान्त मैं पुनः तीर्थ यात्रा करने जाऊंगी तो अब इसमें क्या विलम्ब है ? शुभकार्य को शीघ्रही करना उचित है।

अहि०—नाथ। तो अब इस शुभकार्य्य में अधिक विलम्ब करने का क्या प्रयोजन है? हमारी कण्वा—(रोती है)

राजा—(हाथ धर कर) प्रिये। इस मंगलकार्य्य के उपलक्ष में क्या तुम्हारा रोदन उचित है?

अहि०—प्राणेश्वर। मैं अपने हृदयनिधि को कैसे किसी पराये के हाथ में समर्पण करूंगी। (रोती है)

राजा—(दीर्घ निश्वास छोड़ कर) देवि। विधाता के लेख को कौन खण्डन कर सकता है बिचारो तो तुम पहिले कहां थीं और अब कहां हो। विधाता की सृष्टि इसी प्रकार चलती है। सैकड़ों कुसुमलता और सहस्रों फलवृक्ष लोग एक उद्यान से दूसरे उद्यान में ले जाकर लगाते हैं और वे फल फूल से शोभायमान होते हैं॥

(नेपथ्य में गीत)

राग गौरी।

आवासोत्सुकपक्षिगः कलकलं ग्रामान्तवृक्षालयान्
कान्ताभावविवियोगभीरुरधिकं क्रन्दत्ययङ्गातरः।
चक्राह्वोमधुपाः सरोजगहनं धावन्त्युलूकोमुदं
धत्तेचारुणताङ्गतो रविरसावस्ताचलं चुम्बति॥१॥

गाढंप्रौढाङ्गनाभिः सुरतरतमनः सन्मदोल्लासिताभि

मुग्धाभिःस्वस्तनेत्रंरतिसमरभयंचिन्तयन्तीभिरेवम्

पान्थानामङ्गनाभिःससलिलनयनंशून्यचित्ताभिरुच्चै

कष्टंदृष्टोस्तशैलंभृशमजयदयंमण्डलश्चन्द्ररश्मेः ॥२॥

राजा—आहा।

अहि॰—महाराज, मैं अपनी इस कोकिला के बन परि त्याग करने पर क्या जोतो रहूंगी? (रोती है)

तप॰—महिषि। आप इतनी उद्विग्न न होइये, देखिये आपके खेद करने पर महाराज अत्यन्त विषण्ण होते हैं।

(कृष्णा का पुनः प्रवेश)

राजा—आओ पुत्रि, आओ।

कृष्णा॰—पिताजी, मां यह क्या कर रही हैं, मां तुम रोती क्यों हो?

अहि॰—(कृष्णा को गोद मे लेकर) बेटी। तू क्या इतने दिनों पर अपनी इस दुःखिनी मां को छोड चली है मेरा और कौन है बेटी। जो मुझे मां कह के बुलावे गा? (रोती है)

कृष्णा॰—सो क्या मा? तुम्हें छोड़ कर मैं कहां जाऊंगी। (रोती है)

राजा भगवनि, मोहस्वरूप पुष्प का कण्टक क्या कुछ ऐसा वैसा होता तीक्ष्ण है।

तप०—जी इसमें क्या सन्देह है? इसी कारण तो पूर्वकाल में अनेक महर्षि लोग इस सांसारिक जाल को परित्याग करके बनबासी हो गये है॥

(एक भृत्य का प्रवेश)

राजा—क्या समाचार है रामप्रसाद?

भृत्य०—धर्म्मावतार, मरुदेशाधिपति राजा मानसिंह राय ने श्रीमान के समीप एक दूत किसी कार्य्य के लिये भेजा है॥

राजा—(स्वगत) राजा मानसिंह ने हमारे पास दूत क्यों भेजा है? (प्रकाश) अच्छा जा सत्यदास को कह कि वे उस दूत का यथोचित सत्कार करें और हम भी शीघ्रही आते है।

भृत्य०—जो आज्ञा महाराज। (जाता है)

राजा—प्रिये। चलो हम अन्तःपुर को चलें हमें पुनः राजसभा में जाना हुआ॥

कृष्णा०—(स्वगत) जो उस दूती का कथन सत्य है तो जान पड़ता है कि यह दूत मेरेही लिये आया है। देखें पिताजी क्या स्थिर करते है॥

अहि०—चलिये (तपस्विनी से) भगवति आप भी चलिये।

(सब जाते है)

मदनिका—(हाथ में चित्र लिये आगे बढ़ कर) आहा राजमहिषी का शोक देख कर तो छाती फटी जाती है। ठीकही है यदि ऐसी पुत्री से माता पिता स्नेह न करेंगे तो करेंगे किस्से?। यह नया दूत किस देश से आया सो मैं ठीक न जान सकी चलूं देखूं तो क्या बात है? मेरे मन में आता है कि यह दूत राजा मानसिंह का भेजा है आहा। परमेश्वर करे ऐसाही हो। यहां से चल कर अब पुनः पुरुषवेष धारण करूं जो तो यह मानसिंह का दूत हुआ तब तो आज धन दास का बिना सर्वनाश किये न छोड़ूंगी। आहा! हां! जो लोग स्त्रियों को अबोध कह कर घृणा करते हैं वे यह नहीं जानते कि स्त्रियों का जन्म शक्तिकुल में है, जो महादेव तीनों लोक को एक पल मात्र में नष्ट कर सकते है उन्हें भी भगवती ने अपनी कुशलता से अपने पदतल में दबा दिया आहा। हा! स्त्रियों की बुद्धि के आगे क्या किसी की बुद्धि चलती है, देखनाही तो है कि आज धनदास की कितनी बुद्धि है और मेरी कितनी चतुरता है यह देखो पुनः राजनन्दिनी इधर लौटी आती हैं, अब ले लिया है, अब क्या—सुख के

देखनेही से जान पड़ता है कि प्रेमवृक्ष ने अपना अं-कुर जमा लिया है यदि ऐसा न होता तो क्षण भर में यह मेरे लिये इतना व्याकुल क्यों हो जाती है। अब इसे चित्रपट देखाना चाहिये देखूं उसे देख कर क्या भाव उत्पन्न होता है हा। हा।। इसमें तो महाराज मानसिंह के एक भी गुण नहीं है, पर क्या हुआ? काठ की बिल्ली भी चूहे धरने को बहुत है।

(कृष्णा का पुनः प्रवेश)

कृष्णा०—दूति, तू क्या मुझे खोजती थी? मैंने सुना है कि तेरे महाराज ने कोई दूत भेजा है, मैं समझती थी कि तू मुझ से हास्य करती थी॥

मद०—राजनन्दिनि, भला ऐसा भी हास्य होता है। हमारे सरीखे लोगों को क्या सामर्थ्य जो बिना समझेही ऐसा कह सकें॥

कृष्णा०—देखो दूति, मैं देखती हूं कि इस विषय में कुछ न कुछ विषम विवाद उठा चाहता है, तूने क्या नहीं सुना है कि जयपुर के राजा ने भी मेरे लिये एक दूत भेजा है?

मद०—राजनन्दिनि, तो क्या इस से हमारे महाराज डर जांयगे। यदि आप की अनुमति हो तो वे जयपुर को एक क्षण मात्र में भस्मीभूत कर डालें।

कृष्णा०—(सहास्यवदन) तू तो सदाही अपने महाराज की प्रशंसा किया करती है अच्छा देखें क्या होता है।

मद०—राजनन्दिनी, जब स्वयं आप महाराज की ओर हैं तो फिर कौन उनका साम्हना कर सकता है?

कृ०—(सहास्य) देखो दूति, पारिजात पुष्प के लिये इन्द्र और यदुपति में युद्ध तो आरम्भ हो गया, अब देखें कौन जीतता है। अच्छा, तू अपने राजदूत से तो एक बार भेंट कर।

मद०—जो आज्ञा (कुछ दूर जाकर और फिर लौट कर) राजनन्दिनि। मैंने जो कहा था कि मैं अपने महाराज का चित्रपट दिखाऊंगी सो यह देखिये (चित्र देकर) इस समय इसे अपने पास रखिये फिर मुझे लौटा दीजियेगा— (जाती है)

कृष्णा०—क्या आश्चर्य है, राजा मानसिंह का वृत्तान्त सुननेही मात्र से मेरा चित्त इतना चञ्चल हो गया है, इसका क्या कारण है? (चित्रपट को देख कर) आहा! क्या अनूठा रूप है। कैसा अधर है, क्या मन्दमुसकान है, ऐसा स्वरूप क्या इस संसार में कहीं है, आहा! दूती ने जो कहा था सो सत्यही है, हाय! मेरे अदृष्ट मे क्या लिखा है जो मेरा मन इतना चञ्चल हो गया है। ई—अब यहां ठहरना उचित नहीं कोई आकर देख



मदनिका राजा मानसिंहको इतो वनकर कृष्णा को मानसिंहकी त
छवि दिखाती है ॥

लेगा—अब घर चलूं वहां अकेले में चित्र को भली प्रकार देखूंगी, आहा। क्या चमत्कार—

(चित्रपट को देखती २ जाती है)

इति द्वितीयाङ्क।

तृतीयाङ्क।

प्रथम गर्भाङ्क।

(स्थान उदयपुर—राजगृह के सन्मुख)

(मरुदेश के दूत तथा [पुरुषवेषधारी] मदनिका का प्रवेश)

दूत॰—क्या आश्चर्य है! तो क्या इस पत्र की वार्ता सत्य है?

मद॰—जी हां, और नहीं तो क्या? राजकुमारी ने पत्र लिख कर प्रथम मुझे दिया, तब मैंने एक विश्वासपात्र को देकर आपके महाराज के पास भिजवा दिया।

दूत॰—जी हो, हमारे महाराज का अति सौभाग्य है यदि यह न होता तो क्या तुमारी सुकुमारी उन पर इतनी अनुरक्ता होतीं, आहा। विधाता की क्या अद्भुत लीला है। कोई तो महामणि के लिये अन्धकारमय खानि में प्रवेश करता है और किसी को वही मणि मार्ग में पड़ी मिल जाती है ये सब बातें बिना भाग्य के थोड़ेही

होती हैं। जब से महाराज ने यह पत्र पाया है तब से उनकी दशा तुम से क्या कहूं।

मद०—देखिये दूत महाशय, आप यहां अत्यन्त सावधानी से रहियेगा जिसमें इस पत्र का हाल किसी को यहां प्रकाश न हो नहीं तो राजनन्दिनी मारे लज्जा के प्राण त्याग कर देंगी।

दूत०—ठीक है—परन्तु क्या मैं पागल हूं, यह बात भी क्या प्रकाश करने की है?

मद०—वह जो धनदास नामक जयपुर का दूत आया है उसे आप कदाचित् भली प्रकार नहीं चीन्हते।

दूत०—नहीं उसके संग हमारी कोई विशेष बातचीत नहीं हुई है।

मद०—क्या कहूं वह आपके महाराज की इतनी निन्दा करता है कि आप उसे सुनें तो आग भड़क उठे।

दूत०—हां?—

मद०—राजनन्दिनी इससे कितनी दुखी है मैं आप से क्या कहूं—एक बार तो उसे कुछ न कुछ शिक्षा अवश्य देना चाहिये।

दूत०—क्यों? वह क्या कहता है?

मद०—महाशय, वह जो जो बातें कहता है सो कहते मुझे अत्यन्त लज्जा आती है, वह लोगों में क्या कहता कि


मरदनिकापुर्षभेष
मानसिंहकादूतवृद्धब्रा
ह्मण
गुप्तपत्रसे-सा-
वधानकरती
है॥

रता है कि महाराज मानसिंह तो एक भ्रष्टा स्त्री के दत्तक पुत्र मात्र हैं और वे मरुदेश के प्रकृत अधिकारी नहीं हैं इत्यादि,—मैं क्या कहूं॥

दूत०—हां ऐसा। उसकी इतनी सामर्थ्य। क्या कहूं मै वृद्ध ब्राह्मण हूं नहीं तो इसी क्षण उसका मस्तक काट कर रख देता॥

मद०—महाशय, इतना क्रोध करने का समय नहीं है यदि वाक्यवाणही से उसका कुछ दण्ड कर दिया जाय तो उत्तम है नहीं तो और कोई अत्याचार करना इस समय ठीक न होगा।

दूत०—अच्छा मैं इसी समय राजमंत्री के पास जाता हूं, तदुपरान्त जो निश्चय होगा सो किया जायगा। शृगाल हो कर सिंह की निन्दा! यह क्या किसी प्रकार सह्य है? (जाता)

मद०—(स्वगत) वाह। क्या झमेला खडा कर दिया है। जगदीश्वर ऐसा करे कि इसमें राजनन्दिनी कृष्णा को कोई व्याघात न होवे वाह, यह भी तो एक बड़ा आश्चर्य है कि मैं एक वेश्या की सहचरी हूं बन के पक्षी की नाई स्वेच्छाधीन हूं, कभी संसार पिंजर में बद्ध नहीं हुई, परन्तु सुकुमारी राजकुमारी की प्रकृति देख कर मेरा मन कैसा हो गया है? सत्य है लज्जा

और सुशीलता ही तो स्त्री जाति का प्रधान भूषण है। आहा ! ।

(धनदास का प्रवेश)

कहिये महाशय प्रसन्न तो है न ?

धन०—कौन ! मदनमोहन है । कहो अच्छे तो हो न ? अजी तुमने वह अगूठी क्या किया ?

मद०—जी आपसे कहने में मुझे बड़ी लज्जा आती है ! और आप भी कदाचित् सुन कर प्रसन्न न होंगे ।

धन०—क्यों, क्यों, प्रसन्न क्यों न होंगे ?

मद०—अच्छा तो सुनिये, इस नगर में मदनिका नामक एक अत्यन्त सुन्दरी स्त्री है, उससे मैं अत्यन्त प्रेम रखता हूं, उसी ने वह अंगूठी मुझ से ले ली ॥

धन०- छि ! छि ! ऐसा अमूल्य रत्न क्या कोई वेश्या को देता है ? तुमारी तो नितान्त बालकों की सी बुद्धि है। छि ! छि । और फिर तुम इतनी छोटी अवस्था में ऐसे २ लोगों के साथ रहते हो ?

मद०—देखिये अभी आप ने कहा था कि आप अप्रसन्न न होंगे, तो फिर अब अप्रसन्न क्यों हुये ?

धन०—(स्वगत) यह भी ठीक है। हम अप्रसन्न क्यों हों ? (प्रकाश) हा हा हम तो हँसी करते थे, जो हो तुम तो भाई कोई विलक्षण रसिक पुरुष जान पड़ते हो ?

अच्छा भई यह तो कहो तुम्हारी वह मदनिका कहां रहती है?

मद०—जी उसका घर नगर के बाहर है!

धन०—(स्वगत) इस स्त्री के घर का पता लगने पर न होगा तो कुछ ले दे कर अंगूठी ले ली जायगी और जो यों न देगी तो औरही कोई उपाय किया जायगा (प्रकाश) हां कहां बताया भई?

मद०—जी इसी नगर के बाहर।

धन०—यह तो बताओ कि वह स्त्री देखने में तो सुंदरी है न?

मद०—जी और नहीं तो क्या कुछ ऐसी वैसी है। यह देखिये राजा मानसिंह के दूत मंत्री के साथही साथ इधर चले आते है।

धन०—भली स्मरण कराई भई, हमने तुम्हें जो जो बातें अन्त:पुर में कहने को कहीं थीं वे सब तो कह दीं न?

मद०—जी, भला आप के काम में क्या मै कभी अवहेला कर सकता हूं?

धन०—तुम में जितने गुण है उनकी गणना भला क्या मैं एक मुख से कर सकूं हूं।—हां यह तो कहो कि तुम्हारी उस मदनिका का स्थान कहां है!

मद०—उसके लिये आप इतने व्यस्त क्यों होते हैं? न

होगा एक दिन मैं ही आप को अपने साथ ले चल के उससे परिचय करा दूंगा ! तो अब मैं इस समय जाता हूं (स्वगत) देखें अब इसके भाग्य में क्या लिखा है। (जाती है)

धन०—(स्वगत) बिना अँगूठी को फिर पाये मेरा मन किसी प्रकार स्थिर नहीं होता । वह अनुमान दस सहस्र मुद्रा की है ! सो क्या यों ही छोड़ दूं। आहा कैसे २ भुलावों से उसे महाराज से लिया था कि उसे स्मरण करतेही नेत्रों में जल भर आता है। सो बिना किसी बड़ी भारी आपत्ति के क्या कोई सहज मेरे हाथों से उसे ले सकता था ? अच्छा पहिले उस मंद-निका के घर का पता तो लगा लू फिर देखा जायगा, धनदास की चतुरता क्या योंही जायगी ?

(सत्यदास और मानसिंह के दूत का प्रवेश)

सत्य०—यह देखिये धनदास महाशय भी यहीं मिल गये, तो चलिये अब राजसभा को चलें।

दूत०—यही न राजा जगतसिंह के दूत है ?

सत्य०—जी हां ।

दूत०—(धनदास से) महाशय! हम और आप दोनोंही इस देश मे एक अमूल्य रत्न की आशा से आये हैं ! इसमें सन्देह नहीं कि हम दोनों विपक्षी है परन्तु ऐसा होने

से हमलोगों को परस्पर क्या कोई असद् व्यवहार करना उचित है ?

धन०—जी नहीं ऐसा क्या कभी हो सकता है ?

दूत०—अच्छा तो मैं आप से यह पूछता हूं कि आप जो निरन्तर मरुदेशाधिपति की निन्दा किया करते हैं यह क्या आप के योग्य कर्म्म है ?

धन०—यह आप क्या कहते हैं—यह बात आप को किसने कही ?

दूत०—महाशय, बिना पवन के बहे क्या वृक्षपल्लव कभी आपस में लड़ते हैं ?

धन०—जान पड़ता है कि आप की इच्छा मुझ से विवाद करने की है ?

दूत०—आप के संग बिबाद करने से मुझे क्या लाभ है ? परन्तु हां आप को इस दुष्कर्म का प्रतिफल अवश्य दिया जायगा इस में सन्देह नहीं। आप के राजा वेश्यादास है, नाचना, गाना, मटकना इत्यादि विद्या में परम निपुण है तो क्या वे राजेन्द्रकेशरी महाराज मानसिंह की तुलना कर सकते है अथवा राजकुमारी कृष्णा के उपयुक्त पात्र है ?

धन०—(सत्यदास से) आप सुनते है (कान पर हाथ धरके दूत से) ठाकुर क्या कहूं, एक तो तुम वृद्ध, दू-

सरे ब्राह्मण नहीं तो इसी क्षण तुम्हें इसका प्रतिफल दिये बिना न छोड़ता।

दूत०—चल तेरे जैसे प्रतिफल देनेवाले बहुत देखे हैं।

सत्य०—आप दोनों महाशय शान्त होइये इस वृथा के वाक् युद्ध में क्या प्रयोजन है, विशेषत: इस स्थल में आप लोगों को इस प्रकार असौजन्य प्रकाश करना क्या उचित है ?

धन०—जी हां, सो ठीक है, किन्तु आपही विचार कर देखें कि मेरा इसमें क्या अपराध है ? यही तो बिवाद करते हैं।

(बलेन्द्रसिंह का प्रवेश)

बले०—यह क्या ? आप लोगों में यह घोर द्वन्दयुद्ध क्यों उपस्थित है ? इस परस्पर युद्ध का क्या कारण ?

दूत०—जी नहीं, युद्ध क्यों होगा, मैं इन जयपुरी दूत महाशय को दो एक हितोपदेश की शिक्षा देता था।

बले०—हां क्या हितोपदेश दिया ? ज़रा मैं भी सुनूं, आप की क्या यह इच्छा है कि ये विवाह की आशा को तिलाञ्जलि दे कर स्वदेश को प्रस्थान करें।

धन०—हाहाहा जी, यही तो एक प्रकार जान पड़ता है।

दूत०—जी, निस्सन्देह हमारे विचार में तो इन्हे यही करना उचित है महाशय, मान बड़ी वस्तु है "यशोधनानां हि यशो गरीय:'

बले°—हा हा। दूत महाशय, हम देखते है कि आप स्वयं चाणक्य के अवतार हैं। भला, हम सुनते हैं कि आप की मरुदेश में भगवती वसुन्धरा बन्ध्या नारी का अनुकरण करती हैं। सो यह तो बताइये कि आपके यहां राजकार्य्य कैसे चलता है ?

दूत°—वीरवर, क्या बन्ध्या स्त्री का स्वामी संसार परित्याग कर देता है ?

बले°—ठीक, ठीक। (धनदास से) कहिये महाशय आप ज़रा अपने अम्बर देश का तो वर्णन करिये, ज़रा सुनूं तो सही।

धन°—महाराज मेरी क्या सामर्थ्य जो मैं उसका वर्णन कर सकूं, यदि पंचमुख भी चाहें तो अम्बरदेश के सुख सम्पत्ति का यथार्थ वर्णन नहीं कर सकते। महाराज हमारा अम्बर प्रदेश साक्षात् अम्बर प्रदेशही है। वहां अङ्गनागण तारागण की नाईं सुन्दर है और जिस प्रकार मेघ में सौदामिनी और विन्दु होते हैं उसी प्रकार हमारे राजभण्डार में हीरे और मोतियों का ढेर लगा रहता है तिस पर हमारे महाराज तो फिर स्वयं चन्द्र हैं और—

दूत°—ठीक है, चन्द्र की नाईं कलङ्की हैं।

बले°—अहह। क्या कहा धनदास।

धन०—जी और क्या कहूं? उलूक तो किसी प्रकार सूर्य का तेज नहीं सह सकता और जो क्षुधा के मारे रात्रि के समय खोड़र में से निकला भी तो क्या किसी प्रकार नेत्र खोल कर प्रकाशमय चन्द्र को देख सकता है? तेजोमय वस्तु मात्रही उसकी आंख में गड़ती है।

वले०—अहा हा!। कहिये दूत महाशय, अब? (नेपथ्य में यन्त्रध्वनि होती है) अरे यह क्या? (नेपथ्य में बाजा बजता है)

सत्य०—यह स्वयं महाराज राजसभा मे आते है, चलिये हमलोग भी वहीं चले

(रक्षक का प्रवेश।)

रक्षक०—(हाथ जोड़ कर बीरवर, गणेश गंगाधरशास्त्री नामक एक दूत महाराष्ट्रपति के यहां से आकर बाह्य सिंहद्वार पर खडा है उसके लिये क्या आज्ञा होती है?

वले०—क्या!—महाराष्ट्रपति के यहां से? अच्छा उसे राजसभा में ले जाओ हम भी आतेही है। चलिये तो हम सब एक बेर राजसभा मे चलें। (सब जाते हैं)

(मदनिका का पुनः प्रवेश।)

मद०—(स्वगत) अब तो मेरा काम बन गया:, अब इस नगर में रह कर विलम्ब करने से क्या प्रयोजन है?

मेरी कुशलता से राजनन्दिनी राजा मानसिंह पर इतनी अनुरागिणी हो गई है कि वे जगतसिंह का नाम सुनते ही जल उठती है और मेरे पत्र को पाकर मानसिंह ने भी दूत भेजा है तो अब यहां रह कर और क्या होगा ? चलो—किन्तु राजनन्दिनी को छोड़ते समय अन्दर से जी कैसा २ हुआ जाता है—आहा, ऐसी सुशीला सुन्दरी तो संसार में न कहीं देखी न सुनी –हे परमेश्वर देख मैं जो इस वन मे अग्नि लगा चली हूं ऐसा न हो कि यह दावाग्नि हो कर इस कमलनयनी हरिनी को कष्ट दे। हे प्रभो। तुही रक्षक है! चलूं मुझे धनदास से पूर्व जयपुर पहुंचना है।

(जाती है)

द्वितीय गर्भाङ्क।

(स्थान उदयपुर का राजउद्यान।)

तपस्विनी का प्रवेश।

तप॰—(स्वगत) क्या आश्चर्य है। मैंने श्रीभगवान गोविन्द राज के मन्दिर में कृष्णाकुमारी के विषय में जो कुस्वप्न देखा था सो क्या यथार्थही हुआ ? राजा मानसिंह और राजा जगतसिंह दोनोंही ने जो राजनन्दिनी के

पाणिग्रहण के लिये इस नगर में दूत भेजा है तो अब क्या ये दोनों मतंग बिना युद्ध किये कभी शान्त होंगे? कभी नहीं इन के युद्ध करने पर क्या इस वनस्थली की सामान्य दुर्दशा होगी? हाय! हाय!! विधाता की क्या विडंबना है। (दीर्घनिश्वास लेकर) दीनबन्धो! तुम्हो सत्य हो, मैं देखती हूं कि कृष्णा भी महाराज मानसिंह पर अत्यन्त अनुरागवती हो गई है, जो हो यह सब वृत्तान्त तो एक बार राजमहिषी से अवश्यही कहना उचित है।

(जाती है)

(कृष्णाकुमारी का प्रवेश।)

कृष्णा—(स्वगत) वह दूती पची होकर उड़ गई क्या! मैंने उसके खोज में न जाने कहां २ सखियों को भेजा परन्तु कहीं भी उसका पता न लगा। (दीर्घ निश्वास लेकर) क्या आश्चर्य है न जाने वह मुझ पर कौन सा मोहनी मंत्र पढ़ गई है कि तब से मेरा जी कहीं लगताही नहीं, जो हो अरे अज्ञान मन। तू क्यों इतना चंचल हुआ जाता है? स्वप्न भी क्या कभी सत्य हुआ है? पर क्या वह दूती सत्यही मुझे छल गई? यह भी कैसे कहूं, उसके राजा का दूत भी तो आया है? (कुछ सोच कर) भगवती कपालकुण्डला को जो मैंने

अपने जी का हाल कह दिया सो क्या अच्छा किया ? परन्तु ऐसा रहस्य क्या किसी प्रकार चित्त में छिपाया जाता है, जैसे कीट कुसुमकली को तोड़ कर स्वयम् निकल आता है वैसेही यहभी है — यह देखो भगवती माता जी से बात चीत करती हुई ईधर चली आती है, मेरे जान मेरीही बात करती हैं हाय ! हाय ! ! क्या लज्जा की बात है माता जी सुनेंगी तो क्या कहेंगी ? मै मा को क्या मुंह दिखाऊँगी ? न जाने बिधाता ने क्या अदृष्ट लिखा है कुछ कहा नहीं जाता — चलूं इस समय संगीतशाला में जाऊं।

(जाती है) .

(अहिल्या देवी के संग तपस्विनी का पुनः प्रवेश)

अहि०—क्या कहती हो भगवति ? आपने क्या यह वृत्तान्त स्वयं कन्या के मुख से सुना ?

तप०—जी हां—उन्ने आपही मुझ से कहा।

अहि०—क्या आश्चर्य्य है।—

तप०—महिषि ! युवती के हृदय मन्दिर की द्वारपालिनी लज्जाही है। उसका पराभव करना क्या सहज काम है ? मैं कितनी कुशलता से इस विषय में कृतकार्य्य हुई हूं सो आप को क्या कहू।

अहि॰—आहा। इसी कारण जान पड़ता है कि पुत्री को आज काल कुछ उदास देखती हूं। अच्छा भगवती, यह तो कहो कि हमारी कृष्णा राजा मानसिंह पर इतनी अनुरागवती कैसे हुई इसका कारण कुछ जानती हो?

तप॰—राजमहिषि। यह सब दैवघटना है। देखो कमलिनी सूर्य्योदय होते ही खिल जाती है किन्तु क्यों उसका सूर्य्य पर इतना अनुराग है क्या कोई कह सकता है?

अहि॰—सूर्य्योदय की उज्ज्वलकान्ति देख कर कमलिनी सूर्य्य के आधीन हो जाती है, किन्तु हमारी कृष्णा ने तो मानसिंह को देखाही नहीं—

तप॰—देवि। हृदयरूपि चक्षु से मनुष्य क्या नहीं देख सकता विशेषत: भगवान कन्दर्प की जो लीला और कौतुक है सो आप क्या नहीं जानतीं? क्या दमयन्ती सती राजा नल को अपने चर्म चक्षुओं से दर्शन कर उन पर अनुरागवती हुई थीं? (चौंककर) अहा क्या मनोहर सुगन्ध है देवि। देखो यह जो सुगन्ध वायु के साथ आकाश में फैल रहा है इस का जन्म किस पुष्प से है सो तो हम नहीं देख सकते किन्तु यह चित्त में प्रतीत होता है कि यह सुगन्ध जिस पुष्प का है वह अत्यन्तही सुन्दर और मनोहर है। जैसे यह सुगन्ध अपने जन्मदाता पुष्प के मनोहरता को प्रगट करता है उसी प्र-

कार महारानी यशःस्वरूप सौरभ की भी रीति है। मरुदेशाधिपति राजा मानसिंह कोई साधारण यशोहीन मनुष्य थोड़े ही है।

अहि०—हां सत्य कहती हो (नेपथ्य मे यन्त्रध्वनि)

तप०—देखो राजमहिषी। राजनन्दिनी के हृदय में जो भाव है वह स्वयं प्रकाश हो जाता है।

(नेपथ्य में गीत)

पिय बिनु नागिन कारी रात।
कबहुं जामिनी होत जुन्हैया डसि उलटी होइ जात॥
जन्त्र न फुरत मंत्र नहि लागत आयु सिरानी जात।
सूरश्याम बिनु बिकल बिरहिनी मुरि मुरि लहरैं खात॥

तप०—अहा! ऋतुराज बसन्त के उपस्थित होने पर क्या कोई कोकिला को चुप रख सकता है वह अवश्यही अपने मन की कथा बनस्थल में रात दिन पञ्चमसुर में कहाही करती है। यौबन काल आने से मनुष्य जाति का हृदय भी किसी प्रकार स्थिर अथवा चुप नहीं रह सकता है।

अहि—जो हो भगवती आपका यह कथन सुनकर मेरा मन कितना व्याकुल हो गया सो क्या कहूं। हाय! हाय। मेरे सरीखी हतभागिनी स्त्री क्या संसार में कोई होगी? मुझे इस बात की बड़ी इच्छा थी कि

मैं पुत्री का विवाह भली प्रकार करूं किन्तु देखती हूं कि विधि की विडम्बना से सभी व्यर्थ हुआ चाहता है

(रोती है)

तप०—क्यों राजमहिषी ! कैसे व्यर्थ हुआ चाहता है ?

अहि०—भगवती आप क्या विचारती है कि महाराज मरुदेश के राजा को पुत्री देंगे ? प्रथम तो राजा मानसिंह के साथ उनका अत्यन्त सद्भाव नहीं है दूसरे जयपुर का दूत यहां पूर्वही आ चुका है।

तप०—ऐसा क्या? जो धीवर प्रथम डुबकी लगाता है उसी को क्या सागर उत्कृष्ट मुक्ताफल देता है? यह क्या बात है ? महिषी ! कृष्णा आपकी कन्या है, आपकी इच्छा जिसे हो उसे दीजिये, इसमें आगे पीछे क्या ?

अहि०—(दीर्घनिश्वास लेकर) भगवती ! मेरा क्या इसमें वश है —अहा ! भगवती एकबार इधर तो देखो आगे बढ़कर) आओ पुत्री आओ—

(कृष्णा का पुनः प्रवेश)

तुम्हारा मुख आज इतना उदास क्यों है पुत्री ?

कृष्णा—नहीं मां उदास क्यों होगा ?

अहि०—यह क्या ? तू रोती क्यों है ?

कृष्णा —(निरुत्तर होकर मां के गले से लिपटकर रोती है)

अहि०—पुत्री क्यों ? तुझे क्या अभाव है जो तू इतनी दुःखित होती है ?

तप०—(स्वगत) अहा ! इस व्रत में यह नवीन व्रती है सो अपने व्रत के उद्देश्य को न पाकर क्या यह स्थिर रह सकती है ?

अहि०—छी: ! छी: ! यह क्या बेटी ?

कृष्णा मां मैंने क्या अपराध किया है जो तुम मुझे जल में बहा देने को उद्यत हुई हो ? (रोती है)

अहि०—क्या कहती हो पुत्री ? तुझे जल में क्यों बहाऊंगी ? किन्तु पुत्री ! लड़कियां क्या सदा पिताही के घर रहती हैं ? (रोती है)

तप०—वत्से ! पक्षिशावक क्या चिरकाल तक अपने घोंसले ही में रहकर अपना काल व्यतीत करते हैं ? देखो ये तुमारी माताही है किस प्रकार पिता का घर परित्याग करके स्वामिगृह में रहती है। तुमको भी यही करना होगा।

कृष्णा भगवती—(रोती है)

अहि०—स्थिर हो पुत्री स्थिर हो रो मत (रोती है)

कृष्णा—मां मुझको इतने दिन प्रतिपालन करके शेष में क्या वनवास दोगी ? (रोती है)

तप०—महिषी ये देखो महाराज इधर आते है, वे आप दोनों की ऐसी दशा देखकर अत्यन्त दुखित होंगे तो आप एक काम करें राजनन्दिनी को लेकर यहां से थोड़ा हट जावें।

अहि०—आओ पुत्री हमलोग चलें।

(अहिल्यादेवी और कृष्णा का प्रस्थान)

तप०—(स्वगत) मैं समझी थी कि अनिद्रा, निराहार, कठोर तपस्या ये सब संसारमायाशृङ्खल से मुक्ति दान देते है। सो क्या मैंने वह मुक्ति पाई? ऐसा तो किसी प्रकार चित में विश्वास नहीं होता। अहा। इन दोनों का शोक देखकर हृदय विदीर्ण हुआ जाता है। (दीर्घश्वास लेकर) हे विधाता इस मनुष्य के हृदय में जो बीज तूने रोपण किया है उसे निर्मूल करना क्या मनुष्य का काम है? विलापध्वनि सुनने से योगीन्द्र का भी मन चञ्चल हो उठता है।

(राजा भीमसिंह का प्रवेश)

राजा—भगवती। यहां रानी थी न?

तप०—जी हां वे यहीं थीं, जान पड़ता है कि वे आयाहो चाहती है।

राजा—उनसे हमको कोई विशेष बात कहना है। जान पड़ता है कि आपने भी सुना होगा कि मरुदेशाधिपति

राजा मानसिंह ने भी हमारी कृष्णा के पाणिग्रहण की इच्छा से हमारे निकट दूत भेजा है।

तप०—जी हां सुना तो है।

राजा—(दीर्घनिश्वास लेकर) भगवती। यह सब हमारे भाग्य की विचित्रता है।

तप०—ऐसा क्यों? महाराज। यह तो सर्वत्रही होता आया है।

राजा—भगवती। आप चिरतपस्विनी है अतएव इस देश के लोगों का चरित्र विशेष रूप से नहीं जानतीं। इस विवाह के उपलक्ष से कितने २ उपद्रव उठेंगे क्या कोई गिन सकता है?

(अहिल्यादेवी का पुनः प्रवेश)

प्रिये। तुम्हारी कृष्णा का विवाह कुशलपूर्वक हो जाय ऐसा तो हमें किसी प्रकार विश्वास नहीं होता।

अहि०—क्यों नाथ?

राज—क्या कहूं। इस विषय में महाराष्ट्राधिपति राजा मानसिंह के पक्ष पर होकर हमसे अनुरोध करता है कि—

तप० नरनाथ। तो राजनन्दिनी को राजा मानसिंहही को क्यों नहीं प्रदान कर देते? वे भी तो कोई सामान्य राजा नहीं है—

अहि०—जीवितेश । इस दासी की भी यही प्रार्थना है।

राजा क्या कहती हो देवी? राजा जगतसिंह हमारे परम आत्मीय है तिसपर उनका दूत भी पहले आ चुका है तो अब हम क्या कहकर उसे निराश करें ? (दीर्घ-निश्वास लेकर) हे विधाता । तूने यह जो प्रमाद रूपि अग्नि भड़काया है क्या वह बिना रक्तस्रोत के शान्त ह नेवाली है ?

अहि०—प्राणनाथ । महाराष्ट्राधिपति जो इसमें हाथ देता है इसका क्या कारण है ? वह तो अपने देश पर जाने को उद्यत था न ?

राजा—देवि । तुम उस नराधम का चरित्र भली प्रकार नहीं जानतीं । वह तो यह चाहताही है कि कोई न कोई बहाना उसके हाथ लगे ।

तप० – अच्छा महाराज । यदि आप इस विषय में सम्मत न हों तो महाराष्ट्राधिपति क्या करेगा ?

राजा —ऐसा करने से उसकी लुटेरू सेना देश में लूट मार आरम्भ कर देगी । हाय । हाय । फिर क्या देश में कुछ बचेगा ? भगवती । हमारी क्या अब वह अवस्था है जो हम ऐसे प्रबल शत्रु को पराजय कर सकेंगे ?

तप०—महाराज । लक्ष्मी देवी की कृपा से आपको किस बात का अभाव है ?

अहि०—(राजा का हाथ धर कर) नाथ । इतना मत घबड़ाइये, जान पड़ता है कि भगवान एकलिङ्ग के प्रसाद से यह उद्वेग अति शीघ्र शान्त होगा।

राजा—महिषी। तुम तो राजपुत्री हो क्या तुम नहीं जानतीं कि इस विवाह में हम जिसे निराश करेंगे वही म्यान से तलवार खींच लेगा? प्रिये। तुम्हारी कृष्णा क्या सती की नाईं अपने पिता का सर्वनाश करने आई है? हाय। हमने विधाता के निकट कौन सा पाप किया है जो वह हमसे इतना प्रतिकूल हो गया है! हमारा ऐसा अमूल्य रत्न भी अग्नि होकर हमें दग्ध करने लगा है, यह हमें स्वप्न में भी विदित न था कि हमारे हृदय सेही हमारा सर्वनाश होगा।

अहि०—(निरुत्तर होकर रोती है)

तप० - यह क्या? महिषी आप क्या करती हैं?

अहि० - भगवती। यमराज क्या हमें भूल गये हैं? (रोती है)

तप०—महिषी ये क्या? वह आपके शत्रुओं को स्मरण करें। महाराज आज्ञा हो तो मैं अब अन्तःपुर को जाऊँ।

अहि०—नाथ! हमारी कृष्णा का इसमें क्या दोष है कहिये तो? हमारी पुत्री तो भला बुरा कुछ भी नहीं जानती, पुत्री! तेरा जन्म इस अभागिनी के कोख से क्यों हुआ था? (रोती है)

राजा—(हाथ धरकर) देवि। हमारा यह अपराध क्षमा करो। हाय! हाय! मैं कैसा नराधम हूं हमारे सरीखा भाग्यहीन पुरुष हम जानते है कोई भी न होगा। ऐसा अमृत भी हमारे लिये बिष हुआ। तो चलो प्रिये अब अन्त:पुर को चलें! सूर्य्य भगवान भी अस्ताचल को चले (दीर्घनिश्वास लेकर) हे दिवसपते। तुम्हें जो लोग इस राजकुल का आदि कारण कहते है सो क्या तुम भी इस दुःख से मलीन हो गये हो?

[सब जाते हैं]

(कृष्णा का पुन: प्रवेश)

कृष्णा—(घूमकर। स्वगत) अहा। एक वह समय था और एक यह समय है? मै क्यों वृथा फिर यहां आई? यह सब क्या मुझे अब अच्छा लगता है(दीर्घनिश्वास लेकर) अहा। मैने इस मल्लिका पुष्प का आदर से बनविनोदिनो नाम रक्खा है। इस सुचारु शमो वृक्ष को सखी कहके बरा है। (चकित होके) यह क्या? अहा। सखी तुम क्या इस हतभागिनी का दु,ख देखकर दीर्घ निश्वास परित्याग करती हो? क्यों तुम तो चिरसुखिनी हो तुम्हारे खेद का क्या कारण है। मलय समीर तुम्हारा एकान्त अनुगत है सदाहो तुम्हारे सङ्ग मधुरस्वर से प्रेमालाप करता है सो क्या तुम पराये का दुःख

बूझ सकती हो? क्या आश्चर्य है। (चिन्ता करके) हाय। हाय। वह मायाविनी दूती किस कुलग्न में इस देश को आई थी। कुछ कहा नहीं जाता। क्या आश्चर्य है। मैंने जिसे कभी नहीं देखा, जिसका नाम कभी नहीं सुना, जिसके सङ्ग कभी वार्त्तालाप नहीं किया उसके लिये मेरा मन ऐसा चञ्चल क्यों हो रहा है? केवल उस दूती के कथन मात्र से मेरा मन इतना चञ्चल क्यों हो गया है? हा। मैंने क्यो वह चित्रपट देखा था? क्यो उस मनोहर मूर्त्ति को अपने हृदय कमल मे स्थान दिया था? लोग कहते हैं कि मरुदेश वन्ध्यास्थल है, वहा वसुमती सर्वदा विधवा वेष धारण किये रहती है कुसुमादि रूपि कोई भी अलङ्कार धारण नहीं करतीं। किन्तु क्या आश्चर्य, है। मेरे मन को तो वह देश नन्दन वन सा जान पडता है मुझे वह प्रदेश कैसा अच्छा लगता है वह मेरा मनही जानता है। (दीर्घनिश्वास लेकर) चलो देखूं तो कि उस दूती का कुछ पता लगा या नही (घूमकर सचकित) यह क्या? यह उद्यान अचानचक इस प्रकार पद्मगन्ध परिपूर्ण कैसे हो गया! (डर के) क्या आश्चर्य है मुझ से चला नहीं जाता मेरा सर्वाङ्ग क्यों कॉप रहा है? (नेपथ्य की ओर देखकर) अरे यह क्या! आ! आ!

आ। (मूर्छित होकर गिर पड़ती है)—आकाश में कोमल वाद्य सुनाई पड़ता है।

(तपस्विनी का शीघ्रता से प्रवेश)

तप०—(स्वगत) अरे सर्वनाश। सर्वनाश हुआ। (कृष्णा को गोदी में लेकर) अरे यह क्या? बड़े भाग्यों से मैं अचानचक इधर से चली जाती थी। उठो पुत्री उठो। यह क्या हुआ?

कृष्णा—(अचेत अवस्था मे) देवि। आप इस मधुर वचन को फिर कहिये। मैं भली प्रकार सुन लूं। क्या कहा अहा। हा। "जो युवती इस महत् कुल के मान को अपना प्राण देकर रक्षा करती है सुरपुर में उसके आदर की सीमा नहीं है" अहा। इस अभागिनी के भाग्य में क्या यह सुख है?

तप०—यह क्या पुत्री? यह क्या कहती हो? (स्वगत) हाय। हाय। देखो तो विधाता की क्या विडम्बना है एक तो यह राक्षसी समय तिस पर कृष्णा का यह नवयौवन; क्या जाने किसकी दृष्टि—

कृष्णा—(उठकर सचकित) भगवती। आप यहां कैसे आई?

तप०—क्यों पुत्री, यह क्या?

कृष्णा—(चारोंओर देखकर) क्या आश्चर्य है भगवती। मैंने जो अद्भुत स्वप्न देखा है उसे सुनकर आपको बड़ा विस्मय होगा।


कृष्णा का
पद्मनीजी ढूंढ़ों मे
मूर्छित होना

तप०—क्या स्वप्न पुत्री ?

कृष्णा—जान पड़ता है कि जैसे मैं किसी सुवर्ण मन्दिर में एक कमलासन पर बैठी हूं इतनेही में एक परम सुन्दरी स्त्री एक पद्म हाथ में लिये हुई मेरे सन्मुख आकर खड़ी हुई। खड़ी होकर बोली कि पुत्री तू मुझे प्रणाम कर मैं सम्बन्ध में तेरी माता हूं।

तप०—तब ?

कृष्णा—मैंने प्रणाम किया तो बोली - देख पुत्री जो युवती इस महत्कुल के मान को अपना प्राण देकर रक्षा करती है सुरपुर में उसके आदर की सीमा नहीं है। मैं इस कुल की वधू हूं मेरा नाम पद्मिनी है। तू यदि हमारे सरीखा काम करेगी तो हमारी सी यशस्विनी होगी।

तप०—तब ? तब ?

कृष्णा - जह। भगवती आप मुझे सम्हालिये मेरा शरीर काँपता है।

तप०—क्या आपत्ति है। चलो पुत्री तुम अन्तःपुर में चलो यहां कुछ काम नहीं। देखो बेटी मुझे जो तुमने कहा सो किसी दूसरे से न कहना (आकाश में कोमल वाद्य ध्वनि होती है)

कृष्णा—आहा। भगवती यह सुनिये।

तप०—क्या आपत्ति है। पुत्रि मैं क्या सुनूं ?

कृष्णा—भगवती ! क्या तुमने नहीं सुना ? कैसी मधुरध्वनि है ! आहा !

तप॰—चलो बेटी यहां ठहरने का कुछ काम नहीं है तुम शीघ्र यहां से चलो ।

(दोनों जाती हैं)

तृतीय गर्भाङ्क ।

(स्थान उदयपुर का नगरद्वार)

(बलेन्द्रसिंह और कई रक्षकों का प्रवेश)

बले॰—रघुवरसिंह –

प्रथम—(हाथ जोडकर) क्या आज्ञा है, वीरवर !

बले॰—देखो तुम सब अत्यन्त सावधान रहो । आज किसी को भी इस नगर में प्रवेश करने मत दो ।

प्रथम—जो आज्ञा महाराज - आपकी अनुमति विना किस की ताकत है जो इस नगर में प्रवेश कर सके ।

बले॰—और देखो यदि महाराष्टाधिपति के डेरे में किसी प्रकार का गड़बड़ देखो तो उसी क्षण मुझे आकर सम्वाद दो ।

प्रथम—जो आज्ञा ।

मले॰ (देखकर स्वगत) यह महाराष्ट्र शृगाल क्या सामान्य धूर्त है ? ऐसा लोभी, अहितकारी नराधम, चोर क्या कोई और है । किन्तु मानसिंह के सहित इसका अचानचक इतना मेल क्योंकर हुआ इसका कारण कुछ समझ नहीं पडता । (चिन्ता करके) कोई न कोई कारण अवश्य है नहीं तो वह ऐसा मनुष्य नहीं है कि वृथा क्लेश स्वीकार करे। कृष्णा का विवाह किसी से क्यों न हो, उसका विवाह होने से उसको क्या ?

[प्रस्थान

(नेपथ्य में रण का बाजा बजता है)

द्वि॰रक्षक - कहो रघुवरसिंह—!

प्र र॰— क्या है भई।

द्वि॰र॰—तुमसे मैं एक बात पूछता हूं; तुम तो सदाही हमारे सेनापति बलेन्द्रसिंह के साथ रहते हो, राजकाज का वृत्तान्त जितना तुम जानते हो उतना और कोई नहीं जानता ।

प्र॰र॰—हां, कुछ २ तो जानतेही हैं । अच्छा क्या पूछते हो ? पूछो ।

द्वि॰र॰—देखो भाई हमने सुना है कि इस महाराष्ट्राधिपति के सङ्ग हमारे महाराज का मेल हो गया था सो फिर जो यह आकर थाना देकर लैठा है इसका क्या कारण?

प्र०र०—क्या तुमने इसका हाल कुछ नहीं सुना ?

द्वि०र०—नहीं भई।

तृ०र०—क्या है भई ? इसका तो हाल हम भी कुछ नहीं जानते।

प्र०र०—मरुदेश के राजा मानसिंह और जयपुराधिपति जगतसिंह दोनों ने हमारी राजनन्दिनी के विवाह करने की आशा से दूत भेजा था।

तृ०र०—हां, सो तो जानते हैं तो इस विषय में महाराष्ट्र राज के हस्तक्षेप का क्या प्रयोजन है ?

प्र०र०—हमारे महाराज की पूर्णतया यही इच्छा है कि वे पुत्री का विवाह जगतसिंह से करें किन्तु इस राजा और जगतसिंह में चिरकाल से विवाद चला आता है इसकी इच्छा है कि महाराज अपनी राजकुमारी मानसिंह को प्रदान करें।

द्वि०र०—अच्छा भाई यदि यह विवाह का सम्बन्ध कराने आया है तो सङ्ग में इस सेना और शस्त्रों का क्या प्रयोजन है ?

प्र०र०—अहा ! हा ! इतना भी तुम नहीं समझते ? इसके सरीखा भिखारी क्या संसार भर मे कोई है ? यह तो ऐसे झमेल मनायाही करता है, कुछ बहाना मिलना चाहिये फिर चाहे छल से चाहे बल से इसे अपनी भिक्षा की झोली भरने से प्रयोजन।

हि०र० यह तो सत्य है, तो भला कुछ जानते हो कि हमारे महाराज ने क्या स्थिर किया ?

प्र०र०—और क्या स्थिर करेंगे ? जयपुर के राजपूत को विदा करने की अनुमति दे चुके हैं । और थोड़ेही दिनों में महाराष्ट्राधिपति से भगवान एकलिङ्ग के मन्दिर में भेंट करेंगे । इसके उपरान्त विवाह के विषय में क्या होगा सो नहीं कह सकते ।

ट०र०—अच्छा भई तुम क्या समझते हो कि जयपुर के राजा इस पर चुप होकर बैठ रहेंगे ?

प्र०र०—सो नहीं कह सकते । सुनते है कि राजा कुछ रण प्रिय नहीं है । तौभी राजपुत्र तो हैं इतना अपमान क्या सह सकेंगे ?

ट०र०—यह देखो इधर दो मनुष्य कौन चले आते है ?

प्र०र०—सब सावधान हो जाओ । जान पडता है कि मन्त्री महाशय आते है ।

(सत्यदास और धनदास का प्रवेश)

सत्य०—रघुवरसिंह—

प्र०र०—(हाथ जोड़ के) जी, क्या आज्ञा है ?

सत्य०—सब मङ्गल है न ?

प्र०र०—जी हां ।

सत्य०—(धनदास से) अच्छा महाशय, आप ज़रा इधर आइये ।

धन॰—मन्त्री महाशय ! वह बात क्या अच्छी हुई ?

सत्य॰—जी अब इस विषय को जाने दीजिये । महाराज इसमें कितने दुखी हैं सो आपही बिचारिये न ! किन्तु क्या करें इसमें तो और कोई उपाय नहीं है ।

धन॰—जी हां यह बात तो ठीक है । पर हमारा तो सर्वनाश हुआ मैं किस कुलग्न में आप के देश में आया था कुछ कह नहीं सकता ।

सत्य॰—क्यों महाशय ?

धन—क्यों महाशय क्या ? पहिले देखिये जो कुछ हमारे पास था सब कुछ इन लुटेरों ने लूट लिया फिर राजा मानसिंह के दूत से हमारा कितना अपमान हुआ सो तो आप भली प्रकार जानते हैं, और—

सत्य॰—महाशय जो हुआ सो हुआ उन सब बातों को भूल जाइये । अब कृपा कर यह अंगूठी ग्रहण कीजिये महाराज ने इसे आप को देने के लिये मुझे दिया है ।

धन॰—महाराज का प्रसाद शिरोधार्य है । (अंगूठी लेता है)

सत्य॰—महाशय आप अत्यन्त चतुर मनुष्य हैं । अतएव आपको बहुत कहना व्यर्थ है । आप महाराज जगतसिंह को इस विषय में शान्त होने का परामर्श देंगे, यह आपस के द्रोह का समय नहीं है । (चिन्ता कर के) देखिये यदि आप यह काम कर देंगे तो महाराज आपको भली प्रकार सन्तुष्ट करेंगे ।


८१
सत्यदास धनदास
को अंगूठी देकर
विदा करती है

धन०—जो आज्ञा मैं अपने भर सक कसर न करूंगा । आगे जगदीश्वर के हाथ है।

सत्य०—हमने राजकर्मचारियों को महाराज की आज्ञा भेज दी है आपको रास्ते में कोई क्लेश न होगा।

धन०—तो मैं इस समय विदा होता हूं।

सत्य०—जो आज्ञा - अच्छा आइये।

धन०—(स्वगत) देखूं तो अंगूठी कैसी है (देखकर) वाह ! यह तो महारत्न है इसका मूल्य अनुमान एक लाख रुपया है। वाह रे। धनदास का भाग्य । मिट्टी छूने से सोना हो जाता है अहा । हाहा । जिसको विधाता वुद्धि देता है उसे सभी कुछ देता है (चिन्ता कर के) यदि महाराज यह कह कर अप्रसन्न होंगे कि तू इस विवाह में कृतकार्य नहीं हुआ, तो हुआ करें, न होगा उन का राज्य छोड कर और कहीं जा वसूंगा । और क्या ! मुझे तो अब धन की कमी भी नहीं है। अहा हा । वुद्धि के वल से धनदास धनपति है। किन्तु यही एक वाधा है ऐसा होने से विलासवती की आशा छोड़ना होगा। जिस मृगके लक्ष में इतने दिन लों अनेक वन पर्यटन किये उसे अब सहसा कैसे छोड़ जाऊं (विचार कर) क्यों ? छोड़ क्यों जाऊंगा ? क्या मैं एक वेश्या को न ठग सकूंगा ? अरे कितने लोग तो स्वर्ग-

कन्या अप्सराओं को वश कर लेते हैं और मैं क्या सामान्य वाराङ्गना का मन न हर सकूंगा ? अहा अच्छा देखें क्या होता है ?

[जाता है।

प्र०र०—(आगे बढ़कर) तुम लोग क्या इसे चीन्हते हो

द्वि०र०—चीन्हते क्यों नहीं ? वही जयपुरी दूत है न ? अ एक दिन रात को भाई इसन हम को जो कष्ट दि सो तुम्हें क्या कहें ?

ह०र०—क्या ? क्या ?

द्वि०र०—हम भाई पुरस्कार के लोभ से मदनिका नाम किसी स्त्री की खोज में इस्के संग चले । सारी रा खोजते २ मर गये कहीं पता न लगा। अन्त को प्रा काल घर लौटने के समय यह दुष्ट मुझे केवल चार गं पैसे हाथ धर के बोला क्या कि तुम मिठाई लेकर खा ओ अहा हा ।

प्र०र०—आहा हा । जैसा काम वैसा इनाम (आकाश की ओर देखकर) आह अब तो प्रभात ही हो गया।

(नेपथ्ये गीत)

कुमुदवनमपश्रि श्रीमदम्भोजखण्डं ।
त्यजति मुदमुलूकः प्रीतिमांश्चक्रवाकः ॥

उदयसहिमरोचिर्याति शीतांशुरस्तं।
हतविधिलसितानां ह्नोविचित्रोंविपाकः ॥ १ ॥

तृ॰र॰—लो सुना। चले हमलोग चलें। (नेपथ्य में रण के बाजे बजते हैं)

प्र॰र॰—हां——चलो——। यह देखो एक दल और आया। [सब जाते हैं]

इति तृतीयोङ्कः।

चतुर्थोऽङ्कः।

प्रथमगर्भाङ्कः।

स्थान जयपुर—राजगृह।

(राजा जगतसिंह और मंत्री का प्रवेश)

राजा—क्या कहा मन्त्री? यह हाल तुम्हें किसने कहा?

मन्त्री—महाराज, धनदास आज तोसरे पहर या कल प्रातःकाल तक स्वयम् आजायगा, उसके मुंह से जब आप यह सब हाल सुनेंगे तो आप को विश्वास होगा।

राजा—क्या आपत्ति है। क्या हम तुमारी बात पर विश्वास नहीं करते? हम यह पूछते हैं कि यह हाल तुमने किस से सुना?

मन्त्री—महाराज, हमने किसी निज दूत ही के मुख से सुना है। वह अत्यन्त विश्वासपात्र है।

राजा—ऐसा ? तो राजा भीमसिंह ने यह विचारा है कि हमारा अपमान करके वे मानसिंह को कन्या प्रदान करें ?

मंत्री—कृपानिधान, मैंने सुना है कि राजा भीमसिंह तो आप पर बड़ा स्नेह रखते हैं किन्तु वे बिचारे लाचार होकर अब ऐसा करने में प्रवृत्त हुये हैं। महाराज मैं तो पहिलेही यह सब बातें श्रीमान के सन्मुख निवेदन कर चुका हूं, किन्तु मेरे दुर्भाग्य से आपने उस समय धनदास ही के कथन पर ध्यान दिया।

राजा—आह! उस बीती हुई बात का अब सोच क्या?

मंत्री—महाराज, इसमें क्या सन्देह है। किन्तु बिचारने की बात है कि धनदास ही इस अनर्थ का मूल कारण है। उसने केवल स्वार्थ साधन के लिये इस राज्य का सर्वनाश किया!

राजा—क्यों? क्यों? उसका अपराध क्या है?

मंत्री—मैं अब क्या कहूं। धनदास का चरित्र तो महाराज भली प्रकार जानते नहीं।

राजा—क्यों? क्यों? धनदास का इसमें क्या अपराध है?

मंत्री—महाराज! राजकुमारी कृष्णा की प्रति मूर्ति उसने आप को क्यों आकर दिखलाया? इसका कारण क्या आपने अभी तक नहीं जाना?

राजा—क्यों ? क्या कारण है ? तुम्ही कहो ।

मंत्री—इसी विवाह के बहाने से एक प्रपंच बढ़ा के अपना उदर पूर्ण करना बस यही कारण है और क्या ? महाराज ! उसके नाईं स्वार्थपर मनुष्य क्या संसार भर में कोई है ?

राजा—हां । तभी वह इस विषय में इतना उद्योग करता था ? हम तो यह कुछ भी न समझे थे, अच्छा जाने तो दो - अच्छा तो अब इस विषय में क्या कर्तव्य है कहो तो ?

मंत्री—महाराज मेरी अनुमति तो यही है कि इस विषय में मौन धारण करनाही उत्तम है ।

राजा—(कुछ क्रुद्ध होकर) क्या कहा मंत्री ? तुझे कुछ उन्माद हुआ है क्या ? ऐसा अपमान क्या कभी कोई सह सकता है ? — क्यों क्या हमारे पास धन नहीं है ? - सैन्य नहीं — अथवा बल नहीं है ?

मंत्री—महाराज, राजलक्ष्मी के अनुग्रह से श्रीमान् को किस बात की कमी है ?

राजा—तो फिर हमें शान्त होने को क्यों कहते हो ? मान की अपेक्षा क्या धन और जीवन अधिक प्रिय है ? छि फिर ऐसी बात कभी मुंह से मत निकालना—देखो मल्येका दुर्ग के अधिपतियों के पास तुम अभी जाकर

पत्र भेजो कि वे लोग पत्र पढ़ते ही अपनी २ सेना ले-
कर यहां आ उपस्थित हो और देखो—

मंत्री—जो आज्ञा महाराज—

राजा – तुमने जो उस दिन धनकुलसिंह का हाल कहा था,
वह कौन है हमें भली प्रकार समझाओ।

मंत्री—महाराज वे मरुदेश के स्वर्गवासी महाराज भीमसिंह
के पुत्र है किन्तु महाराज के लोकान्तर होने पर उन
का जन्म हुआ है अतएव कोई २ लोग कहते है कि वे
वास्तविक भीमसिंह के पुत्र नहीं है।

राजा—हां। मरुदेश का वर्तमान राजा मानसिंह तो गु-
मानसिंह का पुत्र है न ? गुमानसिंह धनकुलसिंह का
पितामह है वीरसिंह का छोटा भाई तो धनकुलसिंह
ही मरुदेश का प्रकृत अधिकारी ठहरा।

मन्त्री—महाराज इस कलिकाल में अब क्या धर्माधर्म का
विचार है ? जिसको लाठी तिसकी भैंस। कुमार धन
कुलसिंह क्या अब राजसिंहासन पा सकते हैं ?

राजा—क्यों ? अवश्य पावेगा। हम उसे मरुदेश के सिंहा-
सन पर बैठावेंगे। देखो, मन्त्री तुम शीघ्र जाकर पत्र
लिखो। मानसिंह की इतनी बडी योग्यता हो गई कि
वह हमारी बराबरी करे ? अब देखना है कि वह अप-
ना राज्य कैसे सम्हालता है!

मन्त्री—महाराज—

राजा—(कुछ उठ कर) बस, वृथा बकवाद से क्या लाभ है ? जाओ।

मन्त्री—महाराज, मैं वृद्ध ब्राह्मण हूं—इस महत् कुल के प्रसाद से मैंने मनुष्यत्व लाभ किया है, श्रीमान् के स्वर्गवासी पिता—

राजा—आह ! क्या हम तुम्हें चीन्हते नहीं, मन्त्री तुमने क्यों अपना परिचय देना आरम्भ किया ?

मन्त्री–जी नहीं, सो नहीं, मेरा कहना यह है कि ऐसे भारी कार्य्य में सहसा प्रवृत्त होना उचित नहीं—

राजा—मन्त्री, मनुष्य का जीवन कुछ चिरस्थाई नहीं है किन्तु अपयश चिरस्थाई है, यदि हम यह अपमान सह जांय तो कायरों के स्थान में हमारी ही उपमा दी जायगी। धन, प्राण सब जाना स्वीकार है परन्तु यह कोई न कहे कि अम्बर देशाधिपति मरुदेश के राजा से डर गया। छि! छि! हमारे इस अपयश से मरना सहस्रगुण अच्छा है—अच्छा तो तुम जाओ।

मन्त्री—(दीर्घ नीश्वास लेकर) जो आज्ञा महाराज। (स्वगत) "यद्धात्रा जनभालपट्टलिखितं तन्मार्जितुम् कः क्षमः" हाय! हाय! दुष्ट धनदासही सब अनर्थों का कारण है!!!

[जाता है

राजा —(स्वगत) अब तो यह दूसरा कुरुक्षेत्र आरम्भ हुआ, इतने दिनों तक राजभोग में मत्त था परन्तु अब परिश्रम करना पड़ेगा। तलवार भी तो चिरकाल तक म्यान में पड़ी पडी मलिन और कलङ्कित हो जाती है। (कुछ सोच कर) जो हो, धनदास को तो खूबही दण्ड देना चाहिए हमने जितने कुकर्म किये है सभी का शिक्षक यही दुष्ट है · ओः इस दुष्ट की कैसी चमत्कारिक बुद्धि है। अच्छा देखें इस बार क्या होता है?

[प्रस्थान।

—※※※—

द्वितीय गर्भाङ्क।

स्थान विलासवती का घर।

विलासवती और मदनिका का प्रवेश।

विला०—वाह सखी। तेरी क्या विलक्षण बुद्धि है। धन्य है।

मद०—(कुछ हंस कर) सखी बडी विलक्षण कथा है मैं उदयपुर में जो जो काम कर आई हूं उसे स्मरण कर के मारे हंसी के पेट फूला जाता है अहा। ह। ह!—

विला०—सोई तो क्या आश्चर्य है धनदास क्या तुझको सचमुच ही नहीं पहिचान सका?॥

मद०—भला पहिचानही लेता तो क्या फिर अंगूठी देता?

विला०—भला सखी, तुझसे जो कोई पूछता था तो तू क्या परिचय देती थी ? ।

मद०—क्यों ? उदयपुर के लोगों को कहती थी कि मेरा घर जयपुर है और जयपुर के लोगों से कहती थी कि मेरा घर उदयपुर है और जहां दोनों देश के लोगों को देखती वहां जातीही न थी ।

विला०—वाह ! तेरी क्या विलक्षण बुद्धि है भई ! ।

मद०—ह ! ह ! राजमन्त्री, राजा मानसिंह का दूत औ राजकुमारी मैंने किसके संग बात चीत नहीं किया और कितने प्रकार के भेष बदले सो तुमसे क्या कहूं ।

विला०—सोई तो ! भला सखी ! राजकुमारी कृष्णा क्या बड़ी सुन्दरी है ? ।

मद०—अहा सुन्दरी सी सुन्दरी, सखी ! यह हाल न पूछो क्या कहूं ऐसा रूप लावण्य क्या पृथिवी में कहीं है ? (दीर्घनिस्वास लेती है)

विला०—यह क्या सखी तेरा मुख कुछ उदास सा क्यों हो गया है ? क्या उसने ऐसा तेरा मन मोह लिया है ? वाह वा गूंगी हो गई क्या सखी ?

मद०—सखी ! क्या कहूं राजनन्दनी कृष्णा का हाल स्मरण करके मन जैसे रो उठता है । अहा वो भोला मुख एक बार देखने से क्या फिर विस्मरण होता है ? ।

विला०—क्या कहती हो, क्या ? वह ऐसी सुन्दरी है। क्या आश्चर्य है! आओ सखी हम यहां बैठ जाँय हमे राजकुमारी कृष्णा का हाल भली प्रकार सुनाओ॥

मद०—क्यों उस का हाल सुनने से तुम्हारा क्या उपकार होगा कहो तो ? ।

विला०—क्या जाने भई तेरे मुख से उसकी बातें सुन कर मेरी ऐसी इच्छा होती है कि एक वार उदयपुर जा कर उसे देख आऊं।

मद०—सखी। जिस ने कृष्णाकुमारी को नहीं देखा उसे विधाता ने नेत्र वृथाही दिये। अच्छा जाने दो यह तो बताओ कि महाराज इधर कै दिन से नहीं आये?

विला०—(दीर्घ निश्वास ले कर) सखी यह हाल क्यों पूछती हो ? आज तीन दिन—

मद० हां। तो वे उस दिन से नहीं आये कि जिस दिन से धनदास जयपुर में आया। जान पड़ता है कि वे इस विवाह के विषय में अत्यन्त खिन्न हैं फिर होना ही चाहिये उनके दूत को तो मैंने खूबही ठगा; अहाहा। धनदास इस जन्म मे अब किसी के विवाह कराने का फिर उद्योग न करेगा, अहहाहा।

विला० अहहा। ऐसा ही तो जान पडता है।

मद०- देखो सखी जान पड़ता है कि आज महाराज

यहां आवेंगे कि आतेही होंगे—सो तूने यदि उन से आज पांव में हाथ लगवा के न छोड़ा तो मैं तुझसे जनम भर न बोलूंगी।

ला०—ओह। भला यह कैसे होगा? छी। छी। यह भी क्या हो सकता है?

द०—होगा क्यों नहीं? बुधी होनेही से सब होगा। अच्छा आओ न, तुम्हें हम मान करना अभिनय करके सिखा देैं। (बैठकर) मानो मैं मानिनी नायिका हो कर बैठी हूं तू नायक होकर आ और मुझे मना।

(मुंह फेर कर बैठ जाती है)

वेला०—अहा हा। वाह सखी वाह। तुझे कितने रंग आते है? अच्छा मैं अब क्या करूं? बता।

मद०—(उठकर) क्या आपत्ति है। नहो तूही मान करके बैठ मैं नायक हो कर मनाऊं।

वेला०—(बैठकर) अच्छा ले मैं बैठ गई।

मद० अब मान करो।

वेला०—यह किया (मुंह फेर लेती है)

मद०—हे सुन्दरी। तेरे मुखचंद्र को अभिमान रूपी राहु-ग्रास देख कर आज हमारा चित्त—

विला०—अहा। हा।

मद०—छी। छी। छी। यह क्या? सब बिगाड़ दिया। ऐसे समय को हंसना होता है?

विला० - ऐले, महाराज इधर आते हैं।

मद०—हां ! हां । देखो सखी । महाराज के आने पर कहीं इस प्रकार न हँस उठियो । मैं अब जाती हूं। इतने दिनोंपरान्त आज धनदास के सिर तोड़ने का भला जोग लगा।

[जाती है।

(राजा जगतसिंह का प्रवेश)

राजा०—(स्वगत) आज तीन दिन से यहां नहीं आये और आतेहो कैसे? मुझे क्या सांस लेने का भी अवकाश था ? इस तीन दिन में अनुमान नव्वे हजार सैन्य आकर इस नगर में एकत्र हुई है और धनकुलसिंह भी अनुमान आठ दस हजार लोगों को लेकर आता है; एक लक्ष वीर । देखें अब मानसिंह अपना राज्य कैसे बचाता है? जो हो इस घर में तो पुष्पधन्वा और पंचशर के अतिरिक्त दूसरे किसी अस्त्र की कथाही नहीं है यह भगवान कंदर्प की भूमि है; विलासवती कहां है ? (प्रकाश) अरे क्या वसन्त आने पर कोकिला चुप रहती है (देख कर) यह देखो क्यों प्रिये। तुम इतनी उदास हो कर आज क्यों बैठी हो ? यह क्या इधर कई दिन न आने से तुम हम पर कुछ विरत हो गई हो ? (निकट बैठ कर) देखो तुम किसी

प्रकार मन में यह मत विचारो कि हम जान बूझ कर तुम्हारे पास नहीं आये—क्या आश्चर्य है। तुम हम से बोलती क्यों नहीं? ये क्या? इतनी निस्तब्ध। तो यदि भई तुमको हम से न बोलना हो तो कहो हम चले जांय। मैं सहस्त्रों काम काज छोड कर तुम्हारे पास आया हूं और तुम चुप करके बैठी हो।।

विला०—जाओ न; मै क्या तुम्हें रोकती हूं?

राजा०—क्यों प्रिये। हमने क्या अपराध किया है? जो तुम हम पर इतनी निठुर हो?।

विला०—सो क्यों महाराज? आप राजकुलचूणामणि ठहरे; तिसर अब राजा भीमसेन के जवाई होंगे; मैं तो एक—

राजा—प्रिये। मैं देखता हूं कि तुम यथार्थही मुझ पर रुष्ट हो छि। यह क्या? तुम फिर चुप हो रही देखो जो तुम से इतना प्रेम रखता है उससे क्या इतना निठुर होना उचित है? (दहनो ओर देख कर) देखो प्रिये। ये तुम्हारी सारिका भी आज अपने सुक से मान करके बैठो है और वो अपने ठोर से उसके पैरों को छेड़ कर उसे मना रहा है मानों हमे इस बात की शिक्षा देता है कि तुम्हे किस प्रकार मनाना चाहिये तो आओ हम भी तुम्हारे पैर छूवें (पैर छूकर) लो तुम हमारा सब दोष अब क्षमा करो।

विला०—(चंचल हो कर) क्या करते हैं महराज ? छि। छी ! मैं तो केवल आपसे परिहास करती थी कि महाराज स्त्री का मान रखते हैं कि नहीं।

राजा०—अभी परिहासही था। भाग्यों से तुह्मारे मानरोग की औषधि पाई—अच्छा जोहो अब तो तुम हम पर प्रसन्न हुई न ?

विला०—भला मैं आप पर अप्रसन्न कब थी ?

(मदनिका का पुन: प्रवेश)

राजा०—अरे आओ सखी। देखो भई तुम्हें देख कर हमें बड़ा डर लगता है।

मद०—सो क्यों महाराज ? आप क्या कहते है ?

राजा०—सखी तुम मदनकेतु हो। जहां तुम वायु से परिचालित हो वहा क्या रचा हो सकती है ? सदा कामदेव की रण दुन्दुभी बजती ही रहती है, और प्रमाद प्रेम का युद्ध हुआही करता है और पंचशर के आघात से लोगों को प्राण बचाना कठिन हो जाता है।

मद०—आप को इस्की क्या चिन्ता है महाराज ? आप यदि मदन के शराघात में पड जांय तो उसकी उचित औषधी आपके पासही है, ऐसी ओषधी के रहते आप को क्या भय है ?

राजा०—ह हा हा। शावाश, सखी, ठीक कहती हो।

तुमतो भई सरस्वती की पितामही हो।—जो हो हम तुमसे बड़े प्रसन्न हुये; यह लो (गले से स्वर्ण का हार उतार कर देते हैं)

मद०—(प्रणाम करके) मैं तो महाराज की क्षुद्र दासी मात्र हूं।

राजा०—बैठो (मदनिका बैठती है) देखो सखी तुम जो हमें धनदास का सब हाल कहती थीं सो क्या सत्य है?

मद०—महाराज यदि आप इस दासी के कहने पर विश्वास न करें तो हमारी सखी से पूछ लीजिये।

राजा०—धनदास जो परमधूर्त और स्वार्थपर है इसका हाल तो हम भली प्रकार पा चुके हैं; किन्तु उसका जो इतना दूर साहस हुआ सो तो भाई हमें किसी प्रकार विश्वास नहीं होता।

मद०—महाराज जब आप अपने आंखों से देख लेंगे, अपने कानों से सुन लेंगे तब तो आप को विश्वास होगा न?

राजा०—हां। तब क्यों न होगा? इससे बढ़ कर और सच्चात् प्रमाण क्या होगा?

मद०—अच्छा तो मैं अभी आती हूं।

[जाती है

विना०—महाराज! दुष्ट धनदास ही इन सब अनर्थों का मूल है।

राजा०—इसमें क्या सन्देह है? हमें इस विवाह का क्या प्रयोजन था विशेषत: (हाथ धर के) तुम्हारे रहते प्रिय! क्या हम कभी किसी पर प्रेम कर सक्ते हैं?

बिला०—सोई तो महाराज! इन्हीं सब मीठी २ बातों से आप ने मेरा मन मोह लिया है (समीप खसक कर) सच तो कहिये महाराज अब भी आप के जी में इस विवाह की इच्छा है या नहीं?

राजा०—राम! राम! कहो! हम को इस विवाह की क्या आवश्यकता है? हमारी गति तो धनदास के पेंच में फँस कर सर्प छछूंदर की सी हो गई है किन्तु मानरक्षा तो अवश्य करना चाहिये। इसी लिये यह सब उद्योग है -

(मदनिका का पुन: प्रवेश)

मद०—महाराज! अब शीघ्र जरा इधर पधारिये तो उत्तम हो, धनदास आता है। (बिलासवती से) सखी अब महाराज को एक बार इसका प्रमाण देखा देना चाहिए (राजा से) तो महाराज आवें।

राजा—(उठ कर) अच्छा तो चलो। तुम जहां चलने को कहो वहीं चलें। ऐसे माझी के हाथ में नौका देने से डर क्या है? (दोनों आड़ में खड़े हो जाते हैं)

बिला०—(स्वगत) धनदास बड़ा धूर्तराज है, किन्तु मदनिका ने आज जो जाल फैलाया है उस से इस शृगाल का निकालना दुष्कर जान पड़ता है।

(धनदास का प्रवेश)

आओ आओ—धनदास आओ। कहो भई हो तो अच्छे ?

धन० अरे सखो क्या अच्छे हैं? कैसे अच्छे हों, सो कहो। जब से उदयपुर से आया हूं महाराज नें एक वार भी मुझे अपने सन्मुख नहीं बुलाया! और कितने लोगों के मुंह से जो क्या २ बातें सुनता हूं सो तुम से क्या कहूं? भला तुमने हमें नहीं विसारा यही बड़ी बात है।

बिला०—क्या भाई, आकाश चिरकाल तक मेघावृत्त रहता है!

धन०—नहीं सो तो नहीं रहता किन्तु भई यदि तुम हमारे इस मेघावृत आकाश के पूर्ण शशी हो जाओ तो क्या हमे कोई पा सकता है।

मद०—(धीरे से) महाराज, सुनते है न?

राजा० —(धीरे से) चुप—

धन०—(स्वगत) मदनिका ने कोई सहस्रों वार मुझ से कहा होगा कि विलासवती मनही मन मुझे प्यार करती है, और इस का रंग ढङ्ग देखने से भी यह बात

ठीक जान पड़ती है। (प्रकाश) तुम, सखी, चुप क्यों हो रही हो हम तुम्हें कितना प्यार करते हैं क्या तुम नहीं जानती हो ?

विला०—(कुछ लज्जित हो कर) सो भई हम कैसे जानेंगे।

धन०—तो सखी तुम क्या यह भी नहीं जानती हो कि भेक सदा कमलिनी के साथही रहता है किन्तु उस सुधामय पुष्प का आनन्द तो केवल भ्रमरही जानता है। तुम क्या पदार्थ हो सो क्या राजा विचारे का काम है कि समझे ? अहा हा।

राजा०—(धीरे से) सुना। दुष्ट का ढीठपन। इच्छा होती है कि इस नराधम का सिर अभी काट फेकूं (तलवार निकालने का उद्योग करते हैं)

मद०—यह क्या महाराज ? (हाथ धर के) यह आप क्या करते हैं ?

धन०—देखो विलासवती—

विला०—क्या कहते हो भई ?

धन०—सखी हम तो तुम्हारे दासानुदास हैं और हमने जो कुछ राज काज में संग्रह किया है वह सब तुम्हाराही है (स्वगत) इस ठगिन के पास जो बहुमूल्यरत्न म हाराज ने दिये हैं उन्हें कैसे अपने हाथ करूं ? मैं भी धीरे २ हो जायगा। इसे एक वार यहां से लेजाऊं

मदनिका विलासवती के महल में महाराज के ऊपर को आले में से चन्दन की पूतला को दिखाती है॥



पाऊं तो कार्य्य सिद्ध हो जाय (प्रकाश) सखी तुम चुप क्यों हो गई ?

विला०—अब मैं क्या कहूं ?

धन०—देखो कल्ह सवेरे तो राजा सैन्य लेकर मरुदेश को आक्रमण करने को यात्रा करेंगे और शस्त्र विद्या में तो वे जैसे निपुण हैं सभी जानते हैं, रणभूमि देखतेही मुर्छा आ जाती है। हा हा हा हा हम खूब जानते हैं ऐसा कापुरुष क्या संसार में और कोई है ?

राजा—(धीरे से) दुष्ट। क्या ऐसो बड़ो बात हमको कहता है (मारने को उद्यत होते हैं)

मद०—(रोककर धीरे से) क्या करते हैं महाराज जरा शान्त हो के सुनिये तो सही, क्या कहता है।

धन०—प्रिये। हमारे मन में आता है कि या तो यह इस युद्ध में मारा जायगा या मुह में कारिख लगाकर देश को लौट आवेगा।

राजा—(धीरे से) अच्छा देखें किसके मुंह में कारिख लगतो है—कृतघ्न। पामर। नोच।

धन०—तो तुम यदि कहो तो हम सब तैयारी करें चलो कल्ह हम दोनों जने इस देश से निकल चलें, उस अधम कापुरुष के पास रहने से तुमारा क्या उपकार होगा ? बालू के नेह का कहो क्या भरोसा है ?।

राजा - (आगे बढ़कर, क्रोध से धनदास का गला दबाकर) अरे दुराचार नराधम दासी पुत्र। क्या यही तेरी कृतज्ञता है? हम देखते है कि तू अपने चिरोपकारी मनुष्य के गले पर भी छूरी फेर सकता है।

धन०—(डर के स्वगत) अरे अब तो सर्वनाश हुआ। यह तो मै स्वप्न में भी नहीं जानता था कि ये यहां छिपे हुये है। अब क्या होगा? कहां जाऊँ — इस बार तो गया। और क्या? इसी हत्यारिणी कुलटाही ने मेरी जान ली॥

राजा—बोल—बोलता क्यों नहीं? तू जैसा दुष्ट है सो हमने इतने दिनोपरान्त जाना। तुझसे जो न हो सो थोड़ा है। तो अब भगवती वसुन्धरा तुझ दुराचारी पापी का बोझ अधिक न सहेंगी (तलवार निकालते हैं)

विला —(घबड़ाकर और राजा का हाथ थामकर) महाराज ये क्या करते है? क्षमा कीजिये। इस क्षुद्र प्राणी के मारने से आपकी तलवार केवल कलङ्कित मात्र होगी। सिंह क्या कभी शृङ्गाल पर आक्रमण करता है? सो महाराज मुझे इसके प्राण की भिक्षादान दें।

राजा—प्रिये! तुम्हारी बात मैं किसी प्रकार नहीं टाल सकता—अच्छा इसे प्राणदण्ड न दूंगा किन्तु (तलवार को म्यान में रखकर) जिसमें हमको फिर इसका मुंह



महाराज जयछूरथ नदास का गला दबाकर मारने के लिये तलवार निकालते हैं

देखना न पड़े ऐसा दण्ड देना आवश्यक है । कोई रक्षक है ?

(नेपथ्य में) महाराज ?

(रक्षक का प्रवेश)

राजा – देखो इस दुराचार को इसी क्षण कोतवाल के पास ले जाओ और उससे कहो कि इसका सिर मूँड़कर, मट्ठा डालकर, मुख में कारिख लगाकर इसे देश निकाला दे और जो कुछ इसकी सम्पत्ति है सब दरिद्र ब्राह्मणों को दे दे ।

रक्षक—जो आज्ञा महाराज (धनदास से) चल—

धन०—(हाथ जोड़कर और नेत्र डबडबाकर) महाराज—

राजा – चुप,, वेहया। अब हम तेरी कुछ नहीं सुना चाहते। ले जा—इसका मुख देखने से पाप होता है !

रक्षक—चल—

(धनदास को लेकर रक्षक जाता है)

मद०—(आगे बढ़कर) आहा । प्राण बच गया यही बड़ी रक्षा हुई । इसी क्षण दुष्ट की प्राणलीला समाप्त हो चुकी थी हा ! हा ! मूसाराम सारी रात चोरी कर करके खाते रहे सबेरा होते विचारे मूसदान में फंस गये । हा । हा । हा ।

विला० —यह सब भाई तेरीही कुशलता से हुआ। जो हो महाराज ने जो उसे प्राणदान दिया यही बडा लाभ हुआ। महाराज को इसका हाल इतने दिनोपरान्त मालूम पड़ा यही बड़े आनन्द का विषय है।

राजा —इस दुराचारी ने हमें जो अनेक कुमार्गों में चलाया है उसे स्मरण करके मन में बडी लज्जा होती है। किन्तु क्या करें केवल तुम्हारे अनुरोध से उसे इतना थोड़ा दण्ड देकर छोड़ दिया।

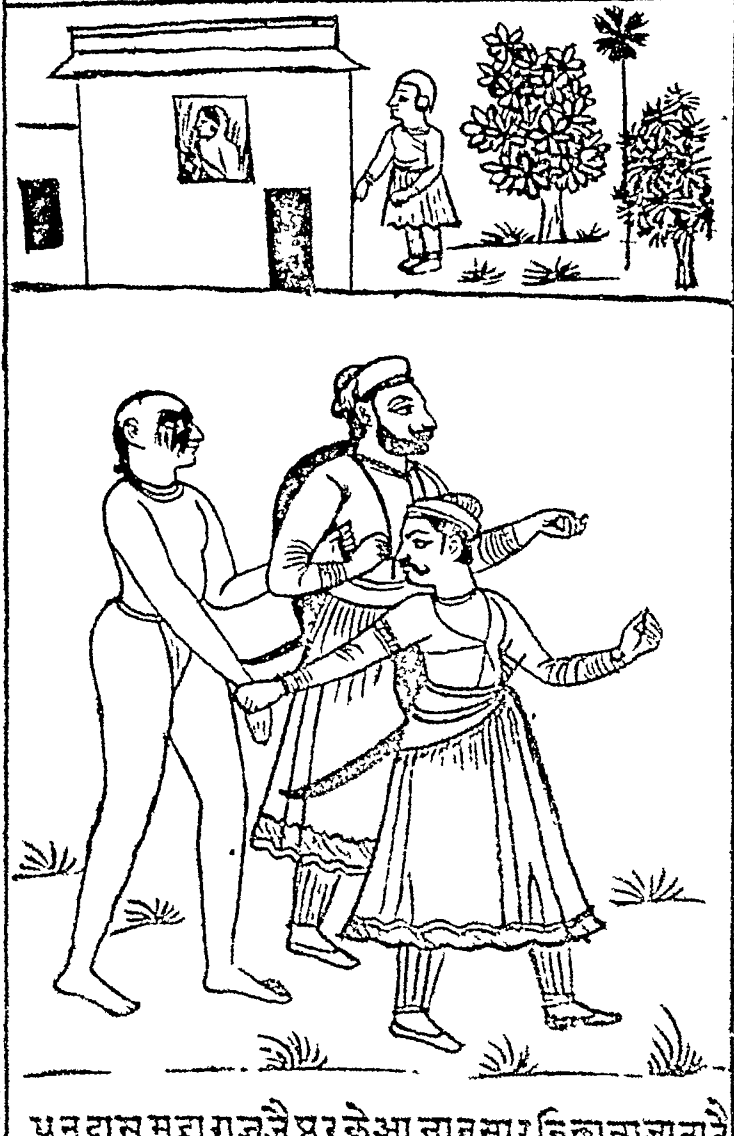
(नेपथ्य में रणवाद्य)

(महाराज की जय हो! राजकुमार की जय हो।)

राजा —(चकित होकर) जान पडता है कि कुमार धनकुल सिंह पहुंच गये, प्रिये। अब हमे विदा करो हमें जाना पड़ा।

विला०—क्यों महाराज इतनी जल्दी, तो फिर महाराज के दर्शन कब होंगे ?

राजा—प्रिये। सो कैसे कह सकें ? हम कल्ह प्रात:कालही युद्ध के लिये प्रस्थान करेंगे यदि बच जायंगे तो तुमसे पुन: भेंट होगी नहीं तो इस जन्म में तो यह अन्तिम भेंट समझना (हाथ धर के) देखो प्रिये। यदि हम मर भी जांय तो हमें एकदम भूल मत जाना कभी २ स्मरण करना—और क्या कहें।



धनदास महाराज जैहर के आज्ञानुसार निकाला जाता है

विला०—(निरुत्तर होकर रोती है)

मद०—(नेत्र डबडबाकर) बलिहारी महाराज भला ऐसी बात क्या कहते हैं।

राजा—सखी यह कुछ साधारण बात तो नहीं है—पृथ्वी भर के क्षत्रियकुल इस रणक्षेत्र में एकत्र होंगे। अच्छा जो हो अब आओ प्रिये हमें प्रसन्न होकर बिदा करो।

मद०- आओ सखी महाराज के सङ्ग द्वार पर चलें अब रोने से क्या होगा। भई अब परमेश्वर से यही प्रार्थना करो कि महाराज जिसमें प्रसन्नतापूर्वक अपने राज्य को लौट आवें।

(सब जाते हैं)

तृतीय गर्भाङ्क।

(स्थान जयपुर—नगर प्रान्त के राजमार्ग के सन्मुख देवालय की झंझरी में से विलासवती और मदनिका झाँकती हैं)

मद०- कहो सखी! अब चलो न। घर चलकर स्नान इत्यादि करें दोपहर का समय तो हो चुका—विशेषत: देवदर्शन के बहाने से यहां आई थीं अब यहां अधिक ठहरने से लोग क्या कहेंगे?

(नेपथ्य में रण के बाजे बजते हैं)

विला०—लो सुनो। जान पड़ता है महाराज लौटे आते हैं।

मद०—तुमारी तो यह इच्छाही है। भली प्रकार देखो तो कौन आता है?

विला०- सखि, मैं तो आंसुओं के मारे अन्धी हो रही हूं यह कौन है? मुझे तो कोई भी दिखाई नहीं पड़ता।

मद०—सखी। रोने से अब क्या होगा? यह देखो मन्त्री महाशय आते है।

(नीचे मन्त्री का प्रवेश)

मन्त्री—हा। विधाता के लेख को कौन खण्डन कर सक्ता है? हाय। एक तुच्छ अग्निकण इतना घोर दावानल होकर जल उठा। हाय। इस्से कितने सुन्दर तरु और कितने पशु पची के घोंसले भस्म हो जायंगे कौन गिन सक्ता है। (दीर्घनिश्वास लेकर) अब आक्षेप करना वृथा है। जब जलस्रोत पर्वत से निकल चुका तो उस की गति कौन रोक सक्ता है? (नेपथ्य की ओर देख कर) यह कौन? अर्जुनसिंह। तुमारी सेना अभी यहीं पड़ी है?

(नेपथ्य में)—जी मैं चला—

मन्त्री—क्या सर्वनाश है, तुम्हें कुछ भी डर नहीं है? यह

क्या है? ये सब आटे की गाड़ियां अभी तक यहीं पडी हैं?

(नेपथ्य में से) महाशय! बैल नहीं मिलते।

मन्त्री—(कान देकर) ऐं—क्या कहा? बैल नहीं मिलते? क्या आपत्ति है। तुमलोग तब क्या कर रहे हो?

(नेपथ्य में) उठो रे उठो जल्दी गाड़ी जोतो।

पहिला—जो आज्ञा—यह लीजिये।

दूसरा—अरे बाजेवालो।

पहिला—महाशय! आशीर्वाद दीजिये - हमलोग चलें, बजाओ रे बजाओ!

(नेपथ्य में रणवाद्य—महाराज की जय हो)

मन्त्री—(स्वगत) चलो देखें और कौन दलवाले कहां क्या कर रहे हैं? आहा! यह सब क्या एक मनुष्य का काम है? इसमें तो भगवान सहस्रलोचन भी कृतकार्य होंगे या नहीं सन्देह है और हमारे तो केवल दोही नेत्र हैं।

[जाता है।

विला०- मदनिके! चल भई हम उस आटे की गाड़ी के पीछे २ महाराज के पास चलें।

मद०—सखी तू पागल हुई है क्या? उत्तम है कि हमलोग

घर चलें देखो दोपहर ढल गई, राजहंसी भी सरोवर में अपना शरीर शीतल कर रही है तो हमलोगों का अब यहां ठहरना उचित नहीं।

विला०—सखि तुम्हारा क्या घर जाने का मन करता है?

मद०—अहा हा। तूने सखी कृष्णयात्रा आरम्भ की है क्या! अहा हा! सखी कृष्ण बिना यह प्राण नहीं बचेंगे अहा हा। अरी राधे! इस यमुना कूल पर बैठकर रोने से क्या होगा? तुम्हारे बंसीधर तो इस समय मधुपुर में कुब्जा सुन्दरी के साथ केलि कर रहे हैं। अहाहा।

विला०—छिः! जा भई यह सब तमाशा इस समय नहीं अच्छा लगता।

मद०—यह कौन है? धनदास है क्या?

(नीचे दरिद्र वेष में धनदास का प्रवेश)

धन०—(चारोंओर देखकर स्वगत) हे विधाता! क्या तेरे मन में यही था? मैंने इतने दिन तक राज संसार में रहकर नाना भांति के सुखभोग किये अन्त में अन्नाभाव से भूखे कुत्ते को नाईं क्या मुझे द्वार २ फिरना पड़ा! इसमें तेरा क्या दोष है।। हमारेही कर्मों का दोष है। पाप कर्म का फल तो ऐसाही है। हा! हा! लोभमद में मत्त होने से मनुष्य को क्या कुछ ज्ञान रहता है? यदि ऐसा न होता तो भगवान रामचन्द्र

सीता को छोड़कर क्यों सुवर्ण मृग के पीछे जाते। इसी लोभमद में मत्त होकर मैंने कितने कुकर्म किये क्या कुछ गिनती है? (रोता है) हे प्रभो मेरे इस अश्रुजल से तू इस मेरे पापपङ्कमलिन आत्मा को धो डाल (फिर रोता है) हाय! हाय! मुझे यदि यह ज्ञान पहिले होता तो क्यों मेरी ऐसी दुर्दशा होती?

मद॰—अहा सखी सुना। देखो सखी धनदास की दशा देखकर मुझे कितना दुख होता है कि क्या कहूं? तुम यहीं ठहरी रहो मैं जाकर उससे दो एक बात कर आऊँ।

[जाती है।

धन॰—(स्वगत) धन एकत्र करने के लिये मनुष्य क्या नहीं करता है? किन्तु वह धन किसी के साथ नहीं जाता हा। इस बात को लोग नहीं समझते यह कैसा आश्चर्य है! मैंने जो इतने परिश्रम से यह रत्नमाला बनाई सो कहां गई? उसे कौन भोग करेगा? हा!

(मदनिका का प्रवेश)

मद॰—क्या धनदास है?

धन॰—ऐं—कौन है? मदनिका है? (स्वगत) क्या अभी कुछ और कष्ट पाना बाकी है? (प्रकाश) देखो भई

मदनिके। जितना दण्ड पाना उचित है मैं पा चुका चुका अब तुम—

मद०—नहीं नहीं। तुम मत डरो। मैं तुम्हारी कुछ बुराई नहीं करूंगी। तुम्हारे दुःख से मै कितनी दुखी हूं सो तुमसे क्या कहूं। धनदास। यद्यपि मई हम सती स्त्री नहीं है सच है किन्तु तौभी हमारा स्त्री का जामा है हजार होय पराये का दुःख देखकर मेरे मन में खेद होताही है। सो भई जो हुआ सो हुआ, अब यह लो हम तुम्हें यह अँगूठी देते हैं।

धन०—(कुछ चकित होकर) ऐं—यह अँगूठी भई तुमने कहां पाया ?

मद०—क्यों तुमही ने तो हमको दिया था। भूल गये क्या ? उदयपुर का मदनमोहन याद है कि नहीं ? (मन्दहास्य करती है)

धन०—ऐं ?—किस्का नाम कहा, किस्का ?

मद०—मदनमोहन, जिसने तुम्हें कहां था कि मैं मदनिका को दिखलाऊँगा। आज सो बात सच हुई न ? यह देखो—मैंही वह मदनिका हूं।

धन०—तो क्या तुम उदयपुर गई थीं ?

मद०—अब और कैसे कहूं ? मैं न होती तो ये सब बातें कैसे होतीं ? तुम समझते थे कि तुमसे बढ़कर कोई

धूर्त नहीं है, किन्तु अब देखा न? कि सिर के ऊपर सिर है! भला तुमही विचारकर देखो तो कि तुम कैसे दुष्ट हो। अच्छा जो हुआ सो हुआ अब यदि तुम्हारी वह दुष्ट बुद्धि चली गई हो तो हमारे सङ्ग आओ देखो मैंने जो तुमें तोड़ा है तो फिर बना सकती हूं कि नहीं!

घन०—सखी तुम्हारी बात सुनकर तो मेरे मुंह से बात नहीं निकलती तो क्या तुम्हीं मदनमोहन थीं? क्या आश्चर्य्य है—मैं क्या कुछ भी पहिचान न सका?

मद०—आओ, तुम हमारे सङ्ग आओ। यह देखो विलासवती ऊपर खड़ी है। उससे अब प्रीति का नाम मात्र भी न लेना। और देखो इस जन्म में किसी को भी स्त्री कहके उपेक्षा न करना। इसका फल तो देखाहो? क्यों? अहा हा। (विलासवती से) आओ सखी नीचे उतर आओ मैं बहुत थक गई हूं चलो धनदास, चलो।

[सब जाते हैं।

पञ्चम अङ्क ।

प्रथम गर्भाङ्क ।

स्थान उदयपुर—राजगृह ।

(राजा भीमसिंह और मन्त्री का प्रवेश)

राजा—क्या आपत्ति है ! हां, इसके आगे ?

मन्त्री—महाराज । राजा मानसिंह ने तलवार छूकर यह प्रतिज्ञा की है कि चाहे जो हो हम सुकुमारी राज कुमारी कृष्णा को अवश्य वरेंगे । नहीं तो उदयपुर को भस्मकर महाराज के राज को छार खार कर डालेंगे। राजा जगतसिंह का भी ऐसाही प्रण है ।

राजा—(क्षोभ और विरक्ति के सहित) हां । कलिकाल में क्या वीरता इसी का नाम है ? (सिर पर हाथ मार कर) हाय । हाय । मृतक शरीर पर कौन खड्ग प्रहार नहीं कर सक्ता । यदि हमारी ऐसी दशा न होती तो क्या ये लोग इतना अहङ्कार कर सकते ? देखो हमारा कोष धन शून्य हो रहा है, सैन्य वीर शून्य है अतएव हम अभिमन्यु को नांई इन सात रथियों में निरस्त हो रहे हैं सो हमारा सर्वनाश कुछ कठिन नहीं है—हे विधातः यह अपमान और कितने दिन सहना होगा, यमराज क्या हमें भूल गये हैं ?

मंत्री—महाराज, आप के इतने चंचल होने से—

राजा—(कुछ क्रोध से) क्या कहते हो सत्यदास ! क्या यह सब हाल सुनकर स्थिर रहा जाता है? मरुदेश का राजा कौन है जो हमें धमकाता है? और राजा जगतसिंह भी जो अपने को इस समय भूल गये हैं यह बड़ा आश्चर्य है (घूम कर देखते हैं)

मंत्री—(स्वगत) हा। हा। यह क्या रोष का समय है? हमारी जो इस समय ऐसी अवस्था है उससे क्या यह प्रबल बैरीदल को कटूक्ति से शान्त करना उचित है (दीर्घ निश्वास लेकर) हे विधातः कुमारी कृष्णा के लिये इतनी आपत्ति उठेगी यह तो हम लोग स्वप्न में भी नहीं जानते थे॥

राजा –(बैठ कर) बैठो सत्यदास बैठो।

मंत्री—जो आज्ञा महाराज (बैठ जाता है)

राजा – कहो तो अब क्या कर्तव्य है? हमें तो किसी ओर भी इस विपत्सागर के मारे दिखाई नहीं पड़ता (दीर्घनिश्वास लेकर) जब से हम इस राजसिंहासन पर बैठे हैं तब से जो कुछ सुख भोग हमने किया है सो तो तुम भली प्रकार जानतेहो फो तो बताओ विधाता ने हमारा क्या अपराध देखकर हमें इतना कष्ट दिया है जो ऐसा मणिमय राजमुकुट भी हमारे सिर

घर अग्निमय हो रहा है ! हाय यह कृष्णा हमारे घर क्यों जन्मी थी ? हाय ।

मन्त्री- महाराज सूर्य्यवंसी राजा लोग पूर्वकाल में अपने कुल और मानरक्षा के लिये जो १ कीर्त्ति कर गये हैं क्या वह आपको कुछ भी स्मरण नहीं है ?

राजा - सत्यदास, तुमने यह सब बातें इस समय हमें क्यों स्मरण करा दिया । प्रकाश से अन्धकार में आने से वह अन्धकार द्विगुणित जान पडता है, यह सब प्राचीन बातै स्मरण करके क्या एकक्षण भी जीने की इच्छा होती है ?

मन्त्री—महाराज—

राजा – हा। इस शैलराज के वंश में हमारे सरीखा कापुरुष क्या कभी कोई जन्मा था । व्याघ्र के भय से शृगाल कान्दरे में छिप जाता है किन्तु सिंह को भी क्या ऐसी रीति है ?

(बलेन्द्रसिंह का प्रवेश)

आओ भाई बैठो तुमने यह सब हाल सुना है न ?

बले०—(बैठकर) जी हां । मन्त्री महाशय से सब हाल पाया है । और हमने भी जो कईएक दूत भेजे थे उन में से तीन मनुष्य लौट कर आये हैं । उनसे मालूम हुआ कि यवनपति अमीर और महाराष्ट्रपति माधवजी दोनों राजा मानसिंह के पक्ष पर हैं ।

राजा—यह क्या? अमीर तो धनकुलसिंह की दल में था न?

बले०—जी हां था तो सही। किन्तु वह छल से धनकुलसिंह का प्राण नाश कर अब राजा मानसिंह की सहाय पर हुआ है।

राजा—ऐं—क्या कहा? हा। हम देखते हैं कि विश्वास-घातकता तो इस यवनकुल का कुलव्रत है।

मन्त्री—जी इसमें क्या सन्देह है? भारतवर्ष में इसकी बड़े २ प्रमाण पाये जाते हैं।

राजा—तो भई जयपुर से क्या सम्वाद आया है? सुनें तो सही।

बले०—जी, राजा जगतसिंह भी जी जान से युद्ध का सामान कर रहे हैं और अनेक राज वीर भी उनकी सहायता में हैं।

मन्त्री—हाय! हाय! इस समय की बात सुनकर कितने ओर से कितने लोग गरज उठेंगे इसको कुछ गिनती नहीं है। आंधी आने पर सागर में तरङ्ग उठतीही है।

राजा—हां सो तो उठतीही है। तो अब इसमें क्या कर्तव्य है? तुम क्या कहते हो बलेन्द्र?

बले०—जी मैं क्या कहूं? महाराज के हितसाधन किंवा देश की भलाई में हमारा प्राण पर्यन्त भी जाय तो उसमें भी हम प्रस्तुत हैं किन्तु इस विपत्ति से निष्कृति

पाना मनुष्य का असाध्य काम है । जो हो जब तक हमारे शरीर में प्राण है तब तक यत्न करने में हम किसी प्रकार पीछे न हटेंगे, इस समय देवता भी—

राजा—भाई। अब क्या वह समय है कि देवता लोग मनुष्य जाति के दुख से दुखी हों ? दुरन्त कलिकाल के प्रताप से देवता लोग भी अन्तर्ध्यान हो गये। किन्तु अब भी जो चन्द्र सूर्य्य का उदय होता है सो केवल विधाता के अलङ्घनीय विधि का कारण है।

बले॰—यदि आप आज्ञा दें तो न हो एकबार देखें कि विधाता ने हमारे अदृष्ट में क्या लिखा है ?

राजा—(दीर्घनिश्वास लेकर) भैया इसके देखने की क्या आवश्यकता है ? कैसे देखोगे ? विचारही के न देख लो ? यदि कोई मनुष्य यह कहके कि विधाता ने हमारे भाग में क्या लिखा है ऊँचे पर्वत से कूद पड़े अथवा जलती हुई अग्नि में प्रवेश करे, तो जो कुछ विधाता ने उसके भाग्य में लिखा है वह उसी क्षण आपही प्रगट हो जायगा ।

बले॰ -जी हां यह ठीक है, किन्तु —

मन्त्री —(बलेन्द्रसिंह से) आप ज़रा इस पत्र को पढ़कर देखिये तो (पत्र देता है)

राजा —यह कैसा पत्र है, मन्त्री ?

मन्त्री—महाराज यह पत्र मैंने गत रात्रि को पाया परन्तु किसने कहां से लिखा है और इसे कौन दे गया है इसका पता मुझे कुछ नहीं लगता।

बले०—हा! हा! राम! राम! राम!—ऐसी बात क्या कोई मुंह से कहता है!!!

राजा—क्यों भाई! कहो तो क्या बात है?

बले०—जी, मैं ऐसी बात मुंह से नहीं कह सकता, आप चाहें पढ़ देखें। मेरी सामर्थ्य नहीं है जो मैं ऐसी बात आपसे कह सकूं। (राजा को पत्र देते हैं)

मन्त्री—बात तो निस्सन्देह बड़ी भयङ्कर है किन्तु—

बले०—राम! राम! ऐसी बात से क्या प्रयोजन! राम! राम! यह क्या बात है! छि:! छि:! छि:!

मन्त्री—(धीरे से) तो कहना—यह—कि यदि इससे उत्तम कोई दूसरा उपाय हो तो आप सोचकर कहें।

बले०—मैं इसे भली प्रकार विचार चुका—यह क्या मनुष्य का कर्म है?

मन्त्री—जी, कुल और मान की रक्षा करना मनुष्य जाति का प्रधान कर्म है, विशेषत: क्षत्रियकुल की जो रीति है सो तो आप भली प्रकार जानते हैं।

राजा—(कुछ काल तक निस्तब्ध रहकर और दीर्घनिश्वास लेकर) मन्त्री—

मन्त्री—महाराज।

राजा—यह पत्र तुम्हें किसने लिखा है ?

मन्त्री—महाराज, यह मै नहीं जानता।

राजा—देखो मन्त्री, यह वैद्य अत्यन्त कटु औषधि लिखता है किन्तु हम देखते है तो रोगनिवारण में यह अत्यन्त सुनिपुण है (दीर्घनिश्वास लेते है और चुपचाप खड़े रहते है)

मन्त्री—जी हां—और जान पडता है कि इस रोग की औषधि इसके अतिरिक्त दूसरी नहीं है।

राजा - भाई वलेन्द्र—

वले॰—जी, क्या आज्ञा है—

राजा—भई क्या होगा ?

वले॰—जो यह पत्र मुझे दीजिये, इसे मैं फाडकर फेंक दूं, यह किसी शत्रु का लेख है, इसमें कोई सन्देह नहीं, क्या आपत्ति है।

राजा—तुम क्या कहते हो, सत्यदास ?

मन्त्री—महाराज, विपद् काल मे लोक की रक्षा के लिये अपना वक्षःस्थल भी काटकर देवपूजा में रक्तदान देना होता है।

राजा—सो तो ठीक है सत्यदास। किन्तु वक्षःस्थल विदीर्ण करके रक्तप्रदान करना और इस काम में बड़ा अन्तर है।

मन्त्री—जी हां सो ठीक है, उस यातना से यह कष्ट कहीं अधिक है किन्तु बिचार के देखिये कि इस समय सर्वनाश होना सम्भव है, तो सर्वनाश की अपेक्षा—

राजा—सत्यदास। इस बात को स्मरण करनेही से शरीर के रोंगटे खड़े हो जाते हैं और चारोंओर अन्धकार जान पड़ता है। हा। हे परमेश्वर! क्या होगा? न, न, न,—क्या ऐसा भी कोई करता है—

मन्त्री—महाराज। विचार के देखिये, कि कई सौ राजसतियों ने इस वंश की मानरक्षा के लिये अग्निकुण्ड में प्रवेश करके देहत्याग किया, विशेषतः जो नरपति होते हैं वे मानो प्रजागण के पिता तुल्य होते हैं तो एक व्यक्ति के पुत्रों के लिये क्या सहस्र लोगों के धन और प्राण का नष्ट करना उचित है?

राजा—हां, सो ठीक है—किन्तु यह विचार के भी क्या मैं ऐसे अद्भुत निठुर कार्य्य में सम्मत हो सकता हूं। और राजमहिषी सुनेंगी तो क्या कहेंगी? हम पुरुष हैं, सब कुछ सह सकते हैं, किन्तु—

मन्त्री—महाराज। उन्हें इसका पताही कहां से लगेगा?

राजा—सत्यदास! भला यह बात भी क्या छिपी रहेगी?

मन्त्री—जी, सो तो ठीक है, किन्तु एकबार चूक जाने से फिर यह बात न होगी। कारण यह है कि जिस

विधाता ने इस शोक को रचा है, वही इसे घटावेगा भी। अतएव शोक कुछ चिरस्थायी नहीं है।

राजा—(सोचकर) हमारा मरनाही ठीक है—न, न, इससे क्या होगा? केवल आत्महत्या का पाप सिर उठाना है, विशेषतः अपने राज्य और परिवार समूह की विपद् जान कर मरना भी तो कापुरुषता है। न, न—कृष्णा के रहते यह विवाद मिटे ऐसा तो कोई उपायही नहीं जान पड़ता। और जो यह विवाद न मिटा तौभी सर्वनाश है। हा! न, न—(कुछ उठकर) तो क्या मै ऐसे काम में सम्मत हो सक्ता हूं? सत्यदास। ऐसा कर्म्म तो चाण्डाल भी न कर सकेगा, और फिर चाण्डाल भी तो मनुष्य है ऐसे कर्म से तो पशु पक्षी भी विमुख हो जाते है। देखो जो पशु पक्षी मांसाहारी है वे भी अपने बच्चों को अपने प्राण से भी अधिक पालते है।

मन्त्री—महाराज, यह तर्क वितर्क करने का विषय नहीं है। (वलेन्द्रसिंह से) आप क्या कहते हैं वीरवर?

वले॰—मैं अब इसमें और क्या कहूं?

राजा—भाई वलेन्द्र!—हम क्या इच्छापूर्वक अपने पुत्री कृष्णा के प्राणनाश में सम्मत हो सकते है? जिसने यह पत्र लिखा है, जान पड़ता है कि वह अपत्यस्ने ह

किसका नाम है जानता भी नहीं। भाई इस बात को विचार कर मन कैसा हो उठता है, क्या कहें—ओह। (वक्षःस्थल पर हाथ रखकर) हे विधाता तूने क्या हमारे अदृष्ट में यही लिखा था। ऐसी सरला बाला। हमारी प्राणप्रतिमा निरापराधही—हा। पुत्री कृष्णा—हा। (मूर्छित होकर गिरते हैं)

मन्त्री—हा। हा। यह क्या ?

बलेन्द्र०—हा। यह क्या ? —क्या होगा ? अरे कोई है।

(सेवक का प्रवेश)

सेवक—हा। यह क्या। - महाराज।—यह क्या ?

मन्त्री—वीरवर, हम देखते हैं कि इस समय बड़ी कठिनता उपस्थित है। तो आइये हमलोग महाराज को यहां से ले चलें। रामप्रसाद। तू शीघ्र राजवैद्य को बुला तो ला—

सेवक—जो आज्ञा— (जाता है)

मन्त्री—आप महाराज को धरिये—

[राजा को लेकर दोनों जाते हैं]

द्वितीय गर्भाङ्क।

स्थान उदयपुर—भगवान एकलिङ्ग के मन्दिर के सम्मुख।

(सेवक का प्रवेश)

सेवक—(स्वगत) आह ! कैसा अन्धकार है ! आकाश में एक भी तारा दिखाई नहीं पड़ता। (चारोंओर देख कार) कैसा भयानक स्थान है ! यहां कितने भूत कितने प्रेत और कितने पिशाच रहते है कौन कह सक्ता है। महाराज ऐसे समय इस देवालय में क्यों आवे कुछ समझ नहीं पड़ता। (चकित होकर) अरे बाप! यह क्या है ? यह घुग्घू है। मेरा तो प्राणही एकबार उड़ गया। सुनते हैं कि भूत घुग्घू ही का रूप धर लेता है; सो ठीक होगा। यह मधुर स्वर भूतों को छोड़ और किसे अच्छा लगेगा। दूर। दूर। (घूमकर) क्या आश्चर्य है ! आज कई दिन हुये महाराज अत्यन्त चञ्चल हो गये हैं। खाना, पीना, निद्रा, राजकाज, सभी परित्याग कर दिया है और सदा उनके मुख से यही सुन पड़ता है 'हे विधाता हमारे भाग्य में क्या यही था।' हा। पुन्नि कृष्णे! जो तेरा रक्षक उसी को क्या ग्रहदोष से तेरा भक्षक होना पड़ा। (नेपथ्य में पैर की खटखटाहट सुन चकित होकर) अरे। अब

क्या ? यह ताड वृक्ष के नांई लम्बा। अरे बाप! यह क्या ? नन्दी है कि भृङ्गी। कि वीरभद्र ? वीरभद्रही होगा। नहीं तो इतना लम्बा और कौन होगा ? अरे बाप। यह तो इधरही चला आता है (रक्षक का प्रवेश) कौन है ? रघुवरसिंह। अरे अब तो प्राण बचा। हम तो भाई तुम्हें वीरभद्र समझकर भागने लगे थे। पर तुम भी तो वीरभद्रही हो।—

रक्षक—चुप, चुप! इतना चिल्लाकर मत बोल—

सेवक—क्यों। क्यों। क्या है ?

रक्षक—जान पडता है, महाराज बड़े सङ्कट में है, बचते है कि नहीं यही सन्देह है।

सेवक—क्या कहा रघुवरसिंह ?

रक्षक—महाराज बैठे २ मूर्छित हो जाते हैं। शम्भुदास और उनके प्रधान २ शिष्य लोग अनेक औषधि पथ्य देते हैं किन्तु किसी से भी कुछ लाभ नहीं होता। अहा। महाराज का दुख देखकर हृदय फटा जाता है और राजकुमार बलेन्द्रसिंह भी अत्यन्त दुखित हैं। देखो भई, बड़े घर के भाई भाई में हमने तो ऐसा प्रेम कहीं नहीं देखा। दोनो जने मानो एक प्राण हो रहे हैं।

सेवक—इसमें क्या सन्देह है ?

रक्षक—तुम तो भाई सदाही महाराज के पास रहते हो तो महाराज के ऐसा होने का कारण क्या कुछ जानते हो ?

सेवक—क्यों नहीं ? तुम भी तो भाई राजकुमार के पास रहते हो। तो क्या तुम कुछ नहीं जानते ?

रक्षक—कौन जाने भाई, कुछ समझ नहीं आता। परन्तु कुछ अनुमान होता है कि राजकुमारी कृष्णा का विवाह विषयही इस विपद् का मूल कारण है; कई दिन से सेनानी महाशय और मन्त्री महाशय दोनों के मुख से उसी का नाम सुनते हैं।

सेवक—हम भी भाई महाराज के मुख से ऐसाही सुनते हैं।

(बलेन्द्रसिंह का प्रवेश)

बलेन्द्र॰—(स्वगत) क्या सर्वनाशही होगा। यह क्या हमारा कर्म्म है। हाथी सुकुमार कुसुम को निस्सन्देह दलन कर डालता है, किन्तु अन्त को वह पशुही है न ! रूप, लावण्य, गुण इत्यादि के बारे में वह अन्धा होता है; किन्तु मनुष्य क्या कभी पशु का काम कर सक्ता है। न, न, यह मेरा कर्म्म नहीं है। अब हमारा यहां से चला जानाही उचित है। (प्रकाश) रघुबरसिंह!

रक्षक—क्या आज्ञा है महाराज ?—

बलेन्द्र॰—देखो सहीस से कहो शीघ्र हमारा घोड़ा ले आवे—

सेवक—जो आज्ञा। (सेवक से) भई बड़ा अन्धकार छा रहा है आओ हम दोनों जने चलें।

सेवक—अच्छा चलो। [दोनों जाते हैं।

(मन्त्री का प्रवेश)

मन्त्री –(हाथ धर कर) राजकुमार, शान्त होओ, शान्त होओ। और मैं क्या कहूं। यदि आप ऐसे विरक्त होंगे तो सर्वनाश हो जायगा। आइये आपको महाराज पुनः बुलाते हैं।

यशो० –(हाथ छुड़ाकर) क्या कहते हो, मन्त्री? क्या मैं चाण्डाल हूं। या पाखण्डी हूं? कि हमारा यह कर्म है? इस कलङ्कसागर में महाराज मुझसे क्यों गोता लगवाया चाहते हैं? ए? हम क्या कहके अपने मन को प्रबोध करेंगे, कहो तो! लक्ष्मण हमें प्राण के समान प्रिय है! मैं कैसे निरापराध उसका प्राणनाश करूं? मनुष्य सांसारिक सुख के लिये लोक परलोक दोनों नाश करता है यह कहके कि परलोक में न जाने क्या होगा, किन्तु तुम्हीं कहो कि पाप कर्म का फल क्या इसी लोक में नहीं भोगना पड़ता? देखो मन्त्री, तुम ऐसे घृणास्पद कर्म करने के लिये फिर हमसे अनुरोध मत करना।

मन्त्री—(हाथ धर के) राजकुमार, आप घर तो चलिये, यह स्थान ऐसी बातों के योग्य नहीं है।

[दोनों जाते हैं।

(चार सन्यासियों का प्रवेश)

सब०—बम् बम् भोलानाथ। (सब बैठते हैं और शिवस्तुति पाठ करते हैं) बम् महादेव।

प्रथम—गोसांईजी। आप जो कहते थे कि आज की रात्रि महाराज पर कोई विपत्ति आवेगी, इसका क्या कारण हैं? और आपने यह कैसे जाना?

दूसरा—पुत्र। तुम हमारे शिष्य हो अतएव तुमसे कोई बात छिपाना हमें उचित नहीं है आज सन्ध्या को ध्यान में देखा कि जैसे देव देव महादेव के नेत्रों से जलधारा चली जाती है। कुछ कालानन्तर राजभवन की ओर दृष्टि करने से जान पड़ा कि मानो उस स्थान से एक रुधिर की नदी बह रही है। तदुपरान्त आकाश की ओर जो देखा तो क्या जान पड़ा कि मानों किसी प्रचण्ड अग्नि में लक्ष्मी देवी जल रही हैं और सब देवतागण हाहाकार कर रहे हैं। इसके उपरान्तही यह घोर अंधकार और मेघगर्जन आरम्भ हुआ है। यही सब कुलक्षण हैं। अतएव कोई न कोई भारी विपत्ति आवेगी इसमें सन्देह नहीं—



चार सन्यासियों की आपस में वार्ता

प्रथम—तो आप ने महाराज से यह बात क्यों न कही ?

दूसरा – पुत्र, विधाता ने जो लिखा है वह अवश्यही होगा, अतएव महाराज को इस विषय का सन्देश देना उन्हें अधिक उद्विग्न करना है, और उपकार कुछ नहीं है।

तीसरा – कहां तो यह युद्ध उपस्थित है और कहां अब और क्या आपत्ति आया चाहती है ?

दूसरा—सो केवल भगवान एकलिङ्ग ही जानते हैं मनुष्य की क्या सामर्थ्य है। हमें अनुमान होता है कि जिस के लिये यह युद्ध उपस्थित है उसी पर कहीं कोई अनिष्ट न आवे ! जो हो। जाने दो। चलो हम लोग यहां से चलें ! जैसा आकाश मेघाच्छन्न हुआ है उस से जान पड़ता है कि अब शीघ्र ही घनघोर वृष्टि हुआ चाहती है।

सब०—बम् केदार ! हर हर हर। बम्। बम्।। बम्!!!

[सब जाते हैं।]

(बलेन्द्रसिंह और मन्त्री का पुनः प्रवेश)

मन्त्री—राजकुमार। पिता की आज्ञा पालन हेतु श्रीरामचन्द्र महाराज ने राजभोग परित्याग कर वनवास स्वीकार किया। ज्येष्ठ भ्राता पितृतुल्य हैं तो महाराज की आज्ञा की अवज्ञा करना आप को किसी प्रकार उचित नहीं है।

वले॰—इन सब बातों की क्या आवश्यकता है? हमने जब महाराज के चरण छू कर प्रतिज्ञा की थी तो क्या अब तुम्हारे मन में कुछ सन्देह है?

मन्त्री—जी, नहीं सो भला कैसे हो सकता है!

वले॰—देखो मन्त्री तुम महाराज को सावधानी से राजगृह में लाओ हाय। हाय। हमारे अदृष्ट में ऐसा क्यों हुआ? अवश्य हमारे पूर्व जन्म में कोई पाप थे नहीं तो—(नेपथ्य में) महाराज आप का घोड़ा प्रस्तुत है।

वले॰—अच्छा, मन्त्री तो अब हम विदा होते हैं।

(जाते हैं)

मन्त्री—(स्वगत) यह तो सम्भावना ही न थी कि राजकुमार कभी ऐसे दुरूह कार्य्य में सम्मत होंगे। जो हो बड़े २ कष्टों से अब किसी २ प्रकार सम्मत हुये हैं। हा। राजकुमारी कृष्णाके मृत्युके अतिरिक्त और कोई उपाय ही नहीं है। हाय। हाय। हे विधाता यह क्या तेरी साधारण विडम्बना है?

(राजा का प्रवेश)

राजा—सत्यदास! क्या भाई वलेन्द्र चले गये? हा! हे विधाता! हमारे अदृष्ट में क्या तूने यही लिखा था! हा। पुत्रि। अब हम क्या तेरा वह चन्द्रमुख न देखेंगे! हा। हा! छि! हम कैसे नराधम हैं—

मन्त्री—महाराज, अब राजगृह को चलिये।

राजा—सत्यदास, हम अब उस श्मशान में कैसे प्रवेश करेंगे ?

मन्त्री—धर्म्मावतार—

राजा—मन्त्री, तुम हमें अब धर्म्मावतार क्यों कहतेहो, हम तो चाण्डाल से भी अधम हैं। हम साक्षात् कलिकाल के अवतार हैं।

मन्त्री—महाराज, यह सब उसी विधाता की इच्छा है।

(वृष्टि होती है और मेघ गर्जता है)

राजा—(आकाश की ओर देख कर) जान पड़ता है कि रजनी देवी ने इस पामर का नीच कर्म देख कर यह प्रचण्ड कोप धारण किया है और चन्द्र तथा नक्षत्र रूपी मणिमय आभरणों को परित्याग कर चामुण्डा रूप से गर्ज रही हैं, ओह। कैसी भयानक रात्रि है। कैसा कालस्वरूप अंधकार है! हे तम! क्या तुम हमें निगल जाने को उद्यत हुये हो? इन्द्र भगवान भी इस अन्धकार को पुनः पुनः इस दीप्तमान तड़ित से आघात करके मानो उसे द्विगुणित क्रोधान्वित करते हैं। घन का कैसा भयानक शब्द है! क्या प्रलयकाल आगया? तो फिर हमारे मस्तक पर वज्राघात क्यों नहीं होता! (ऊपर देख कर) हे कामदेव! मुझे क्या

जाओ। बज्र! इस पापात्मा को विनष्ट कर। हे निशादेवि। इस नराधम को क्यों नाहक पृथ्वी का बोझ बना रक्खा है। इसे नष्ट क्यों नहीं करती? क्या अब लों वज्राघात नहीं हुआ? यह इतना विलम्ब क्यों! (हतज्ञान हो अपना सिर पीटते हैं) यह लो। यह लो। (कुछ चुप होकर) क्या।—वज्रभय से मैं भागा हूं क्या। (विकट हास्य करते हैं)

मन्त्री०—(स्वगत) हे भगवन्! यह क्या विपत्ति आई है; महाराज, तो कुछ विक्षिप्त से हो गये हैं। (प्रकाश) महाराज। आप क्या करते हैं? आइये अब राजगृह को चलें।

राजा०—(कुछ न सुन कर) हे परमेश्वर। यह क्या हुआ क्या हमारी मृत्यु न होगी?—क्यों।—क्यों।—ऐं तो क्या होगा।—हमारा क्या होगा। (रोते हैं)

मन्त्री०—हाय। हाय। अब क्या करें? इनको यहां से कैसे लेजांय?

राजा०—यह क्या?—हा पुत्री कृष्णे। क्या है बेटी! आओ आओ पुत्रि। तुम्हे क्या हुआ बेटा?—आओ अपने दुःखित पिता के पास तो आओ—जिसे तू इतनी प्यारी है (रोते हैं) यह क्या भाई बलेन्द्र। यह क्या यह क्या।—यह क्या करते हो?—यह क्या करते हो

ऐसा कर्म—ओह।—(मूर्छित होकर गिर पड़ते हैं)

मन्त्री०—(स्वगत) यह क्या ? हा। भगवान। क्या होगा यहां तो कोई है भी नहीं। (ऊँचे स्वर से) अरे कोई है?

(सेवक और रक्षक का प्रवेश)

सेवक - हाय। हाय। यह क्या -

मन्त्री—धरो, धरो, महाराज को शीघ्र राजगृह ले चलो।

[राजा को लेकर जाते है।

—*—*—

तृतीय गर्भाङ्क।

स्थान उदयपुर—कृष्णाकुमारी का मन्दिर।

(अहिल्यादेवी और तपस्विनी का प्रवेश)

अहि०—(चारो ओर देखकर) भगवती ! हमारी कृष्णा तो यहां नहीं दिखाई पड़ती।

तप० - मेरे जान राजनन्दिनी अब लों भी सङ्गीतशाला से नहीं आई। आप इतनी क्यों घबड़ाई जाती-है ?

अहि०—(निरुत्तर होकर रोती है)

तप०—(हाथ धरकर) छी ! छी। महिषी। यह क्या ? स्वप्न भी क्या कभी सच होता है, यदि ऐसा होता तो इसी पृथ्वी पर सहस्रों दरिद्र राजा और सहस्रो राजा दरिद्र हो जाते। अनेक लोग अनेक प्रकार के स्वप्न देखते हैं क्या सब सचही होते हैं ?

अहि०—भगवती। हमारा जी नजाने कैसा हो रहा है, आप हमारी कृष्णा को बुलाइये। मैं इक बेर उसका चन्द्रमुख भली प्रकार देख लूं (रोती है)

तप०—राजमहिषी। आप इतना न घबड़ावें। आपने ऐसा क्या स्वप्न में देखा है, मैं भी तो सुनूं ?

अहि०—भगवती उस स्वप्न को स्मरण करतेही मेरा सर्वांग कांप उठता है। (रोती है)

तप०—क्यों, क्या स्वप्न है ?

अहि०—मुझे जान पड़ा कि जैसे मैं इस द्वार पर खड़ी हूं इतनेही में एक भयानक वीर पुरुष नङ्गी तल्वार हाथ में लिये इस मन्दिर में घुस आया और—

तप०—क्या आश्चर्य है। अच्छा फिर ?

अहि०—हमारी कृष्णा जानो इस पलंग पर अकेली सोई है और उस वीर पुरुष ने क्या किया कि जानो इस पलग के निकट आकर उसे खड्ग मारने को उद्यत हुआ, मैं भय से चिल्ला उठी और नींद खुल गई। भगवती मैं नहीं जानती कि मेरे भाग्य में क्या है। (रोती है)

तप०—राजमहिषी क्या आप नहीं जानतीं कि स्वप्न में बुरा देखने से भला और भला देखने से बुरा होता है।

अहि०—जो हो भगवती ! मैं आज की राति अपनी कृष्णा को किसी प्रकार इस मन्दिर में न सोने दूंगी।

तप०—(कुछ हँसकर) क्यों महिषी, डर क्या है? (नेपथ्य में वीणाध्वनि) यह लो सुनो मैं कहती थी कि नहीं कि राजनन्दिनी संगीतशाला से आती है तो चलो हमलोग भी वहीं चलें। देखो कृष्णा के सामने कहीं इस प्रकार व्यग्र न होना नहीं तो विचारी लड़की आप की यह अवस्था देख कर अत्यन्त दुखी होगी। उसे वृथाही क्यों दुख देना और विचार कर देखिये न कि स्वप्न तो निद्रादेवी का इन्द्रजाल मात्र है चलो हमलोग अब चलें। [दोनों जाती हैं।

(हाथ में खड्ग लिये वलेन्द्रसिंह का प्रवेश)

वले०—(स्वगत) हम सैकड़ों वेर पहले भी इस मन्दिर में आ चुके है किन्तु आज प्रवेश करतेही हमारा पैर आगे नहीं बढ़ता। ठीकही तो है चोर की नाईं सेंद देकर गृहस्थ के घर में पैठना क्या भले पुरुष का धर्म है। हा। महाराज ने क्यों मुझे इस निठुर कार्य में भेजा है? यह निर्दयकर्म क्या किसी दूसरे के द्वारा नहीं हो सकता था? मेरी इच्छा होती है कि कृष्णा को न मारकर अपनेही को मार लूं (दीर्घ निश्वास लेकर) किन्तु इससे तो कुछ फल नहीं होगा (शैय्या के निकट जाकर) यह क्या? कृष्णा तो यहां नहीं है, जाने अवलों सोने नहीं आई। तो अब क्या करूं (घू

मता है)—(नेपथ्य में गीत)—(स्वगत) अहा। हे विधाता मैं क्या ऐसी बोलती हुई कोकिला को चिरकाल के लिये चुप कराने आया हूं ? क्या ऐसे पाप का कहीं प्रायश्चित्त है ? यह देखो कृष्णा इधर आती है। हा। हे विधाता। तू क्यों इस राजवंश पर इतना प्रतिकूल हो गया है। ऐसी निधि देकर क्या फिर उसे अपहरण करेगा ? हाय। वत्से ! तू क्यों इस निठुर व्याघ्र के मुख में पड़ने को चली आती है ? (आड़ में खड़ा हो जाता है)

(कृष्णा के सहित तपस्विनी का पुनः प्रवेश)

तप०—पुत्री, इतनी रात पर्यन्त क्या गाने बजाने में लगे रहना चाहिए ? जाओ राजमहिषी शयनागार को गईं। तुम भी जाकर सो रहो अब विलम्ब मत करो।

कृष्णा०—अच्छा भगवती, आज हमारी माता इतनी व्यग्र क्यों है ? उन्होंने मुझे आज की रात इस मन्दिर में सोने से क्यों वर्जा है ?।

तप०—राजनन्दिनी। एक तो माता की आत्मा दूसरे तुम उनकी एक मात्र पुत्री और इस समय जो विवाह के विषय यह प्रपंच उठा है—

कृ०—(मुस्कुरा कर) तो क्या मा सोचती है कि मुझे इस मन्दिर से कोई चुरा ले जायगा ?

तप०—पुत्री, भला यह भी क्या हो सक्ता है ! चन्द्रलोक से अमृत अपहरण करना क्या ऐसे वैमे का काम है ?

स०—(झिल्मिली खोलकर) उह । भगवती । देखो कैसी अंधेरी रात है । निशानाथ के विरह में रजनी देखो मानो वस्त्राभूषण परित्याग कर दुःखसागर में मग्न हो रही है ।

तप०—(मुस्कुरा कर) पुत्री । तुमने ये सब कहां से सीखा जाओ, सो रहो मैं भी इस समय अपनी कुटी को हूं । रात्रि दो प्रहर बीत गई ।

स०—जो आज्ञा भगवती, मै प्रणाम करती हूं ।

तप०—सुखी रहो ।

[जाती है ।

कृष्णा०—(स्वगत) राजा मानसिंह एक वार युद्ध में हार गये है, किन्तु सुन्ती हूं कि वे पुनः सेना लेकर जयपुर के राजा पर आक्रमण करने के उद्योग में हैं; देखूं विधाता ने मेरे भाग्य में क्या लिखा है? (दीर्घ निश्वास लेकर) सुभद्रा के लिये अर्जुन ने जैसे यदुकुल के संग घोर युद्ध किया था वैसेही यह भी हो रहा है । (झिल्मिली खोल कर) ओह । कैसी भयानक बिजली है मानो प्रलयकाल की अग्नि पापियों के खोज में पृथ्वी पर घूम रही है, और मेघ की गर्जन सुन कर वड़े २

वीरों का हृदय भी कांप उठता है। ओह! कैसी घनघोर वृष्टि हो रही है। आज क्या यहां प्रलय हो जायगा? यह मन्दिर तो पर्वत की नाईं अटल है, प्रलय की वृष्टि होने पर भी इसे किसी प्रकार का भय नहीं है किन्तु जिन बिचारों की छोटी छोटी कुटियां है उन्हें आज कैसा कष्ट होगा। अहा। परमेश्वर। उनकी रक्षा कर। हे विधाता। वही मनुष्य, वही बुद्धि, वही आकार है किन्तु कोई तो अपूर्व ऊंचे सुवर्ण अट्टालिका पर इन्द्रतुल्य सुख भोग करता है और कोई आश्रयहीन हो कर वृक्षों में कन्दमूल द्वारा अपना समय काटता है। किन्तु अट्टालिका वास करने ही से कोई सुखी होता हो ऐसा नहीं है। मुझे तो कुछ भी कष्ट नहीं है तो क्यों मैं सुखी नहीं हूं? मन का सुखही सुख है! (दीर्घ निश्वास लेकर) अच्छा! मेरा मन आज इतना चंचल क्यों हुआ है? पृथिवी की कोई वस्तुही नहीं अच्छी लगती। । मेरा मन पिंजरे की पक्षी की नाईं व्याकुल हो रहा है। देखूं कदाचित सोने से कुछ स्वस्थ हो जाय, तो चलूं; हे महादेव मुझ अधीन पर दया करो और मेरे मन की चञ्चलता दूर करो! हे प्रभू! यह दास तुम्हारी शरणागत है।

(सोता है।)

(बलेन्द्रसिंह का पुनः प्रवेश)

बले०—(स्वगत) हाय। हाय! मैं ऐसा निठुर कर्म करने आया हूं कि जिस से मुझे शंका होती है कि कहीं पृथ्वी में न समा जाऊं, मुझे ऐसा भान होता है कि जैसे पद पद पर पृथ्वी मुझे ग्रास करने के लिये चली आती है। यह भी तो अच्छा है। हे रजनी देवि! तू ही हमारी साक्षी है मै यह काम अपनी इच्छा से नहीं करता। (निकट आकर) हाय! हाय! मैं क्या सचमुच राजसरोवर से इस कमलिनी को छिन्न भिन्न करने आया हूं? ऐसे सुवर्णमन्दिर में सेंद देकर इस का जीवनरूपी धन अपहरण करने की अपेक्षा क्या और कोई पाप है? (कुछ सोच कर) तो क्या करूं ज्येष्ठ भाई की आज्ञा की अवहेला करना भी तो महा पाप है (दीर्घ निश्वास लेकर) मेरी तो मारीच राक्षस की सी दशा हो रही है किसी ओर भी परित्राण नहीं है तो भला इस पुत्री का चन्द्रबदन एक बेर तो देख लूं। (मुख देख कर) हे विधाता। मैं क्या राहु होकर इस पूर्ण शशि को ग्रास करने आया हूं? मैं क्या प्रलय के कालरूप की नाईं इसे चिरकाल के लिये जलमग्न करने आया हूं? (नेत्र पोंछ कर) अहा। पुत्री! मैं बड़ा निठुर चाण्डाल हूं। निरापराधही तेरा प्राण लेने

आया हूं, अहा! पुत्री इस समय निश्चिन्त होकर निद्र
देवी की गोद में विश्राम करती है और जान पड़त
है कि नाना बिधि के मनोहर स्वप्नों से परमसुखानुभ
कर रही है; किन्तु निकटही जो पितृव्यरूप काल
आकर खड़ा है सो स्वप्न में भी नहीं जानती। हाय!
हाय! जिसे मैं इतना प्राणतुल्य प्यार करता हूं जिसकी
ममता से अनेक युद्धजीवीजनों के कठिन हृदय में भी
अपार स्नेह रस प्रवाहित हुआ है उसे क्या मैं नष्ट क
रने आया हूं? क्या अन्त में वलेन्द्रसिंह के यश की
यही कीर्ति हुई? धिक्! धिक्! (सोच कर)
तो अब क्या—ओह! इस स्नेहबन्धन को तोड़ना क्या
मनुष्य का कर्म है? द्रौपदी के वस्त्र की नाईं इसे जि
तना खोलते जाइये उतनाही बढ़ता है। हे पृथ्वी!
तुम साक्षी रहना। हे रजनी देवी! तुम साक्षी रहना
(मारने के लिये हाथ उठाते हैं)।

कृष्णा—(अचानचक उठ कर) अँ। अँ। चाचा यह क्या!
यह क्या?

वले०—(खड्ग पृथ्वी पर फेंक देते हैं।)

कृष्णा - अँ? चाचा यह क्या? आप इस समय यहां कैसे
आये?

वले०—इस समय कुछ नहीं—केवल तुझे एक बार देखने

आया था (नेत्र डबडबा कर) सो पुत्री हमें बिदा करो। मैं चला।

कृ०—चाचा! आप अत्यन्त वीरपुरुष हैं; तो आप को क्या इस दासी पर खड्ग उठाना उचित है?

बले०—(मुंह फेर कर निरुत्तर हो रोते हैं।)

कृ०—यह क्या? (खड्ग उठा कर छिपा लेती है।) (प्रकाश) चाचा! मैं आप के पांव पड़ती हूं आप मुझे सब हाल खोल के कहिये।

बले०—पुत्री। तू इस निठुर नराधम को अब चाचा क्यों कहती है। मैं तो तेरा चाचा नहीं, मैं चाण्डाल हूं, मैं तेरा काल होकर आया था (रोते हैं।)

कृ०—सो क्यों? चाचा।

बले०—हा! हमारी कुललक्ष्मी!—हे पृथिवी! तू बीच से फट जा और इस दुष्ट नराधम को स्थान दे (रोते हैं)

कृ०—(हाथ धर के) क्यों, चाचा! आप इतने दुखित औ चञ्चल क्यों हैं?।

बले०—कृष्णे! मैं तेरा प्राण नाश करने आया था।

कृ०—क्यों? चाचा आपका मैंने क्या अपराध किया है?

बले०—पुत्री! तू साक्षात् लक्ष्मी का अवतार है। तुझ से और अपराध से क्या प्रयोजन? (रोते हैं) मरुदेश के राजा मानसिंह औ जैपुर के राजा जगतसिंह दोनों

ने तेरे पाणिग्रहण की प्रतिज्ञा की है नहीं तो उदयपुर को भस्म कर इस राज को मटियामेट कर डालेंगे— हमारी इस समय जैसी अवस्था है सो तो तू जानती ही है ! इसी कारण—

कृ०—चाचा । मेरे पिता जी की भी क्या यही इच्छा है, जो मैं—

बले०—बेटी ! मैं अब क्या कहूं बिना उनकी अनुमति के भला क्या मैं ऐसा चाण्डाल कर्म करने में प्रवृत्त होता !

कृ०—ऐसा ? तो फिर इसके लिये आप इतने कातर क्यों होते हैं ? आप पिताजी को एक वेर यहां बुला लीजिये मैं उनके चरणकमलों में प्रणाम करके विदा होऊँ । चाचा मैं राजपुत्री हूं । राजकुलपति महाराज भीमसेन की कन्या हूं और आप सरीखे वीरसिंह की भतीजी हूं तो मैं क्या मृत्यु से डरती हूं ? (आकाश में कोमल वाद्य) यह सुनो चाचा एक वार इस द्वार से देखो तो । अहा । कैसा अपूर्व सौन्दर्य्य है, यही पद्मनी सती हैं ये मुझे एक वेर इसके पूर्व भी दिखलाई पड़ी थीं, जननि । अपनी दासी को वस आई समझो, देखो चाचा यह मन्दिर अचानचक नन्दन बन के सुगन्ध से परिपूर्ण हो गया अहा ! मेरा कैसा सौभाग्य है।

(नेपथ्य में पैर का शब्द होता है ।)

बले० - यह क्या ? यह क्या ?


तृष्णा

(राजा के पीछे २ मंत्री का प्रवेश)

राजा—(पागल की नाईं इधर उधर देखते हैं)

मन्त्री—(कृष्णा को देख कर स्वगत) यही तो है, भला, अभी लों नहो हुआ यही कुशल है, (आगे बढ़ कर धीरे बलेन्द्रसिंह से) राजकुमार, क्या देखते हौ—अब तो सर्वनाश हुआ चाहता है। महाराज को उन्माद हो गया है।

बले०—सर्वनाश कैसा ? (राजा बिना आसन के पृथिवी ही पर बैठ जाते हैं) हाय। हाय। यह क्या हुआ, मन्त्री, तुम इन्हें यहां क्यों लाये ?

मन्त्री—क्या करूं—वे आपही इधर चले आये। सो मुझे उनके संग आनाही पड़ा कि क्या जाने कहीं और न चले जांय। और एक बात यह विचारा कि जब महाराज की ऐसी अवस्था हो गई है तो अब इस निठुर गुरुतर पाप कर्म से क्या लाभ है ? इसीलिये आप से निवेदन करने आया हूं। इसके उपरान्त अब जो कुछ हमारे अदृष्ट में होगा सो होगा। हाय, हाय, राजकुमार—

राजा—बलेन्द्र। छि। छिः भाई। क्या तुम ऐसा काम करते हौ ?। (कुछ शरीर उचकाते २) क्या करते हौ क्या करते हौ ? ना—न, न, न—मानसिंह, मानसिंह,

मानसिंह, । हुं । उसे तो मैं इसी समय नष्ट करूंगा— सो मैं चला ।—(कुछ चल कर) कहां है हमारी कृष्णा । क्यों बेटी ? क्यों—बेटी ! एक बेर बीणा तो बजाओ बेटी ! जरा गाओ बेटी ! अहाहा यही, यही, हा ! मेरी कुललक्ष्मी ! तू कहां चली गई भाई ।

(रोते हैं ।)

कृष्णा—(राजा की अवस्था का शोक विचार कर) बाबा, पिता जी यह क्या कहते हैं ? पिता जी, आप ऐसे साधारण विषय पर इतना खेद क्यों करते हैं ? सभी जीव यमराज के आधीन है । तो इसमें दुःख करने से ही क्या लाभ है ? जीवन तो कभी चिरस्थाई नहीं है। जो आज नहीं मरता कल मरेगा। कुल और मानरक्षा के लिये जीवनदान करने की अपेक्षा क्या कोई भी पुण्यकार्य्य है ? (आकाश में कोमल वाद्य होता है) यह सुनो ! राजसती पद्मिनी मुझे बुलाती है। वे इसके पूर्वही मुझे स्वप्न में दिखाई देकर यों कह गई थीं कि "कुल औ मानरक्षा के लिये जो युवती अपना प्राण देती है सुरलोक में उसके आदर की सीमा नहीं है" पिता आप इस दासी को सहर्ष बिदा कीजिये इस अन्तकाल में जो मैं माताजी के चरणों का दर्शन नहीं कर सकी यही एक दुःख मन में रह गया । रोती है)

बले०—छि। छि। पुत्री अब तुम ये सब बातें मुंह से मत निकालो तुमारे शत्रु का अन्तकाल होवे।

कृष्णा—चाचा। ऐसा कोई जीव नहीं है जिसके भाग्य में विधाता ने मृत्यु न लिखा हो। किन्तु सबके भाग्य में मृत्यु यशोदायक नहीं होती। अनेक वृक्षों को लोग काट डालते है किन्तु ऐसा बिरला ही वृक्ष होता है जिसके काष्ट से प्रतिमा बनती है। कुल और मान की रक्षा के लिये अथवा परोपकार के लिये जिसकी मृत्यु होती है वही चिरस्मरणीय होता है।

बले०—पुत्री। अब ये सब बातें तू मत कह। तू हमारी जीवन सर्वस्व है। क्या यह राज्यपद तुझ से बढ़ कर प्रिय है।

कृष्णा—चाचा, आप ऐसी बात न कहिये। आप ने मुझे बाल्यावस्था से प्राणतुल्य पाला है सो अब आप मेरा सब अपराध क्षमा कर बिदा कीजिये। पिता आप भी नरपति है विधाता ने सहस्रों प्राणी के प्रतिपालन करने के निमित्त आप को राजपद पर नियत किया है तो आप को उनका सुख दुःख भूल जाना किसी प्रकार उचित नहीं है। तो आप इस दासी को सहर्ष बिदा कीजिये। आप चुप क्यों हो रहे ? मैंने क्या अपराध किया है जो आप मुझ से नहीं बोलते ? आप

इस पुत्री को इस समय यही आशीर्वाद दीजिये कि इस भवयन्त्रना से मुक्त होकर सुरपुरी को जाऊँ।

(चरण पर गिरती है।)

राजा—यही न मानसिंह का दूत है?—इतना अहङ्कार हमारे साम्हने?

कृष्णा—(उठ कर) पिताजी। मैंने आपका क्या अपराध किया है?

राजा—क्या अपराध?—हमसे छल? दूर! दूर!

मन्त्री—हाय! हाय!!

कृष्णा—हा! विधाता! क्या मेरे अदृष्ट में यही बदा था! इस समय क्या पिताजी भी विमुख हो गये? चाचा, मैंने पिताजी का क्या अपराध किया है जो वे मुझ से इतने विरक्त हो गये हैं? (आकाश में कोमल वाद्य होता है) आः, लो मैं जाती हूं—चाचा, मैं तुम्हारे पैरों पड़ती हूं (चरणों पर गिरती है) आप भी मुझे विदा कीजिये।

बले०—उठो। बेटी उठो। यह क्या? छि! (हाथ धर के उठाते हैं) तू हमारी जीवन सर्वस्व है, तुझे विदा—

(आकाश में कोमल वाद्य होता है)

कृष्णा—जननि! मैं आई। (आत्मघातक खड्गाघात करके शय्या पर गिरती है।)

सब—अरे। यह क्या? यह क्या? हा। हा!—

बले०—हे विधाता, तेरे मन में क्या था? हे परमेश्वर! क्या हमें यथार्थही परित्याग कर दिया? हाय। हा! (रोते है।)

(तपस्विनी का प्रवेश)

तप०—यह क्या? (देखकर) हाय। हाय! इस राजकुल-लक्ष्मी की यह क्या दशा हुई? हा। इस रत्नदीपक को किसने बुझाया? हा! (रोती है।)

बले०—भगवति। अब हमारा क्या होगा? इधर तो यह और उधर महाराज की वह दशा देखती हो? हा! भैया क्या आप के अदृष्ट में यही था! भगवति—

तप०—क्यों? क्यों? महाराज को क्या हुआ? वे ऐसा क्यों करते हैं?

बले०—भगवति! यह सब हमारेही अदृष्ट का फल है! महाराज को अचाञ्चक महा उन्माद हो गया है।

तप०—क्यों? क्यों? क्या कारण?

(अहिल्यादेवी का शीघ्रता से प्रवेश)

अहि०—(नेपथ्यही में से) कौन है? कौन है? हमारी कृष्णा कहा? (देख कर) यह क्या? हमारी कृष्णा ऐसी क्यों पड़ी है?—हा। महाराज यह किसने किया?

द्र—महिषी, महाराज से आप क्या पूछती हैं ? महाराज क्या अपने आपे में हैं ?

०—तो जान पड़ता है कि इन्होंही ने यह काम किया है। हा पुत्रि ! हमारा सर्वस्वही नाश हो गया (कृष्णा का मुख देख कर रोती है) आहा ! बेटी हमारी सुवर्णलता की नाईं पड़ी है। बेटी कृष्णा ! यह तेरी अभागिनी माता खड़ी पुकार रही है बेटी। हा पुत्रि! तू हमें किस अपराध से छोड़ चली है बेटी ! उठो ! बेटी उठो ! हाय। हाय। तू हमसे क्यों रूठ गई बेटी!

(रोती है।)

कृष्णा—(धीरे मधुर स्वर से) मा। आई हो ?—मुझे अपने चरणों की धूल दो मा !—पिताजी मुझ से अत्यन्त रुष्ट हैं तुम उनसे कह दो कि वे मेरा सब अपराध क्षमा करें। मा, मैंने तुमारे भी अनेक अपराध किये हैं सो उन सबों को तुम भी अब क्षमा करो और मुझे विदा करो मा। अपनी इस दुःखिनी पुत्री को कभी २ स्मरण करियो मा। (मृत्यु—आकाश में कोमल वाद्य होता है।)

महि०—बेटी। तूने क्या अपराध किया है पुत्रि। (रोती है) हाय ! यह क्या। यह तो चुप हो गई ! हा पुत्रि! हा पुत्रि। (मूर्छित हो जाती है।)

ईसाईमतखंडन।

प्रथम भाग।

अर्थात्

जिस में ख्रीष्टमतावलम्बियों के धर्म्म की यथार्थ दशा झलकाई गई है, और जिसे बाबू रामकृष्णवर्म्मा सम्पादक भारत-जीवन ने उनलोगों के हित के लिये जो इस धर्म के पूर्णतया भेदू नहीं हैं प्रकाश किया है।

यह पुस्तक बाबू रामकृष्णवर्म्मा सम्पादक भारतजीवन के पास बनारस से मिलेगी।

काशी।

राजराजेश्वरी प्रेस में छापा गया।

सन १८८४ ई०।

[द्वितीय बार १०००] [मूल्य ४)

भूमिका ।

—.o—

आज हम अत्यन्त हर्षपूर्वक अपने पाठकों के प्रति इस पुस्तक को लेकर उपस्थित होते है और आशा करते है कि, वे लोग इस्से अवश्य लाभ उठावेंगे । यह ग्रन्थ किसी द्वेषभाव से नहीं लिखा गया है परन्तु चित्त की स्वच्छता और अपने भ्रान्त भाइयों के भ्रान्तिनिवरणार्थ इस की रचना हुई है । हम देखते है तो इधर कई वर्षों से हमारे भोले भाले और अज्ञान हिन्दू भाई ईसाइयों के जाल में फँसे जाते है, प्राय इन में भूखे लोग बहुत है जिन्हें कहीं खाने पीने को नहीं मिलता. जिन्हें न खाने को अन्न न पहिरने को कपडा वे सीधे क्रिश्चियन हो जाते है बस वही मसल है "कि आरत काह न करहि कुकर्म्मू" ऐसे लोगों के लिये हमारा यह परिश्रम नही है, हमारा यह आयास केवल उन्हीं लोगों के लिये है जो इस मत के पूर्ण भेदू न होने के कारण इस का वाहरी आडम्बर देख कर इस में जा फँसते है और फिर पीछे ज्ञान होने पर पछताते हैं । प्राय. मिशन स्कूल के छोटे २ बालकों का कोमल हृदय शीघ्रही इस ओर खिंच जाता है । जब हम स्वयम् बाल्यावस्था में काशी के "जयनारायनम् कालिज" में पढते थे तो बाइबिल को इस प्रकार कण्ठ किया था कि प्रायः परीक्षा में १०० के १०० ही नम्बर पाते थे, क्रमश. होते २ इस

प्रकार विश्वास जम गया कि इस खीष्ट धर्म्म के आगे अन्य धर्म तुच्छ जान पड़ने लगे, परन्तु सन् १८७१ ई० में इंट्रेंस पास करने के उपरांत जब बनारस कालिज मे पढ़ना प्रारम्भ किया और बी० ए० पर्य्यन्त पढ़ा, तथा अनेक ग्रन्थ देखने में आये, तो इस खीष्ट धर्म की यथार्थ दशा विदित होने लगी यहां लों कि जब अमेरिका के प्रसिद्ध विद्वान् "टामस पेन" के कई एक ग्रन्थ भली प्रकार देखे तब तो यह खीष्ट धर्म का विश्वास काई की नाईं स्वयम् फट गया। सत्य है ज्ञान रूपी सूर्य के आगे अज्ञानान्धकार कभी स्थिर नहीं रह सकता; अतएव यह विचार कर कि हमारे अन्य देशी भाई भी इस प्रकार इस में न फँस कर इस से सचेत रहें हम "टामस पेन" साहब के Age of Reason नामक ग्रन्थ का भाषानुवाद प्रकाश करते है। इस ग्रन्थ में अनुवाद का लालित्य निबाहने के लिये मुख्य ग्रन्थकार का अभिप्राय लेकर थोड़ेही में स्पष्ट कर दिया गया है। दूसरा भाग भी इस का यावत् सम्भव अत्यन्तही शीघ्र प्रकाश किया जायगा॥

अनुवादक रामकृष्ण वर्म्मा

सम्पादक भारतजीवन—बनारस।

ईसाईमतखण्डन ।

प्रथम भाग ।

वर्षों से मेरी इच्छा थी कि मैं अपने धर्म संबंधी अभिप्राय को प्रगट करूं, परन्तु ऐसे कार्य्य की अनेक कठिनाइओं को विचार कर मै इतने दिनों तक इसे रोके हुए था, अब मैं अपने स्वच्छान्त.कर्ण और चित्त की उदारता से निज अन्तर्गत भावों को प्रगट करता हूं ॥

मैं एक ईश्वर के अतिरिक्त और किसी को नही मानता और इस जीवन के उपरान्त मुझे सुख की आशा है। मै सब मनुष्यों को समान मानता हूं, और मेरा यह विश्वास है कि न्याय करना, प्रेम बढाना, और मनुष्यों को यथोचित सुख देनाही मुख्य धर्म है ॥

परन्तु ऐसा न हो कि लोग यह विश्वास कर लें कि, मैं और भी बहुत सी बातें मानता हूं. अतएव इस ग्रन्थ में मै उन बातों का स्पष्ट वर्णन करूंगा जिन्हें मै नहीं मानता और उन्हें न मानने का कारण भी भली भांति दिखलाता जाऊंगा ॥

मै यहूदियों के धर्म पर विश्वास नहीं करता, रूमियों को नहीं मानता, यूनानियों को नहीं जानता, तुर्किस्तानियों की

नहीं सुनता और फ्रंगिस्तानियों को रत्ती भर विश्वास नहीं करता । मेरा मनहीं मेरा धर्म है ॥

सब जातिय धर्म क्या यहूदी क्या क्रुस्तानी क्या मुसलमानी मुझे मनुष्यों के बनावट जान पड़ते है, और केवल मनुष्यों को दास बनाने उन्हें भय दिखाने और अपने लाभ उठाने तथा प्रभुता जमाने के लिये बनाये गये हैं ॥

इस्से कदापि मेरा अभिप्राय नहीं है कि मै दूसरे मतवालों को दोषी ठहराता हू, नहीं, जैसा मुझे अपनी बात का विश्वास करने का अधिकार है वैसाही उन्हें भी है । परन्तु मनुष्य मात्र की सच्ची प्रसन्नता के लिये यह अत्यन्त आवश्यक है कि वह अपने अंतःकर्ण के सामने सच्चा हो; अधार्मिकता किसी बात के विश्वास या अविश्वास करने में नहीं है परन्तु वस्तुतः अधार्मिकता वही है कि जिस बात का हम अंतःकर्ण से विश्वास नहीं करते उसे केवल लोगों के दिखाने के लिये विश्वास करते बतलावें ॥

इस प्रकार के आन्तरिक झूठों से जो कुछ समाज की हानि हुई है उस का वर्णन करना असभव जान पडता है क्योंकि जब किसी मनुष्य ने इस प्रकार अपने चित्त की पवित्रता को नाश कर डाला तो उससे जो अपराध न बन पड़े सो थोडा है । वह निज लाभ के लिये दूसरों का उपदेशक बनता है और अपने इस व्यापार की वृद्धि के लिये आरंभही मे झूठ

बोलने का अभ्यास करता है; छी ! छी !! क्या इस्से भी बढकर कोई बात बुरी हो सकती है ॥

प्रत्येक जातीय धर्म्म ने किसी व्यक्तिविशेष के द्वारा ईश्वर का बचन पाया मान कर अपनी जड़ जमाई है। यहूदी मूसा को मानते और क्रुश्चन ईसा मसीह तथा उस के शिष्य और दूतों को मानते हैं; और मुसलमान महम्मद पर विश्वास रखते हैः— मानों कि ईश्वर का मार्ग प्रत्येक मनुष्य को एकसां नहीं है ॥

ये प्रत्येक धर्म कुछ पुस्तकें ऐसी बतलाते है जिन्हें वे "इलहाम" अर्थात् ईश्वर का बचन कहते हैं। यहूदी लोग कहते है कि उन की धर्मपुस्तक को ईश्वर ने हजरत मूसा को स्वयम् दिया, क्रुश्चन लोग कहते है कि उन की धर्मपुस्तक ईश्वर के हार्दिक प्रेरणा से लिखी गई है, और मुसलमान कहते है कि उन के कुरान को खुदा का फिरिस्ता आसमान से ले आया; ये सब एक दूसरे को झूठा बनाकर आप सच्चे बनते है परन्तु जो सच पूछिये तो ये सब झूठे से है ॥

सब से प्रथम मुझे "इलहाम" शब्द पर कुछ वक्तव्य है। "इलहाम" उसे कहते है कि जो बात सीधेही ईश्वर द्वारा मनुष्य को मिलती है ॥

इस में कोई भी संदेह नहीं और इसे कोई अविश्वास नहीं कर सकता कि सर्वशक्तिमान जगदीश्वर यदि ऐसा चाहे तो कर सक्ता है परन्तु जब कि कोई बात ईश्वर से किसी एक

रण ऐसे २ विश्वास सहज ही में हो जाया करते थे। यह कुछ नई बात न थी; जो उस समय ज़रा चमत्कारिक बुद्धि का पुरुष होता था उसके विनय में लोग यही विचारते थे कि यह किसी देवता के अंश से उत्पन्न है। देवताओं का सांसारिक स्त्रियों पर प्रेम का विश्वास उन दिनों बहुत फैला था; उन्हीं के लेखानुसार उनके जुपिटर नामक देवता ने सहस्रों से उपभोग किया, अतएव इस कहानी में कोई नई या आश्चर्य की बात नहीं है। ऐसा विश्वास उस समय के पुरुषों के रुचि के अनुसारही था और केवल वेही ऐसी २ बातों पर विश्वास करते थे। यहूदी लोग जो सदा एक ईश्वर को मानते थे ऐसी व्यर्थ की बातों पर कभी विश्वास नहीं करते थे।

क्या विचित्रता है कि प्राचीन माइथालोजी की बातें किस्तानी धर्म में कैसे आ मिलीं। इतना मिलान तो स्पष्ट मिलता है कि उन्होंने निजधर्मप्रवर्तक को ईश्वर का पुत्र बता दिया। तब इसके उपरान्त बीस तीस सहस्र देवताओं को छोड़ पिता पुत्र और पवित्र आत्मा को मानने लग गये और इसी प्रकार धीरे २ बहुत सी बातें रूमियों की भी अपने अट्ट सट्ट बनावटी धर्म में मिलाकर एक नया प्रपञ्च खड़ा कर लिया। परन्तु यह बुद्धि का काम है कि उसका निर्णय कर डाले।

इञ्जील में जो जो बातें मसीह के बारे में लिखी हैं वे तो जो सच पूछिये तो मसीह का अत्यन्तही अपमान करती हैं।

मसीह एक मिलनसार और धर्मिष्ट पुरुष था उसकी नीतिशिक्षा अत्यन्त प्रशसनीय है और यद्यपि इसी प्रकार की शिक्षा पूर्व समय में कनफूसियस और केकर तथा कई यूनानी प्रसिद्ध विद्वान् लोग कर गये थे परन्तु इस्की शिक्षा से किसी की भी शिक्षा बढ़ कर न थी।

मसीह ने अपनी उत्पत्ति वंश इत्यादि के विषय में कहीं कुछ भी स्वयम् नहीं लिखा है और नये नियम (अहदनामे) में तो एक अक्षर भी उस्का बनाया या लिखा नहीं है। उसके विषय में जो कुछ इतिहास लिखा है वह सब दूसरों ही का, बनाया है; और उसके जी उठने तथा स्वर्ग में चढ़ जाने का जो वृत्तान्त है वही उसकी जन्मकहानी की मानो पूर्ति निबाही है। क्योंकि जब उसके जीवनचरित्र के लेखकों ने उसे असाधारण रीति से संसार में उत्पन्न कराया तो उसी प्रकार यहां से भेजना भी था नहीं तो जन्मकहानी का बन्धान हवा में उड़ जाता।

परन्तु यह अन्तिम वृत्तान्त इस "हिकमत अमली" के साथ लिखा गया है कि पूर्व लेख से भी कुछ बढ़ा चढ़ा है। पहिली बात अर्थात् ईश्वरीय कृपा से गर्भ हो जाना ऐसी है कि सर्वसाधारण को विदित नहीं हो सकती थी इसलिये इस विचित्र कहानी के रचयिताओं ने यह ढङ्ग निकाला कि यदि उनका विश्वास न हो तो वे पकड़े भी न जाय और उनका

भेद किसी प्रकार न खुले । इसके प्रमाणित करने की आशा तो उनसे होही नहीं सकती थी क्योंकि वे विचारे इसका क्या प्रमाण देते और दूसरे यह भी असम्भव था कि जिसके विषय में उन्होंने ये सब बातें कहीं वह स्वयम् इसे प्रमाणित करता।

अस्तु बच्चे का गर्भ में आ जाना तो कोई नहीं देख सकता था परन्तु मर के जी उठना और आकाश में से हो कर आस्मान में चले जाना तो एक ऐसी बात है कि सब लोग आंखों से देख सकेत थे। माना हमने कि मसीह सचमुच जी उठा और स्वर्ग में चढ़ गया तो भला गुब्बारे के चढ़ने के नाई या दोपहर के सूर्य्य के नाईं यदि और नहीं तो समग्र यरूसलम तो अवश्य ही देखता । जिस विषय पर आप प्रत्येक को विश्वास दिलाया चाहते हैं उसके लिये प्रमाण भी वैसाही, होना चाहिये कि जिसे सब मानें । यदि चेत् यह अन्तिम वृत्तान्त सर्वसाधारण के नेत्रगोचर होने से प्रमाणित हो जाता तो पूर्वकथित विषय पर भी विश्वास होता जिसके अभाव से दोनों पर अविश्वास हो गया। अब वे पांच सात पुरुषों को समग्र संसार के लिये साक्षी बना कर चाहते हैं कि हम लोग इस पर विश्वास करें सो भला कैसे हो सकता है ।

यह ऐसा विषय है कि छिपाने से कभी छिप नहीं सक्ता। जो २ असाधारण बातें इस किस्से में हैं उनका विश्वास होना तो दूर रहा उने देखने ही जान पड़ता है कि यह बिल्कुल

फसाद रचा हुआ है। प्रथम तो उन ग्रन्थों के रचयिताओंही का पता नहीं है कि जिनका वे लिखा बतलाते हैं इसका सविस्तर हाल हम आगे लिखेंगे; सबसे भारी प्रमाण इस विषय का यहूदियों से मिलता है जो ठीक उन लोगों के वंश में से है जिनके समय में मसीह का जी उठना और स्वर्ग में जाना हुआ था:—ये लोग कहते है कि यह सब मिथ्या है। आश्चर्य्य है कि इतने पर भी क्रिश्चियन लोग यहूदियों ही को अपना प्रमाण बताते है। यह तो वही बात ठहरी कि जैसे कोई मनुष्य अपने मुकद्मे की सचाई प्रमाणित करने के लिये उन लोगों को पेश करे जो उसके मुकद्मे को झूठा बताते है।

इसमें कोई सन्देह नहीं होता कि मसीह नामक कोई पुरुष उस समय में था और वह उस काल के रीत्यनुसार फांसी भी दिया गया अर्थात् क्रूस पर चढ़ाया गया। ये सब बातें सम्भव हो सकती है। वह अतीवोत्तम शिक्षा करता था और सब मनुष्यों को समान बतलाता था परन्तु इसके साथही वह यहूदी पंडे और पाधो की बुराइया और लालच का भी उद्घाटन करता था जिस कारण यहूदियों के समग्र पांधेमण्डल के हृदय में क्रोध की अग्नि बल उठी। वे सब पांधे भी बड़े चतुर थे; उन्होंने उस पर यह दोष लगाया कि यह रूमी गवर्मेण्ट का राजविद्रोही है और देश में विद्रोह फैलाता फिरता है। यह जान पड़ता है कि रोम की गवर्मेण्ट के हृदय में उस

पर सन्देह हुआ जैसा कि यहूदियों ने कहा था और इस में सन्देह भी नहीं कि मसीह यहूदियों को रूमियों के बन्धन से मुक्ति करने का उपाय चित्त में विचारता था । इन्हीं दोनों बातों के कारण इस सज्जन समाजसंशोधक का प्राण गया।

इसी स्वच्छ और ठीक बात पर क्रिस्तानों ने इतना आडम्बर बांध कर का "पर का कौआ" बना लिया है कि जिस के सामने प्राचीन गप्प के किस्से कहानियां भी मात हैं।

प्राचीन मैथालोजी में लिखा है कि एक समय बहुत से देव दानव और पिशाच मिलकर जुपिटर से लड़ने आये और उनमें से एक पर्वतों के ढेर का ढेर बरसाने लगा । जुपिटर ने बज्र खींच कर मारा और उसे इटना के पहाड़ में बन्द किया तब से जिस समय वह करवट लेता है तभी इटना के पहाड़ में से अग्नि निकलने लगती है ।

यह अत्यन्त सहज बात है कि इटना पर्वत को ज्वालामुखी देख कर यह किस्सा बना लिया गया है कि उसमें सत्यता की झलक मालुम हो ।

क्रिश्चियनों के मैथालोजी मे लिखा है कि उनका शैतान एक बेर उनके सर्वशक्तिमान् जगदीश्वर ही से भिड़ गया जिसने उसे परास्त करके पर्वत में तो नहीं परन्तु एक बड़े गढ़हे मे कैद किया। इसके देखने से स्पष्ट जान पड़ता है कि इस दूसरे किस्से के रचयिता ने पहिले किस्से की नकल बनाई है

क्योंकि देव और जुपिटरवाला किस्सा कई सौ वर्ष पहिले का है। इस से यह भी जान पड़ता है कि प्राचीन मैथालोजी और क्रिस्तानों की मैथालोजी में बहुत मेल पाया जाता है. परन्तु क्रिश्चियन लोग कुछ उनसे भी चढ़े बढ़े है। इन्हों ने ईसा मसीह के किस्से को इटना पहाड़ के किस्से से मिला दिया है और उस का उत्तम प्रबन्ध बाधने के लिये यहूदियों के किस्से भी ले लिये है क्योंकि क्रिश्चियनों की मैथालोजी इसी प्रकार अट्ट सट्ट बनी है॥

अब क्रिस्तानों ने एक बेर तो अपने शैतान को गडहे में कैद किया परन्तु अपने किस्से के बनाने के लिये उन्हे लाचार हो उस की मुक्ति वहां से करनी पड़ी तब वे उसे सर्प बनाकर एडन के बगीचे में लाये और आदम की स्त्री "हौवा" से बात चीत कराया (जिसे सर्प को बोलते सुन कर कुछ भी आश्चर्य न हुआ)। खैर अन्त को यह हुआ कि सर्प ने कह सुन कर उन्हें उस वृक्ष का फल जिसे ईश्वर ने बरजा था खिला दिया जिस के खाने से सब ससार भर के मनुष्यों को दण्ड भोगना पड़ा।

कदाचित् पाठक लोग समझते होंगे कि इस प्रकार शैतान को संसार पर बिजयी ठहरा कर क्रिश्चियन लोग उसे कृपा पूर्वक पुनः उसी गड़हे अर्थात् नरक में छोड़ देंगे, या यदि ऐसा न करें तो उस पर एक पहाड़ही उठा कर रख दें-

गे क्योंकि वे अपने विश्वास से पर्वत को भी चला सकते है, या नहीं तो उसी को पहाड़ के नीचे धर दबावेंगे कि जिस में वह पुन. स्त्रियों में घुसकर बदमाशी या हानि न करे। परन्तु नहीं उन्हों ने उसे बिना जमानत लियेही छोड़ दिया और जब उस्से बहुत दुखी हुये तो उसे घूस देकर शान्त किया अर्थात् उस्से यह प्रतिज्ञा की कि सब यहूदी और सब रूमी तथा समग्र संसार जो ईसा पर विश्वास न करेंगे तुझे दिये जायगे!!! भाई वाह! क्या इतने पर भी कोई क्रिस्तानों की उदारता पर सन्देह कर सकता है?

इस प्रकार स्वर्ग में विद्रोह और लड़ाई खड़ी कर (जिस में न कोई मरता न घायल होता था) शैतान को नरक में डाल—फिर उसे वहां से निकाल—उसे समग्र संसार पर विजयी बना—तथा वर्जित फल खाने से मनुष्यों को नष्ट भ्रष्ट बना अन्त को क्रिस्तानो ने दोनों किस्से को एक में मिला दिया। वे इस पवित्र मनुष्य ईसामसीह को ईश्वर और मनुष्य दोनों का पुत्र बतलाते है, और ईश्वर का पुत्र भी कहते है कि वह क्रूस पर चढ़ने के लिये संसार में आया क्योंकि "हौवा" ने हिर्स से वर्जित फल खा लिया था॥

जाने दीजिये इस व्यर्थ के किस्से में जो कुछ मूर्खता भरी है जिसे पढ़ने से हँसी आती है छोड़ दीजिये और केवल मुख्य२ बातोंही पर यदि ध्यान दीजिये तो बाइबिल से यह

कर कोई भी ग्रन्थ उस सर्वशक्तिमान् जगदीश्वर की बुद्धिमत्ता और अधिकार की "शान" के विरुद्ध नहीं हो सकता ॥

अपने इस प्रपंच की जड़ बांधने के लिये इस के रचयिताओं ने अपने उस शैतान को लाचार हो कर ईश्वर के बराबर का अधिकार दिया। बड़ी कृपा की जो उसे ईश्वर से भी बढ़ कर न बना दिया !!! उन्हों ने उसे अपने तईं उस गड़हे से निकालनेही का अधिकार केवल नहीं दिया वरन उस की अवनति होने पर उस अधिकार को अनन्त कर डाला। इस अवनति होने के पूर्व वे उसे औरों की नाईं एक साधारण ईश्वरीय दूत बतलाते हैं; परन्तु जब उस की अवनति हुई तब तो वह सर्वव्यापी हो गया। उसे एकही क्षण में सर्वत्र उपस्थित होने की शक्ति हो गई। भई वाह ! अवनति काहे को, यह तो उन्नति ठहरी ! ! ॥

इस प्रकार शैतान को ईश्वर के तुल्य बनाने पर भी उन की तृप्ति न हुई तब उन्हों ने यह दिखलाया कि वह अपने फसाद से ईश्वर की सब बुद्धिमत्ता और प्रताप को संसार में व्यर्थ करने लगा यहां लों कि उसने ईश्वर को इतना तंग किया कि वह लाचार होकर समग्र संसार उसके अधिकार में छोड दे. सो ईश्वर को उसके जीतने के लिये संसार में उतरना पड़ा और मनुष्य होकर क्रूस पर अपनी जान देनी पडी ! ! !

यदि इसके रचयिताओं ने शैतान को सर्प का रूप

बनाकर उसे ईश्वर द्वारा क्रूस पर खिचवाया होता तो इस किस्से में इतनी विद्वत्ता न झलकती परंतु उन्हों ने अपनी बुद्धिमत्ता से शैतान को तो जिता दिया और बिचारे ईश्वर को हरा दिया ॥

हम इस बात में सन्देह नहीं करते कि अनेक प्रसिद्ध और प्राचीन लोगों ने इस धर्म पर विश्वास किया और अच्छी प्रकार जीवन निर्वाह कर गये । प्रथम कारण तो इस का यह है कि उन्हें वैसीही शिक्षा दी गई थी दूसरे वे बिचारे इस प्रकार अपने ईश्वर के प्रेम और आडम्बर में फँस गये कि उन्हों ने बाइबिल के इस विरोधी लेख पर ध्यानही न दिया और न उसके दोष विचारे ॥

परन्तु यदि योंही आडम्बर देख कर हम मोह जावें तो क्या प्रतिक्षण हम आश्चर्य्य नहीं देखते ? क्या हम जन्मतेही एक ऐसे विलक्षण सजे सजाये संसार में नहीं आ जाते, जहां बिना पैसा कौड़ी खर्चेही सब सामान तय्यार है ?

क्या सूर्य्य का उदय करना, मेघ का बरसाना, पृथ्वी में अनाज उत्पन्न कराना हमारे हाथ में है ? चाहे हम सोते रहें चाहे जागते रहें संसार रूपी कल रात दिन चलाही करती है । ये सब चीजें ईश्वर ने मनुष्य के लिये उत्पन्न की हैं तो अब ईश्वर बिचारे की जान लिये बिना क्या उन की तृप्ति नहीं होती थी ? ॥

इस खण्डन को देख कर कितनोहीं के कान खड़े हो जाँयगे परन्तु अब समयही ऐसा आया है कि इस का यत्न किया जाय। अब सभी देशों में क्रिस्तानी धर्म पर सन्देह होने लगा है और जो लोग विचारे भ्रान्ति के समुद्र में पड़े लहरें ले रहे थे कि किसका विश्वास करें और किसका अविश्वास, उनकी तृप्ति हो जायगी। इस लिये अब हम पुराने और नये दोनों नियमों की परीक्षा करते हैं॥

ये पुस्तकें अर्थात् उत्पत्ति की पुस्तक से लेकर प्रकाशित वाक्य की पुस्तक पर्य्यन्त सब ईश्वर के वचन कहलाते है। इस लिये यह अत्यन्त आवश्यक बात है कि पाहिले हम यह जान लें कि इन्हें ईश्वर का बचन कौन कहता है कि जिस में हम देखें कि उस के वाक्य पर कितना विश्वास कर सकते है। तो इस का पता यही लगता है कि एक दूसरे से योंही कहते चले आये है और लिखा सिखा कहीं कुछ भी नहीं है॥

जब इन गिरजावालों ने अपना धर्म बनाना चाहा तो जितनी लिखी हुई पुस्तकें इन्हें मिलीं सब इकट्ठी कीं और अपनी इच्छानुसार बना लीं। इस में अत्यन्तही सन्देह जान पड़ता है कि जिसे ये पुराना और नया नियम कहते है आरम्भ में ऐसेही थे जैसे अब हैं; या उन में कुछ घटा बढ़ा कर बना लिया गया है, जो कुछ हो उन लोगों ने तब यह निश्चय किया कि इन संगृहीत पुस्तकों में से किसे ईश्वर का ब-

चन कहें और किसे नही तब अपनी२ अनुमति देने लगे और जिन पुस्तकों के लिये अधिक लोगों की अनुमति ठहरी उन्हें तो ईश्वर का बचन बना लिया बाकी को निकाल भी दिया, कई पुस्तकों को उन्हों ने संदिग्ध भी रक्खा जैसे "अपाक्रिफा" की पुस्तक। यदि वे लोग उस समय दूसरी कुछ अनुमति देते तो ये लोग जो अपने को क्रिश्चियन् कहते है वैसाही मानते; क्योंकि यहां तो एक का कहना और दूसरों का विश्वास करना ठहरा कुछ सत्यासत्य का निर्णय तो ठहराही नहीं। ये लोग, कौन थे कहीं कुछ नाम पता नहीं लिखा है परन्तु "साधारण चर्च" के नाम से प्रसिद्ध थे॥

जब इस प्रकार बाहर से कोई प्रमाण इन पुस्तकों को "ईश्वर का बचन" कहाने के लिये नहीं मिलता तो अब उन्ही पुस्तकों की परीक्षा करके देखते है कि स्वयम् उन में क्या है। इस ग्रन्थ के आरम्भ में हम इलहाम के बारे में कुछ कह चुके है अब उस की योजना इन पुस्तकों के साथ की जाती है।

"इलहाम" उन बातों या विषयों का वर्णन ईश्वर द्वारा किसी मनुष्य के प्रति है कि जिन्हें वह मनुष्य पहिले नहीं जानता था। क्योंकि यदि हमने कोई काम स्वयम् किया है, या होते देखा है, तो उसे हमे जताने या लिखने के लिये किसी इलहाम की कुछ भी आवश्यकता नहीं है इलहाम उन

वातों के लिये नहीं हो सक्ता जो पृथ्वी पर की जाती है और जिन का मनुष्यही स्वयम् कर्ता या साक्षी है। अतएव समग्र ऐतिहासिक या किस्से की बातें जो बाइबिल मे है (क्योंकि यही तो उस में हुई है) इलहाम शब्द के अर्थ के अन्तर्गत नहीं हो सकता। जब कि सामसन गाजा के फाटक कंधे पर उठा ले गया (उठाया या नहीं ईश्वर जाने) या जब वह डे-लिलाह से भेंट करने गया, या लोमड़ियों को पकड़ लाया या और भी ऐसेही काम किये तो भला सोचने की वात है कि इलहाम और इन वातों से क्या सम्बन्ध है! यदि ये वातें सचमुच हुई थीं तो वह स्वयम् उन्हें कह या लिख सकता था या यदि उस का कोई सेक्रेटरी या मुनीम (क्लार्क) होता तो वह लिख डालता; और यदि यह सब किस्सा बनावटी है तो इलहाम उसे सच्चा नहीं कर सकता; फिर चाहे यह सच हो या झूठ ऐसी बातों के जानने से हम कुछ अधिक बुद्धिमान या चतुर नहीं हो गये। जब हम उस सर्वशक्तिमान् जगत्पालक अ-खिलप्रतापशाली जगदीश्वर की शक्ति को देखते है कि जिस का करोड़वां हिस्सा भी अत्यन्त प्रवीण मनुष्य की बुद्धि में नहीं आ सकता तो ऐसी२ तुच्छ और सारहीन बातों को "उ-सका वचन" कहते सुन कर अत्यन्त लज्जा होती है!!! ॥

जगत की उत्पत्ति के वृत्तान्त को जो उत्पत्ति के पुस्तक के आरम्भही में दिया है देखने से जान पड़ता है कि जैसा

विश्वास इसरायेल लोगों के चित्त में मिश्र में आने के पूर्व था वैसाही वहां से जाने के उपरान्त ज्यों का त्यों लिख दिया है। ग्रन्थारम्भ के प्रकार ही से जान पड़ता है कि यह वृत्तान्त वे एक दूसरे से ज़बानी सुनते आये हैं क्योंकि यह पुस्तक बीचही में जैसे अचानचक आरम्भ हो जाती है—इसमें न तो कोई कहनेवाला है न कोई सुननेवाला है और न किसी के प्रति यह सब हाल कहा जाता है बस जैसे कोई सुनी सुनाई बात आरम्भ हो जाती है वैसाही है। यहां तो मूसा ने और स्थानों की नांई आरम्भ भी नहीं किया जैसे कि उसने सर्वत्र लिखा है कि "और ईश्वर ने मूसा से यों कहा कि"—

यह कुछ भी समझ में नहीं आता कि इस उत्पत्ति के वृत्तान्त को मूसा का बनाया हुआ क्यों मानते है। यदि चत इसे मूसा ने बनाया होता तो वह अपना नाम रचयिता में अवश्य रखता। मूसा की शिक्षा मिस्रवालों में हुई थी कि जिन के समान उन दिनों विज्ञानशास्त्र विशेषत ज्योतिष विद्या में कोई दूसरे देश के निवासी निपुण न थे; सो इस पुस्तक की सत्यता के अर्थ मूसा ने कहीं भी जो अपना नाम नहीं दिया या जान बूझ के बचाया तो इसी से जान पड़ता है कि न तो उसने इसे लिखा और न वह इसपर विश्वास करता था। कारण यही है कि जब संसार में सब धर्मवालों ने उत्पत्ति की रचना का वर्णन किया है तो भला इसरायेल लोग किससे कम थे कि ये भी सृष्टि के

आरम्भ का वर्णन करने में किसी से पीछे रहें; अस्तु यह वर्णन किसी प्रकार हानिकारक नहीं है बस इतनाही जानो कि बाइबिल ने बड़ी कृपा की है।

परन्तु जब हम बाइबिल में उन असभ्य कहानियों को देखते हैं, उन निर्लज्ज व्यभिचारों का हाल पढ़ते हैं, उन करुणाहीन हत्याओं तथा दयारहित बदला लेने का वृत्तान्त पाते है कि जिनसे आधी से पार बाइबिल भरी है तो यही उचित जान पड़ता है कि इसका नाम ईश्वर का वचन न कह कर शैतान का वचन कहा जाय तो योग्य हो। यह तो बुराइयों का इतिहास है जिसने मनुष्यों को पशुवत् बना दिया; यदि हम से पूछिये तो हम तो इसे उसी घृणा की दृष्टि से देखते है जैसे कि और दयारहित बातों पर हमारी घृणा होती है।

बाइबिल में भविष्यवक्ताओं की विलक्षण दशा है। डिबोरा और बारक भी भविष्यवक्ताओं में लिखे है — इन्होंने कोई भविष्य वाणी नहीं की है परन्तु हां उन्होंने अपने नाम से कुछ काव्य में वर्णन किया है। दाऊद भी भविष्यवक्ताओं में है, क्योंकि वह गाना बजाना जानता था और उसे लोग भजनों का रचयिता बताते है (जो बिलकुल सरासर भूल है) परन्तु इब्राहीम, इज़हाक और याकूब का नाम भविष्यवक्ताओं में नहीं है; कारण यही है कि जितना हाल उनका दिया है, उन

में कहीं उनके गाने बजाने या कविता करने का कुछ पता नहीं मिलता ।

फिर बाइबिल में बड़े और छोटे भविष्यवक्ताओं का हाल मिलता है । (वाह ! छोटे और बड़े ईश्वर का हाल भी क्यों नहीं दिया ?) यदि भविष्यवक्ता का अर्थ आनेवाली बात का कहनेवाला हो तो क्या भविष्यबाणी के कहने में भी छोटाई बड़ाई हो सकती है ? हां कविता में अलबत्ते छोटा कवि और बड़ा कवि हो सकता है अतएव बाइबिल के भविष्यवक्ता का अर्थ 'कवि ही' ठीक होता है ।

तो जब भविष्यवक्ताओं का यही अर्थ है तो जो कुछ उन्होंने लिखा है उस पर अब अनुमति देना व्यर्थ ही ठहरा–इन कवियों की कविता ऐसी भद्दी है कि साधारण कवियों की भी कविता इनसे कहीं उत्तम है ।

अब दूसरी बात यह बिचारने योग्य है कि समय के फेरफार से अनेक भाषा नष्ट हो जाती है और दूसरी दूसरी भाषा खड़ी हो जाती है तो भला ईश्वर का वचन किसी लेख या मनुष्य की वाणी में जो नश्वर है कैसे रह सकता है ? क्योंकि जब वह स्वयम् नित्य है तो उसका वचन भी नित्य होना चाहिये। शब्दों के अर्थ का समयानुसार बदलना, समग्र संसार में एक भाषा के अभाव से अनुवाद की आवश्यकता का होना, अनुवाद में अशुद्धता का होना, कापीनवीस तथा छापेवालों की भूल

का करना तथा और भी अनेक बातें ऐसी हैं कि जिनसे यह स्पष्ट है कि ईश्वर का वचन इन अनित्य मध्यस्थ वाहकों द्वारा नहीं हो सकता। ईश्वर का वचन तो कुछ दूसरा ही है।

भला यदि बाइबिल समग्र संसार के वर्तमान ग्रन्थों से उत्तम होती तौ भी मनमें कुछ विश्वास जमता। परन्तु जब हम रुपये में बारह आना मार काट व्यभिचार की बातें तथा महा घृणित और जघन्य कहानियों का संग्रह बाइबिल में पाते है तो हम इसे ईश्वर का बचन कह कर अपने उस परमात्मा सर्वशक्तिमान् जगदीश्वर के नाम को कलङ्कित नहीं कर सकते।

इतना तो बाइबिल के पुराने नियम के लिये हुआ अब नये नियम का हाल सुनिये। नया नियम क्या ? अर्थात् ईश्वर की नवीन इच्छा! मानों ईश्वर की भी दो प्रकार की इच्छा होती है एक नवीन और एक प्राचीन ! ।

यदि मसीह की इच्छा किसी नवीन धर्म को स्थापन करने की होती तो निस्सन्देह उसने अपनी जीवित अवस्था में लिखा होता या किसी दूसरे से लिखवा लिया होता। परन्तु उसके नाम से रचा हुआ कोई ग्रन्थ नहीं मिलता। नये नियम की सब पुस्तकें मसीह के मृत्यु के उपरान्त लिखी गई है। उसके माता पिता यहूदी थे और ईश्वर का पुत्र तो वह उसी प्रकार है जैसे और सब मनुष्य है क्योंकि ईश्वर सबका पिता अर्थात् उत्पत्तिकारक है।

प्रथम की चार पुस्तकों में जिन्हें मत्ती, मर्कूस, लूका, और युहन्ना

कहते है मसीह का जीवनवृत्तान्त कुछ नहीं लिखा है परन्तु उसके जीवित अवस्था की फुटकर बातें दी है। इन पुस्तकों से जान पड़ता है कि उसने अठारह महीने के पार उपदेश नहीं किया है और इसी थोड़े से अवसर में इनलोगों का परिचय उससे हुआ। ये लोग उसका वृत्तान्त उसके बारहें वर्ष की अवस्था का लिखते है कि वह यहूदी बुद्धिमान लोगों की सभा में बैठ कर उनसे स्वयम् प्रश्न करता और उनके प्रश्नों का उत्तर देता था परन्तु यह वृत्तान्त उनसे परिचय होने के कई वर्ष पूर्व का है तब सम्भव जान पड़ता है कि यह वृत्तान्त उन्होंने उसके पिता से सुना हो; इसके उपरान्त सोलह बरस तक उसका कुछ वृत्तान्त नहीं मिलता है कि वह कहां था और इतने दिन अपना समय कहां बिताया। सम्भव जान पडता है कि कदाचित् अपने पिता के काम में सहायता करता हो जो बढ़ई का रोजगार करता था। इसका वृत्तान्त कहीं नहीं मिलता कि उसने किसी पाठशाला में कुछ शिक्षा पाई हो और सम्भव है कि वह लिखना पढ़ना भी न जानता हो कारण यह है कि उसके माता पिता बहुतही गरीब थे क्योंकि जब वह पैदा हुआ था तब उन लोगों के पास बिछौना और ओढना तक भी न था, आश्चर्य तो इस बात पर है कि इन तीन मनुष्यों की उत्पत्ति का (जिनका वृत्तान्त बहुत कुछ पाया जाता है) कुछ भी पता नहीं लगता। मूसा नदी किनारे पाया गया, मसीह अस्तबल में पैदा हुआ, और मुहम्मद खच्चर चराता था। मूसा और

मुहम्मद ने तो नये धर्म चलाये परन्तु मसीह ने कोई नवीन धर्म स्थापन नहीं किया, वह लोगों को नीतिशिक्षा करता और एक ईश्वर पर बिश्वास दिलाता था वह सब मनुष्यों का हित चाहनेवाला था ।

परन्तु उसकी दुर्दशा का वृत्तान्त पढ़ने से जान पड़ता है कि उस समय उसकी बहुत प्रसिद्धि न थी और यह भी मालूम होताहै कि वह अपने अनुयायियों का समाज कहीं निराले में करता था और प्रसिद्ध तौर से शिक्षा देना उसने बंद कर दिया था क्योंकि यदि ऐसा न होता तो यहूदा यस्करियत उसको चुपके से उन लोगों को क्यों बताता जो उसे पकड़ने के लिये घूमते फिरते थे । यह बात इससे और भी स्पष्ट विदित होती है कि यदि वह छिपा छिपा न फिरता तो यहूदी लोग उसके शिष्य यहूदा यस्करियत को लालच दे कर उसके पकडने को भेदिया क्यों बनाते ? यह विचारने का स्थान है कि ईश्वरता तथा इस चोरी के छिपाव में कैसा महत् अन्तर है; और जब वह अपने एक अनुयायी के द्वारा पकड़ाया गया तो इसी से जान पड़ता है कि यह कार्य उसकी इच्छा के विरुद्ध हुआ अतएव फासी दिये जाने अर्थात् क्रूस पर चढ़ने में उसकी इच्छा न थी ।

क्रिस्तान लोग कहते है कि मसीह संसार भर के पाप के लिये मरा और वह मरने ही की इच्छा से संसार में आया था।

यह तो यों भी हो सकता था यदि वह बुखार या शीतला के कारण मरा होता या वृद्धावस्था वा और किसी कारण से उसकी मृत्यु हुई होती ।

वाइबिल के अनुसार आदम को वर्जित फल खाने के लिये जो शाप हुआ था वह कुछ यही न था कि तू क्रूस पर अवश्य खींचा जायगा किन्तु यह कि तूँ अवश्य मरेगा अर्थात् शाप मरने के लिये थाँ कुछ यह शाप न था कि तू इस प्रकार मरेगा सो जब कि आदम के मरने का कोई प्रकार नियत न था और न कुछ उस शाप ही में यह वर्णन था कि आदम के लिये मसीह मरेगा तो क्योंकर क्रिश्चियन लोग ऐसी बातों का विश्वास करते है ? हमारे जान तो जब मसीह को मारना ही था तो क्रूस पर चढाने की अपेक्षा ज्वरपीड़ित मृत्यु से उसकी इतनी दुर्दशा न होती। आदम को जो मरने का शाप हुआ था उसका दो अर्थ हो सकता है अर्थात् एक तो शरीर का नाश होना और दूसरे नरकभोग करना सो ईसाइयों के कहने के अनुसार यदिचेत् मसीह हमारे लिये मरा तो इन दोनों में से एक बात अवश्य रुक जानी चाहिये परन्तु यह तो हम नित्यही देखते हैं कि मनुष्य मरते है तो मरने का दूसरा जो अर्थ है अर्थात् नरक में जाना तो उस्से हमारी रक्षा अवश्य होनी चाहिये यदिचेत् एक वेर मसीह हम लोगों के लिये मर चुका तो हम सब लोग स्वर्ग में चले जावेंगे ! भाई वाह ! ! ! स्वर्ग न

ठहरा विल्सन साहब का होटल ठहरा जब मनमें चाहा तब चले गये क्योंकि मसीह ने तो रास्ताही खोल दिया है तो अब ईसाइयों को पाप करने में किसी का काहे को डर होगा ? यदिचेत् ईसाई मरने का अर्थ दुःख उठाना करें तो उनके विश्वानुसार जो सच पूछिये तो मसीह को जीवित रहने में अधिक दुःख होता क्योंकि उसका इस संसार में रहना तो मानों उसके निवासभूमि स्वर्ग से बहिष्कृत होना था और मरना तो पुनः अपनी निवासभूमि में चले जाना हुआ। भई वाह ! न जाने यह कैसा धर्म है, कहते कुछ है करते कुछ है । अब इन व्यर्थ की बातों से तो जी घबड़ा गया, अब इसे शीघ्र समाप्त करके किसी उत्तम बात का प्रसङ्ग निकालें।

इसका कुछ पता नहीं लगता कि नये नियम की कितनी या कौन सी पुस्तकै वस्तुत उन मनुष्यों द्वारा लिखी गई है कि जिनके नाम से वे प्रसिद्ध हैं और न यह मालूम होता है कि पहिले वह किस भाषा में लिखी गई थीं उनमें लिखित विषयों के दो भाग हो सकते है प्रथम तो "छोटे वृत्तान्त" दूसरे "चिठ्ठी पत्री"।

प्रथम की चार पुस्तकै अर्थात् मत्ती, लूका, मर्कूस और युहन्ना में छोटे २ वृत्तान्न लिखे है। उनमें बीती हुई बातों का हाल लिखा है जो कुछ मसीह ने कहा या किया या जो कुछ दूसरों ने उससे कहा या उसके प्रति किया सब लिखा है, कई

यह तो यों भी हो सकता था यदि वह बुखार या शीतला के कारण मरा होता या वृद्धावस्था वा और किसी कारण से उसकी मृत्यु हुई होती ।

बाइबिल के अनुसार आदम को वर्जित फल खाने के लिये जो शाप हुआ था वह कुछ यही न था कि तू क्रूस पर अवश्य खींचा जायगा किन्तु यह कि तूं अवश्य मरेगा अर्थात् शाप मरने के लिये था कुछ यह शाप न था कि तू इस प्रकार मरेगा सो जब कि आदम के मरने का कोई प्रकार नियत न था और न कुछ उस शाप ही में यह वर्णन था कि आदम के लिये मसीह मरेगा तो क्योंकर क्रिश्चियन लोग ऐसी बातों का विश्वास करते है ? हमारे जान तो जब मसीह को मारना ही था तो क्रूस पर चढ़ाने की अपेक्षा ज्वरपीड़ित मृत्यु से उसकी इतनी दुर्दशा न होती। आदम को जो मरने का शाप हुआ था उसका दो अर्थ हो सकता है अर्थात् एक तो शरीर का नाश होना और दूसरे नरकभोग करना सो ईसाइयों के कहने के अनुसार यदिचेत् मसीह हमारे लिये मरा तो इन दोनों में से एक बात अवश्य रुक जानी चाहिये परन्तु यह तो हम नित्यही देखते हैं कि मनुष्य मरते है तो मरने का दूसरा जो अर्थ है अर्थात् नरक में जाना तो उससे हमारी रक्षा अवश्य होनी चाहिये यदिचेत् एक बेर मसीह हम लोगों के लिये मर चुका तो हम सब लोग स्वर्ग में चले जावेंगे ! भाई वाह ! ! ! स्वर्ग न

ठहरा विलसन साहब का होटल ठहरा जब मनमें चाहा तब चले गये क्योंकि मसीह ने तो रास्ताही खोल दिया है तो अब ईसाइयों को पाप करने में किसी का काहे को डर होगा ? यदिचेत् ईसाई मरने का अर्थ दुःख उठाना करें तो उनके विश्वानुसार जो सच पूछिये तो मसीह को जीवित रहने में अधिक दुःख होता क्योंकि उसका इस संसार में रहना तो मानों उसके निवासभूमि स्वर्ग से बहिष्कृत होना था और मरना तो पुनः अपनी निवासभूमि में चले जाना हुआ। भई वाह ! न जाने यह कैसा धर्म है, कहते कुछ है करते कुछ है । अब इन व्यर्थ की बातों से तो जी घबड़ा गया, अब इसे शीघ्र समाप्त करके किसी उत्तम बात का प्रसङ्ग निकालें।

इसका कुछ पता नहीं लगता कि नये नियम की कितनी या कौन सी पुस्तकै वस्तुतः उन मनुष्यों द्वारा लिखी गई है कि जिनके नाम से वे प्रसिद्ध हैं और न यह मालूम होता है कि पहिले वह किस भाषा में लिखी गई थीं उनमें लिखित विषयों के दो भाग हो सकते है प्रथम तो "छोटे वृत्तान्त" दूसरे "चिठ्ठी पत्री"।

प्रथम की चार पुस्तकै अर्थात् मत्ती, लूका, मर्कूस और युहन्ना में छोटे २ वृत्तान्त लिखे है। उनमें बीती हुई बातों का हाल लिखा है जो कुछ मसीह ने कहा या किया या जो कुछ दूसरों ने उससे कहा या उसके प्रति किया सब लिखा है, कई

स्थानों में तो एकही बात को उन्होंने भिन्न २ प्रकार से वर्णन किया है इन पुस्तकों से ओर इलहाम से कोई सम्बन्ध नहीं हो सकता है, न कि केवल इसी लिये कि उनके लेखकों का परस्पर वर्णन नहीं मिलता परन्तु इसलिये भी कि भूत वृत्तान्तों के वर्णन में या दो मनुष्यों के बात चीत के वर्णन में इलहाम का कोई सम्बन्ध नहीं हो सकता । प्रेरितों की क्रिया में भी (जिस ग्रन्थ के रचयिता का पता नहीं है) ऐसे ही ऐसे वृत्तान्त भरे है । नये नियम का शेष भाग "प्रकाशितवाक्य" को छोड़कर केवल पत्रियों का संग्रह है और चिट्ठियों का जाल बनाना तो जगत में प्रसिद्ध बात है जिसमें सन्देह होता है कि वे वस्तुतः लेखक की पत्रियां है वा जाल रचा गया है, इस के अतिरिक्त और भी बहुत सी बातै ऐसी है जिससे नये नियम पर कुछ भी विश्वास नहीं जमता जैसे देखिये, ये लोग कहते है कि मसीह ने हमारे पापों के बदले जान दी अब उससे हमारी छुट्टी हो गई । विचारने का स्थान है कि सच्चे न्याय से यह बात कभी नहीं हो सकती जैसे कि हमने किसी का कर्ज़ देना है और हमारी सामर्थ्य नहीं है कि हम उसके कर्ज़ को चुका सकें अतएव महाजन हमें कारागार में भेजने को धमकाता है यदि कोई दूसरा पुरुष हमारा कर्ज़ अपने पास से चुका दे तो हमारी छुट्टी निस्सन्देह हो जायगी क्योंकि महाजन को केवल अपने रुपये से मतलब है परन्तु यदि हमने

कोई फौजदारी का अपराध किया है तो यह बातही दूसरी हो गई क्योंकि यदि कोई दूसरा पुरुष हमारे बदले दण्ड भोगना चाहे तो हमारी छुट्टी नहीं हो सकती, सच्चे न्याय से ऐसी आशा करना केवल दुराशा मात्र है यदि ऐसा हो तो ऐसे न्याय को सभी अन्याय कहेंगे क्योंकि यह तो अन्धेरनगरी का न्याय ठहरा।

ज़रा बिचारने से जान पड़ेगा कि पाप से इस प्रकार मोचन होने का ध्यान केवल दीवानी के कर्ज़ की नाई समझकर बन्धान बांधा गया है परन्तु रचयिता ने इतना भी न विचारा कि यह बात ही दूसरी ठहरी, फिर इन्हीं के ग्रन्थों में लिखा है कि पीठ पर कोड़े खाने और गिर्जाघर में पोपों को कुछ रुपया देनेसे पाप की मुक्ति हो जाती है छी! छी! जान पड़ता है कि ईसाईयों के मत में "टका धर्म टका कर्म टका सर्वस्वमुत्तमम्" क्योंकि जब वे टके के ज़ोर से अपनी मुक्ति पाप से करा लेते है तो मानों पोप जी के द्वारा ईश्वर को भी घूस देते है ? परन्तु कदाचित् कोई यह पूछे कि क्या फिर कोई ईश्वर का वचन या इलहाम न होना चाहिये जिसका उत्तर हम यह देते हैं कि अवश्य होना चाहिये। यह समग्र संसार जो हम देखते है ईश्वर का बचन है यह वह वचन है जिसे कोई मनुष्य बदल नहीं सकता और जिस्के द्वारा मानों वह समग्र संसार से बात चीत करता है।

मनुष्यों की भाषा सदा बदलती रहती है और भिन्न २ देशों में भिन्न २ भाषा है अतएव समग्र संसार के जानने वा समझने के लिये इनके द्वारा कोई काम नहीं हो सकता; यह विश्वास कि ईश्वर ने मसीह को समग्र संसार में हर्षमय वृत्तान्त सुनाने को भेजा केवल उन्हीं लोगों को हो सकता था जो पृथ्वी के विस्तार का वृत्तान्त कुछ भी नहीं जानते थे और जो कूपमण्डूक की नाईं यही समझते थे कि जितना वे देखते है उतनाही समग्र संसार है ।

अब यह विचारना चाहिये कि समग्र संसार के जातियों को मसीह अपनी शिक्षा कैसे दे सकता था ? क्योंकि वह तो केवल एक इब्रानी भाषा जानता था और संसार में तो हज़ारों भाषा बोली जाती हैं । यह प्राय: देखने में आता है कि दो जातियां एक ही भाषा नहीं बोलतीं और परस्पर बहुत कम समझती हैं यदि अनुवाद से समझाया जाय तो भाषातत्वविचारक लोग इस बात को भली प्रकार जानते है कि एक भाषा से दूसरी भाषा में अनुवाद करने से कितनी भूलों का होना सम्भव है और प्राय. अर्थ की भ्रान्ति भी होती है; इसके अतिरिक्त मसीह के समय में छापे की कल का तो लोग नाम तक भी नहीं जानते थे ॥

यह अत्यन्त आवश्यक है कि किसी कार्य को यथायोग्य समाप्त करने के लिये उसके ही योग्य उपकरण होना चा-

हिंये नहीं तो वह काम नहीं हो सकता । यही एक बात है कि जहां ईश्वर और मनुष्य की शक्ति व बुद्धि में भेद पाया जाता है। मनुष्य प्रायः अपने कामों में कृतकार्य्य नहीं होता जिसका कारण यही है कि वह यथायोग्य उपकरण के प्रयोग करने में असमर्थ है और यदि उपकरण भी उस के पास हों तो वह अपनी नियमित बुद्धि के कारण उनका यथोचित प्रयोग नही कर सकता। परन्तु सर्वशक्तिमान् जगदीश्वर तो अपने कामों मे सदाही कृतकार्य होता है, उसके उपकरण कार्य के योग्यही होते है परन्तु मानुषीय भाषा सर्वत्र एक रङ्ग अव्याप्त होने के कारण किसी निर्विकार और नित्य ज्ञान की वाहक नहीं हो सकती, अतएव ईश्वर अपने तईं मनुष्यों पर प्रगट करने के लिये मानुषीय भाषा से काम नहीं लेता; केवल एक प्राकृतिक संसार ही को ईश्वर का बचन कह सकते हैं । यह प्राकृतिक संसार मानों ऐसी भाषा बोलता है जिसे जगत भर के मनुष्य समझ सकते है । यह सदा से है और सदा रहेगा इसमें कोई जाल नहीं कर सकता, कोई बदल नहीं सकता, कोई छिपा नहीं सकता, न यह कभी खो सकता है यह कोई ऐसी वस्तु नहीं है जो मनुष्य के प्रकाश न करने पर रुकी रहे यह अपने तई जगत भर में स्वयं प्रकाश कर लेता है यह सब जातियों को और सब लोगों को शिक्षा देता है और यह ईश्वर का वचन मनुष्यों पर उन सब बातों को

प्रगट करता है जो उन्हें ईश्वर के विषय में जानने चाहियें। यदि हम उसकी शक्ति देखा चाहते हैं तो इस अपार संसार मे देखें यदि हम उसकी बुद्धि देखा चाहते हैं तो इस विचित्र संसार में देख लें, यदि हम उसकी उदारता देखा चाहते है तो इस अखिलवस्तुभूषणाभूषित पृथ्वी में देखें, यदि हम उसकी करुणा और दया देखा चाहते है तो यह प्रत्यक्ष देख लें कि वह अकृतज्ञ तथा पापियों को भी अपने सूर्य चन्द्रमा तथा मेघ इत्यादि के लाभों से वञ्चित नहीं रखता; सारांश यह कि यदि तुम ईश्वर को जाना चाहते हो तो ईसाई अञ्जील में जिसे एक साधारण मनुष्य भी बना सक्ता है मत खोजते फिरो परन्तु उस अञ्जील में खोजो जिसे प्राकृतिक संसार कहते है जिसे ईश्वर के अतिरिक्त कोई नहीं बना सकता।

ईश्वर के विषय में मनुष्य केवल यही कह सकता है और यही सोच सकता है कि वह आदि कारण है अर्थात् सब कारणों का कारण है, क्योंकि आदि कारण का ध्यान करना या समझना अत्यन्त कठिन व बुद्धि के बाहर है और किसी आदि कारण का न मानना उससे भी हजार गुना कठिनता से समझ में नहीं आता अतएव आदि कारण का अविश्वास करते हुये विश्वास करना पड़ता है। जैसे आकाश को अनन्त विचारना अत्यन्त कठिन है परन्तु उसका अन्त विचारना उससे भी सहस्र गुना कठिन है अथवा जैसे समय को अनन्त विचा-

रना कठिन है परन्तु यह उससे की सहस्रगुना कठिन है कि हम किसी प्रकार यह बिचार सकें कि कोई ऐसा समय आवेगा जब समय न होगा। उसी प्रकार ससार के समग्र वस्तुओं के देखने से जान पड़ता है कि कोई भी अपने तई स्वयम् उत्पन्न नहीं कर सकता। प्रत्येक मनुष्य इस बात को जानता है कि वह स्वयम् अपना कारण नहीं है और न उसके पिता पितामह या और कोई आपही अपना कारण था और न कोई वृक्ष या पशु पक्षी अपने तई स्वयम् उत्पन्न कर सकता है अत एव इन प्रमाणों से यह आवश्यकता हुई कि हमको आदि कारण मानना पड़ा और उस आदि कारण में कोई ऐसी वस्तु नहीं है जो कभी नाश हो सकती हो और इसी आदि कारण का नाम ईश्वर है।

मनुष्य केवल बुद्धि ही के बल से ईश्वर को जान सकता है यदि उस्की बुद्धि ले ली जाय तो वह कुछ भी न समझ सकेगा और ऐसी अवस्था में किसी मनुष्य या किसी घोड़े के सामने बाइबिल पढ़ना एकसा हो जायगा तो अब हम उन्हें क्या कहैं जो यह कहा करते है कि धर्मसम्बन्धीय काम में बुद्धि मत लगावो।

समग्र बाइबिल में ईश्वर को बतानेवाले अयूब के दो चार पर्व्व हैं और गीतों के पुस्तक का १९ वां पर्व; इनके अतिरिक्त और कोई नहीं जान पड़ता ॥ ये सत्य २ ईश्वरविषयक लेख

है क्योंकि वे ईश्वर का निर्णय उसके कामों से करते हैं वे प्राकृतिक संसार को छोड़कर और किसी दूसरी पुस्तक को ईश्वर का वचन नहीं मानते गीतों के पुस्तक के उन्नीसवें पर्व्व का आशय जैसा ऐडिशन् नामक कवि ने लिखा है उसका भाषानुवाद यहां हम प्रकाश करते हैं—

कुण्डलिया ।

ऊँचो अरु विस्तृत बड़ो यह अकाश ब्रह्मण्ड ।
तैसी नीलो चमकनो बादर भानु प्रचण्ड ॥
बादर भानु प्रचण्ड खण्ड महिमण्डल सारे ।
चन्द्रादिक उद्दण्ड और जेते नभ तारे ॥
ते सब इकसुर होय करें याही जनु सूचो ।
हमै रच्यो जो हस्त वही जगँ सबसे ऊँचो ॥ १ ॥

ज्यों ज्यों भानु प्रयानते अन्धकार अधिकाय ।
त्यों त्यों इन्दु कहै मनो जन्मकथा हरपाय ॥
जन्मकथा हरपाय गाय धरणी सों भाषे ।
या विधि ग्रह नच्छत्र सहित नित चितवत पाखै ॥
सो नित नित के लखें होत दृढ़ता पुनि त्यों त्यों ।
नये नये नक्षत्र विदित होवतु हैं ज्यों ज्यों ॥ २ ॥

यद्यपि सब डोलत अहै बिन रव चारो ओर ।
पै चतुरन के श्रवन में कहत मनो कर जोर ॥
कहत मनो कर जोर तोर महिमा प्रभु न्यारी ।
रचे भानु चन्द्रादि मेरु सागर नरनारी ॥

या विधि प्रभु की प्रगट करै महिमा को तद्यपि ।
अन्त न पावै कोऊ भटक भूले नर यद्यपि ॥ ३ * ॥

इसके अतिरिक्त कि यह सब सर्वशक्तिमान् जगदीश्वर के बनाये हैं मनुष्य और क्या जाना चाहता है ? बस यदि उसे कुछ भी बुद्धि है तो इस विश्वास पर उसको इतना दृढ़ होना चाहिये जहां से उसे कोई भी डिगा न सके ॥

अयूब की पुस्तक में भी इसी प्रकार ईश्वर की ईश्वरता का वर्णन है अर्थात प्रत्यक्ष सत्यता से ईश्वर का होना प्रमाणित किया है। यद्यपि मुझे अयूब की पुस्तक का भाग ठीक स्मरण नहीं है तथापि उसकी एक विशेष बात यह स्मरण है जहां लिखा है कि "क्या तुम खोजने से ईश्वर को पा सकते हो ?" और "क्या तुम ईश्वर को पूर्ण रीति से पा सक्ते हो" ? ॥

प्रथम प्रश्न के विषय में कि "क्या तुम ईश्वर को खोजने से पा सकते हो?" हम कहते हैकि हां, क्योंकि प्रथम तो हम यह जानते है कि हम स्वयं अपने कारण नहीं है तथापि हम वर्तमान तो है और इसी प्रकार दूसरे वस्तुओं के भी कारण विचारने पर हम देखते हैं कि वे सब स्वयं अपने तईं उत्पन्न नहीं कर सकते है तथापि लाखों जीव और वस्तु संसार में वर्तमान है अतएव इस विषय की खोज क-

---

* इन तीन ऊर्ध्वलिखित कुण्डलियों से ईश्वर का अलौकिक प्रताप झलकाया गया है ।

रने से हम यह देखते है कि इन सब वस्तुओं से उच्चतम कोई शक्ति है और उसी शक्ति का नाम ईश्वर है ॥

द्वितीय प्रश्न अर्थात् "क्या हम ईश्वर को पूर्ण रीति से पा सकते है" के विषय में हम कह सकते है कि नहीं,क्योंकि नाकि केवल उस्की यह अखिल लोकरचना ही मनुष्य की बुद्धि के बाहर है परन्तु जो कुछ शक्ति उस्की हम देखते है यद्यपि हमारे जान बहुत कुछ है तथापि उस अखिल बुद्धि और शक्ति का करोड़वा हिस्सा भी नहीं है जिस्से असख्य अदृश्य दूरवर्ती लोकालोक स्थापित और रक्षित है ॥

यह स्पष्ट विदित है कि ये दोनों प्रश्न मनुष्यों की बुद्धि के प्रति किये गये है और प्रथम प्रश्न का उत्तर हा मानकर द्वितीय प्रश्न हुआ है क्योंकि यदि प्रथम प्रश्न का उत्तर नहीं हुआ तो उस से भी कठिन यह दूसरा प्रश्न करना व्यर्थ क्या मूर्खता होगी। 'इन दो प्रश्नों का भिन्न भिन्न अभिप्राय है प्रथम प्रश्न ईश्वर के अस्ति या नास्ति के विषय मे है और दूसरा प्रश्न उस के गुण के बारे में है ,बुद्धिबल से प्रथम का निर्णय होता है परन्तु दूसरे का निर्णय पूर्णतया करने मे बुद्धि असमर्थ हो कर चकरा जाती है ॥

"प्रेरितों की क्रिया" नामक पुस्तक में हमे कोई भी ऐसा वाक्य स्मरण नही आता कि जिस में ईश्वर का निरूपण किया हो, वह समग्र लेख वादाविवाद पर है और उस में जो

क्रूस पर किसी मनुष्य के मरने का वृत्तान्त लिखा है वह किसी एकान्तवासी ईसाई महन्तजी की बुद्धि का उद्गार ही जान पड़ता है । केवल एक वाक्य जो ईश्वर की बुद्धि और शक्ति के विषय में है ,ओ मसीह द्वारा बेफ़िकरी के विषय में कहा गया है कि आकाश के पक्षियों को देखो क्योंकि वे न तो बोते है न लवते हैं न खत्तों में बटोरते है तिस पर भी तुम्हारा पिता जो स्वर्ग में है उन्हें खिलाता है . ... जङ्गली सोसन के फूलों को देखो वे क्योंकर बढ़ते है, वे परिश्रम नहीं करते और न वे सूत कातते है । यद्यपि यह अयूब की पुस्तक और गीतों की अपेक्षा छोटी बात कही है तथापि इसका भी अभिप्राय उन्हीं के नाईं है ॥

ईसाइयों का विश्वास तो हमें एक प्रकार से नास्तिकों का सा जान पड़ता है जो धर्म्म की टट्टी बनाकर ईश्वर के अस्तित्व मे सन्देह लगाता है, ये लोग ईश्वर छोड़ कर मनुष्य पर विश्वास करते है और वह मनुष्य भी ईश्वरता तथा मनुष्य को मिलकर बना है; ऐसा विश्वास तो नास्तिकता के इतने समीप है जैसे सन्ध्या समय का प्रकाश अन्धकार के समीप हो ॥

इस खीष्ट धर्म में मनुष्य और उस्के कर्ता के बीच मसीह का प्रवेश इस प्रकार होता है जैसे सूर्यग्रहण के समय पृथ्वी और सूर्य के बीच चन्द्रमा घुस जाता है और सूर्य के प्रकाश को व्यर्थ ही रोकताहै, वह विद्या जिसे विज्ञान शास्त्र * कहते हैं

* Science

औ जिसमें ज्योतिष मुख्य है ईश्वरकृत रचनाओं पर विशेष ध्यान देने से जाना गया है, इसी द्वारा ईश्वर की शक्ति और बुद्धि प्रगट होती है और यही विज्ञान शास्त्र जो सच पूछिये तो ईश्वर का वचन है। वाइबिल को ईश्वर का वचन कहना व्यर्थ है क्योंकि वह तो ईश्वरविषयक भिन्न २ मनुष्यों की बुद्धि और अनुमति का उल्लेख मात्र है उसमें ईश्वरकृत कार्यों से ईश्वर का निर्णय नहीं है परन्तु मनुष्यकृत लेखों से ईश्वर का निर्णय होता है अतएव सच्चे मार्ग से भुला कर इस भ्रान्त मार्ग पर लाने से ख्रीष्ट धर्म्म ने संसार में बहुत कुछ हानि पहुँचाई है ॥

कृश्चियन लोगों का यह कहना कि विज्ञान शास्त्र भी तो मनुष्यों की रचना है केवल धोखा देना मात्र है क्योंकि विज्ञान शास्त्र मानुषीय रचना नहीं हो सकता किन्तु उसका अभियोग मानवी रचना है प्रत्येक विज्ञान शास्त्र की जड़ कुछ ऐसे बँधे हुये नियमों पर स्थित है जो कभी नहीं बदलते और जिनसे समग्र चराचर संसार प्रचालित होता है; ये नियम मानुषीय रचना नहीं हो सकते हा मनुष्य उन नियमों का ज्ञाता हो सकता है।

जैसे पचाङ्ग को देखने से प्रत्येक मनुष्य कह सकता है कि अमुक दिन अमुक समय पर ग्रहण लगेगा और वह इस बात का शाक्षी भी है कि जैसा उसमें लिखा है ठीक वैसाही सदा होता आया है इससे यह विदित होता है कि आकाशस्थ ग्रहों

की गति के नियम से मनुष्य अभिज्ञ है परन्तु यदि कोई कहे कि ये नियम मानुषीय रचना हैं तो इससे बढ़ कर मूर्खता नहीं हो सकती; उसी प्रकार उन वैज्ञानिक नियमों को जिनके द्वारा गणित करके मनुष्य ग्रहण का समय इत्यादि बतला सकता है मानुपीय रचना कहना बडी भारी भूल है । किसी नित्य तथा निर्विकार वस्तु या नियम का कर्ता मनुष्य कभी नहीं हो सकता और वे वैज्ञानिक नियम जिनके द्वारा मनुष्य ऐसे काम करता है सदा नित्य और निर्विकार होने चाहिये और है, नही तो ग्रहण इत्यादि का ठीक समय कैसे बतलाया जा सकता है, ये वैज्ञानिक नियम जिनके द्वारा मनुष्य ग्रहण इत्यादि का पूर्व वृत्तान्त अथवा किसी और ग्रह की गति इत्यादि जान लेता है त्रिकोणमिति नामक विज्ञान का भाग है और यही नियम जब आकाशस्थ ग्रहों के विषय में लगाये जाते है तो ज्योतिषशास्त्र कहे जाते है अथच समुद्र विषयक प्रयोग होने से सामुद्रिक इत्यादि कहाते है — तात्पर्य्य यह कि ये नियम विज्ञानशास्त्र के प्राणभूत है और इनके प्रयोग का विस्तार पूर्णतया कोई नहीं जानता ॥

यदिचेत् कोई यह कहे कि मनुष्य त्रिकोण बना या खींच सकता है अतएव त्रिकोण मानुपीय रचना है — नहीं क्योंकि त्रिकोण जब खींचा जाता है तो मानुपीय रचना हो सकता है परन्तु खींचे जाने के पूर्व भी तो त्रिकोण की स्थिति है यह

लिखित त्रिकोण मानों उस नित्य त्रिकोण की आकृति मात्र है, यह तो हृदयस्थित भाव का आकार स्पष्ट करने के लिये नेत्रों के सन्मुख खींच खांच कर बनाया गया है ॥

हम यह नहीं कह सकते कि इस खींचे हुये त्रिकोण ने नियमस्थ प्राकृतिक त्रिकोण को भी रचा है, जैसे अनुमान कीजिये कि किसी अँधेरी कोठरी में बहुत सी कुर्सियां और टेबल रक्खें हैं परन्तु अन्धकार के कारण दीख नहीं पड़ते, यदि हम दीप की सहायता से उन वस्तुओं को देखें तो यह कदापि कोई नहीं कह सकता कि उस दीपकने उन कुर्सियों और टेबलों को बना दिया है; क्योंकि ये वस्तु तो पहिले ही से वहां हैं इसी प्रकार त्रिकोण के सब गुण किसी मनुष्य के त्रिकोण खींचने या जानने के पूर्व से स्थित है । जिस प्रकार मनुष्य का सम्बन्ध आकाशस्थ ग्रहों की रचना में नहीं है उसी प्रकार त्रिकोण इत्यादि के नित्य गुणों की रचना का भी वह कोई कारण नहीं है, इत्यादि ।

क्रिश्चियन धर्म की प्रायः सभी बातें विज्ञान शास्त्र और बुद्धि के विरुद्ध है देखिये उनके ईश्वर का कैसा विलक्षण न्याय है कि अपराधियों के बदले वह निरपराधियों को दण्ड देता है। आदम के अपराध के लिये उसे स्वयम् मनुष्य स्वरूप धारण करके क्रूस पर चढ़ना पड़ा । संसार की उत्पत्ति का विचित्र वर्णन, आदम और हव्वा की अनोखी कहानी, सर्प तथ

वर्जित फल का अनूठा वृत्तान्त, ईश्वर का मनुष्य रूप धारण करना, फिर उसका मरना इत्यादि सब बातें उनके धर्म की सचाई प्रगट करती हैं ! ! तीन को एक मानना तथाच एक को तीन जानना इन्हीं के गणितविद्या में है इनके धर्म की बातैं न कि केवल बुद्धि और विज्ञानशास्त्र के विरुद्ध है परन्तु वे सब ईश्वर की ईश्वरता में बट्टा लगानेवाली है । इस धर्म के रचयितागण इस बात को भली प्रकार जानते थे कि एक दिन ऐसा आवेगा कि जब विज्ञान की सहायता से उनके धर्म का पोल खुल जायगा अतएव वे लोग आरम्भ ही से विज्ञानशास्त्र के वैरी थे और इस शास्त्र के आविष्कर्ताओं की जान के ग्राहक बने रहते थे परन्तु इधर दो या तीन सौ बरस से उनकी दाल नहीं गलने पाती यहां लों कि १६१० ईस्वी में जब गेलिलियो नामक प्रसिद्ध विद्वान ने दूरदर्शक नामक यन्त्र का अविष्कार कर आकाशस्थ दूरवर्ती ग्रहों की गति का वृत्तान्त प्रगट किया तो ऐसे लाभकारी कार्य करने के लिये उन्होंने उसका सत्कार तो क्या करना था वरन कहने लगे कि यह सब झूठा जाल फसाद है, इसके पूर्व विजिलियस नामक विद्वान पृथ्वी को गोलाकार तथा सर्वत्र मनुष्यों के रहने के योग्य कहने के लिये जीता जला दिया गया परन्तु अब यह बात सत्य प्रतीत हुई या नहीं ? यदिचेत् न्यूटन या डेटकार्ट अबसे ५०० वर्ष पहले पैदा हुये होते और जैसी उन्हों ने विज्ञानशास्त्र की उन्नति

अपने समय में की उनके समय में करते तो कभी मारे गये होते, अथवा यदि प्रसिद्ध विद्वान फ्रेङ्कलिन ने विद्युत् की उत्पत्ति मेघों से बतलाई होती तो वह बिचारा भी इन्हीं दयालुओं के हाथ जला दिया गया होता। यह बात इतिहासों से विदित है कि मसीह के पूर्व संसार में विद्या का प्रचार अधिक था कृस्तानों के धर्म के साथ ही मूर्खता ने भी अपना अधिकार फैलाना आरम्भ किया ॥

यह केवल विज्ञान शास्त्र की वृद्धि के रुक जाने ही का कारण है कि कई सौ वर्ष पूर्व के विद्वानों का इतना आदर हम लोग करते है, यदिचेत् पूर्वप्राप्त विद्या की वृद्धि यथोचित रीति से बराबर होती जाती तो इस बीच के अवसर में न जानै कैसे २ भारी विद्वान् उत्पन्न होते कि जिस्से हम लोग उन पूर्वज विद्वानों को भूल जाते परन्तु नहीं इसी खीष्ट धर्म ने उन सब का सत्यानाश किया, यदि हम इस सोलहवीं शताब्दि रूपी पहाड़ी पर खड़े होकर दूरवर्ती पूर्वभूत विद्वानों तक देखै तो बीच में कई सौ वर्ष का ऐसा उजाड़ पटपर मैदान दिखाई पड़ता है कि जिस में एक भी विद्वान् रूपी वृक्ष की शीतल छाया नहीं दृष्टि पड़ती ॥

जब से मैने होश सम्हाला तभी से मुझे खीष्ट धर्मकी सत्यता पर संदेह होने लगा था और मुझे इस धर्म की बातें कुछ विलक्षण सी जान पड़ीं, मुझे भली प्रकार स्मरण है कि

जब मै सात या आठ वर्ष का था कि मेरे एक खीष्ट मतावलम्बी सम्बन्धी ने इस विषय पर एक व्याख्यान दिया था कि ईश्वर के पुत्र मसीह की मृत्यु से हम लोगों की मुक्ति पाप से हो सकती है, इस व्याख्यान के समाप्त होने पर मै एक उद्यान में गया और वहां सीढियों पर उतरते मुझे यह ध्यान हुआ कि यह कैसी विलक्षण बात है जो मैने आज सुनी, मुझे यह मसल याद आई कि 'अटकें पहाड़ से तोड़ें घर की सिलू', अर्थात् जब कृस्तानों के ईश्वर का शैतान से कोई बस न चला तो अपने प्रिय पुत्र को ही फांसी दे दिया, और मैने यह भी बिचारा कि यदि कोई मनुष्य अब ऐसा करता तो निस्सन्देह फांसी पाता तो फिर क्यों ये लोग ऐसी विलक्षण बात की शिक्षा देते है। यह विचार बालकों का सा लड़कखेलवाड़ न था परन्तु मुझे इसपर बड़ा शोच हुआ क्योंकि मै यह जानता था कि दयालु ईश्वर ऐसा कभी नहीं करेगा और न उस सर्व शक्तिमान् को कभी ऐसे काम करने की आवश्यकता पड़ सकती है; अब तक भी मेरा ऐसाही बिश्वास है और मै यह भी मानता हूं कि जो कोई धर्म बालकों के चित्त को भयङ्कर है वह कभी सच्चा धर्म नहीं हो सकता। जान पड़ता है कि खीष्ट मतावलम्बी लोग अपने पुत्रों को निज धर्म का वृत्तान्त कहते समय अवश्य लज्जित होते होंगे प्रायः वे उन्हे नीतिशिक्षा करते हैं और अपने पालक ईश्वरकी दयालुता का वृत्ता-

न्त सुनाते हैं क्योंकि क्रिस्तानों का यह किस्सा कि पिता ईश्वर ने अपने पुत्र को स्वयम् मार डाला अथवा लोगों से मरवा डाला कभी इस योग्य नहीं है कि पिता अपने पुत्र से कहे और यह कहना कि ऐसा कार्य संसार की भलाई और प्रसन्नता के लिये किया गया हैं इस किस्से को और भी बिगाड़ना है मानों नरहत्या से किसी प्रकार ससार की उन्नति हो सकती हैं और तिसपर यह कहना कि ये सब भेद बुद्धि के अगम्य हैं प्रत्यक्ष बहाना उसके छिपाव का है ॥

देखिये ये बातें सच्चे ईश्वर की बातों से कितनी दूर हैं सत्य धर्म में तो केवल एक ईश्वर हैं उस धर्म मे यही आज्ञा है कि यावत्सम्भव संसार को उत्तम शिक्षा देना और उसकी भलाई करना ॥

खीष्ट मत का यह विश्वास है कि जिस संसार में हम रहते हैं इस के अतिरिक्त और कोई दुनियां नहीं है तथाच संसार की उत्पत्ति, हौवा के वर्जित फल खाने का वृत्तान्त, और ईश्वर के पुत्र की मृत्यु का हाल सब विलक्षण बातें है, पर जब हम विज्ञानशास्त्र द्वारा देखते हैं कि उस परम शक्तिमान जगदीश्वर ने अनन्त संसार उत्पन्न किये हैं जिन्हें हम तारागण की नाईं आकाश में विस्तृत देखते है तो इस खीष्ट धर्म पर अविश्वास के साथ अत्यन्तही अश्रद्धा होती है ऐसी दो बातों का विश्वास चित्त में नहीं हो सकता और वह मनु-

ष्य जो कहता है कि मै दोनों पर विश्वास करता हू वास्तव में किसी पर भी विश्वास नहीं करता ॥

यद्यपि प्राचीनों को भी अनन्त ससार होने का विश्वास था परन्तु केवल ३ । ४ सौ वर्ष हुये कि इस पृथ्वी की लम्बाई चौड़ाई का वृत्तान्त ठीक २ विदित हुआ है अनेक विद्वान् पुरुष जहाजों पर आरूढ़ होकर समुद्र द्वारा इस समग्र पृथ्वी के चारों ओर वृत्ताकार घूम आये है । पृथ्वी का घेरा केवल ५५०२१ इङ्गिलिश माइल्ज है और अनुमान तीन वर्ष में इस के चारो ओर हम घूम आ सकते है * पहिले पहिल तो इस हिसाबसे यह पृथ्वी हम लोगों को बहुत बड़ी जान पड़ती है परन्तु जब हम इसका मिलान उस अनन्त आकाश के विस्तार से करते है कि जिस के सामने यह करोड़वे का करोड़वां हिस्सा भी नहीं है तो यह अत्यन्त छोटी जान पड़ती है उसके सामने हमारी यह पृथ्वी ठीक वैसी ही है जैसे हमारे इस समग्र पृथ्वी के सामने बालू का एक कण अथवा महासागर के सामने ओस की एक बूंद हो ॥

* यदि कोई जहाज घण्टे में ३ मील के हिसाब से चले तो वह अनुमान एक वर्ष में घूम आवे परन्तु वह ठीक वृत्ताकार में तो चलही नहीं सकता क्योंकि उसे समुद्र के काट छाट के अनुसार चलना पड़ेगा अतएव इतना विलम्ब होता है ॥

यदि हम अपने ध्यान को बहुत दूर बढ़ावें तो इस अनन्त आकाश का थोड़ा सा हाल मन में आता है । जब हम किसी कोठरी के आकार का ध्यान करते है तो हमारा ध्यान उस कोठरी के आकार के विषय में उस के दीवालों ही तक समाप्त हो जाता है परन्तु जब हम आंख उठा कर आकाश की ओर देखते और सोचते हैं तो किसी दीवार इत्यादि का होना मन में नहीं बैठता। 'यदिचेत् हम अपने ध्यान की समाप्ति करने के लिये ऐसी कोई दीवार मान भी लेवें तो उसी क्षण यह प्रश्न चित्त में उठता है कि उस दीवार के आगे फिर क्या है ? और इसी प्रकार उस दूसरी दीवार के आगे फिर क्या है इसी प्रकार विचारते विचारते बुद्धि और ज्ञान थक कर यही उत्तर देते है कि यह अनन्त है । अतएव उस सर्वशक्तिमान् जगदीश्वर को कुछ जगह की कमी न थी कि उसने इस संसार को इतना ही बड़ा बनाया इसके और ही कारण है ॥

यदि हम अपने इस पृथ्वी को भली प्रकार देखें तो इस के मिट्टी, पानीं, वायु में सर्वत्र जीव ही जीव भरे दिखाई पड़ते है जो बड़े से बड़े और छोटे से छोटे हैं यहां लों कि लाखों और करोड़ों जीव खुर्दबीन की सहायता से भी नहीं देखे जा सकते । प्रत्येक वृक्ष और प्रत्येक पत्ती न कि उन अनगिनित जन्तुओं का केवल निवासस्थान मात्र है परन्तु एक छो-

टी सी पत्ती हजारों ही जन्तु के जीवन पर्यन्त भोजन के लिये उपयुक्त है ॥

तो फिर जब हमारी इस छोटी सी पृथ्वी में कोई भी स्थान जीव जन्तु के निवास से खाली नहीं है तो यह कैसे मन में आ सकता है कि उस परम बुद्धिमान् ईश्वर ने यह आकाश जीव जन्तु से रहित रक्खा है, नहीं २ इस में लाखहां करोड़हां संसार पड़े है जो हमारी पृथ्वी से बहुत बड़े हैं और लाखों कोस की दूरी पर चक्कर लगाया करते है ॥

अब इतना विचार कर यदि हम थोड़ा और विचारें तो स्पष्ट जान पड़ेगा कि उस परम बुद्धिमान ईश्वर ने इस अनन्त आकाश में एक-ही पृथ्वी बहुत लम्बी चौड़ी न बना कर क्यों हजारों पृथ्वी और ग्रह रचे है जिन में से हमारी पृथ्वी भी एक है परन्तु इस का उत्तर देने के पूर्व हम यहां इस समग्र चराचर प्रपंच का वर्णन करते है नकि केवल उन लोगों के लिये जो इसे जानते ही है परन्तु उन के लिये जो इस से पूर्णतया अनभिज्ञ है ॥

इस चराचर प्रपंच के उस भाग में जिसे सूर्य-ब्रह्माण्ड (Solar System) कहते है (अर्थात् जिसमें हमारी पृथिवी भी है और जिस में सूर्य केन्द्र है) सूर्यके अतिरिक्त ६ और ग्रह (Planets) हैं और इन के अतिरिक्त और छोटे मोटे चन्द्रमा की नाई अनेक उपग्रह अपने २ ग्रह विशेष

के चारो ओर घूमा करते हैं जिन्हें हम दूरदर्शक यन्त्र के द्वारा जान सकते है। सूर्य तो केन्द्र है जिसके चारो ओर भिन्न २ दूरी पर वे छओ ग्रह वृत्ताकार घूमते है प्रत्येक ग्रह सूर्य के चारो ओर अपने नियत मार्ग पर घूमा करता है परन्तु उसी समय में वह अपनी कील पर भी फिरते लट्टू की नाईं कुछ झुक कर घूमता है। इसी प्रकार पृथ्वी के झुककर घूमने के कारण ऋतुओं का बदलना और रात दिन की बड़ाई छोटाई होती है यदिचेत् पृथ्वी खड़े लट्टू के नाई घूमती तो रात दिन बराबर होते अर्थात् १२ घंटे का दिन और बारह घंटे की रात होती और सब ऋतु भी साल भर में एकसा होते। प्रत्येक ग्रह के अपनी कील पर एक बार घूमने से रात और दिन होता है और सूर्य के चारो ओर घूम जाने से एक वर्ष होता है अतएव हमारी पृथ्वी सूर्य के चारो तरफ एक बार घूमने में ३६५ बेर अपनी कील पर घूम जाती है * इन छ ग्रहों को प्राचीन तथा आधुनिक लोग भी निम्नलिखित नाम से पुकारते है मर्क्यूरी (बुध) वीनस (शुक्र) हमारी यह पृथ्वी. मार्स (मङ्गल), जुपिटर (बृहस्पति), और सेटर्न (शनि)। ये और तारों से नेत्र को बड़े जान पड़ते हैं क्योंकि उन

* जो लोग यह विश्वास करते हैं कि प्रत्येक २४ घंटे में सूर्य पृथ्वी के चारो ओर घूमता है उनकी भूल उसी मल्लाह की नाई है जो नाव को छोड़कर घाट को गून से खींचता है।

तारोंकी अपेक्षा कई लाख कोस हमारी पृथ्वी के समीप है शुक्र वही ग्रह है जिसे यमारे पाठक भली प्रकार जानते हैं जो सूर्योदय के पूर्व और सूर्यास्त के पश्चात् अधिक से अधिक तीन घण्टे तक दिखलाई पड़ता।है जैसा पूर्व में कह चुके है कि सूर्य सब ग्रहों का केन्द्र है, जानना चाहिये कि बुध और ग्रहों की अपेक्षा सूर्य के अत्यन्त सपीप है वह ३४००००००मील सूर्य से दूर है यह सदा इतनी ही दूरी पर सूर्य के चारो ओर घूमता है दूसरा ग्रह शुक्र है यह सूर्य से ५७००००००० मील दूर है अतएव बुध के वृत्त से बडे वृत्त में सूर्य के चारो ओर घूमता है। तीसरा ग्रह हमारी पृथ्वी है जो ९५००.००० मील सूर्य से दूर है अतएव शुक्र से भी बड़े बृत्त में सूर्य के चारो ओर घूमता है । चतुर्थ ग्रह मङ्गल है यह सूर्य से १३४०००००० मील दूर है अतएव यह पृथ्वी की अपेक्षा बड़े वृत्त में सूर्य के चारो ओर घूमता है। पांचवा ग्रह बृहस्पति है यह सूर्य से ५५७०००००००० मील दूर है अतएव मङ्गल से भी बड़े वृत्त में सूर्य के चारो ओर घूमता है । छठवां ग्रह शनि है यह सूर्य से ७६३०००००० मील दूर है अतएव यह ऐसे वृत्त में घूमता है कि जिसके अन्दर सब ग्रहों के वृत्त आ जाते हैं ॥

तो अब देखना चाहिये कि केवल हमारे सूर्य ब्रह्माण्ड के लिये आकाश में कितना स्थान है शनि के वृत्त का व्यास ६९२-

६००००००मीलहै उसकेवृत्तपरिधिकानाप५०००००००००
मील है और इसके वृत्त का क्षेत्र फल २५०००००००००
× २५००००००००० वर्ग मील हुआ ✢ ॥

यह सब केवल एक सूर्यब्रह्माण्ड का वृत्तान्त हुआ इस के उपरान्त आकाश में करोड़हां कोस आगे जो गिनती और

✢ यदिचेत् कोई यह प्रश्न करे कि मनुष्य इन बातों को कैसे जानता है तो उसका यह सरल उत्तर है कि मनुष्य गणित द्वारा ग्रहण का हाल जान लेता है और शुक्रबेध का वृत्तान्त भी जान लेता है अर्थात् अपने गणित द्वारा यह बतला सकता है कि किस साल किस मिनिट पर शुक्र हमारे और सूर्य के बीच होकर जाता हुआ बड़े मटर के दाने की नाईं सूर्यबिम्ब पर दिखलाई पड़ेगा यह शुक्रबेध रूपी संयोग अनुमान १०० वर्ष में केवल दो बेर ८ वर्ष के आगे पीछे हो जाता है जिसका हाल पहले ही से गणित द्वारा मालूम हो जाता है। यह वृत्तान्त हजारों वर्ष पूर्व मनुष्य बतला सकता है और ठीक ज्यों का त्यों उतरता है। सो यदि मनुष्य इस सूर्यब्रह्माण्ड के वृत्तान्त तथाच ग्रहों की गति से अभिज्ञ न होता तो यह बातें कैसे बतला सकता। अतएव हम जानते हैं कि मनुष्य का एतद्विषयक ज्ञान ठीक है, हां इतने लम्बे चौड़े हिसाब में दो चार दस हजार मील का भेद किसी भूल में भूल नहीं गिना जा सकता ॥

बुद्धि के अगम्य है स्थिर ग्रह पाये जाते है, ये ग्रह स्थिर इसलिये कहलाते है कि ये इन पूर्व कथित छ ग्रहों की नाई सूर्य के चारो ओर नहीं घूमते । ये स्थिर ग्रह सदा एक दूसरे से नियत दूरी और एक ही स्थान पर हमारे सूर्य की नाईं स्थिर है । सम्भव है कि ये स्थिर ग्रह भी कोई सूर्य ही होंगे ओर जिस प्रकार हमारे सूर्य के चारो ओर हमारी पृथ्वी और षट् ग्रह घूमते है उसी प्रकार इनके चारो ओर भी अनेक ग्रह घूमते होंगे परन्तु वे इतनी दूर है कि हम उन्हें किसी प्रकार नहीं देख सकते। इसी प्रकार सोचने से जान पडता है कि इस अनन्त आकाश में पञ्चहां पञ्च ग्रह तारे ओर सूर्य पड़े है और जैसे हमारी पृथ्वी में कोई स्थान जीवजन्तु-रहित नहीं है उसी प्रकार यह अनन्त आकाश भी केवल शून्यही नहीं है। इस प्रकार इस चराचर ब्रह्माण्ड का कुछ वर्णन करके हम पूर्व-कथित विषय को वर्णन करते है कि क्यों उस परम बुद्धिमान् जगदीश्वर ने एकही बहुत बड़ा ससार न बनाकर अनेक ससार रचे है ॥

यह बात सदा स्मरण रखने के योग्य है कि हमारे विज्ञानशास्त्र की जड़ केवल इन ग्रहों के घूमने और उनके सूर्य के चारो ओर चलने ही पर जमी है, यदिचेत् यह सब सामान कि जिससे सब भिन्न २ ग्रह और संसार बने है एक ही में मिले होते तो यह सूर्य परिक्रमारूप गति न होती तो फिर-यह

विज्ञान भी कहां से होता और किस प्रकार मनुष्य का इतना आनन्द और सुख होता जिस्की जड़ केवल विज्ञानही है ॥

क्योंकि ईश्वर ने कोई चीज़ व्यर्थ नहीं बनाई है अतएव यह विश्वास होना चाहिये कि उसने इस चराचर ब्रह्माण्ड को इस प्रकार बनाने और स्थित करने में मनुष्य का लाभ समझा है ॥

अनेक ब्रह्माण्ड और संसार होने से केवल हमी लोगों को लाभ नहीं है परन्तु इतर ब्रह्माण्डनिवासियों को भी इसी प्रकार इससे लाभ होता है और उन्हें भी हमारी नाईं अपने विज्ञान बुद्धि बढ़ाने का अवसर प्राप्त होता है । जैसे हम उनके ग्रह को चलते देखते है उसी प्रकार वे हमारी पृथ्वी की भी गति देखते हैं, इसी प्रकार प्रत्येक ग्रह एक दूसरे को चलता देखता है सो अपने विज्ञान और बुद्धि बढ़ाने का अवसर उनके हाथ में है ॥

ज्यों २ हम इस चराचर ब्रह्माण्ड के विस्तार और रचना को विचारते है त्यों २ उस सर्वशक्तिमान् जगदीश्वर की बुद्धिमत्ता और कृपा अधिक २ पाते है । ऐसी अवस्था में अब कहिये हम लोग खीष्ट धर्म को क्या कहैं जिसके मत में कूपमण्डूक की नाईं जमा कुल २५००० मील घेरे की केवल यही एक पृथ्वी है—यह पृथ्वी तो ऐसी छोटी है कि यदि कोई मनुष्य वृत्ताकार चल सकै तो ३६ मील रोज़ के हिसाब से

केवल दो वर्ष के अन्दरही समाप्त हो जाय । खेद का विषय है कि क्रिस्तानों के ईश्वर की शक्ति और बुद्धि बहुत ही थोड़ी जान पड़ती है ।

अब विचारिये कि यह कैसे सम्भव हो सकता है कि जिस जगदीश्वर के यहां पद्महां पद्म संसार एक से एक पड़े हैं वह और सभों को छोड़कर हमारे इस तुच्छ संसार में मरने के लिये आये क्योंकि किसी पुरुष और किसी स्त्री ने इन क्रिस्तानों के मतानुसार कोई वर्जित फल खा लिया था; तो क्या हम यह भी विश्वास कर लेवें कि इन पद्महा पद्म संसार के प्रत्येक पृथ्वी में एक हौवा, एक वर्जित फल, एक सर्प और एक मसीह हुआ है ? ऐसी अवस्था में तो उस बिचारे मनुष्य की क्या दशा होगी जिसे ये लोग ईश्वर का पुत्र या स्वयं ईश्वर बतलाते है क्योंकि उसे तो एक पृथ्वी से दूसरी पृथ्वी और एक ब्रह्माण्ड से दूसरे ब्रह्माण्ड में जनमते ही मरते बीतेगा और एक क्षण भी जीवित अवस्था में न रहेगा क्योंकि इसके अतिरिक्त तो उसे दूसरा कामही न ठहरा ॥

ऐसे २ प्रत्यक्ष प्रमाणों के आंख में धूल डाल कर यह विल्क्षण खीष्ट धर्म उत्पन्न हो गया है जिस्की ऐसी अपूर्व रचना है कि मानो उस्की एक २ बात बुद्धि और सत्यता के पीछे लाठी लेकर खड़ी है कि जिस्में सत्त्यता का लेश भी उनके अलौकिक धर्म से न छू जाय । जिन लोगों ने खीष्ट धर्म की

शिक्षा पहिले पहिल आरम्भ की वे कदाचित् यह कहेंगे कि तत्समय के प्रचलित महा अन्धकार के धर्म से तो यह बहुत अच्छा था । हां यह कपटसम्बन्धी शिक्षा प्रथम शिक्षक से दूसरे शिक्षक के पास आई दूसरे से तीसरे के पास आई योंही होते हवाते वे लोग इस कपटशिक्षा की आदि उत्पत्ति को तो भूल गये और उसे सच मानने लग गये, यहा लों कि जिन की रोटी एतद्विषयक शिक्षा से ही चलती थी उन्होंने तो इस कपटमय शिक्षा के प्रचार में किसी प्रकार कसर न की ।

यदिचेत् ऐसा विश्वास साधारण लोगों को हो भी तो भला इस प्रश्न का वे क्या उत्तर रखते है कि क्यों वे लोग विज्ञान शास्त्र के उन्नतिकारकों के मार्ग में कंटक होकर पड़ते थे ? और क्यों सदा नवीन वातों के आविष्कार में वाधा दिया करते थे ? ऐसे आचरण से स्पष्ट विदित है कि वे लोग इस वात से भली प्रकार अभिज्ञ थे कि एक न एक दिन विज्ञानशास्त्र की उन्नति से उनके पोले धर्म का मर्म खुल जायगा ।

इस प्रकार चराचर ब्रह्माण्ड रूपी ईश्वर के सच्चे वचन और मनुष्यकल्पित किसी पुस्तकरूपि ईसाइकथित ईश्वर-वचन में भेद दिखला कर हम उन मुख्य मुख्य वातों का वर्णन करते है जिसे सुना सुना कर एतत्सम्प्रदाय वाले लोगों को अपने जाल में फँसाया चाहते है ॥

ये तीनों बातै गुप्तभेद वाक्सिद्धि † और भविष्यवाणी है प्रथम दोनों बातै तो सत्य धर्म में होई नहीं सकतीं तीसरी बात अत्यन्तही सन्देहपूर्ण है ।

गुप्तभेद के बारे में तो हम जो कुछ देखते सुनते है सभी एक प्रकार गुप्तभेद। है स्वयम् हमारा जीवन भी एक गुप्तभेद है और फूल पत्ते लता वृक्षादि भी तो गुप्तभेद ही है, हम नही जानते और नहीं कह सकते कि गुठली को पृथ्वी में बो देने से क्यों और कैसे आम का वृक्ष हो जाता है ? । हम यह भी नहीं जानते कि बोये हुये बीज किस प्रकार फल फूल कर इस भांति एक २ के सौ सौ और हज़ार हज़ार देते हैं ।

ये वृत्तान्त यदि कार्यकर्ता कारण से भिन्न समझा जाय तो कुछ भी गुप्त नहीं है क्योंकि यह तो हम देखतेही है। उसके उपकरण भी हमे मालूम है क्योंकि यह तो बीज को उपयुक्त पृथ्वी में केवल बो देना ही ठहरा अतएव इस विषय में जितना जानना हमको आवश्यक है हम जानते है, और इस कार्य का वह भाग जो नही जानते और जिसके जानने पर भी हम कुछ नहीं कर सकते है ईश्वर ने स्वयं अपने ही हाथ में रक्खा है * और वह इतना कार्य हमारे लिये कर देता है अतएव इस गुप्तभेद को न जानना ही हमारे लिये

† Miracle

* सत्य के वैरी झूठ, छल, कपट इत्यादि अन्धकारमय ।

अच्छा है क्योंकि यह कार्य भी यदि ईश्वर ने हमारे सुपुर्द किया होता तो बड़ी दिक्कत होती क्योंकि हम इसका भेद जानने पर भी इस कार्य्य को नहीं कर सकते ॥

यद्यपि इस अभिप्राय से सभी उद्भूत वस्तुओं में गुप्त भेद है परन्तु जैसे प्रकाश में अन्धकार की अवस्थिति नहीं हो सकती उसी प्रकार नीतिशिक्षा में भी कोई गुप्तभेद नहीं हो सकता।

जिस ईश्वर पर हम विश्वास करते है वह सत्यमार्ग का ईश्वर है कुछ गुप्तभेद और छिपावे का ईश्वर नही। गुप्तभेद तो एक प्रकार सत्य का शत्रु है, सत्य कभी अन्धकार में नहीं छिपता और यदिचेत् कुछ समय के लिये वह अन्धकाराच्छादित हो भी जाय तो यह अन्धकार कुछ सत्यप्रयुक्त नहीं है किन्तु सत्य के वैरी का है * अतएव धर्म का सम्बन्ध ईश्वरविषयक विश्वास और नीतिशिक्षा होने के कारण गुप्तभेद और अन्धकार से कुछ नहीं हो सकता। ईश्वर की सेवा किसी मनुष्य की सेवा की नाई नहीं किन्तु उस्की विलक्षण सेवा है, क्योंकि जैसे हम किसी मनुष्य की सेवा प्रत्यक्ष में कर सकते है वैसे उस्की सेवा नही कर सकते, उस्की सेवा करना यही है कि हम उसके रचे हुये चराचर के सुख और उन्नति के कारण होवें। यह बात संसार परित्याग करके एकान्तवासी हो कर केवल निज उन्नत्यभिलाषी होने से कभी नहीं हो सकती, सत्य धर्म में मनुष्य के लिये कोई छिपाव होना उचित नहीं है; धर्म कोई व्यापार

नहीं कि इसमें मार पेंच काट छांट और भेद की बातै हों, अतएव प्रत्यक्ष है कि इन खीष्टधर्मरचयिताओं ने जब निज अभिप्राय की सिद्धि के लिये अनेक बुद्धि विपरीत बातै प्रचलित कीं तो उनके छिपाव के लिये एक गुप्तभेद बना रक्खा वा जहॉ किसी ने शका की और जहां कोई बात समझ में न आई गुप्तभेद रूपी महामन्त्र सुनाकर जी छुड़ाया ॥

Miracle गुप्तभेद से भी कुछ चढ़ा बढ़ा है, गुप्तभेद तो चित्त को भ्रम में डालता है परन्तु Miracle सर्व-ज्ञानेन्द्रिय और बुद्धि को भाड़ में झोंकता है ॥

परन्तु इस विषय पर लिखने के पूर्व यह जानना अत्यन्त आवश्यक है कि Miracle शब्द का क्या अभिप्राय है। जैसे यह गुप्तभेद है उसी प्रकार सब कुछ Miracle भी है। हाथी यद्यपि बहुत बड़ा जन्तु है परन्तु चींटी से बढ़ कर Miracle नहीं है और न पर्वत परमाणु से बढ़ कर आश्चर्यमय है, सर्व शक्तिमान् जगदीश्वर के सामने हाथी या पर्वत के बनाने में चींटी या परमाणु से कुछ अधिक परिश्रम नहीं है उसी प्रकार उसके लिये एक ससार और पद्महा झप संसार का बनाना बराबर है, अतएव एक प्रकार से तो सभी वस्तु Miracle है। और दूसरी प्रकार से Miracle कोई चीज़ नहीं है, हा हमारी समझ और शक्ति के सामने तो वह Miracle है परन्तु उस कर्ता के सामने वह कुछ भी नहीं है परन्तु इतना कहने से

Miracle* शब्द का ठीक अभिप्राय नहीं खुलता अतएव हम इस विषय में कुछ अधिक कहेंगे ॥

मनुष्यजाति ने कुछ नियम ऐसे विचार रक्खे हैं जिनके अनुसार प्रकृति का कार्य्य होता है परन्तु Miracle इनकी कृति और प्रतिफल के विरुद्ध होता है परन्तु जब लों हम उन सब नियमों के विस्तार से भली प्रकार अभिज्ञ नहीं हैं तब लों ठीक नहीं कह सकते कि जो बात हमारे जान में पहिले अत्यन्त आश्चर्य्यमय दीख पड़ती है वह वस्तुतः उन नियमों के अन्तर्गत वहिर्गत या विरुद्ध है । किसी जीवित पुरुष का कई मील पर्यन्त हवा में उड़ते हुये चले जाना निस्सन्देह Miracle जान पड़ता यदि हम यह न जानते कि साधारण वायु से भी कोई वायुविशेष अत्यन्त हलकी उत्पन्न हो सकती है और उसे गुब्बारे में बन्द करने से वह गुब्बारा बहुत दूर तक ऊँचे चढ़ जाता है, इसी प्रकार मनुष्य के शरीर से चकमक पत्थर की नाईं अग्निकण का निकलना भी Miracle होता यदि हम विद्युत् और मगनातीस के गुणों से अभिज्ञ न होते । इसी प्रकार जो लोग इन बातों के भेद नहीं है उनके सामने विज्ञानशास्त्र की बहुत सी बातें Miracle ही होंगी । किसी मृतवत् मनुष्य का पुनर्जीवित होना भी Miracle ही जान पड़ता यदि वह यह विषय हम न जानते कि प्राण वायु निकलने के पूर्व कहीं रुक भी जाती है जैसे पानी के डूबे हुये बाजे २ मनुष्य यद्यपि

देखने में मरे जान पड़ते है तथापि कुछ काल के अनन्तर जी उठते है ॥

इसी प्रकार हस्तलाघव और आपस की मिलावट से ऐसी २ आश्चर्य की बातें होती हैं जो देखने में Miracle ही जान पडती है परन्तु मालूम होने पर वे अत्यन्त सारहीन है; इसके अतिरिक्त यन्त्रों द्वारा भी अनेक प्रकार नेत्रों को धोखा होता है, फ्रांस, अमेरिका, इङ्गलैण्ड भारतवर्ष इत्यादि प्रदेशों में ऐसे २ बाज़ीगर हो गये और वर्तमान भी है जो अपने बुद्धिमत्ता के खेलों से Miracle के भी कान काटते है । सो जब कि हम प्रकृति और मनुष्य के बुद्धिविस्तार से पूर्णतया अभिज्ञ नहीं है तो कभी नहीं कह सकते कि जो बात देखने में Miracle जान पड़ती है वे वस्तुतः प्रकृति के गुणों के अन्तर्गत हैं या नहीं, प्रायः इन्हें देख कर मनुष्य भूल कर अचम्भे में आ जाता है ।

सो जब कि नेत्रों को इस प्रकार धोखा हो सकता है कि असत्य चीजै सत्य सी प्रतीत होती है तो भला क्या कभी मन में आता है कि सर्वशक्तिमान् जगदीश्वर किसी बात की सत्यता प्रमाणित करने के लिये इन Miracle रूपी असत्य बातों का आश्रय ग्रहण करेगा कि जिस काम के करनेवाले को लोग मदारी वा धोखेबाज़ समझें और जिसके वृत्तान्त कहनेवाले को मिथ्यावादी अनुमान करै ॥

किसी बात पर, विशेषतः धर्मसम्बन्धी विषय पर विश्वास

दिलाने के लिये Miracle का प्रमाण देना अत्यन्तही असङ्गत है क्योंकि प्रथम तो विश्वास दिलाने के लिये Miracle दिखलाने से ही प्रतीत होता है कि जिस वस्तु पर विश्वास दिलाया जाता है वह स्वयं सारभूत और विश्वास योग्य नहीं है, दूसरे Miracle दिखलाना मानो सर्वशक्तिमान जगदीश्वर को मदारी की नाईं तमाशा दिखलाना और अपमानित करना है कि लोग उसके खेल को देखकर आश्चर्यान्वित हों, फिर यह Miracle एक विलक्षण प्रकार का प्रमाण है क्योंकि इस्की सत्यता तो दूसरों के कहने पर है जो अपने तईं उसका साक्षीभूत बतलाता है अतएव उस्का सत्य वा मिथ्या होना दोनों बराबर है ॥

मानों कि यदि मै यह कहूं कि मैने जब यह ग्रन्थ लिखना आरम्भ किया तो वायुमण्डल में से एक हाथ ने निकल कर मेरे हाथ से लेखनी लेकर इन सब बातो को स्वयं लिख डाला, भला क्या मेरा कोई विश्वास करेगा ? कदापि नहीं। यदि यह वृत्तान्त सत्य भी होता तो क्या कभी किसी प्रकार उनको विश्वास होता ? कदापि नहीं। तो जब सत्य और झूठ Miracle की एक ही दशा है तो हम कैसे विश्वास करें कि परम बुद्धिमान् जगदीश्वर ऐसे उपकरण से काम लेवे कि जिस्मे उसके सत्य होने पर भी इष्टसिद्धि नहीं हो सकती ॥

तो जब Miracle की स्थिति के लिये प्रकृति को अनेक नियमोल्लंघन करने पड़ते हैं और जब कोई मनुष्य अपने तईं

Miracle का साक्षीभूत वर्णन करता है तो सहसा एक प्रश्न चित्त में खड़ा होता है (परन्तु इसका उत्तर भी आपही हो जाता है) कि प्रकृति का नियमोल्लंघन करना सम्भव है या उस मनुष्य का मिथ्या कहना ? विशेष हमने अपनी जीवित अवस्था में प्रकृति का नियमोल्लघन कभी नहीं देखा है परन्तु हज़ारों मनुष्यों को झूठ बोलते देखा सुना है अतएव Miracle की सत्यता पर लाख में एक विस्वा भी विश्वास नहीं जमता ॥

देखो ह्वेल मछली का यूनस को निगल जाना आश्चर्य सा ज्ञान पड़ता है। यद्यपि ह्वेल ऐसे सैकड़ों यूनस को निगल जा सकती है, परन्तु यदिचेत् यूनस ह्वेल मछली को निगल गया होता तो यह अलबत्ते Miracle ज्ञान पड़ता। ऐसी अवस्था में जैसे और सब Miracle के सन्देह का उत्तर हो जाता है वैसेही इसका भी उत्तर होता है कि इस विषय का होना सत्य है या इस व्यर्थ बात का प्रचारक मिथ्यावादी सा आचरण करता है।

यदिचेत् यूनस ने ह्वेल मछली को निगल कर और उसे अपने पेट में डाल नीनवे नगर में जाकर वहां के निवासियों को विश्वास दिलाने के लिये उतना लम्बा चौड़ा ह्वेल उगल दिया होता तो वहांवाले उसे भविष्यवक्ता समझते या साक्षात् यमराज या कोई महापिशाच ? अथवा यदि उस ह्वेलही

ने यूनस को इस प्रकार पेट में डाल नीनवा—नगरनिवासियों के सन्मुख उगला होता तो क्या उस ह्वेल को महापिशाच और यूनस को उसका गण न समझते ? ।

नये नियम में एक विलक्षण Miracle का वर्णन है; सो यह कि एक समय शैतान मसीह को लेकर उड़ा और एक ऊँचे पर्वत की चोटी पर ले गया, और वहां से फिर किसी मन्दिर के ऊँचे शिखर पर ले जाकर उसे समग्र संसार दिखला कर यह कहा कि यदि तू हमारी पूजा करे तो यह समग्र संसार का राज्य तुझे दे दें; भला उस समय उसने अमेरिका का पता क्यों नहीं पाया ? इसका उत्तर क्रिश्चियन लोग क्या देते है ? ।

हम मसीह को एक नीतिज्ञाता पुरुष मानते हैं अतएव विश्वास नहीं होता कि यह विलक्षण Miracle का किस्सा स्वयं उसका कहा हुआ हो, फिर यह भी कुछ समझ नहीं पड़ता कि इस किस्से से क्रिस्तानों के धर्म में कौन सा लाभ पहुँचता है; ऐसी २ व्यर्थ की बातों से तो कितने भोले भालों को शैतान पर भी अधिक विश्वास हो जाना सम्भव है ॥

जो कुछ हो यह पूर्णतया सिद्ध है कि प्रथम तो Miracle का होना असङ्गत और व्यर्थ है, दूसरे उसके कहनेवाले का कोई विश्वास नहीं करता । यदिचेत् वे सत्य भी होते तो भी

व्यर्थही होते क्योंकि प्राकृतिक नियमों को तोड़ कर इनकी स्थिति का होना कदापि कोई विश्वास नहीं कर सकता। एक बात यह भी है कि Miracle एक ऐसी बात है जिस्का होना किसी विशेष समय में कहा जाता है और जिसके साक्षी एकही दो या दस बीस मनुष्य उस समय हों परन्तु इसके उपरान्त तो फिर मनुष्य के कथनमात्रही पर उस Miracle के होने अथवा न होने का विश्वास रह गया, अतएव धर्मसम्बन्धी बातों में Miracle की स्थिति उस धर्म को सत्य बनाने की अपेक्षा झूठा कर देती है, इतना तो गुप्तवार्ता और Miracle के विषय में हुआ अब भविष्यवाणी का हाल सुनिये कि—

जैसे गुप्तभेद भूत तथा वर्तमान अवस्था के लिये है वैसेही भविष्यवाणी भविष्य समय के लिये झूठा प्रपञ्च है, ये कल्पित भविष्यवक्ता एक प्रकार के इतिहासवेत्ता हैं यदिचेत् अचानक उनका कथन किसी प्रकार सत्य हो कर अन्धे के हाथ बटेर लग गई तो वाह वाह नहीं तो यूनस और निनवे के वृत्तान्त के नाईं यह कह दिया कि ईश्वर ने पश्चात्ताप करके अपना चित्त बदल लिया है, भई वाह ! ये खीष्ट लोग किस प्रकार अपने ईश्वर विचारे का उपहास कराते फिरते हैं !!!

इस ग्रन्थ के पूर्वभाग में हम यह वर्णन कर चुके हैं कि प्राफेट (भविष्यवक्ता) शब्द से एक प्रकार के गायकों का अभिप्राय समझा जाता है, परन्तु उनके कथन प्रायः ऐसे अ-

र्थसून्य होते थे कि उस्से यहूदीलोग घुमा फिराकर अपनी इ-च्छानुसार अर्थ निकाल लिया करते थे यहां लों कि जो बात बाइबिल में समझ न पड़ी या किसी सनकी का लेख सा जान पड़ा तो उसे भविष्यवाणी बतला दिया ! ! !

यदिचेत् भविष्यवक्ता से उस मनुष्य का अभिप्राय समझा जाय कि जिसके द्वारा होनहार बातों का हाल ईश्वर पहिलेही कह देता थां तो अब यह प्रश्न है कि ऐसे मनुष्य सचमुच थे या नहीं ? यदि थे तो यह आवश्यक है कि जिन शब्दों में भविष्यवाणी कही गई है वे समझने के योग्य हों नकि ऐसे शब्दों में हो कि जिसका अर्थ कुछ ठीक बुद्धि में न बैठता हो या जिन्हें घुमा फिरा कर इच्छानुसार अनेक अर्थ निकाल लिये जांय और चाहे जिस होनहार विषय पर वह भविष्यवाणी घटा ली जाय, यदिचेत् ऐसी बातों को भविष्यवाणी समझा जाय तो यह उस सर्वशक्तिमान् जगदीश्वर का उपहास करना है मानों वह मनुष्यों को धोखा देने के लिये उनसे ठट्ठा करता है। खेद का विषय है कि बाइबिल की सभी बातें जो भवि-ष्यवाणी कहलाती हैं ऐसी ही हैं ॥

भविष्यवाणी की वही अवस्था है जैसे हम Miracle की कह आये हैं अर्थात् इसके सत्य होने पर भी अभिप्राय-सिद्धि नहीं हो सकती क्योंकि जिनके प्रति वह भविष्यवाणी कही जायगी उन्हें इस बात का सन्देह ही बना रहेगा कि

वह मनुष्य यथार्थ भविष्यवक्ता है वा असत्यवादी है अथवा वह भविष्यत् विषय उसे यथार्थ ही ईश्वर द्वारा विदित हुआ है या उसने स्वयं अपने मन से बना लिया है और यदि उसका कहा विषय सत्यही हो जैसे और अनेक बातें रात दिन हुआ ही करती हैं वैसे यह भी हो तो भी यह सन्देह बनाही रहता है कि उसने यह बात अटकल से कह दिया या उसे यथार्थ ही उसका ज्ञान था, तो ऐसी अवस्था में भविष्यवक्ता का भी होना व्यर्थ और निष्प्रयोजन ही है तात्पर्य यह कि गुप्तवार्ता चमत्कारिक घटना और भविष्यवाणी तीनों की सत्यधर्म में कुछ आवश्यकता नहीं है, जो सच पूछिये तो इन्हीं सबों ने संसार में इतने बखेड़िये उत्पन्न कर दिये और धर्म को एक व्यापार बना दिया ॥

अब हम जो कुछ पूर्व में कह चुके हैं सभों का संक्षेपतः वर्णन कर जाते है क्योंकि ग्रन्थ बहुत बढ़ा जाता है।

प्रथम—ईश्वर का वचन किसी छापे या हाथ की लिखी पुस्तक द्वारा नहीं हो सकता, उसके कारण हम पूर्वही लिख चुके है उन कारणों में से कुछ ये है; समग्र संसार में एक भाषा का न होना, समयानुसार भाषा का बदलना, अनुवाद इत्यादि दोषों के कारण भ्रम होना, समय के फेरफार से ऐसे वचन का पूर्णतया नष्ट हो जाना, मनुष्यों द्वारा उसका कमती बढ़ती और उसमें काट छांट होना। दूसरे यह प्रकृतिरचना जो हम देखते है

ईश्वर का सत्य वचन है जिसमें हमें कोई धोखा नहीं दे सकत
इससे उस सर्वशक्तिमान् जगदीश्वर की शक्ति, बुद्धि, कृप
और दयालुता प्रगट होती है ॥

मनुष्य का धर्म इसी में है कि वह ईश्वररचित संसा
को देख कर उस्से भलाई और दूसरों पर कृपा करना सीखे
हम नित्य ईश्वर की कृपा मनुष्यों के प्रति देखते है सो यही
सर्वसाधारण के प्रति मानो शिक्षा है कि हमें दूसरों के साथ
कैसा बर्ताव करना चाहिये जिस्से यह स्पष्ट विदित है कि पर-
स्पर वैर विरोध द्रोह इत्यादि करना और जन्तुओं पर निर्दयता
करना उस्की नीतिशिक्षा को तोड़ना है ॥

यहां हम इस विषय पर कुछ नहीं लिखते कि इस जीवन
के उपरान्त मनुष्य की क्या दशा होगी, हम इस विश्वास से
सन्तुष्ट है कि जिस शक्ति ने हमको यह शरीर और जीवन
दिया है वह अपनी इच्छानुसार चाहे जिस अवस्था में रख स-
कता है जिसमें इस शरीर का रहना आवश्यक नहीं है और
मुझे यह विश्वास है कि जैसे इस मानुषिक शरीर धारण करने के
पूर्व हमारी स्थिति थी वैसेही इस जीवन के उपरान्त भी कोई
न कोई स्थिति अवश्य रहेगी ॥

यह निश्चित है कि संसार के समग्र जाति और सब मत-
वालों का मत इस विषय पर मिलता है कि सभी एक ईश्वर
पर विश्वास करते है; झगड़े की जगह केवल यही है जो इस

विश्वास से पीछे बनी है अतएव यदिचेत् कभी कोई धर्म या विश्वास समग्र संसार में फैलेगा तो उसमें कोई नवीन बात न होगी परन्तु इन्हीं सब व्यर्थ की बातों को काट छांट कर एक ईश्वर पर विश्वास जमेगा, अतएव सब लोगों को उचित है कि इस ख्रीष्ट धर्म सरीखे व्यर्थ बकवाद को छोड़ कर उस सर्वशक्तिमान् जगदीश्वर पर स्नेह और विश्वास रख कर उसी का पूजन और मान यथोचित रीति से करै ॥

इति ।

भारतजीवन यन्त्रालय की संक्षेप सूची

उषाहरण नाटक

कलिकौतुक नाटक

क्याइसीको कहते

कृष्णाकुमा नं.

जयनार नाम.

ठगी की

धनंजयविजय व्यायोग

नाटक (नाटक बनाने की रीति)

वृद्धावस्था विवाह नाटक

बाल्य विवाह नाटक

ठगवृत्तान्तमाला चारो भाग पूरा

पद्मावती नाटक

प्रेमसुन्दर नाटक

भारतोद्धारक नाटक

महाअंधेर नगरी नाटक

मुद्राराक्षस नाटक

सतीनाटक । ॥) दीपनिर्वाण

बाबू रामकृष्ण वर्मा
भारतजीवन प्रेस बनारस ।

ईसाईमतखंडन।

द्वितीय भाग।

अर्थात्

जिस में ख्रीष्टमतावलम्बियों के धर्म्म की यथार्थ दशा झलकाई गई है, और जिसे बाबू रामकृष्णवर्म्मा सम्पादक भारत-जीवन ने उनलोगों के हित के लिये जो इस धर्म के पूर्णतया भेदू नहीं हैं प्रकाश किया है।

यह पुस्तक बाबू रामकृष्णवर्म्मा सम्पादक भारतजीवन के पास बनारस में मिलेगी।

काशी।

राजराजेश्वरी प्रेस में छापा गया।

सन् १८८४ ई०।

प्रथम बार १०००] [मूल्य।)

दूसरा खंड ।

श्रीमङ्गलमूर्तये नमः

—*O*—

श्रीगणेशाय नमः ।

खीष्टमतावलम्बी प्रायः कहा करते है कि बाइबिल से सब का प्रमाण हो सकता है परन्तु बाइबिल का प्रमाण तो तब माना जा सकता है कि जब पहिले बाइबिलही की सत्यता प्रमाणित हो ले, क्योंकि यदि बाइबिलही असत्य ठहरी या उसके सत्यता में सन्देह हुआ तो वह दूसरे की सत्यता प्रमाणित करने में प्रमाण नही मानी जा सकती ।

बाइबिल के टिप्पणीकारों तथा समग्र खीष्ट पाँधे पुरोहितों का यह काम है कि वे संसार में बाइबिल को सत्यता की खानि तथा ईश्वर का वचन बतलाते है, वे लोग बाइबिल के भिन्न २ आयतों का भिन्न २ प्रकार का अर्थ लगाकर आपस में लड़ते झगड़ते हैं, एक कहता है कि अमुक आयत का यह अर्थ है दूसरा ठीक उसके विपरीत अर्थ करता है और तीसरा कहता है कि नहीं ये दोनों भ्रान्त है जो मै कहता हूं सोई सत्य है:—भई वाह इसी को बाइबिल समझना कहते है !!!

इस ग्रंथ के प्रथम भाग के लेख पर जितने उत्तर मैंने देखे हैं वे सब पाधोंहीं के लिखे हुये हैं। ये पवित्र लोग भी अपने पूर्व पुरुषों की नाईं परस्पर एक दूसरे को फाड़े खाते हैं, और तिस पर बाइबिल समझने का दावा करते हैं—सभी भिन्न २ अर्थ बूझते हैं, परन्तु सभी सबसे उत्तम समझते हैं; सो उनका इतना छोड किसी में सहमत नहीं होता कि "टामसपेन" बाइबिल का अर्थ नहीं समझता ! ! !

अब इस व्यर्थ के झगड़ों में सिर दुखाने की अपेक्षा इन विचारे पांधों को जानना चाहिये कि सबके प्रथम यह आवश्यक है कि बाइबिल को ईश्वर का वचन कहने में कोई यथोचित और दृढ प्रमाण है या नहीं ?

उस ग्रन्थ के लेखानुसार कितनेही ऐसे कार्य्य "ईश्वर की आज्ञा" से किये गये हैं जिन्हें पढ़ या सुन कर रोंगटे खड़े हो जाते हैं और उन कार्य्यों पर मनुष्यता तथा दया न होने के कारण ऐसी घृणा होती है जैसे चंगेजखां, अल्लाउद्दीन, या नादिरशाह के कृत्यों पर ग्लानि होती है। जब हम उन पुस्तकों में यह पढते हैं जो मूसा और यशुआ की लिखित प्रसिद्ध हैं कि इसरायल लोग चोरी से उन समग्र जातियों पर टूटे जिन्होंने उनका कुछ भी अपराध न किया था और "उन्होंने उन सबों को तलवार से काट डाला, न बच्चों और न बुड्ढों को छोड़ा, उन्होंने पुरुष, स्त्री और बालकों को एक दम नाश

कर डाला यहां लों कि एक भी जीवित व्यक्ति को जीवित न छोड़ाः—यही बातें अत्यन्त उद्दण्डता के साथ बार २ उस ग्रंथ में लिखी गई है; भला क्या हम मान लें कि ये सब बातें यथार्थ में सत्य हैं? क्या हम यह विश्वास कर लें कि उस जगदुत्पत्तिकारक दयालु ईश्वर ने ऐसे कामों के करने की आज्ञा दी थी? । और क्या हम यह विश्वास कर लें कि जिन पुस्तकों में ऐसी २ व्यर्थ बातें लिखी है वे ईश्वर के वचन है और उसकी इच्छानुसार रचे गये है? कभी नहीं कभी नहीं ॥

लोगों का यह विश्वास, कि किसी किस्से की प्राचीनता उसकी सत्यता का प्रमाण है पूर्णतया भ्रम है, प्रत्युत यह तो उसका और भी मिथ्यात्व प्रतिपादक अर्थात् झूठ बनानेवाला है क्योंकि जो इतिहास जितना पुराना होता है उतनी उसमें किस्से कहानी की बातें पाई जाती हैं । प्रत्येक जाति विशेषतः यहूदी लोगों की उत्पत्ति किस्से कहानियोंही से आरम्भ है । यह बात अत्यन्त विचारणीय और शोचनीय है कि उन्होंने अपने निर्दय प्रकृतिकृत अपराध और हत्याओं को ईश्वर आज्ञाकृत बतला दिया है । बाइबिल से विदित है कि ये कृत्य स्वयम् ईश्वर की आज्ञा से किये गये ! ! ! अतएव बाइबिल की सत्यता पर विश्वास करने से हमे ईश्वर की दयालुता पर अविश्वास करना होगा क्योंकि सोचिये तो कि बिचारे जन्मतुये दूधपीते बच्चों ने ईश्वर का क्या अपराध किया था, या वे क्या

अपराध कर सकते ! ! ! यथार्थ में कोई प्रेमी, दयालु और कृपालु मनुष्य बाइबिल को बिना निज रोगटें खड़े किये नहीं पढ़ सकता । उस ग्रन्थ में जो २ बातें दयालुता इत्यादि के विरुद्ध हैं सो तो हई है परन्तु इनके अतिरिक्त हम इस ग्रन्थ में ऐसे २ प्रमाण देंगे कि जिन्हें ये खीष्ट पांथे पुरोहित भी किसी प्रकार अस्वीकार नहीं कर सकते और उन्हीं प्रमाणों द्वारा यह प्रमाणित करेंगे कि यह बाइबिल ग्रन्थ कभी ईश्वर का बचन कहने योग्य नहीं है ॥

परन्तु इन प्रमाणों के लिखने के पूर्व हम यह विचार करते है कि दूसरे प्राचीन ग्रन्थों की सत्यता के प्रमाण तथा इस बाइबिल की सत्यता के प्रमाणों में कितना और कैसा अन्तर है क्योंकि उत्तर में खीष्ट लोग प्रायः यही कहा करते है कि जैसे और प्राचीन ग्रन्थों का प्रमाण है वैसेही बाइबिल का प्रमाण भी हो सकता है मानो यह कोई नियम ठहरा कि एक प्राचीन ग्रन्थ की सत्यता सब प्राचीन ग्रन्थ की सत्यता की प्रमाण होगी । मइ वाह रे बुद्धि का प्रकाश ! ! !

प्राचीन ग्रन्थों में यूकलिड * रचित रेखागणित नामक

* इतिहासानुसार जाना जाता है कि युकलिड नामक ग्रन्थकार मसीह से २००० वर्ष और आर्किमिडीज़ से १०० वर्ष पूर्व हुआ था । यह पुरुष मिश्र प्रदेश के अलक्जेण्डरिया नामक नगर का रहनेवाला था ।

ग्रन्थही ऐसा है जिस्की सत्त्ता पर संसार में कोई भी बुद्धिमान पुरुष सन्देह नहीं कर सकता क्योंकि इस ग्रन्थ की सत्त्यता स्वयं उस ग्रन्थही से झलकती हैः—इसकी सत्त्यता प्रमाणित करने में इस्के ग्रन्थकार का समय, स्थान या और ऐसी बातों की आवश्यकता नही पड़ती। उस ग्रन्थ में जो बातै लिखीं हैं वे तब भी सत्त्य होती और है यदिचेत् उस्का रचयिता दूसरा कोई होता या ग्रन्थकार ने अपना नाम न लिखा होता अथवा ग्रन्थकार का नाम हमें आज पर्य्यन्त न मालूम होता क्योंकि ग्रन्थकार के निर्णय होने पर कुछ उस ग्रन्थ के विषय की सत्यता का निर्भर नहीं है। परन्तु मूसा, यशुआ या सामुयेल लिखित पुस्तकों की बातही दूसरी है, क्योंकि ये साक्षी की पुस्तकें है और ऐसी २ बातै लिखते है जिन पर स्वाभाविक अविश्वास होता है अतएव उन पुस्तकों को प्रमाणित मानने में हमारा समग्र विश्वास प्रथम तो इसी पर निर्भर है कि वे यथार्थ में उन्हीं लोगों की लिखी पुस्तकें है जिनके नाम से वे प्रसिद्ध है या दूसरों ने लिख दी है ? दूसरे इसपर, कि हम उनके वचन को कहां लों विश्वास कर सकते है। फिर हम यह निर्णय करने पर भी कि अमुक २ मनुष्यों ने इस ग्रन्थ को लिखा है उनके लेख पर विश्वास नहा कर सकते, ठीक उसी प्रकार जैसे हम किसी मनुष्य की साक्षी देने पर भी उसकी साक्षी पर सन्देह कर सकते हैं परन्तु यदि यह प्रमाणित हो जाय कि जो २

ग्रन्थ मूसा, यशुआ और सामुएल की लिखे कहलाते हैं वे वास्तव में उनके लिखे नहीं हैं तो इन पुस्तकों की सभी सत्यता हवा में उड़ जाय क्योंकि यह तो फिर बनावटी साक्षी ठहरी और साक्षी भी उन चीज़ों की जिनका स्वभावतः विश्वास नहीं जमता; जैसे ईश्वर से प्रत्यक्ष में बात चीत करना, या सूर्य्य चन्द्रमा का मनुष्य की आज्ञा से ठहर जाना, प्रायः बहुत से प्राचीन ग्रन्थों में केवल बुद्धिविलास की चमत्कारिता है जैसे होमर, प्लेटो, अरिष्टाट्ल, डिमास्थिनीज़ या सिसिरो प्रभृति के रचित ग्रन्थ हैं। इन ग्रन्थों के विश्वास या अविश्वास में ग्रन्थकार की कुछ आवश्यकता नहीं है क्योंकि जब वे बुद्धिविलासही के ग्रन्थ ठहरे तो उनकी योग्यता उतनीही है चाहे ग्रन्थकार के नाम का पता हमें मालूम हो या नहीं। जैसे ट्रोजन वार या अलिफलैला के किस्से पर कोई भी विश्वास नहीं करता परन्तु उसके कवि होमर की सभी प्रशंसा करते है, कारण यह है कि यद्यपि वह किस्सा झूठ हो तथापि कवि के काव्य की प्रशंसा की जाती है। परन्तु यदि होमर के लेख की नाईं हम बाइबिल के रचयिता मूसा इत्यादि का भी अविश्वास करें तो मूसा की गिनती जालरचयिताओं के अतिरिक्त दूसरों में नहीं होती। प्राचीन इतिहासलेखकों का हेरोडेटस से टासिटस पर्य्यन्त हम वहांहीं लों विश्वास करते हैं कि जहां लों वे स्वाभाविक अविश्वसनीय बातों का वर्णन नहीं करते, क्योंकि यदि हम सभी

वीश्वास करें तो हमें टासिटस के उस लेख का भी विश्वास करना होगा जहां वह दिखाता है कि वेसपेशियन ने अपनी आज्ञा से एक लँगड़े और एक अन्धे को आरोग्य कर दिया:- यह लेख ठीक वैसाही है जैसा मसीह के इतिहासलेखक उसके विषय में लिखते हैं । ऐसी अवस्था में तो हमे "रेड सी" के किस्से की नाई प्यम्फिलिया के समुद्र और सिकन्दर के किस्से का भी विश्वास करना होगा कि समुद्र बीच में से फट गया और सिकन्दर बादशाह की फौज सूखे में चली गई । बाइबिल की आश्चर्य्यघटनाओं की नाई इन घटनाओं का भी प्रमाण मिलता है परन्तु इन्हें तो कोई भी विश्वास नहीं करता अतएव अस्वाभाविक बातों का विश्वास स्वाभाविक बातों की अपेक्षा मन में नहीं जमता चाहे उनका वर्णन बाइबिल में हो या अन्यत्र । अतएव बाइबिल के पक्षपाती यह नहीं कह सकते कि हमें प्राचीन ग्रन्थों के कुछ विश्वास करने से बाइबिल का भी विश्वास करना होगा——कारण यह है कि प्राचीन ग्रंथों में भी सम्भव और विश्वासयोग्य बातोंही का तो विश्वास करते है या यूक्लिड सरीखे स्वत.सिद्ध बातों का प्रमाण मानते है।

अब हम बाइबिल की सत्यता के निर्णय पर विशेष ध्यान दे कर पहिले उन पांच ग्रन्थों की परीक्षा करते हैं जो मूसा के लिखे कहलाते हैं जिनके नाम ये हैं (१) उत्पत्ति की पुस्तक (२) यात्रा की पुस्तक (३) लेवी की पुस्तक

(४) गिनती की पुस्तक और (५) विवाद की पुस्तक। हम यह प्रमाणित करते है कि ये पुस्तकें इस ग्रन्थकार की लिखी नहीं है अर्थात् मूसा इनका रचयिता नहीं है तिस पर विशेषता यह है कि ये मूसा की जीवित अवस्था क्या उसके मृत्यु के कई सौ वर्ष उपरान्त लिखी गई है—हम इस ग्रन्थ में यह भली प्रकार प्रमाणित करेंगे कि ये पुस्तकें किसी महामूर्ख और अज्ञ की लिखी है जिसने मूसा की मृत्यु के कई सौ वर्ष उपरान्त उसका जीवनचरित्र लिखने का उद्योग किया है और उसके जीवित अवस्था तथा च उसके जन्म के पूर्व का वृत्तान्त लिखने की इच्छा की है; इस कार्य्य में उस लेखक की वही दशा हुई है जैसे कोई पुरुष आजकल कई हज़ार वर्ष पूर्व के इतिहास लिखने का उद्योग वे जड़ बुनियाद पर करें ॥

इस विषय में हम जो २ प्रमाण देंगे वे सब इन्हीं ग्रन्थों से दिये जायेंगे और केवल इन्हीं शाक्षियों पर हम निर्भर करेंगे। हमारी यही इच्छा है कि हम ऐसे विपक्षियों से उन्हीं की रणभूमि पर उन्हीं के बाइबिल नामक शस्त्र से सामना करें ॥

प्रथम तो इस्का कोई प्रमाण नहीं मिलता कि मूसा को इन ग्रन्थों का रचयिता कौन कहता है न जाने लोगों ने यह बात कहा से, कैसे और क्यों उड़ा दी है। इन ग्रन्थों की लिखावट और ढङ्ग से विश्वास होना तो दूर रहा यह भी किसी प्रकार मन में नहीं आता कि मूसा ने इन्हें लिखा हो क्योंकि

उस्की लिखावट और उक्ति का ढङ्ग ठीक वैसाही है जैसे कोई दूसरा मनुष्य मूसा के विषय में लिखता हो ॥

उत्पत्ति की पुस्तक का तो सभी वृत्तान्त मूसा के समय से पूर्व का है उस पुस्तक में तो मूसा का नामोल्लेख तक भी नहीं है; रहीं यात्रा, लेवी और विवाद की पुस्तकै, इनका समग्र लेख प्रथम पुरुष (Third Person) में है जैसे "ईश्वर ने मूसा से यों कहा" "या मूसा ने ईश्वर से यों कहा" अथवा "मूसा ने लोगों से यों कहा" या "लोगों ने मूसा से यों कहा" अव विचारने का स्थान है कि यह उक्ति का ढङ्ग उन इतिहासलेखकों का सा है जो किसी व्यक्तिविशेष के जीवनचरित्र या कार्यों का वर्णन करते है यदि यह मान लिया जाय कि वक्ता या लेखक भी अपने तईं प्रथम पुरुष में लिख सकता है अतएव मूसा ने भी ऐसाही किया तो मान लेना कोई प्रमाण नहीं है, सो यदि खीष्ट लोगों के पास मान लेने के अतिरिक्त और कोई प्रमाण इस विषय का नहीं है तो वे इसके उत्तर देने की अपेक्षा चुप कर रहै तो उत्तम होगा ॥

अस्तु मूसा का इस प्रकार प्रथम पुरुष में वोलने का अभिकार हमने माना क्योंकि कोई भी मनुष्य प्रथम पुरुष में वोल सकता है तो इन पुस्तकों के विषय में मूसा को अत्त्यन्त हास्यास्पद और अज्ञ वनाये विना हम यह नहीं मान सकते कि इनका लेखक मूसाही था जैसे गिनती के १२ वें पर्व की

६ आयत देखिये जहां यों लिखा है "अब यह मूसा नामक पुरुष पृथ्वी तल के सब मनुष्यों से सुशील वा गम्भीर (Meek) था" यदि मूसा ने अपने विषय में यह कहा है तो सुशील वा गम्भीर होने की अपेक्षा उसकी गिनती संसार भर के भारी घमण्डी और आत्मश्लाघियों में होती है सो अब ऐसी अवस्था में खीष्ट लोगों को दोनों पक्ष खुले है चाहे जिस पक्ष को स्वीकार कर लें यदि इन ग्रन्थों का रचयिता मूसा नहीं है तो इन ग्रन्थों का क्या प्रमाण ठहरा, यदि है तो ऐसे ग्रन्थकार का क्या विश्वास ? क्योंकि अपनी सुशीलता, गम्भीरता वा सुजनता का स्वयं अहङ्कार करना इन सद्‌गुणों के बाहर है और एक प्रकार की असत्यता है ॥

इन चारो पुस्तकों की अपेक्षा विवाद की पुस्तक में तो सब से दृढ़ प्रमाण इस बात का मिलता है कि मूसा उसका लेखक नहीं है इस ग्रन्थ का ढङ्ग नाटक का सा है; इसके लेखक ने थोड़ी भूमिका बांधने के उपरान्त मूसा का प्रवेश बोलते हुये कराया है और जब वह मूसा की लम्बी चौड़ी वक्तृता समाप्त करा चुका तो उसने पुनः अपनी वक्तृता आरम्भ की है। इसके उपरान्त उसने पुनः मूसा का प्रवेश कराया है और अन्त में उसकी मृत्यु अन्तिम क्रिया और स्वभाव का वर्णन करके अपनी वक्तृता समाप्त की है ॥ इस प्रकार इस ग्रन्थ में ४ वेर वक्ताओं का अदल बदल हुआ है, पहिले पर्वकी पहिली आयत

से लेकर ९ वीं आयत के अन्त्य लों तो ग्रन्थकार की उक्ति है यहां से मूसा की वक्तृता आरम्भ है जो चौथे पर्व की ४० वीं आयत के अन्त में समाप्त होती है । यहां लेखक ने मूसा को छोड़ दिया और इस बात का इतिहास आरम्भ किया कि जो कुछ मूसा अपनी जीवित अवस्था में कह गया था उसके उपलक्ष में क्या २ किया गया ॥

ग्रन्थकार इस विषय को पुनः ९ वें पर्व की पहिली आयत से आरम्भ करता है यद्यपि यहां उसने केवल यह कहा है कि मूसा ने इसरायल के लोगों को बुलाकर इकट्ठा किया तब उसने मूसा का पुनः प्रवेश कराया और २६ वें पर्व की समाप्ति पर्यन्त वक्तृता कराई है इसी प्रकार उसने २७ वें पर्व के आरम्भ में भी किया है और मूसा से २८ वें पर्व की समाप्ति पर्यन्त वक्तृता दिलाई है॥ २९ वें पर्व में पुनः लेखक ने पहिली और दूसरी आयत में अपनी उक्ति देकर मूसा का अन्तिम प्रवेश कराया है और उससे ३३ वें पर्व की समाप्ति पर्यन्त वक्तृता समाप्त कराई है ॥

इस प्रकार ग्रन्थकार मूसा की वक्तृता समाप्त करा स्वयं प्रवेश करता है और अन्तिम पर्व में समग्र अपनीही वक्तृता करता है यहां वह अपने पाठकों से यों आरम्भ करता है कि मूसा पिस्गाह पहाड़ की चोटी पर चढ़ गया वहां से उसने उस प्रदेश को देखा जिस्के लिये ईश्वर ने इब्राहाम, इस्हाक और

याकूब को वचन दिया था; मूसा मुआब के प्रदेश में मरा और आज लों (अर्थात् गून्थकार के समय तक) किसी ने उस्कें कब्र का पता न पाया ॥

तब गून्थकार लिखता है कि मूसा ११० वर्ष की अवस्था में मरा। न उस्की आंखों की जोति मन्द हुई थी और न उस्की स्वाभाविक शक्ति घटी थी; अन्त में यह अज्ञात लेखक लिखता है कि आज पर्य्यन्त इसरायल के सन्तान में दूसरा कोई ऐसा भविष्यवक्ता न हुआ जो मूसा की नाईं ईश्वर से मूहो मुँह बात चीत करता ॥

इस प्रकार व्याकरण से यह प्रमाणित करके कि मूसा इन ग्रन्थों का लेखक नहीं है हम उन्हीं ग्रन्थों के ऐतिहासिक और सामयिक प्रमाणों से यह सिद्ध करते हैं कि मूसा इन ग्रन्थों का रचयिता न था न हो सकता है अतएव अत्यन्त निर्दय प्रकार से पुरुष स्त्री और बालकों के हत्त्याओं का वृत्तान्त जो इन ग्रन्थों में दिया है कभी ईश्वर की आज्ञा से नहीं हो सकता।

यह प्रत्येक सच्चे आस्तिक का कृत्य है कि वह अपने दयालु और न्याई ईश्वर के प्रति बाइबिल के लगाये हुये झूठे अपवादों का अवश्य प्रतिकार करे और अपना कृत्य निबाहे।

वास्तव में विवाद की पुस्तक के रचयिता का पताही नहीं है कि वह कौन था—अस्तु जो हो परन्तु उसके मूसा-विषयक लेख परस्पर विरोधी है।

वह लिखता है कि "जब मूसा पिसगाह पहाड़ की चोटी पर चढ़ गया (उतरने का हाल कहीं नहीं मिलता) तो उस्की वहां मोआब के देश में मृत्यु हुई और उसने उसे मोआब प्रदेश की तराई में गाड़ा" यह गाड़नेवाला कौन था कहीं कुछ पता नहीं लगता । यदि ग्रन्थकार का यह अभिप्राय है कि उसने (अर्थात् ईश्वर ने) उसे गाड़ा तो उसने (अर्थात् ग्रन्थकार ने) यह कैसे जाना और हम (अर्थात् पाठक लोग) इसे कैसे विश्वास करें क्योंकि यह तो हम जानतेही नहीं कि यह ग्रन्थकार कौन है और यह तो स्पष्टही है कि मूसा अपने गाड़ेजाने का वृत्तान्त स्वय किसी प्रकार नहीं कह सकता ॥

ग्रन्थकार का लेख है कि आजतक मूसा की कब्र का पता कोई नहीं जानता, आजतक से यह अभिप्राय है कि ग्रन्थकार के समय तक; तो भला उस ग्रन्थकारही ने कैसे जाना कि मूसा की कब्र मोआब की तराई में है क्योंकि इस आजतक शब्दही से झलकता है कि ग्रन्थकार मूसा की मृत्यु के बहुत दिनों उपरान्त हुआ है अतएव वह मूसा के गाड़ेजाने के समय उपस्थित नहीं था । फिर दूसरी बात यह है कि मूसा का स्वयं यह कहना कि मेरी कब्र का पता आजतक कोई नहीं जानता प्रत्यक्ष असम्भव है। यदि मूसाही को ग्रन्थकार माना जाय तो यह किस्सा उसी मूर्ख बालक की नाईं होगा जो किसी

कोने में छिपकर यों पुकारता है कि मुझे कोई नहीं खोज सकता—सो मूसा को भी कोई नहीं खोज सकता ॥

ग्रन्थकार ने यह कहीं नहीं लिखा है कि जो २ वक्तृता उसने मूसा के मुख से कराई हैं वह उसने कहां से पाई थीं अतएव हम यह अनुमान कर सकते हैं कि या तो यह सब उस्की कपोलकल्पना * थी या उस्ने किसी से सुनके लिखा था । इन दो बातों में से एक का सत्य होना सम्भव है क्योंकि 'विवाद की पुस्तक' के ५ वें पर्व में जो आज्ञापत्र लिखा है उसकी चौथी आज्ञा तथा च 'यात्रा की पुस्तक के' २० वें पर्व की चौथी आज्ञा में भेद है । यात्रा की पुस्तक में बिश्राम दिन के मानने का कारण यह लिखा है "तूं सातवें दिन विश्राम कर..........क्योंकि परमेश्वर ने ६ दिन में स्वर्ग और पृथ्वी और सब कुछ जो उनमें है बनाया और सातवें दिन विश्राम किया" इत्यादि—परन्तु 'विवाद की पुस्तक' में इस्के पवित्र मानने का कारण यों लिखा है कि "यह वह दिन है कि जब इसरायल के सन्तान मिश्र के बाहर आये अतएव तेरा प्रभू ईश्वर यह आज्ञा देता है कि तू विश्राम के दिन को मान" । इसमें कहीं भी कुछ उत्पत्ति का हाल नहीं है और न उसमें कहीं मिश्र से आने का हवाला है । और भी बहुत सी बातें मूसा की आज्ञा के नाम से इस ग्रन्थ में दी है वे दूसरे ग्रन्थों में नहीं

* मन की बनावटी बातें ।

पाई जातीं और उन्ही आज्ञाओं में यह निर्दय करुणाहीन आज्ञा २१ वें पर्व की १८।१९।२० औ २१ वीं आयत में दी है कि माता पिता अपने ढीठ और मगरे पुत्र को आज्ञोल्लंघन के कारण पकड़ कर पत्थरों की मार से मरवा डालें । परन्तु पांधे पुरोहित लोग 'विवाद की पुस्तक' का सदा उपदेश किया करते है क्योंकि उसमें पांधों को दशमाश कर देने की आज्ञा है और इसी पुस्तक के २५ वें पर्व की चौथी आयत के इस लेख को उन्होंने कर के विषय में बना दिया है कि तूं दावने के समय बैल का मूँह मत बांध । और यद्यपि यह अत्यन्त छोटी बात है तथापि लोगों का विशेष ध्यान दिलाने के लिये उन्होंने उस पर्व के आरम्भ की सूची में इसका नाम दे दिया है। अरे वाह रे खीष्ट! पांधों अपने मतलब के लिये तुमने बैल की भी उपमा स्वीकार करली। यद्यपि इस विवाद की पुस्तक के रचयिता का ठीक २ पता नहीं लगता तथापि यह स्पष्ट जान पड़ता है कि वह यहूदी पांधों या पुरोहितों में था और हम यह भी इस ग्रन्थ में प्रमाणित करेंगे कि वह कम से कम ३५० वर्ष मूसा के मरने के उपरान्त हुआ था ॥

अब हम ऐतिहासिक और सामयिक प्रमाणों को आरम्भ करते हैं, सामयिक प्रमाण जो कुछ होगा वह बाइबिलही से होगा क्योंकि हमारा अभिप्राय बाइबिल के अतिरिक्त दूसरे जगहों से प्रमाण देने का नहीं है परन्तु यही इच्छा है कि स्वतः बाइबिल

केहीः ऐतिहासिक और सामयिक प्रमाणों से यह सिद्ध करें कि मूसा उन ग्रन्थों का रचयिता नहीं है जिनका लेखक वह कहलाता है; अतएव उचित है कि पहिले हम उन पाठकों के लिये जो कदाचित् इस विषय को न जानते होंगे यह सूचित कर दें कि प्रायः बड़ी २ बाइबिलों में पत्रों के चारो ओर कोने २ पर ऐतिहासिक विषयों का मसीह के पूर्व का सन् लिखा रहता है। हम "उत्पत्ति की पुस्तक" से आरम्भ करते हैं। इस पुस्तक के १४ वें पर्व में लिखा है कि जब ४ राजे मिल कर ९ राजाओं से लड़े तो उसमें लूत नामक एक पुरुष पकड़ा गया और उसे वे लोग धर ले गये और जब लूत के धरे जाने का समाचार इब्रहाम तक पहुँचा तब वह अपने भाई बन्धुओं को हथियार सजा लूत को छुड़ाने के लिये उनके पीछे पड़ा और उन्हें दान नामक प्रदेश तक पछियाये चला गया (१४ वीं आयत) ॥

यहां दान तक पछियाने के विषय में जो वक्तव्य है उसे हम पहिले एक उदाहरण देकर स्पष्ट करते है । भारतवर्ष के इतिहास से विदित है कि मुहम्मद तुगलक ने सन् १३३८ ई० में अपने पागलपन के कारण देवगढ को दौलताबाद के नाम से बसाना चाहा और यत्किञ्चित् बसा भी दिया । यदिचेत् कोई ग्रन्थ बिना सन् सम्वत् का ऐसा मिले जिस्में दौलताबाद का नाम पाया जाय तो यह स्पष्ट विदित है कि यह ग्रन्थ

सन् १३३८ ई० के पूर्व नहीं लिखा गया है। अतएव जब देवगढ़ का नाम दौलतावाद हुआ है तब ई० १३३८ के उपरान्त या उस सन् में वह ग्रन्थ लिखा गया है।

बस इसी प्रकार इस उदाहरण को यहां लगाते है और यह दिखलाते है कि मूसा की मृत्यु के कई सौ वर्ष उपरान्त दान नामक प्रदेश हुआ है अतएव मूसा उत्पत्ति की पुस्तक का रचयिता नहीं हो सकता, जहां यह "दान" तक पछियानेका वृत्तान्त दिया है।

बाइबिल में जिस स्थान का नाम दान लिखा है वह पहिले जेण्टाइल लोगों का स्थान था और "लैश" नाम से विख्यात था सो जब दान के वंशवालों ने इस प्रदेश को जीता तो उसे इब्राहीम के पड़पोते दान के नाम से प्रसिद्ध किया।

इसे प्रमाणित करने के लिये उत्पत्ति की पुस्तक से लेकर न्यायियों की पुस्तक के १८ वें पर्व तक देखना चाहिये जहां (सत्ताइसवीं आयत में) लिखा है कि वे (अर्थात् दानवाले) लैश के निवासियों पर टूटे जो सीधे और सज्जन थे, उन्होंने उनको तलवार की धार से काट डाला (बाइबिल में मारही काट तो भरा है) और नगर को अग्नि से जला दिया। उन्होंने वहां एक नगर बनाया (२८ वीं आयत) और रहे, और उस नगर का नाम अपने पिता के नामानुसार दान रक्खा परन्तु पहिले उस नगर का नाम लैश था ॥

दान के वंशवालों का इस प्रकार लैश को लेने और उसका नाम दान रखने का वृत्तान्त न्यायियों की पुस्तक में सामसन के मरने के उपरान्तही दिया है । बाइबिल के अनुसार सामसन की मृत्यु मसीह से ११२० वर्ष पूर्व और मूसा की मृत्यु मसीह से १४५१ वर्ष पूर्व हुई है अतएव इन ऐतिहासिक प्रमाणों के अनुसार मूसा की मृत्यु के ३३१ वर्ष बीतने के पूर्व उस स्थान का नाम दान नहीं रक्खा गया था ॥

न्यायियों के ग्रन्थ के ऐतिहासिक और सामयिक क्रम में बड़ाही गड़बड़ है। सामयिक प्रमाण से तो लैश का लिया जाना और उसका नाम दान पड़ना मूसा के स्थानापन्न जोशुआ की मृत्यु के २० वर्ष उपरान्त ठहरता है और ऐतिहासिक क्रम से जैसा उस गून्थ में लिखा है यह वृत्तान्त जोशुआ की मृत्यु के ३०६ वर्ष औ मूसा की मृत्यु के ३३१ वर्ष उपरान्त पाया जाता है परन्तु दोनोही प्रकार से मूसा उत्पत्ति की पुस्तक का रचयिता नहीं ठहर सकता क्योंकि उसके समय में तो दान नामक कोई प्रदेश थाही नहीं; अतएव उत्पत्ति की पुस्तक का लेखक (जो कोई हो) उस समय में था कि जब लैश नगर का नाम दान पड़ चुका था; परन्तु यह कौन पुरुष था कोई भी नहीं जानता अतएव उत्पत्ति की पुस्तक के लेखक का कुछ पता नहीं है तो फिर उसका क्या विश्वास ?

अब हम पहिले की नाई एक ऐतिहासिक और सामयिक

प्रमाण दे कर यह सिद्ध करते है कि मूसा उत्पत्ति की पुस्तक का रचयिता नहीं था।

उत्पत्ति की पुस्तक के ३६ वें पर्व में एसौ के पुत्र और वंशवालों का विवरण दिया है, जो अदूमवाले कहलाते थे, और अदूम के राजाओं के नाम का एक सूचीपत्र भी दिया है जिसकी गिनती में यों लिखा है कि (३१ वीं आयत) "और वे इसराएलियों के सन्तान पर किसी राजा के राज्य करने से पाहिले अदूम के देश में राज्य कर गये हैं"।

अब यदि कोई लेख विना सम्वत् का पाया जाय जिसमें ग्रन्थकार किसी व्यतीत वृत्तान्त का हाल लिखते समय यों लिखे कि ये बातें गदर वा अफ़ग़ानयुद्ध के पूर्व हो चुकी है तो यह स्वयं विदित है कि वह लेख किसी प्रकार गदर वा अफ़ग़ान युद्ध के पूर्व का नहीं है किन्तु इन घटनाओं के पश्चात् ही का है अतएव वह लेख किसी ऐसे व्यक्ति का नहीं है और न हो सकता है जिस्की मृत्यु गदर वा अफ़गानयुद्ध के पूर्व हो चुकी हो।

प्रायः इतिहासों में बोलचाल की नाईं किसी वृत्तान्त का सम्वत् न कह कर किसी दूसरे भूत वृत्तान्त से उस्का सम्बन्ध कह दिया जाता है इससे दोहरा लाभ है प्रथम तो यह कि सन् सम्वत् की अपेक्षा कोई भूत पूर्व वृत्तान्त अधिक स्मरण रहता है दूसरे यह कि ऐसा कहने से सन् या सम्वत् उसके

अन्तर्गत रहता है तो इससे "एक पन्थ दो काज" होता है।

यदि कोई पुरुष किसी वृत्तान्त का हाल कहती समय यों कहे कि यह बात मेरे विवाह के पूर्व अथवा मेरे पुत्र के जन्म के पूर्व या मेरे काश्मीर अथवा चीन जाने के पूर्व हो चुकी है तो इससे यह स्पष्ट विदित है और होना चाहिये कि उस पुरुष का विवाह अथवा उसके पुत्र का जन्म हो चुका है या वह काश्मीर अथवा चीन प्रदेश देख चुका है। भाषा के नियमानुसार इस प्रकार के भाषण का कोई दूसरा अर्थ नहीं हो सकता अतएव जहां कहीं इस प्रकार का लेख पाया जाय वहां उसका यही अर्थ समझा जायगा क्योंकि इसी अभिप्राय से तो वह लिखाही गया है।

अतएव जो आयत हम पूर्व में लिख चुके हैं अर्थात् "ये वे राजे हैं जो इसरायलियों के सन्तान पर किसी राजा के राज्य करने से पहिले अदूम के देश में राज्य कर गये है" उस्का उल्लेख तभी सम्भव है जब कम से कम एक राजा इसरायल के सन्तान का ग्रन्थकार के समय में या उसके इससे भी पूर्व हो चुका हो—अतएव उत्पत्ति की पुस्तक का मूसा के समय में लिखा जाना तो दूर रहा इस प्रमाण से तो साऊल (इसरायलों का प्रथम राजा) के समय से पूर्व किसी प्रकार सिद्ध नहीं होता यदि यह लेख किसी ऐसे ग्रन्थ में लिखा होता जो इसरायल के राजाओं के उपरान्त अपना लिखित होना

स्वतः प्रतीत कराता तो इसमे किसी प्रकार का वक्तव्य न था—सो यह लेख ज्यों का त्यों "काल के समाचार की पुस्तक" में पाया जाता है जिसमें इसरायल तथा यहूदाह के राजाओं का ऐतिहासिक हाल दिया है। यह आयत और इसके उपरान्त समग्र ३६ वां पर्व्व (उत्पत्ति की पुस्तक का) एक एक शब्द पर्य्यन्त काल के समाचार की पुस्तक के पहिले पर्व्व से मिलता है। पाठकगण ४३ वीं आयत से देखना आरम्भ करें तो सब भेद खुल जायगा।

"काल के समाचार" के लेखक का यह लिखना कि "ये वे राजा है जो इसराएलियों के सन्तान पर किसी राजा के राज्य करने से पहिले अदूम में राज्य कर गये है" यथार्थ और उचित है क्योंकि उसे उन राजाओं का नाम लिखना था और उसने लिखा भी है जिन्होंने इसराएलियों के सन्तान पर राज्य किया:—परन्तु यह प्रत्यक्ष असम्भव है कि ऐसी शब्द उस समय के पूर्व मूसा भी लिख जाता—बस तो इस्से यह प्रमाणित होता है कि काल के समाचार की नकल ज्यों की त्यों उत्पत्ति की पुस्तक में लिखी गयी है—अब पाठकगण देखें कि उत्पत्ति की पुस्तक की प्राचीनता सब हवा में उड़ गई या कुछ बाकी रही ?

जब इस प्रकार उत्पत्ति की पुस्तक से यह विश्वास कि मूसा उस्का रचयिता है उठ गया जिस विचित्र विश्वास पर

यह ईश्वर का वचन माना जाता है तो इस पुस्तक का इतनाही शेष रहा कि प्रथम तो इस्के रचयिता का पता नहीं, दूसरे इसमें किस्से कहानियां, गप्प सप्प, दुनियां भर की झूठी सुनी सुनाई बकवादे भरी हैं। हौवा और सर्प का किस्सा, नूह और उस्के जहाज की कपोलकल्पना अलिफलैला के किस्से के समान है; समान क्या इससे भी गये बीते हैं क्योंकि उनमें तो कुछ लालित्य और मनबहलाव भी है इसमें तो वह भी नहीं।

उस्के अतिरिक्त मूसा के आचरण जो बाइबिल में लिखे हैं महाभ्रष्ट और घृणोत्पादक है जिन्हें सुनकर कभी तो रोंगटे खड़े हो जाते हैं और कभी अत्यन्त घृणा होती है। यदि वे वृत्तान्त सत्य हैं तो मूसा वह अनर्थकारी था जिसने पहिले पहल धर्म के बहाने से बीसों युद्ध किये और कराये और इसी टट्टी की आड़ में हजारों ऐसे अत्याचार और अनर्थ कराये जो आज लों कदाचित् किसी जाति के ऐतिहासिक वृत्तान्त में नहीं पाये जाते और जिनके आगे चङ्गेज़खां तथा नादिरशाह सरिखे अत्याचारियों के अन्धेर और अत्याचार भी पसङ्गे में हो जायँ, उदाहरण में हम एक वृत्तान्त प्रकाश करते हैं।

जब यहूदियों की सेना एकबेर लूट मार करके लौटी तो उसका वृत्तांत गिन्ती की पुस्तक के ३१ वें पर्वकी १३ वीं आयत में यों लिखा है "तब मूसा और इलिअज़र याजक और मण्डली के समस्त

प्रधान उन्हें आगे से मिलने के लिये छावनी में से बाहर गये और मूसा सेना के प्रधानों से और सहस्रों के पतिन से और सैकड़ों के पतिन से जो लड़ाई से आये क्रुद्ध हुआ । और मूसा ने उनसे पूछा कि क्या तुमने सब स्त्रियों को जीती रक्खा? देखो इन्होंने बलआम की मन्त्रणा से इसराएल के बंश को फ़गूर के विषय में परमेश्वर के विरोध में अपराध करवाया सो परमेश्वर की मण्डली में मरी पड़ी । सो अब लड़कों में से हर एक बेटे को और हर एक स्त्री को जो पुरुष से संयुक्त हुई हो मार डालो । परन्तु उन बेटियों को जो पुरुष से संयुक्त न हुई हों अपने लिये जीती रक्खो" ।

यदि यह वृत्तान्त सत्य है तो मूसा से बढ़ संसार भर में कभी कोई दूसरा महानीच प्रकृति का पुरुष मिलना असम्भव है जिसने मनुष्यता के नाम पर कलङ्क इस प्रकार लगाया है—देखिये यहां स्पष्ट रीति से बच्चों के मारने, माताओं के हलाल करने और पुत्रियों से व्यभिचार करने की आज्ञा है ।

अब यदि कोई माता अपने तईं ऐसी अवस्था में विचारे तो उसकी क्या दशा होगी, उसका एक बच्चा तो पहिले मारा गया दूसरा उसकी आंखों के साम्हने मारा जाता है और स्वयम् भी विचारी कस्साइयों के साथ में पड़ी टुकुर २ मुंह ताकती है ! ! ! हा ! क्या दशा बिचारी उस कन्या की होगी जिसके मा और भाई उसके सन्मुख ही बध किये गये और

उस विचारी को भी स्वयम् उन्हीं हत्यारों के हाथ से अपने सतीत्व (कन्यापन) के नष्ट होने का भय हो रहा है ! ! ! हाय ! हाय !! जहां ऐसी २ बाते है क्या वह सत्यधर्म है !!!

इस घृणित आज्ञा के अनन्तर लूट और उसके विभाग का वृत्तान्त दिया है—यहा पाधों की लालच और कामचेष्टा सब अपराधों से बढकर है जैसे ३७ वीं आयत से देखिये "और परमेश्वर के कर में ६७५ भेड बकरियां थीं, और गाय बैल छत्तीस सहस्त्र थे जिनमें से ७२ परमेश्वर के कर में थे, और और गदहों में से जो तैंतीस सहस्त्र पाच सौ थे परमेश्वर के कर में एकसठ थे। और मनुष्यों में से जो १६००० थे परमेश्वर के कर में ३२ जन हुये"—थोड़े में तात्पर्य्य यह है कि इस पर्व्व तथा और भी बाइबिल में कई जगहों पर ऐसे २ वृत्तान्त दिये है जो मनुष्यता या सभ्यता से बाहर है, क्योंकि इस पर्व्व की ३५ वीं आयत से विदित है कि मूसा की आज्ञानुसार जो क्वारी लड़कियां व्यभिचारिणी हुई उनकी गिनती ३२ सहस्त्र थी।

प्रायः लोग यह नहीं जानते हैं कि इस बाइबिल नामक कल्पित ईश्वर के वचन में क्या २ बुराईयां भरी है । वे इसे सत्य और भली पुस्तक इस लिये मानते है क्योंकि आरम्भही से उनको ऐसी शिक्षा दी गई है—वे लोग सर्वशक्तिमान् जगदीश्वर की कृपा को उस पुस्तक पर ले जाते है जिसे वे विश्वास करते हैं कि वह ईश्वर की आज्ञा से लिखी गई है। हे ईश्वर! हे

जगदीश ! ! यहां तो बातही दूसरी है ! यह तो झूठ, कपट और कुफ्र की पुस्तक है क्योंकि इस्से बढ़कर कुफ्र और क्या होगा कि मनुष्य की की हुई बुराईयां सर्वशक्तिमान् ईश्वर की आज्ञा से हुईं बता देना और अपना दोष बिचारे ईश्वर के सिर लगाना ! ! !

परन्तु हां, अब हम पुनः इसी विषय पर विचार करते हैं कि मूसा उन पुस्तकों का लेखक नहीं है जो उसके नाम से प्रसिद्ध हैं और बाइबिल केवल कपोलकल्पित गाथा है। जो दो प्रमाण हम पहिले दे चुके है बस वेही बाइबिल की सत्यता प्रगट करने लिये बहुत है क्योंकि यह सामर्थ्य इसी गून्थ की है कि तीन चार सौ वर्ष के भविष्य वृत्तान्त को भूत वृत्तान्त लिख जाय—भला इतने उदाहरणों में क्या किसी प्रकार भविष्यबाणी का बहाना लग सकता है? वे वाक्य (Pluperfect Tense) प्रत्यक्षविपयागमन क्रिया में लिखे हैं जिनमें कभी भविष्यबाणी की चालाकी नहीं लग सकती । और भी ऐसीही बहुत सी आयतें उन पुस्तकों में पाई जाती हैं जिनसे यह बात और भी दृढ़ होती है जैसे यात्रा की पुस्तक के १६ वें पर्व्व की ३४ वीं आयत में देखिये (यह पुस्तक भी मूसालिखित कहलाती है) और इसराएल के सन्तान चालीस बरस लों जब लों कि वे बस्ती में न आये मन्न खाते रहे, जब लों कि वे कनआन की भूमि के सिवाने में न आये मन्न खाते रहे ।

अब इसराएल के सन्तानों ने मन्न खाया था नहीं य
यह मन्न क्या वस्तु थी यह कोई फल विशेष अथवा अन्न वि
शेष था जो कुछ हो इन बातों पर हमको वक्तव्य नहीं है ह
मारा तात्पर्य केवल यही दिखाने से है कि इस वृत्तान्त क
लिखनेवाला मूसा नहीं हो सकता क्योंकि यह बात तो मूस
की मृत्यु के बाद हुई है मूसा तो बाइबिल के अनुसार (जि
समें विरुद्ध और झूठी बातें भरी हैं और चित्त में शङ्का होती है
कि किसे विश्वास करें और किसे न करें) जङ्गलही में मर
था और कनान की भूमि की सीमा तक तो पहुंचाही नहीं तो
फिर वह कैसे कह सकता था कि इसराएल की सन्तान ने क्य
किया और वहां पहुँचने तक क्या खाया पिया । यह मन्न
खाने का वृत्तान्त जिसे ये लोग मूसा का लिखा बतलाते हैं
मूसा के स्थानापन्न जोशुआ के समय तक चला गया है जैसा
जोशुआ की पुस्तक से विदित है जबकि इसराएल के सन्तान
यर्दन नदी के पार होकर कनआन भूमि की सीमा पर पहुँचे
(जोशुआ की पुस्तक की ५ वें पर्व की १२ वीं
आयत देखो) और जब उन्होंने उस देश के पुराने अन्न खाये
उसी दिन से मन्न बरसना थम गया और इसराएल की स-
न्तानों के लिये मन्न था और उन्होंने उसी बरस कनआन देश
के उपजे हुये अन्न खाये ।

किन्तु विवाद की पुस्तक में इससे भी बढ़कर एक वृत्तान्त मिलता है जिससे मूसा का उन पुस्तकों का ग्रन्थकार प्रमाणित न ठहरने के अतिरिक्त यह भी विदित होता है कि उस समय में देवदानवों का कैसा विलक्षण विश्वास फैला था। विवाद की पुस्तक के ३ रे पर्व्व में मूसा के विजय वृत्तान्त में बाशान के राजा ऊज़ के धरे जाने का वृत्तान्त है ११ वीं आयत देखो "क्योंकि केवल बसान का राजा ऊज़ रह गया जो दानव के बंश में था देखो उसकी खाट लोहे की थी क्या वह अम्मून की सन्तान राबाथ में नहीं है मनुष्य के हाथों से उस खाट की लम्बाई ९ हाथ और चौड़ाई ४ हाथ की थी" इतना तो उस दैत्य के खाट का बर्णन हुआ अब ऐतिहासिक वृत्तान्त देखिये यद्यपि पूर्वलिखित प्रमाणों की नाईं यह प्रमाण उतना सीधा और प्रत्यक्ष नहीं है तो भी बाइबिल की सत्यता प्रगट करने के लिये भारी प्रमाण है।

लेखक महाशय ने इस दैत्य की सत्यता प्रमाणित करने के लिये उसके खाट के वृत्तान्त को लिखा है और उसे पुरानी बची हुई चीज लिख कर यों पूछा है कि क्या यह अमून के सन्तान राबाथ (राबाह) में नहीं है ? अर्थात् है, क्योंकि प्रायः यही रीति बाइबिल में पाई जाती है। परन्तु यह बचन मूसा का नहीं हो सकता क्योंकि मूसा न तो राबाह में था और न उसके विषय में कुछ जान सकता था। राबाह नगर इस दा-

नव का न था और न यह उन नगरों में था जिन्हें मूसा ने विजय किया था। अतएव इस खाट का रावाह में रहने का ज्ञान और उसके लम्बाई चौड़ाई का विस्तार तभी हो सकता है जब रावाह लिया जाय (अर्थात् उसका विजय हो) परन्तु मूसा की मृत्यु के चारसौ वर्ष वीतने से पहिले इसका विजय नहीं हुआ था जैसे द्वितीय सामुएल के बारहवें पर्व की २९ वीं आयत देखो "और यूअब (दाऊ का जेनरल) अमून के सन्तान के रब्बः से लड़ा और राजनगर ले लिया"।

हमारी कुछ यह इच्छा नहीं कि हम बाइबिल के सभी स्थानिक और सामयिक विरुद्धताओं को प्रकाश करें जिनसे यह स्पष्टही विदित होता है कि मूसा उन गून्थों का लेखक नहीं हो सकता था और न वे पुस्तकें मूसा के समय में लिखी गई थी—सो अब हम जोशुआ के पुस्तक की परीक्षा करते है और यह प्रमाणित करते है कि जोशुआ भी उन गून्थों का लेखक नहीं है जो उसके नाम से प्रसिद्ध है सो उन गून्थों का भी कुछ विश्वास नहीं है। इसके लिये भी हम बाइबिलही में से प्रमाण देंगे क्योंकि झूठों को उन्हीं के मुंह से झूठा बनाना ठीक होता है।

जोशुआ की पुस्तक के प्रथम पर्व्व के अनुसार यह पाया जाता है कि मूसा की मृत्यु के उपरान्तही जोशुआ उसका स्थानापन्न हुआ, मूसा तो सैनिक पुरुष न था परन्तु जोशुआ था;

मूसा की मृत्यु से २५ वर्ष लों इसराएल की सन्तान पर सर्दार बना रहा मूसा की मृत्यु १४५१ वर्ष मसीह से पूर्व हुई है; सो जोशुआ ने मसीह के पूर्व १४२६ के साल तक सर्दारी की और उसी साल में उसकी मृत्यु हुई। सो यदि इस ग्रन्थ में भी जो जोशुआ-लिखित कहलाता है ऐसे वृत्तान्त पाये जांय जो जोशुआ की मृत्यु के उपरान्त हुये हैं तो स्पष्ट है कि यह जोशुआ कभी इस ग्रन्थ का रचयिता नहीं हो सकता और इस्से यह भी प्रत्यक्ष है कि जो जो वृत्तान्त उस पुस्तक में लिखे हैं उनके अन्तिम वृत्तान्त के होने के समय तक के पूर्व यह ग्रन्थ नहीं लिखा जा सकता। वह ग्रन्थ भी स्वतः मार काट लूट पाट के वृत्तान्तों से भरा है और किसी प्रकार मूसा की निर्दयता से कम जोशुआ की निर्दयता नहीं प्रतिपादित होती।

प्रथम बात तो यह है कि मूसा की पुस्तकों की नाईं जोशुआ की पुस्तक भी प्रथम पुरुष में लिखी है:—वास्तव में यह जोशुआ के इतिहासलेखक की उक्ति है क्योंकि यदि जोशुआही की उक्ति मानी जाय, तो ६ वें पर्व की अन्तिम आयत का उसका यह लेख कि उसकी कीर्ति समग्र देश में फैल गई मूर्खता के अतिरिक्त अपने मुह मियामिट्ठू की मसल हो जायगी—अस्तु इसे समाप्त करके हम दूसरे प्रमाणों को शीघ्र आरम्भ करते है।

२४ वें पर्व्व की ३१ वीं आयत में यों लिखा है कि

"इसराएल लोग जोशुआ के जीवन भर प्रभु की सेवा करते रहे और उन प्रधानों के जीवन पर्यन्त भी जो जोशुआ की मृत्यु के उपरान्त हुये हैं"। अब साधारण बुद्धि से विचारिये तो कि क्या यह कभी सम्भव है कि जोशुआ स्वयम् अपनी मृत्यु के उपरान्त का हाल लिखे! इसी को साधारण बुद्धि के गले पर छूरी फेरना कहते हैं, यह उस इतिहासलेखक की उक्ति है जो जोशुआ के उपरान्त तो क्या प्रधानों के भी उपरान्त हुआ है।

और भी बहुत सी आयतें इस पुस्तक में ऐसीही हैं जिनमें जोशुआ की मृत्यु के कई बरस उपरान्त का हाल मिलता है यद्यपि ठीक समय का निर्णय सन् सम्वत् से नहीं पाया जाता तथापि उनके लेखों से स्पष्ट विदित होता है कि वे जोशुआ की मृत्यु के बहुत वर्ष उपरान्त की बातें लिखते हैं जैसे १० वें पर्व में देखो जहां यों लिखा है कि जोशुआ की आज्ञा से सूर्य गिबियन पर्वत पर ठहर गया और चन्द्रमा अजेलन की तराई में स्थिर हो गया भई वाह! क्या लड़कों के फुसलाने की कहानी लिखी है!! अस्तु १४ वीं आयत में लिखा है कि "न तो इसके पूर्व और न इसके पश्चात् कोई दिन ऐसा हुआ कि जब ईश्वर ने किसी मनुष्य के वचन को इस प्रकार सुना हो"।

अब देखिये की सूर्य का गीषिनय पहाड़ पर ठहरना

और चन्द्रमा का अजेळन की तराई में स्थिर हो जाना वह किस्सा है जिस्का पोल स्वयमू इस किस्सेही से खुळ जाता है यह ऐसी बात है कि यदि सत्य होती तो इस्की प्रसिद्धि समग्र संसार में भये बिना न रह सकती। आधे संसार में तो इस बात का आश्चर्य होता कि आज सूर्योदय क्यों नहीं होता और आधे संसारवाले इस आश्चर्य में रहते कि आज सूर्यास्त क्यों नहीं होता और यह बात समग्र संसार में फैल जाती; सो समग्र संसार तो दूर रहा किसी जाति में भी ऐसी भारी बात का रत्ती भर प्रमाण या पता नहीं मिलता परन्तु बिचारिये तो चन्द्रमा के स्थिर होने की क्या आवश्यकता थी? सूर्य के प्रकाश के सामने विशेषतः दिन के समय बिचारे चन्द्रमा की चांदनी विना क्या हानि थी! बस जान पड़ता है जो कुछ मुंह में आया विना बूझे बिचारे बक दिया ठीकही तो है "वचनेपि दरिद्रता!" हमारे जान तो यदि जोशुआ सूर्य चन्द्रमा दोनों को पकड़कर एक को अपने दहिने और दूसरे को बायें जेब में रख लेता और समय तथा इच्छानुसार निकाल २ कर रेलवे ष्टेशन मास्टर कि नाईं उनसे प्रकाश करा लिया करता तो बहुत सुभीता होता!!!

उतना उपहास वा खेद इस ऊपर कहे हुये किस्से पर नहीं होता जितना इस ग्रन्थकार की मूर्खता पर होता है क्योंकि उसने अपनी अल्पज्ञता के कारण बिचारे जोशुआ को सूर्य

चन्द्रमा के स्थिर करने से मूर्ख बनवा दिया:—यदि उसने पृथ्वी को स्थिर किया होता तो इतनी भारी मूर्खता न होकर कुछ कम मूर्खता होती क्योंकि रात और दिन पृथ्वी के घूमने से होते है न कि सूर्य की गति से।

हां, उस पूर्वकथित आयत में जो शब्द "न तो उसके पीछे" लिखा है उससे तथा समग्र पूर्वभूत समय के मिलान करने से बहुत काल का ज्ञान होता है नहीं तो उस आयत का गौरव ही नष्ट हो जायगा यदि इस पीछे के समय की अवधि एक दिन या एक सप्ताह अथवा एक मास या एक वर्ष मानी जाय तो अत्यन्त हास्यास्पद हो जायगा अत- एव उस आयत को सार्थ तथा समग्र पूर्वभूत काल की अपेक्षा इस्के अद्भुत वर्णन को गौरवसंयुक्त करने के लिये कई सौ वर्ष का समय मानना होगा एक सौ वर्ष से कम तो अत्यन्तही तुच्छ होगा और २०० वर्ष भी किसी विशेष गिनती में नहीं है, हां ३।४ सौ वर्ष मान लिया जाय तो किसी २ प्रकार वह आयत सार्थ होती है।

इस पुस्तक के ८ वें पर्व से भी विदित है कि यह पुस्तक जोशुआ की मृत्यु के बहुत दिनों उपरान्त लिखी गई है जहां अई नगर के विजय के उपरान्त २८ वीं आयत में यों लिखा है, "और जोशुआ ने अई को जला के उसे सदा के लिये ढेर कर दिया सो वह आज लों उजाड़ है"। फिर अई के राजा

को जोशुआ ने जब फांसी दे दिया और नगर के फाटकही पर फेंक दिया तो २९ वीं आयत में लिखा है कि "उसने वहां पत्थरों का एक ढेर लगवा दिया जो आजलों वर्तमान है"; आज लों अर्थात् जोशुआ की पुस्तक के रचयिता के समय पर्यन्त लों। फिर १०वें पर्व में जब जोशुआ पांच राजाओं को पांच वृक्ष पर फांसी देकर एक कन्दरा में फेंक चुका यों लिखा है कि, "उसने वड़े २ पत्थर उस कन्दरा के मुह पर खड़े कर दिये जो आज के दिन लों वर्तमान है"।

जोशुआ और उसके पक्षवालों की बीरताप्रदर्शन के गिनती के समय तथाच उनके बिजय वर्णन में यों लिखा है (१५ वें पर्व्व की ६३ वीं आयत देखो) कि "परन्तु यबूसी जो थे यरूसलम में रहते थे सो उन्हें यहूदाह के सन्तान दूर न कर सके परन्तु यबूसी यहूदाह के सन्तान के साथ आज के दिन लों यरूसलम में रहते है"। इस आयत पर यह प्रश्न है कि यबूसी किस समय यहूदाह के सन्तान के साथ यरूसलम में रहते थे? क्योंकि यह वात पुनः न्यायियों की पुस्तक के प्रथम पर्व्व में पाई जाती है अतएव जव तक हम उस स्थान तक न पहुँचे तव तक हम इसकी समालोचना रोके रहेंगे॥

इस प्रकार विना किसी दूसरी सहायता के केवल जोशुआही की पुस्तक से यह प्रमाणित करके कि जोशुआ इसका लेखक नहीं था अतएव उसका कोई प्रमाण नहीं है, हम न्या-

यियों की पुस्तक की परीक्षा आरम्भ करते हैं जिसका नाम प-हिले कह चुके हैं ॥

न्यायियों की पुस्तक के देखतेही विदित होता है कि इसके ग्रंथकार का पता नहीं है अतएव इसे ईश्वर का वचन बनाने में बहाना भी नहीं हो सकता:—इस ग्रंथ के पिताही (अर्थात् रचयिताही का) पता नहीं है।

यह पुस्तक भी जोशुआही के पुस्तक की नाईं आरम्भ होती है जोशुआ का आरम्भ (प्रथम पर्व्व प्रथम आयत) यों हैं कि "अब मूस की मृत्यु के उपरान्त" इत्यादि—और न्या-यियों की पुस्तक का आरम्भ यों है कि "अब जोशुआ की मृत्यु के उपरान्त" इत्यादि—उस आयत तथा और भी लि-खावट की समानता से जो इन दोनों ग्रंथों में मिलती है यह प्रतीत होता है कि दोनों का रचयिता एकही पुरुष है परन्तु यह कौन पुरुष था कुछ पता नहीं लगता; हां इतना तो उन पुस्तकों से प्रमाणित होता है कि यह ग्रन्थकार जोशुआ की मृत्यु के बहुत उपरान्त हुआ है; यद्यपि इसका ऐतिहासिक वृत्तान्त जोशुआ की मृत्यु के उपरान्तही से आरम्भ होता है परन्तु इस के पूरे पर्व्व में समग्र पुस्तक का संक्षेप वृत्तान्त दि-या है जिस में बाइबिल के सामयिक प्रमाणानुसार ६०६ वर्ष का हवाला दिया है अर्थात् जोशुआ की मृत्यु से लेकर साम-सन की मृत्यु पर्यन्त अर्थात् मसीह के १४२६ वर्ष पूर्व से

लेकर ११२० वर्ष पूर्व तक का हाल पाया जाता है अर्थात् साऊल के अपने पिता के गदहे खोजने और राजा होने के २९ वर्ष पूर्व तक का वृत्तान्त मिलता है—परन्तु यहां लों भी पता लगता है कि यह ग्रंथ कम से कम दाऊद के समय तक लिखा गया है और यही हाल जोशुआ की पुस्तक का भी है॥

न्यायियों की पुस्तक के प्रथम पर्व्व में ग्रन्थकार जोशुआ की मृत्यु का हाल लिखकर यह वृत्तान्त लिखता है कि यहूदाह की सन्तान और कनान के निवासियों में कैसा वर्ताव रहा और क्या क्या हुआ। इस कथन में लेखक ने अचानचक ७ वीं आयत में यरूसलम का नामोल्लेख करके ८ वीं आयत में स्पष्ट करने के लिये यों लिखा है कि "अब यहूदाह की संतान यरूसलम से लड़ चुके थे और उसे ले चुके थे", अतएव यह ग्रन्थ यरुसलम के लिये जाने के पूर्व नहीं लिखा जा सकता। पाठकों को स्मरण होगा कि हम अभी जोशुआ की पुस्तक के १९ वें पर्व्व की ६३ वीं आयत का हवाला दे चुके हैं जहां लिखा है कि "यबूसी यहूदाह की सन्तान के साथ आज के दिन लों रहते हैं" अर्थात् उस समय तक कि जब जोशुआ की पुस्तक लिखी गई थी॥

जो २ प्रमाण हमने इस वात के दिये हैं कि ये सब पूर्व लिखित ग्रंथ उन २ लोगों के लिखे नहीं हैं जिनके नाम से वे प्रसिद्ध हैं वे इतने हैं कि इस आयत पर हम विशेष दृढ़ता

नहीं करते, क्योंकि यदि बाइबिल का इतिहासरूपेण विश्वास किया जाय तो यरूसलम नगर का विजय दाऊद के पूर्व तक नहीं हुआ है अतएव जोशुआ और न्यायियों की पुस्तक दाऊद के राज्यारम्भ अर्थात् जोशुआ की मृत्यु के ३७० वर्षोपरान्त के पूर्व नहीं लिखी गई है।

जिस नगर का नाम पीछे यरूसलम रह गया इसका नाम पहिले यबूस या यबूसी था और यह नगरी यबूसी लोगों की राजधानी थी।

दाऊद का इस नगर के विजय करने का वृत्तान्त, सामुएल की दूसरी पुस्तक के ५ वें पर्व्व की चौथी इत्यादि आयतों में लिखा है और काल के समाचार की पहिली पुस्तक के १४ वें पर्व्व की चौथी इत्यादि आयतों में भी दिया है। इस के अतिरिक्त बाइबिल भर में कहीं भी इसका पूर्व विजय नहीं लिखा है और न कोई इस पक्ष का हाल पाया जाता है। सामुएल अथवा काल के समाचार की पुस्तक में यह कहीं नहीं लिखा है कि उन्हों ने "स्त्री पुरुष और बालकों को पूर्णतया नाश कर डाला और एक भी जीवित व्यक्ति को न छोड़ा" जैसे कि उनकी दूसरी विजयों में कहा है; यहां मार काट पर मौनावलम्बन करने से जान पड़ता है कि वहांवालों ने स्वतः हार मान ली और वहां के निवासी यबूसी लोग उस नगर के विजयोपरान्त वहीं पर वास करते थे"। अतएव जोशुआ की

पुस्तक का यह वृत्तान्त कि यबूसी लोग यहूदाह के सन्तान के साथ आज लों यरूसलम में रहते है उसी समय से मेल खाता है कि जब दाऊद ने उस नगर को विजय किया।

इस प्रकार यह प्रमाणित करके कि उत्पत्ति की पुस्तक से न्यायियों की पुस्तक पर्य्यन्त सभी अप्रमाणिक है हम रूत की पुस्तक की परीक्षा करते है जिसमें महा अश्लील और भ्रष्ट रीति से, न जाने किसने एक दरिद्री बिधवा की कहानी लिखी है जो रात्रि के समय अपने एक बोआज नामक सम्बधी के पलङ्ग पर जो उसे बेटी २ कह २ पुकारता था जा लेटी और उससे व्यभिचार किया। छि! छि!! ऐसे भ्रष्ट किस्से को भी ईश्वर का वचन कहा है!!! इतने पर भी हम यह कहते हैं कि यह बाइबिल भर में सब से उत्तम पुस्तक है क्योंकि इसमें मार काट और हत्या इत्यादि का वर्णन नहीं है!!

अब हम सामुयेल की दोनों पुस्तकों की परीक्षा करते हैं और यह दिखाते है कि वे दोनों ग्रंथ सामुयेल के लिखे नहीं हैं वे तो सामुयेल की मृत्यु के अनेक दिनोपरान्त लिखे गये हैं और पूर्व पुस्तकों की नाईं इनके भी ग्रंथकार का पता नहीं है अतएव उनका भी कुछ विश्वास नहीं।

इस पुस्तक में ग्रन्थकार ने जो २ हाल लिखा है उसके पढ़नेही से जान पड़ता है कि ये पुस्तकें सामुयेल की मृत्यु के बहुत दिनोपरान्त लिखी गईं हैं अतएव सामुयेल उनका रच-

यिता नहीं हो सकता—तनिक उस वृत्तान्त को पढ़िये जहां साऊल अपने पिता के खोये हुये गदहों की खोज में गया है और जहां उस्से सामुयेल से भेंट हुई है जिसके पास वह उन खोये हुये गदहों का पता पूछने गया था, जैसे बाजे २ मूर्ख आज कल खोई हुई वस्तु का पता लगाने के लिये दर्शनियों और ओझों के पास जाया करते हैं।

ग्रंथकार इस किस्से को इस प्रकार वर्णन नहीं करता जैसे कोई टटकी बात हो किन्तु उसके उल्लेख का ढंग ऐसा है कि जैसे वह अपने जीवित समय में किसी प्राचीन किस्से को लिखता हो क्योंकि उसके शब्द ऐसे हैं जैसे सामुयेल के समय के शब्द थे अतएव वह पीछे से उन्हे ऐसे शब्दों में लिखता और स्पष्ट करता है कि जिसमें उसके समय के पाठक लोग समझ सकें।

सामुयेल की पहिली पुस्तक के ९ वें पर्व में सामुयेल का नाम "दर्शनिया" लिखा है और इसी नाम से साऊल उसे खोजता और लोगों से पूंछता फिरता था, ११ वीं आयत देखो जब वे * उस नगर की चढ़ाई पर चढ़ते थे तब उन्हें कई कन्याये मिली जो पानी भरने जाती थीं और उन्हों ने उन से पूछा कि क्या दर्शी यहां है? तब साऊल इन कन्याओं के पता बताने के अनुसार गया और उससे सामुयेल से भेंट

* साऊल और उस्के नौकर।

हुई परन्तु साऊल ने उसे न पहचाना और यह पूछा (१८ वीं आयत देखो) कि कृपा करके हमें यह बताइये कि दर्शी का घर कहां है। तब सामुएल ने साऊल को उत्तर दिया कि दर्शी मैंहीं हूं ॥

क्योंकि सामुएल की पुस्तक के रचयिता ने इन प्रश्नोत्तरों को उस बोलचाल और ढंग में लिखा है जो सामुएल के समय में बोली जाती थी अतएव उसे स्पष्ट करने के लिये इन प्रश्नोत्तरों को पुनः उस समय की बोलचाल में झलकाना पड़ा जो ग्रन्थकार के समय में बोली जाती थी जो उसने ९ वीं आयत में यों लिखा है अगले समय में जब मनुष्य परमेश्वर से प्रश्न करने जाता था तब यह कहता था कि आओ दर्शी पास जावें क्योंकि आगमज्ञानी आगे दर्शी कहता था। इस से प्रमाणित होता है (जैसे हम पहले कह चुके है) कि यह साऊल, सामुएल और गदहे का वृत्तान्त ग्रन्थकार के समय में प्राचीन किस्सा था अतएव सामुयेल का लिखा नहीं हो सकता सो इस ग्रन्थ का भी कोई विश्वास न ठहरा।

परन्तु यदि हम इन ग्रन्थों में खूब डूब कर देखें तो इस से भी बढ़कर प्रमाण मिलते हैं कि सामुयेल इनका लेखक न था क्योंकि उन में ऐसे वृत्तान्तों का लेख पाया जाता है जो सामुयेल की मृत्यु के अनेक वर्ष उपरान्त हुये हैं। सामुएल की मृत्यु साऊल के पूर्व हुई थी क्योंकि सामुएल की पहली पु-

स्तक के २८ वें पर्व से विदित है कि साऊल ने एक भुतई स्त्री की सहायता से सामुयेल की मृत्यु के उपरान्त उस्की आत्मा को उठाया इस से निश्चित है कि सामुएल मर चुका था, तो फिर उसने साऊल का समग्र जीवनवृत्तान्त तथाच दाऊद के राज्य का भी कुछ हाल कैसे लिखा?। इस ग्रन्थ के २५ वें पर्व में जो सामुएल की मृत्यु और गाड़े जाने का वृत्तान्त दिया है उसका लेखक सामुएल कैसे हो सकता है। बाइबिल के सामयिक प्रमाणानुसार सामुएल की मृत्यु मसीह से १०६० वर्ष पूर्व हुई है इस पर भी उसके पहलेही ग्रन्थ में मसीह से १०५६ वर्ष पूर्व अर्थात् साऊल की मृत्यु तक का हाल दिया है अब यह प्रश्न है कि सामुएल ने अपने ग्रन्थ में साऊल के मृत्यु का हाल कैसे लिखा?

सामुएल की दूसरी पुस्तक में दाऊद * के राज्यारम्भ से लेख चला है और दाऊद के राज्य के समाप्ति तक का हाल दिया है जो सामुएल के मृत्यु के ४३ वर्षोपरान्त ठहरता है अतएव इस ग्रन्थ के विषय में हम क्या लिखें पाठक लोग स्वयम् विचार लें।

अब हम बाइबिल के प्रथम भाग के उन सब पुस्तकों की परीक्षा कर चुके जिनके नाम में ग्रन्थकारों का नाम जब-

---

* साऊल की मृत्यु के उपरान्त दाऊद इसरायलों का राजा हुआ था।

देस्ती घिस मारा है, और जिन्हें खीष्ट लोग संसार में यह प्रसिद्ध किये हुये है कि वे मूसा जोशुआ और सामुएल द्वारा लिखी गई है परन्तु हम उनकी असत्यता भी भली प्रकार प्रमाणित कर चुके है। अब कहिये ऐ कृपानिधान ! बुद्धिसागर ! खीष्ट महाशयो ! इस विषय में आप लोगों को क्या वक्तव्य है ? क्या फिर भी ऐसे २ प्रत्यक्ष प्रमाणों के आंख में धूल झोंक कर तुम नहीं २ आप लोग हमारे गली बाजारों में या अपने गिर्जाद्वार पर खड़े होकर विचारे भोले भालों को बहकाने का साहस करोगे ? और उन्हें यह उपदेश दोगे कि यह ईश्वर का बचन है ? जब तुम यही प्रमाणित नहीं कर सकते कि जिन्हें तुम इन पुस्तकों का ग्रन्थकार बताते हो वे वस्तुत: उनके रचयिता है। अब कहिये जो २ अपराध उनमें उस सर्वशक्तिमान् जगदीश्वर को लगाये है उसका क्या प्रायश्चित करते हैं ? क्या इस कपोलकल्पित असत्त्य और अप्रमाणिक इलहाम को प्रमाणित ठहराने के लिये कोई और प्रमाण तुम्हारे पास है ? यदिचेत् उन निर्दय हत्याओं की आज्ञा का पोषण जिससे प्रायः समग्र बाइबिल भरी है वा उन अगणित नरहत्या स्त्रीघात और बालहत्त्या के करने का अपराध तुह्मारे किसी ऐसे मित्र को लगाया जाता जिसे तुम अत्त्यन्त सत्कार करते हो तो क्या तुन अन्तःकरण से जल भुनकर ऐसे मनुष्य को दण्ड देने और उसे झूठा प्रमाणित करने का उद्यो-

ग न करते ? और अपने उस निर्दोषी मित्र के सत् चरित्र को इस वृथा कलङ्क से उज्ज्वल करने का परिश्रम न उठाते? इस में हम तुह्मारा दोष नहीं समझते क्योंकि तुमको जन्मही से ऐसी शिक्षा होरही है जो तुह्मारे हृदय ऐसे कठोर और निर्दय हो गये है कि तुह्में बाइबिल के ऐसे करुणाहीन और असत्य लेखों पर घृणा या शङ्का नहीं होती !

अथवा तुह्में अपने ईश्वर के मानापमान का कुछ भी विचार नहीं है; नहीं तो तुम हम इस प्रकार अपने आंखों के सामने उस करुणावरुणालय दयासागर असंख्यसद्गुणसम्पन्न ईश्वर का इस प्रकार तिरस्कार करना पुनः इस प्रकार तिरस्कार अपने आंखों के सामने होना सहन न करते । यद्यपि इन पूर्वलिखित और उन प्रमाणों से जो हम आगे इस ग्रन्थ में लिखेंगे तुह्मारे पोल का उद्घाटन होगा तथापि उन बिचारे लाखों प्राणियों की शंका समाधान हो जायगी जो तुह्मारे इस प्रपच के जाल में फँसकर इधर उधर उन सहायरहित पक्षियों की नाई देखते है जिन्हें निर्दई बहेलिये अपने छल कपट से अपने जाल में बझा लेते हैं; उन असहायों के लिये यह पुस्तक कैची रूप होकर उस जाल के काटने में सहायता करेगी ॥

अब हम राजाओं की दोनों पुस्तकों तथा काल के समाचार की दोनों पुस्तकों की समालोचना करते हैं। ये पुस्तकें

समस्त ऐतिहासिक है और इन में यहूदाह के राजाओं के जीवन तथा कार्य्यों का विशेषत: वर्णन है इन सब राजे के समाज को एक दुष्ट मण्डलही कहना चाहिये।परन्तु ये ऐसी बातें है कि इन से हमारा उतनाही सम्बन्ध है जैसे रूम की लड़ाई या अलिफलैलें के किस्से से हो । इसके अतिरिक्त जब इन के रचयिताओं का नामही नहीं मालुम है और न उनका कुछ पता लगता है तो हम उनके लेख पर कैसे और क्या विश्वास करें? दूसरे प्राचीन इतिहासों की नाईं इन में भी कहीं किस्से कहीं कहानियां, कहीं सम्भव, कहीं असम्भव वृत्तान्तों का झमेल भरा है जो अब समय और स्थान की प्रबलता से पूर्णतया भद्दे और अरुचिकारक हो गये है।

इन पुस्तकों से हम केवल इतनाही काम लेते है कि उनका परस्पर तथा बाइबिल के भिन्न २ भागों से मिलान करके यह दिखलाते है कि इन कपोलकल्पित ईश्वर के वचनों में परस्पर विरोध निर्दयता तथा गड़बड़ की बातें भरी है॥

राजाओं की पहिली पुस्तक सुलेमान के राज्य आरम्भ से आरम्भ होती है जो बाइबिल के सामयिक प्रमाणानुसार १०१५ वर्ष मसीह से पूर्व हुआ है, और दूसरी पुस्तक मसीह के ५८८ वर्ष पूर्व में समाप्त हुई है अर्थात् यदूकियाह के राज्य समाप्ति के थोड़ेही दिनोपरान्त तक, जिसे नबूकदनज़र राजा यहूदियों के विजय करने और यरूसलम के लेने के उ-

परान्त पकड़ कर बाबिलन में बँधुआ बना कर ले गया था। इन दोनों पुस्तकों में ४२७ वर्ष का हाल दिया है।

काल के समाचार की दोनों पुस्तकों में इसी समय और प्रायः इन्ही सब राजाओं का हाल किसी दूसरे ग्रंथकार ने लिखा है क्योंकि एकही ग्रथकार एकही इतिहास को दो बेर लिखे यह विचारना महामूर्खता होगी। काल के समाचार की पहिली पुस्तक के प्रथम नौ पर्व्वों में आदम से लेकर साऊल तक वंशावली दी है और फिर दाऊद के राज्य से आरम्भ किया है और दूसरी पुस्तक की समाप्ति में यदूकियाह के राज्य पर्य्यन्त अर्थात् मसीह के ५८८ वर्ष पूर्व तक का हाल दिया है। अन्तिम पर्व की अन्तिम दो आयतों से ५२ वर्ष का हाल और मिलता है अर्थात् मसीह से ५३६ वर्ष पूर्व तक का वृत्तान्त पाया जाता है; परन्तु वे आयतें इस ग्रंथ की नहीं है जिसे हम इज़रा की पुस्तक का हाल लिखते समय प्रमाणित करेंगे ॥

राजाओं की दोनों पुस्तकों में साऊल दाऊद और सुलेमान (जिन्होंने समग्र इसरायेल पर राज्य किया) के इतिहास के अतिरिक्त १७ और राजाओं तथा एक रानी का संक्षेप वृत्तान्त दिया है जो यहूदाह के राजा कहलाते थे और १९ उन राजाओं का हाल दिया है जो इसराएल के राजा कहलाते थे; इन दो दलों का कारण यह है कि सुलेमान की मृत्यु

के उपरान्तही यहूदी लोग दो दल में विभिन्न होकर अपने लिये भिन्न २ राजा ठहरा एक दूसरे से महाभयङ्कर युद्ध करते थे ॥

इन दोनों पुस्तकों में इतिहास तो क्या केवल मार काट छल कपट और जय पराजय का वृत्तान्त दिया है। जिन यहूदी लोगों को कनानियों पर अत्याचार का अभ्यास हो रहा था वे अब परस्पर आपसही में एक दूसरे के गले पर छूरी फेरने लगे, उन्के राजाओं में से आधे भी अपनी स्वाभाविक मृत्यु से नहीं मरे औ कईयों के तो कुल के कुल नाश करके दूसरा राजा उसकी गद्दी पर बैठ गया जो स्वयं भी पांच सात दस महीनों के उपरान्त उसी प्रकार मारा गया। राजाओं की दूसरी पुस्तक के १० वें पर्व में लिखा है कि नगर के द्वार पर दो टोकरों में ७० लड़कों के सिर काट कर धरे थे; ये लड़के आहब राजा के पुत्र थे जो जेहू राजा की आज्ञा से मारे गये थे जिसे इलाइशा नामक नौवें भविष्यवक्ताने इसी लिये राज्यपद पर बैठाया था कि वह आहब के बंशवालों को इस प्रकार नाश करे। मनाहम के राज्यवृत्तान्त में भी जो शालम नामक राजा को मार चुका था जिसने केवल एकही महीने राज्य किया था यों लिखा है (राजाओं की दूसरी पुस्तक के १५ वें पर्व की १६ वीं आयत देखिये) कि मनाहम ने तियसह के नगर पर आक्रमण किया परन्तु जब नगर निवा-

सियों ने नगर का द्वार न खोला तो उसने उन्हे जीतने के उपरान्त उनकी उन सब गर्भिणी स्त्रीयों का जो वहां थीं, पेट फाड़ डाला ॥

यदि हम किसी प्रकार यह मान भी लें कि सर्वशक्तिमान् जगदीश्वर ने किसी जाति विशेष को "अपने चुने हुये लोगों" के नाम से स्थिर किया है तो यह अवश्य होना चाहिये कि वे लोग समग्र संसार के लिये मनुष्यता और सच्चरित्रता के उदाहरण हों और न कि अगले समय के यहूदियों की नाई डांकू लुटेरे और गरकट्टे हों; ये तो ऐसे लोग थे जिन्होंने मूसा हारून, जोशुआ, सामुएल और दाऊद सरीखे अत्त्याचारियों के उदाहरण सीख कर स्वयं ऐसे २ भ्रष्ट कर्म किये है जो सन्सार भर के सब जातियों से असभ्यता और दुष्कर्म में बढ़ गये। यदि हम जान बूझकर अपनी आंखे न बन्द कर लें और अपने कोमल हृदयों को पत्थर न बना लेवें तो यह कभी सम्भव नहीं है कि हम बाइबिल के इस केवल कर्ण मधुर शब्द के झूठ अभिप्राय को न समझें "ईश्वर के चुने हुये लोग" ! ! ! इस में नीरे झूठ के अतिरिक्त कुछ नहीं है जो यहूदियों के पांधे प्रोहित और सरदारों ने अपने नीचपन को छिपाने के लिये कपोलकल्पना की है और जिस पर वे स्त्री लोग विश्वास करते है जो उन से किसी प्रकार निर्दयता में कम नहीं है ॥

काल की समाचार की दोनों पुस्तकों में इन्ही अपराधों का पुनः उल्लेख है परन्तु इनके ग्रन्थकार ने कई राजाओं का वृत्तान्त छोड़ दिया है अतएव उनका इतिहास कई स्थानों में खण्डित है; इनमें और राजाओं की पुस्तक में भी कई जगह यहूदाह से इसराएल और इसराएल से यहूदाह का हेर फेर दिया है कि समग्र वृत्तान्त गड़बड़ हो जाता है। एकही ग्रन्थ में ऐतिहासिक विरोध पाया जाता है जैसे राजाओं की दूसरी पुस्तक के पहले पर्व की ८ वीं आयत में यद्यपि स्पष्ट रीति से लिखा है कि इसराएल के राजा अहाबिआ की मृत्यु के उपरान्त आहब के वंश के जेहोरम या जोरम ने उसके स्थान में यहूदाह के वादशाह जेहोशफट के पुत्र जेहोरम या जोरम के दूसरे वर्ष में राज्य करना आरम्भ किया; और उसी पुस्तक के ८ वें पर्व की १६ वीं आयत में लिखा है कि इसराएल के राजा आहब के पुत्र जोरम के राज्य के ९ वें वर्ष में जोहोशुफट ने जो यहूदाह का राजा था राज्य आरम्भ किया; अर्थात् एक पर्व कहता है कि यहूदाह वंश के जोरम राजा ने इसराएल वंश के जोरम राजा के दूसरे वर्ष में राज्यारम्भ किया और दूसरा पर्व कहता है कि इसराएल वंश के जोरम राजा ने यहूदाह वंश के जोरम राजा के ९ वें वर्ष में राज्यारम्भ किया।

एक इतिहास में जो अत्यन्त भारी वात किसी राजा के समय में दी है सो दूसरे इतिहास के उसी राजा के वृत्तान्त

में नहीं पाई जाती जैसे सुलेमान की मृत्यु के उपरान्त जो दो विरोधी राजा हुये है उनके नाम रेहीबोआम और जेरोबोआम है—अब राजाओं की पहली पुस्तक के १२ वें और १६ वें पर्व में यह हाल दिया है कि जब जेरोबोआम राजा वेदी पर बलिदान चढ़ा और धूप जला रहा था तो एक मनुष्य (जिसे वहां ईश्वर का मनुष्य कहा है) वेदी के विरुद्ध में पुकार के यों बोला * "कि हे वेदि २ परमेश्वर यों कहता है कि देख यूसियाह नामक एक बालक दाऊद के घराने में उत्पन्न होगा और वह ऊंचे स्थानों के याजकों को जो तुझपर धूप जलाते है तुझी पर चढ़ावेगा और मनुष्यों के हाड़ तुझ पर जलाये जावेंगे" "और ऐसा हुआ कि जब जेरोबोआम राजा ने ईश्वर के जन का कहना सुना जिसने बैतएल की वेदी के विरुद्ध पुकारा था तो उसने वेदी पर से अपना हाथ बढ़ा के कहा कि उसे पकड़ लेओ सो उस का हाथ जो उसने उस पर बढ़ाया था झुरा गया ऐसा कि वह उसे फिर सकोड़ न सका"।

इस में कोई भी सन्देह नहीं कि ऐसा भारी वृत्तान्त जो इसराइलियों के दो विभाग होतेही एक दल के सरदार पर दण्ड-रूपेण हुआ यदि सत्य होता तो दोनों इतिहासों में पाया जाता; यद्यपि आजकल के समय में क्रिश्चियन लोग अपने भविष्यवक्ताओं के सब लेखों का विश्वास करते हैं परन्तु

* १६ वें पर्व की दूसरी आयत देखो।

यह स्पष्ट जान पडता है कि वे भविष्यवक्ता और इतिहास-लेखक एक दूसरे का विश्वास नहीं करते थे, कारण यही है कि वे परस्पर एक दूसरे के प्रपञ्च से भली प्रकार भेदू थे।

राजाओ की पुस्तक मे इलियाह नामक भविष्यवक्ता का बहुत लम्बा चौडा हाल दिया है। यह वृत्तान्त कई पर्वों में है और अन्त को राजाओं की दूसरी पुस्तक के दूसरे पर्व के ११ वीं आयत में यों समाप्त किया है "और ऐसा हुआ कि ज्योंहीं वे दोनों * टहलते हुये बातें करते चले जाते थे तो देखो कि एक आग का रथ और आग के घोडे आये और उन दोनों को अलग किया और इलियाह बवण्डर मे होके स्वर्ग में चला गया"। वाह! वाह!! इस आश्चर्यमय किस्से का वृत्तान्त काल के समाचार का लेखक कहीं भी कुछ नहीं लिखता यद्यपि इलियाह का नाम तो उसने अवश्य लिखा है और न कहीं वह उस किस्से का वृत्तान्त लिखता है जो उसी ग्रन्थ के २ रे पर्व की २४ वीं आयत में लिखा है अर्थात् जब इलीशा मार्ग में चला जाता था "तो देखो कि नगर के लडके निकले और उसे चिढा २ कहने लगे कि "चढ जा बे सिरमुंडे चढ़ जा सिरमुंडे"। तब इस ईश्वर के मनुष्य ने पीछे फिर के उन्हें देखा और परमेश्वर का नाम लेके उन्हें स्राप दिया तब वन में से दो भालू निकले और उन में से ४२ लडकों को फाड़ डाला"। इस लेखक ने उस किस्से पर भी मौन धारण किया है जो राजाओं की दूसरी पुस्तक के १३ वें पर्व में दिया है, जहां लिखा है कि जब वे लोग एक मृतक को गाड़

* दोनों अर्थात् इलियाह और इलीशा।

रहे थे जहां इलीशा गाड़ा गया था तो अचानचक उसका शरीर इलीशा की हड्डियों से छू गया और वह मृतक मनुष्य जी उठा और अपने पैरों के बल खडा हो गया (२१ वीं आयत देखो) उस किस्से में यह नहीं लिखा है कि उन्होंने उस मनुष्य को जी उठने पर निकाल कर छोड़ दिया या पुनः उसी जगह जीतेही गाड़ दिया। इन सब व्यर्थ की बातों पर काल के समाचार के लेखक ने उसी प्रकार मौनावलम्बन किया है जैसे इन दिनों कोई इतिहासलेखक स्वयं झूठे बनने के भय से ऐसी २ व्यर्थ कपोलकल्पित बातें न लिखेगा—

अस्तु इन दोनों इतिहासलेखकों का परस्पर जो कुछ मतभेद और विरोध है परन्तु ये दोनों के दोनोंही उन लोगों के विषय में कुछ भी नहीं लिखते जो बाइबिल में भविष्यवक्ता कहलाते है और जिनके लेख से बाइबिल का अन्तिम भाग भरा है। हां, हिंजिकियाह के समय में जो "यसयियाह" हुआ है उसका साधारण उल्लेखमात्र इन दोनों इतिहासलेखकों ने हिजिकियाह के राज्यवर्णन के समय केवल एक या दो बेर किया है परन्तु शेष जो बचे हैं उनका नामोल्लेख तो दूर रहा कहीं "इशारा" मात्र भी नहीं है यद्यपि बाइबिल के सामयिक प्रमाणानुसार वे सब उसी समय में और उससे पूर्व में हुये हैं कि जिसका वृत्तान्त इन इतिहासों में दिया है। यदि वे लोग जिन्हें ये भविष्यवक्ता कहते हैं उस समय प्रसिद्ध और लेखनीय गिनती में होते जैसा कि ये बाइबिल के संग्रहकर्तागण बताते है तो यह कैसे हो सकता है कि इन दोनों इतिहासों में से एक में भी उनका नाम निशान तक भी नहीं पाया जाता।

हम पहलेहीं लिख चुके हैं कि राजाओं और काल के समाचार की पुस्तकों में मसीह के ९८८ वर्ष पूर्व तक का

हाल दिया है अतएव हम यह परीक्षा करते है कि इस समय के पूर्व तक कौन २ भविष्यवक्ता हो चुके है।

नीचे हम एक सूचीपत्र उन भविष्यवक्ताओं का प्रकाश करते है जो सामयिक प्रमाणानुसार मसीह के ५८८ वर्ष के पूर्व हो चुके है, और हम यह भी प्रकाश करते है कि वे लोग राजाओं तथा काल के समाचार की पुस्तकों के लिखे जाने के कितने वर्ष पूर्व हो चुके है।

नाम	मसीह के पूर्व का सन	राजाओं और काल के समाचार के पूर्व का सन	उल्लेख
यस्सयियाह	७६०	१७२	इसका नाम लिखा है
यरमियाह	६२९	४१	नोट देखो *
ईजेकियल	५९५	७	इसका नाम नहीं है
डानियल	६०७	१९	,,
होशिआ	७८५	९७	,,
जोएल	८००	२१२	,,
अमोस	७८९	१९९	,,
ओवादिया	७८९	१९९	,,
जोनाह	८६२	२७४	,,
मिकाह	७५०	१६२	,,
नाहुम	७१३	१२५	,,
हब्बाकूक	६२०	३८	,,
जेफानियाह	६३०	४२	,,
हज्जी, जकारियाह, मलाकी (५८८ वर्ष पूर्व)			

यह उर्द्धलिखित सूचीपत्र या तो फिर वाइबिल के इतिहासलेखकों के विपक्ष में ठहरा और या वाइबिल के भविष्यवक्ताओं के विपक्ष में हुआ——सो अब हम इस बात को इन्ही पांधो और टीकाकारों के विचार पर छोड़ देते है जो छोटी २ बातों पर अपनी बडी बुद्धिमता दिखाते है कि वे लोग स्वयं निर्णय कर लें कि जिन्हें ये भविष्यवक्ता बताते हैं और जिन्हें हम प्रथम भाग में कवि प्रमाणित कर चुके है उन्हें इन इतिहासलेखकों ने "कतवारू अथवा पनारु कहार की नाई अपने इतिहास में क्यों छोड दिया है"।

काल के समाचार की पुस्तकों पर हम को एक बात और वक्तव्य है जिसके उपरान्त हम वाइबिल के शेष पुस्तकों की परीक्षा आरम्भ करेंगे।

उत्पत्ति के पुस्तक की समालोचना करते समय हमने ३६ वें पर्व्व की ३१ वीं आयत का उल्लेख देकर यह दिखलाया था कि इससे स्पष्ट उस समय का अभिप्राय पाया जाता है कि जब इसरायेल के सन्तान पर राजा लोग राज्य करना आरम्भ कर चुके थे——हम यह भी दिखला चुके है कि यह आयत और ३९ वें पर्व का शेष भाग काल के समाचार के पहिले पर्व्व के ४३ वीं आयत से * ज्यों की त्यों एक २ शब्द पर्य्यन्त नकल कर लिया गया है अतएव यद्यपि उत्-

* जहां सब इतिहास सिलसिलेवार लिखा है।

त्ति की पुस्तक बाइबिल में सब से पूर्व रक्खी गई है और मूसा की लिखी कहलाती है परन्तु अब यह स्पष्ट जान पड़ता है कि इस पुस्तक के रचयिता का पता नहीं है और यह काल के समाचार की पुस्तक के उपरान्त लिखी गई है अतएव इसकी रचना मूसा के समय से कम से कम ८६० वर्ष उपरान्त ठहरती है।

अब हम एज़रा के पुस्तक की परीक्षा आरम्भ करते हैं।

इस कपोलकल्पित बाइबिल का जैसा गड़बड़ क्रम है उसे देखने के लिये जरा एजरा के पुस्तक की प्रथम तीन आयतें और काल के समाचार की अंतिम दो आयतों का मिलान करना चाहिये कि कैसे काट छाट कर दो का तीन या तीन का दो कर डाला है। या तो ग्रंथकारों को स्वय अपने ग्रथों का हाल नहीं मालूम है या उनके संग्रहकर्ताओं को ग्रथकारों का हाल न मालूम था।

काल के समाचार की अंतिम दो आयतें।

आयत २२ वीं—अब फारस के राजा सायरस के पहिले वर्ष जिस से यरमियाह के द्वारा परमेश्वर का बचन पूरा होवे परमेश्वर ने फारस के राजा सायरस के मन को उभारा कि उसने अपने सारे राज्य में सर्वत्र प्रचार करवाया और यह कहके लिखवाया भी॥

आयत २३ वीं—कि फारस का राजा सायरस कहता है कि स्वर्ग के ईश्वर परमेश्वर ने पृथिवी के सारे राज्य मुझे दिये

है और उसने अपने लिये यहूदाह के देश के यरूशलम में घर बनवाने को मुझे आज्ञा दी है सो जो उस्के सारे लोगों में तुम्हें है उसका ईश्वर परमेश्वर उसके साथ हो और वह चढ़ जावे ॥

एज़रा के पुस्तक की पहिली तीन आयतें ।

आयत १—और जिसतें परमेश्वर का वचन यरमियाह के द्वारा से पूरा होवे परमेश्वर ने फारस के राजा सायरस के मन को उभाड़ा कि फारस के राजा सायरस के राज्य के पहिले बरस में उसने अपने सारे राज्य में प्रचार करवाया और यह कह के लिखवाया भी ॥

आयत २—कि फारस का राजा सायरस यों कहता है कि परमेश्वर स्वर्ग के ईश्वर ने पृथ्वी का सारा राज्य मुझे दिया है और यहूदाह के यरूसलम में अपने लिये एक मन्दिर बनाने को मुझे आज्ञा की है ॥

आयत ३—उसके सारे लोगों में से तुम लोगों में कौन है उसका ईश्वर उसके संग होवे और वह यहूदाह के यरूसलम को चढ़ जावै और परमेश्वर इसराएल के ईश्वर का मन्दिर बनावे (वही ईश्वर है) जो यरूसलम में है ॥

काल के समाचार की अन्तिम आयत अचानचक बीच ही में टूट जाती है क्योंकि शब्द चढ़ जाये से कुछ पता नहीं लगता कि कहां चढ़ जाये—इस अचानचक टूट तथा पुस्तकान्तरों में उसकी पूर्ति देखने से विदित होगा कि कैसी गड़

बड़ता और अज्ञता के साथ बाइबिल की रचना हुई है और उसके संग्रहकर्ताओं ने जैसा मन में आया सग्रह कर दिया अतएव हम कैसे इन बातों का विश्वास कर सकते है *

* बहुतसी टूटी फूटी और अर्थरहित आयतै बाइबिल में हमने ऐसी पाई है जिन्को हम ग्रन्थ भागमें न लिख कर टिप्पणी में दो उदाहरण दिखला देते हैं जैसे सामुएल की पहली पुस्तक के १३ वें पर्व की पहली आयत से देखो जहां यों लिखा है कि "साऊल ने एक बरस राज्य किया और जब वह इसराएल पर दो बरस राज्य कर चुका तब साऊल ने इसराएल में से तीन सहस्त्र अपने लिये चुने" इत्यादि—इस आयत का प्रथम भाग अर्थात् साऊल ने एक वर्ष राज्य किया एक प्रकार व्यर्थ है क्योंकि इस से यह विदित नहीं होता कि उसने क्या २ किया और साल भर के उपरान्त फिर क्या हुआ —फिर यह कैसी भारी बुद्धिमत्ता है कि अभी तो कहते हैं कि एक वर्ष राज्य किया और फिर साथही कहते है कि दो वर्ष राज्य किया:—जब उसने दो वर्ष राज्य किया तो उसका एक वर्ष राज्य करना असम्भव है:—

दूसरा अर्थरहित और अभिप्रायशून्य वृत्तान्त जोशुआ के ५ वें पर्व में मिलता है जहा लेखक ने एक ईश्वरीय दूत की कहानी लिखी है कि वह जोशुआ को दिखलाई पड़ा—

निश्चयता की तो केवल यही बात एज़रा के पुस्तक में पाई जाती है कि वह किस समय लिखी गई है अर्थात् इसकी रचना मसीह से ५३६ वर्ष पूर्व जब यहूदी लोग बाबिलन की क़ैद से लौटे

बस बीचही में यह किस्सा भी बिना किसी फल के टूट जाता है.—वह किस्सा यों है कि—

१३ वीं आयत —और ऐसा हुआ कि जब यहूशूअ यरीहो के पास था तो उसने अपनी आंख ऊपर की ओर उठाई और देखा कि उसके सामने एक मनुष्य तल्वार हाथ में खैंचे हुये खड़ा है तब यहूशूअ उस्के पास गया और उस से पूछा कि तू हमारी ओर है अथवा शत्रुओं की ओर ? १४ वीं आयत—और वह बोला नहीं परन्तु मैं अभी परमेश्वर की सेना का अध्यक्ष हो के आया हूं तब यहूशूअ भूमि पर औंधा हुआ और दडवत की और उसे कहा कि मेरा प्रभु अपने सेवक को क्या आज्ञा करता है। १५ वीं आयत—तब परमेश्वर की सेना के अध्यक्ष ने यहूशूअ से कहा कि अपने पांव से अपना जूता उतार क्योंकि यह स्थान जहा तू खड़ा है पवित्र है और यहूशूअ ने ऐसाही किया—फिर आगे क्या ! कुछ नहीं क्योंकि यहीं 'ऐसाही किया' पर पर्व्व समाप्त है।

या तो यह क़िस्सा बीचही में टूट गया है या कि किसी ठठोल यहूदी ने जोशुआ पर अपने तईं ईश्वर का प्रेषित मानने के लिये दिल्लगी उड़ाई है, परन्तु बाइबिल के संग्रहकर्ताओं ने

है हुई है—एज़रा (जिसका नाम अपाक्रिफा की पुस्तक में यहूदी टीकाकारों ने एसट्रास लिखा है) उन्हीं लौटे हुये लोगों में से है और सम्भव है कि उसी ने उस वृत्तान्त का हाल लिखा है। नहूमिया भी, जिसकी पुस्तक एज़रा के उपरान्त पाई जाती है उन्हीं लौटे हुओं में से है और सम्भव है कि उसी ने यह दूसरा वृत्तान्त उन्हीं सब बातों का लिखा है जिस पर उस का नाम प्रसिद्ध है परन्तु इन वृत्तान्तों से यहूदियों

इस दिल्लगी के भेद और अभिप्राय को न समझ कर उसे गंभीर वार्ता की नाईं लिख दिया है—दिल्लगी तो स्पष्टही है क्योंकि पहिले तो लेखक ने एक ईश्वरीय दूत को मनुष्य रूप में नगी तलवार लिये पेश किया है जिसके पैरों पर जोशुआ ने गिर कर दण्डवत और पूजन किया है (जो उन्हीं के दूसरी आज्ञा के विरुद्ध है) और तब इस आश्चर्य्यमय स्वर्गीय सन्देश का अन्त यह है कि उस दूत ने जोशुआ से जूता उतारने को कहा:—भई वाह! पैजामा उतारने को भी क्यों न कह दिया—

यह जान पड़ता है कि यहूदियों को अपने सरदार के कहे हुये सब वाक्यों पर विश्वास नहीं होता था क्योंकि यह तो उसी बोल चाल से स्पष्ट है जो उन्होंने मूसा के पहाड़ पर चढ़ जाने के उपरान्त कहा था—उन्होंने कहा कि हम नहीं जानते कि इस मूसा नामक पुरुष का क्या हुआ (यात्रा के पुस्तक के ३२ वें पर्व्व की पहिली आयत देखो)—

के अतिरिक्त दूसरों से क्या सम्बन्ध है क्योंकि यह उन्हीं के जाति का इतिहास है, हम लोगों का अथवा किसी दूसरे का इससे कोई सम्बन्ध नही है, और इसमें ईश्वर का वचन तो उसी प्रकार है जैसे काश्मीर, नैपाल, चीन या और किसी देश के इतिहास में है—ऐसा ईश्वर का वचन तो आलिफलैला हातमताई और चारदरवेश में भी है ।

परन्तु ऐतिहासिक वृत्तान्तों में भी इन दोनो लेखकों का कोई विश्वास और भरोसा नहीं है—एज़रा के दूसरे पर्व में, लेखक ने एक सूचीपत्र दिया है जिसमें उस ने उन जाति और घराना का नाम और पुरुषों की गिनती लिखी है जो बाइबिल से लौट कर यरूसलम को आये थे—यह जान पड़ता है कि इस ग्रन्थ के लिखने का मुख्य अभिप्राय इन गिनतियों ही के लिखने का है परन्तु इसमें ऐसी भारी भूल है कि सभी अभिप्राय नष्ट हो गया है ।

इसके लेखक ने इस प्रकार गिनती आरम्भ की है कि दूसरे पर्व की ३ री आयत पेरास की सन्तान २१७४; चौथी आयत से फातिया के सन्तान ६७२ इसी प्रकार सब घरानों की गिनती लिखी है अन्त को ६४ वीं आयत में ग्रन्थकार ने इन सभों का कुल जोड़ ४२३६० लिखा है ॥

परन्तु यदि कोई मनुष्य थोड़ा भी परिश्रम करके इन सब गिनतियों को लिखकर जोड़ डाले तो सब का जोड़ २९८१८

पावैगा अर्थात् जिस्में १२५४२ की भूल है * तो अब कहिये बाइबिल के किस लेख पर क्या विश्वास किया जाय ?

* इज़रा के दूसरे पर्व के अनुसार लौटे हुये मनुष्यों की संख्या ।

दूसरी आयत.			पहले का जोड़		१५९११
पर्व ३	,,	२१७२	पर्व २४	,,	४२
४	,,	३७२	२५	,,	७४३
५	,,	७७५	२६	,,	६२१
६	,,	२८१२	२७	,,	१२२
७	,,	१२५४	२८	,,	२२३
८	,,	९४५	२९	,,	५२
९	,,	७६०	३०	,,	१५६
१०	,,	६४२	३१	,,	१२५४
११	,,	६२३	३२	,,	३२०
१२	,,	१२२२	३३	,,	७२५
१३	,,	६६६	३४	,,	३४५
१४	,,	२०५६	३५	,,	३६३०
१५	,,	४५४	३६	,,	९७३
१६	,,	९८	३७	,,	१०५२
१७	,,	३२३	३८	,,	१२४७
१८	,,	११२	३९	,,	१०१७
१९	,,	२२३	४०	,,	७४
२०	,,	९५	४१	,,	१२८
२१	,,	१२३	४२	,,	१३९
२२	,,	५६	५८	,,	३९२
२३	,,	१२८	६०	,,	६५२
उधर ले गये		१५९११	कुल जोड़		२९८१८

नहूमिया ने भी इसी प्रकार एक सूचीपत्र लौटते हुये घरानों और परुषों के गिनती का दिया है उसने भी इज़रा की नाई ७ वें पर्व की ८ वीं आयत से यों आरम्भ किया है कि पेरास की सन्तान २२७२ इत्यादि योंही सब घरानों का हाल दिया है—इसमें और एजरा के सूचीपत्र में कई बातों का भेद है ६६ वें आयत में नहूमिया ने भी इजरा के नाई कुल जोड ४२३६० दिया है परन्तु उसके फुटकर गिन्तियों के जोड़ने से ३१०८९ होता है अर्थात् इसमें भी ११२७१ की भूल हैं—बाइबिल सरीखे पुस्तक बनाने में ये ग्रंथकार बहुत अच्छे हैं परन्तु जहा सत्यता और यथार्थता का कार्य्य है वहां इन से काम नहीं चल सकता। अब इसके आगे अस्तर की पुस्तक है—यदि बीबी अस्तर अपने को शेरशाह की सुरैतिन बनने में इज्जत समझती है और रानी वशाती * की सौत बनने में अपना बड़प्पन मानती है तो अस्तर और उसके पिता

* एक बेर राजा शेरशाह (Ahasuerus) ने अपने प्रधानों से शराब पी कर कहा कि हमारी रानी वशती में राजमुकुट पहिरा कर हमारे आगे लाओ जिसमें लोगों और अध्यक्षों को उसकी सुन्दरता दिखाई जावे क्योंकि वह बड़ी रूपवती थी परन्तु रानी वशती ने भरे दरबार में जहां लोग सात दिन से शराब पीकर मस्त हो रहे थे अपना स्वांग बनाना अनुचित समझ कर आना अस्वीकार किया।

(अविश्वैत) का भतीजा मारद कि जिस ने उसे राजा की सुरैतिन बनाया था अपनी इज्ज़त बनावें और सम्हालें, हम लोगों का विशेषतः मेरा इस्से कोई सम्बन्ध नहीं है — इसके अतिरिक्त इस किस्से के रचयिता का भी पता नहीं है सो अब हम अयूब की पुस्तक की परीक्षा करते है।

जितनी पुस्तकों की हम समालोचना कर चुके है उन सभों की अपेक्षा अयूब की पुस्तक कुछ अच्छी है। इस पुस्तक में छल कपट अथवा हत्या करने की आज्ञा कहीं नहीं दी गई है और न इनका वृत्तान्त कहीं पाया जाता है किन्तु इसमें एक ऐसे गम्भीर आपत्तिग्रसित मनुष्य के जीवन का हाल है जो दुःख के कारण मृत्यु को जीवन की अपेक्षा अच्छा जानता है तथापि सब आपत्तियों को झेलकर चित्त के सन्तोष के साथ जीवन निर्वाह करता है।

इस ग्रन्थ के प्रथम भाग में हम अयूब की पुस्तक का कुछ सत्कार लिख चुके है अब यह विदित हुआ है कि यह पुस्तक बाइबिल के पुस्तकों में से नहीं है परन्तु दूसरे जिन्टाइल लोगों की पुस्तक में से अनुवाद करके मिला ली गई है जैसा कि अब्नेज़रा और स्पिनोसा नामक दो इब्रानी टीकाकारों की अनुमति से विदित होता है।

यह उस पुस्तक ही से विदित होता है कि इस ग्रन्थ का लेखक विज्ञानशास्त्र का जाननेवाला था परन्तु यहूदी

लोग तो विज्ञानशास्त्र के पूर्णतया अनभिज्ञ थे। ज्योतिष के नाम प्लियाडिज, ओरियन, अरक्तूरस इत्यादि सब यूनानी भाषा के नाम है न कि इब्रानी; और बाइबिल से कहीं विदित नहीं होता कि यहूदी लोग ज्योतिषविद्या जानते थे अतएव उन्होंने अनुवाद करने में यूनानी भाषा के नामों को ज्यों का त्यों अपनी इब्रानी भाषा में रख लिया।

ज्ञान पड़ता है कि बाइबिल बनानेवाले बिचारे बड़े सोच विचार में पड़े थे कि वे इस अयूब की पुस्तक को क्या करें और बाइबिल में किस जगह स्थान दें क्योंकि इसमें कोई ऐतिहासिक वृत्तान्त वा आगे पीछे का सम्बन्ध तो है ही नहीं जो बाइबिल में इसका ठीक ठिकाना लगता। परन्तु यदि ये लोग अपनी मूर्खता सबको विदित किये होते तो कैसे काम चलता अतएव उन्होंने मसीह के पूर्व १५२० का सन् इसके लिये निर्धारित किया अर्थात् इसका वह समय ठहराया जब इसराएल लोग मिश्र में बँधुये थे यदि हम इसे इससे भी हजार वर्ष पूर्व का कहें तो उन बिचारों के पास कोई ऐसा प्रमाण नहीं है कि अपने कहे हुये सन की दृढ़ता प्रमाणित कर सकें। अस्तु यह पुस्तक बाइबिल में सबसे पुरानी है और केवल यही एक ऐसी पुस्तक बाइबिल भर में है कि जिसे मनुष्य बिना घृणा और मानसिक खेद के पढ़ सकता है।

अब गीतों की पुस्तक पर बहुत समालोचना की आव-

श्यकता नहीं है । कईयों में तो अच्छी शिक्षा है परन्तु कईयों में बदला लेने की बातै भरी है । इन्हें लोग दाऊद की बनाई हुई गीतै कहते है सो बड़ी भूल है। ये तो भिन्न २ कवियों के लेख का संग्रह है जो भिन्न २ समयों में हो गये है जैसे १३७ वीं गीत दाऊद के अनुमान ४०० वर्ष उपरान्त लिखी गई है क्योंकि वह उस समय के स्मरण में बनाई गई है जब नबूकद-नजर राजा यहूदियों को बँधुवा बनाकर बाबिलन में ले गया था जैसे लिखा है कि "बाबुल की नदियों पर वहां जब हम ने सैहून को स्मरण किया तो बैठे और रोये भी । बेंत के वृक्षों पर उनके मध्य हमने अपनी बीणों को लटका दिया । क्योंकि जो लोग हमें बंधुआ बनाकर ले गये थे सभ से बोले कि सैहून की गीतों में से हमे एक गीत गा कर सुनाओ" जैसे कोई काबुली, कश्मीरी, या चीनवाले से कहे कि अपने देश की गीत हमें सुनाओ । इस उल्लेख से हमारा यही तात्पर्य्य है कि दाऊद इन का लेखक न था । क्या आश्चर्य्य है कि समय, स्थान अथवा ऐतिहासिक बातों का बिना विचार कियेही अ-पने मन से लोगों का नाम बाइबिल के ग्रंथकारों ने लिखमारा है जो किसी प्रकार उन ग्रथो के रचयिता नहीं हो सकते ॥

दृष्टान्त की पुस्तक—गीतों की पुस्तक की नाई यह भी संग्रह है सो भी केवल यहूदियों के ग्रन्थ से नहीं परन्तु अन्य जा-तियों के ग्रन्थ से भी इस में संग्रह किया गया है इस के अ-

तिरिक्त कई एक दृष्टान्तों की रचना (जो सुलेमान की लिखी कहलाती है) सुलेमान की मृत्यु के २५० वर्ष उपरान्त हुई है जैसे २५ वें पर्व की पहली आयत में लिखा है कि "ये भी सुलेमान के दृष्टान्त है जिन्हें यहूदाह के राजा हिजकियाह के लोगों ने नकल किया"। हिजकियाह राजा सुलेमान के २५७ वर्ष उपरान्त हुआ है॥ प्राय ऐसी चलन हो गई है कि जो मनुष्य बहुत प्रसिद्ध और नामी हो जाता है उसके नाम से लोग अनेक चीजें बना लेते है और यही हाल सुलेमान का भी है। उन दिनों दृष्टान्त बनाने की परिपाटी पड़ गई थी जैसे आज कल बहुत से लोग दिल्लगी के किस्से कहानियां बना कर अकबर बादशाह और बीरबर मन्त्री का नाम रख देते है। उपदेशको की पुस्तक का भी रचयिता सुलेमानही कहलाता है यद्यपि यह सत्य तो नहीं है परन्तु इस में बुद्धिमता पाई जाती है यह किसी सुलेमान सरीखे विषयों में वृद्ध का ही बुद्धि विचार जान पड़ता है जो भली प्रकार संसार का भोग करके पीछे कहता है कि सब वृथा है। यह तो वही मसल है "नौ सौ चूहे खाकर बिल्ली हजको चली" बाइबिल मे सुलेमान की जितनी चालचलन झलकती है उस से जान पड़ता है कि वह चतुर वैभवोन्मत्त और अन्त में उदास प्रकृति का मनुष्य था। उसने संसार में आकर बहुत व्रत किये और अन्त को ५८ वर्ष की अवस्था में विरक्त होकर संसार को त्याग कर गया।

सुलेमान की ७०० विवाहिता स्त्रीयां और ३०० सुरैतिन थीं यद्यपि इसे लोग सुख की परम अवधि अनुमान करते हैं परन्तु यथार्थ में यह दुःख की परम अवधि है क्योंकि जिस्का प्रेम बँटा हुआ है उसे स्वप्न में भी सुख नहीं हो सकता। हम नहीं जानते कि ऐसी अवस्था में सुलेमान की बुद्धिमत्ता कहा चली गई थी, इसमें कोई सन्देह नहीं कि जिनके सुख के नाश करने के हम कारण है उनके सहवास में हमें सुख प्राप्त नहीं हो सकता ॥

वृद्धता के सुख के लिये लड़कपन और युवावस्था में उन बातों का अभ्यास होना चाहिये जिनका उत्तम फल उस समय भी सहायकारी हो। जो लोग केवल सांसारिक और इन्द्रिय सुखों में अपनी युवावस्था गँवाते है वे वृद्धावस्था में सुखी नहीं हो सकते।

सुलेमान की गीतें सब "आशक़ाना" है और मूर्खता की परम सीमा को प्राप्त है परन्तु इन्हीं को कितने बुद्धिमान् ईश्वरीय कहते है। बाइबिल के संग्रहकर्ताओं ने इस ग्रंथ को उपदेश की पुस्तक के उपरान्त रक्खा है और इस की रचना का सन मसीह से १०१४ वर्ष पूर्व दिया है जिस समय उन्हीं के सामयिक प्रमाणानुसार सुलेमान की अवस्था १९ वर्ष की थी कि जब वह अपने महल में विवाहिताओं तथा सुरैतिनों का सग्रह कर रहा था। इस में बाइबिल के संग्रहकर्ताओं

में मिस्र का बोझ पांचवें में समुद्र के अरण्य का बोझ दर्शन की तराई का बोझ २ इत्यादि न जाने इन से क्या अभिप्राय है।

हम पहले दिखला चुके है कि काल के समाचार की पुस्तक की अन्तिम दो आयतें इजरा के प्रथम तीन आयतों से मिलती हैं इस से विदित होता है कि बाइबिल के संग्रह, कर्ताओं ने भिन्न २ ग्रन्थ रचयिताओं के लेखों को अज्ञानता के कारण एक-दूसरे में मिला लिया है केवल इस से भी बाइबिल की सत्यता में बड़ा भारी बट्टा लगता है इस से भी भारी एक उदाहरण यसयिआह की पुस्तक में पाया जाता है जिस में ४४ वें पर्व का अन्तिम और ४५ वें पर्व का प्रथम भाग यसयिआह का लिखा नहीं हो सकता परन्तु वह किसी ऐसे व्यक्ति का लिखा है जो यसयिआह की मृत्यु के १५० वर्ष उपरान्त हुआ है।

ये पर्व साइरस राजा के धन्यवाद में लिखे गए हैं जिस ने यहूदियों को बाबिलोनियन की कैद से यरूसलम को लौट जाने और उस नगर तथा मंदिर बनाने की आज्ञा दी है ४४ वें पर्व की अन्तिम और ४५ वें पर्व की आरम्भ की आयतें यों है "और सायरस के विषय कहता है कि वह मेरा चरवाहा है और वह मेरे समस्त अभिलाषा को पूरा करेगा हां यरूसलम से यह कहते हुये कि तू बनाई जावेगी और मन्दिर से यह कि तेरी नेव डाली जायगी । परमेश्वर अपने अभिषिक्त सायरस से जिसका दहिना हाथ मैंने पकड़ा है जिससे उसके

आगे जातिगणों को लाता हूं और राजाओं की कटि मै खोलूंगा जिसतें उसके आगे दोहरे द्वारों को खोल दूं और फाटक वन्द न किये जायेंगे । मै तेरे आगे चलूंगा इत्यादि" कैसी भारी अज्ञता औ ढिठाई ईसाइयों की है कि इतने पर भी ये लोग संसार को यह विश्वास दिलाया चाहते हैं कि यह पुस्तक यसयियाह की लिखी हुई है जब कि उन्हीं के सामयिक प्रमाणानुसार एसैआह ६९८ वर्ष मसीह के पूर्ववाले साल में * मरा; और सायरस राजा ने उन्हीं के सामयिक प्रमाणानुसार मसीह से ५३६ वर्ष पूर्व यहूदियों को यरूसलम लौट जाने की आज्ञा दी इन दोनो वृत्तान्तों में १६२ वर्ष का अन्तर है हम समझते है कि वाइविल के संग्रहकर्ताओं ने उन पुस्तकों को स्वयं नहीं बनाया है परन्तु इधर उधर की फुटकर वातें चुन करके सग्रह कर दिया है जिस्का नाम जो जी में चाहा ग्रन्थकर्ता ने रख दिया ।

हम देखते है कि इञ्जील वनानेवालों ने इस पुस्तक के प्रत्येक भाग को इस प्रकार घुमाया फिराया है कि वे लोग इससे यह अर्थ निकाला चाहते है कि ये सब मसीह के विषय में भविष्यवाणिया है जो कुआरी से उत्पन्न होनेवाला था ।

यसयिआह के ७ वें पर्व की १४ वीं आयत में यों लिखा है कि देखो एक कुआरी गर्भवती होगी और बेटा जानेगी, वे

* अर्थात् इज़कियाह राजा की मृत्यु के उपरान्तही।

लोग कहते है कि यह लक्ष मसीह और उसकी माता मरीयम पर है यह बात अनुमान १५०० वर्ष से समग्र खीष्ट प्रदेश में फैली और मानी जाती है और यहां लों इस बात पर विश्वास उन लोगों का है कि विरलाही कोई प्रदेश बचा होगा जहां ऐसे विश्वास के कारण सिरकटौवल न भई हो। हमारा इससे कोई सम्बन्ध नहीं है अतएव हम इसी विषय पर प्रमाण देंगे कि बाइबिल विश्वसनीय नहीं है तथापि हम यह दिखलाते है कि इस आयत का इस प्रकार लक्ष निकालना कदापि सङ्गत नहीं है।

एसैयाह इस आयत से आहज़ राजा को भुलावे में डालता था या नहीं पीछे देखा जायगा हमारा यह अभिप्राय है कि इस आयत का लक्ष जैसे हम पर नहीं है इसी प्रकार मसीह पर भी नहीं हो सकता।

हम पहिले कह चुके है कि यहूदी लोग दो भाग में विभक्त हो गये थे एक इसराएल और दूसरे यहूदाह;—यहूदाह के राजाओं की राजधानी यरूसलम नगरी थी। एक समय सिरिया प्रदेश के राजा और इसराएल के राजा ने मिलकर यहूदाह के राजा आहज़ पर चढाई की और यरूसलम पर आक्रमण किया तब आहज़ और उस्के लोग डर गये जैसा कि दूसरी आयत में लिखा है कि "उनके हृदय कांप उठे जैसे आंधी में जङ्गल के वृक्ष कांपने लगते है"।

ऐसी अवस्था में इसैयाह ने आहज़ राजा से कहा और ईश्वर का नाम लेकर विश्वास दिलाया कि यह दोनों राजा तुझ से नहीं जीत सकेंगे और इस पर आहज़ का विश्वास दिलाने के लिये उसने उस से कहा कि तुम कोई चिन्ह मांगो। आहज़ ने स्वीकार न किया और कहा कि मै ईश्वर की परीक्षा न करूंगा जिस पर यसैयाह ने १४ वीं आयत में यों कहा कि अच्छा ईश्वर तुझे आपही चिन्ह देगा देख एक कुंआरी गर्भवती होगी और बालक जनेगी। फिर १६ वीं आयत में लिखा है क्योंकि उस्से पहले कि वह लड़का बुराई से घिन करना और भलाई को चुन लेने का ज्ञान जाने वह भूमि जिस्के दो राजाओं के कारण से तू भयमान है उजाड़ हो जायगी" यही चिन्ह था और इस प्रतिज्ञा के पूर्ण होने का समय भी दिया था अर्थात् पूर्व इस्के कि वह लड़का बुराई से घिन करना और भलाई को चुन लेने का ज्ञान जाने।

जब इस प्रकार एसैयाह कह चुका तो अपने तईं झुठाई से बचाने के लिये उस को इस बात की आवश्यकता हुई कि किसी न किसी प्रकार उस चिन्ह को दिखलावे। पाठक लोग जान्तेही है कि इस विचित्र और विलक्षण संसार में किसी समय में भी गर्भवती कुँआरी लड़की पाना या उसे गर्भवती बना डालना कुछ भी कठिन नहीं है क्योंकि हम नहीं समझते कि प्राचीन समय के ये भविष्यवक्ता नामक लोग आज कल

के लोगों से कुछ अधिक विश्वासपात्र थे,—अस्तु जो कुछ हो आठवें पर्व की दूसरी आयत में लिखा है "मै अपनी सा- क्षी के लिये विश्वस्त साक्षियों को लूंगा अर्थात् ऊरियाह या- जक और यबरकियाह के बेटे जकरियाह को और मैने आ- गमज्ञानी से समीपता किई और वह गर्भिणी हुई और बेटा जनी" बस यही लड़के और कुँआरी का मूर्खतामय क़िस्सा है और इसी किस्से को उलट कर मत्ती के पुस्तक तथा पांधो ने इंजील की रचना की है और इस किस्से का लक्ष मसीह को किया है जिसे वे कहते है कि वह पवित्र आत्मा द्वारा कुआरी कन्या से उत्पन्न हुआ अर्थात् इस व्यर्थ के किस्से के कहे जाने के ७०० वर्ष उपरान्त इसका लक्ष बताते हैं, यह बात उतनीहीं झूठ है जैसे ईश्वर सत्य है ॥

परन्तु अब आगे का वृत्तान्त पढ़िये तो इस यसैयाह ना- मक सच्चे भविष्यवक्ता की और भी सचाई प्रगट होती है जिस का वृत्तान्त यद्यपि यसैयाह के पुस्तक में तो नहीं दिया है तथापि कालके समाचार की दूसरी पुस्तक के २८ वें पर्व में लिखा है कि यसैयाह ने जो वचन ईश्वर के नाम पर यहूदाह के राजा आहज को दिया था कि ये दोनों राजा जो तुझ से लड़ते है पराजित होगे सो बिल्कुल झूठ निकला क्योंकि अ- न्त में वही दोनों जीते और आहज हार गया और उस के १२०००० मनुष्य मारे गये; यरूसलम का नगर लूटा गया

और दो लाख स्त्री लडके और लडकिया बँधुये किये गये इतना तो इस सत्यवादी और सज्जन यसैयाह के विषय में और उसकी पुस्तक के बारे में हुआ, और अब यरमियाह की पुस्तक देखिये।

यह भविष्यवक्ता उस समय में हुआ है कि जब यहूदाह के अन्तिम राजा जेडिकियाह के राज्य में नबूकदनजर राजा ने यरूसलम नगर को घेरा था और इस बात का उस पर अत्यन्त सन्देह था कि वह नबूकदनजर की ओर हो कर विश्वासघाती बन गया था। जो कुछ लेख यरमियाह का मिलता है उस से वह दोनों तरफ का भेदी जान पड़ता है १८ वें पर्व में उसने जो कुम्हार और मिट्टी के विषय में रूपक लिखा है उस ने ऐसी चतुरता से सावधानी की है कि यदि उस के भविष्य कथित लेख घटनाओं में कोई विरुद्धता पाई जाय तो उसे निकल भागने का स्थान बना रहे।

इसी पर्व की ७ वीं ८ वीं आयत में यह लिखता है कि ईश्वर यों कहता है कि "जब कभी मै किसी जातिगण के अथवा राज्यके उखाड़नेके और गिरादेनेके और नाश करनेके विषय में कहूँ और जिस जातिगण के विषयमें मैने कहाहै सो अपनी दुष्टता से फिरे तो जो बुराइ मैने उस पर करने को ठानी थी उस्से पछताऊँगा" यहतो एक पक्षके लिये हुआ। अब दूसरे पक्षका हाल सुनिये, जो ९ वीं और १० वीं आयत में लिखा है

"और जब कभी मै किसी जातिगणके अथवा राज्यके बनाने और लगाने के विषय में कहूं और वह वही करे जो मेरी दृष्टि में बुराई है जिस से मेरे शब्द को न माने तो जो भलाई मैने उसके निमित्त करने को कहा था उस से मै पछताऊँगा" यह दूसरे पक्षके लिये है और इस प्रकार की भविष्यवाणी कौन नहीं कर सकता? यहतो ईश्वर का सादृश्य मनुष्यसे देना ठहरा, क्योंकि ईश्वरको कभी पछतानेकी आवश्यकता नहीं पडती सो ऐसी २ मूर्खताकीं बातै बाइबिलके अतिरिक्त दूसरी पुस्तकों में जल्दी न मिलेंगी ॥

अब ग्रन्थ के ग्रन्थकर्ता के विषयमें तो इस पुस्तकके पढ़ने ही से जान पड़ेगा । यद्यपि इस्की कोई २ आयतै यरमियाह की कही हुई हों परन्तु वह इस ग्रन्थका रचयिता नहीं था इसके ऐतिहासिक भाग (जिन्हे ऐतिहासिक कहनेही में सन्देह है) अत्यन्तही गड़बड़ है। एक ही वृत्तान्त कई बेर भिन्न २ प्रकारों से और कभी ठीक विरुद्ध प्रकारसे लिखा है और यह गड़बड़ अन्त के पर्वलों चला गया है जहा यह इतिहास नये रीतिसे आरम्भ होकर अचानचक समाप्त होजाता है। इस पुस्तक में उस समयके मनुष्यों और चीजों का अत्यन्त ही गड़बड़ और असम्बद्ध वृत्तान्त दिया है जैसे कि आजकल बाजे बाजे समाचारपत्रों में बेसिर पैर की बातै बिन सन् सम्बत की लिखी रहती है, हम इस प्रकार के दो तीन उदाहरण देते है ॥

३७ वें पर्व के वृत्तान्त से जान पडता है कि नबूक़दनज़र की सेना ने जो केल्डियन्स की सेना कहलाती थी एक बेर यरूसलमके नगर को घेर लिया था और जब उन्होने सुना कि मिस्रदेश के राजा फाराऊन की सेना उनके विरुद्ध चली आती है तो वे घेरा छोड कर कुछ दिनों के लिये लौट गये ॥ इस गड़बड इतिहास के समझने के लिये यह कह देना आवश्यक है कि नबूक़दनज़र ने जेडिकियाह के भूतपूर्व राजा जेहोइअकिम के राजसमय में यरूसलम को घेर कर ले लिया था और इसी नबूक़दनज़र ने जेडिकियाह के राजा को राज्याधिकारी बनाया था परन्तु यह दूसरी चढाई जिसका वृत्तान्त यरमियाह की पुस्तक मे दिया है जेडिकियाह के नबूक़दनज़र के विरुद्ध राजविद्रोह करने के कारण हुई है इस से थोडा बहुत इस बात का पता लगना है कि यरमियाह पर विश्वासघाती का सन्देह क्यों हुआ ॥

१३७ वें पर्व की ११ वीं आयत में लिखा है कि "और ऐसा हुआ कि जब फिर उन की सेना के डर के कारण से केल्डियों की सेना यरूसलम के आगे से कूच कर गई तब यरमियाह विनयमीन के देश में जाने को यरूसलम से बाहर निकल गया और जिस्से वहा के लोगों से अलग हो जावे और जब वह विनयमीन के फाटक पर पहुंचा तब इरियाह नामक पहरे का प्रधान उसे मिला और तब उसने यह कह के यर-

मियाह को पकड़ा कि तू केलडियों के पास जाता है। तब यरमियाह ने कहा कि यह झूठ है मै केलडियों के पास नहीं जाता"। जब यरमियाह इस प्रकार दोष लगाकर रोका गया तो उस्की परीक्षा ली गई सो वह विश्वासघाती के सन्देह में कारागार को भेजा गया जैसा कि इस पर्व के अन्तिम आयत में लिखा है, परन्तु दूसरे पर्व में यरमियाह के पकड़े जाने और कैद होने का हाल लिखा है, जिस का सम्बन्ध इस वृत्तान्त से कुछ भी नहीं मिलता परन्तु उसके कारगारनिवासी होने का कारण दूसराही दिया है जिस के लिये २१ वें पर्व में देखो वहां पहली आयत में लिखा है कि "जेड़कियाह ने मलकियाह के बेटे पाशुर और मसियाह याजक के बेटे ज़फनियाह को यरमियाह के पास यह पूछने को भेजा कि परमेश्वर के आगे हमारे लिये विनती कर क्योंकि बाबुल का राजा नबूखुदनजर हम से संग्राम करता है" तब यरमियाह ने उन से कहा (८वीं आयत) कि "और इस जाति से कहियो कि परमेश्वर यों कहता है कि देखो मैं तुम्हारे आगे जीवन का मार्ग और मृत्यु का मार्ग धरता हूं जो इस नगर में रहेगा सो तलवार से और अकाल से और मरी से मरेगा परन्तु जो बाहर जायगा और अपने को कसदियों को सौंपेगा जो तुम्हें चारो ओर घेरे है वही जीयेगा और अपने प्राण को लूट में पावेगा"। यह सम्भाषण २१ वें पर्व की दसवीं आयत में अचानचक टूट जाता है

फिर ऐसी गड़बड़ यह पुस्तक है कि इस सम्भाषण का सम्बन्ध १६ वें पर्व के उपरान्त जाकर मिलता है अर्थात् ३८ वें पर्व के आरम्भ में पाया जाता है।

३८ वें पर्व के आरम्भ में यों लिखा है कि "तब मतान के बेटे सफ़तियाह ने फासिहूर के बेटे जिदलयाह ने और सलमियाह के बेटे यूहल ने और मलकियाह के बेटे पाशुर ने (२१ वें पर्व की अपेक्षा यहां दो मनुष्यों का नाम अधिक दिया है) यरमियाह की वे बातें सुनीं जो वह यह कह के सारे लोगों से कहा करता था, "परमेश्वर यों कहता है कि जो कोई इस नगर में रहेगा सो तलवार से और अकाल से और मरी से मरेगा परन्तु जो कोई कसदियों के पास जायगा सो जीता रहेगा और उसका प्राण उसके लिये लूट के समान होगा और वह जीयेगा।

तब अध्यक्षों ने राजा से कहा कि हम आपकी विनती कर कहते है कि यह जन घात किया जाय क्योंकि वह योद्धाओं के हाथों को जो इस नगर में रहते हैं और सारे लोगों के हाथों को जो ऐसे २ वचन कह करके दुर्बल करता है निश्चय यह जन इन लोगों का भला नहीं चाहता किन्तु बुरा। और छठवीं आयत में लिखा है कि "तब उन्होंने यरमियाह को धरा और उसे मलकियाह के कैदखाने में कैद किया"।

ये दोनों वृत्तान्त भिन्न और परस्पर विरोधी है । एक लिखता है, कि वह नगर से बाहर भागने के उद्योग के कारण कारागार भेजा गया दूसरा लिखता है कि इसका कारण यह है कि वह नगर में भविष्यवाणी करता था । एक लिखता है कि वह नगर के फाटक पर द्वारपाल के द्वारा पकड़ा गया। दूसरा लिखता कि वह जड़कियाह राजा के सामने दोषी ठहराया गया *॥

२९ वें पर्व में जो वृत्तान्त दिया है उसके पढ़ने से और भी इस पुस्तक का व्यतिक्रम प्रतीत होता है क्योंकि यद्यपि पूर्व के कई पर्वों में विशेषतः ३७ वें और ३८ वें में नबूकदनज़र कि चढ़ाई का वृत्तान्त दियाही है तौ भी ३९ वें पर्व में यों आरम्भ किया है मानो इस विषय पर एक शब्द भी पहले नहीं कहा गया या जैसे पाठकों को इस विषय का प्रत्येक वृत्तान्त नये सिर से विदित करना चाहिये । उसके पहिली आयत में लिखा है "और यों हुआ कि जब यरमियाह सारे लोगों को परमेश्वर उनके ईश्वर के सारे वचन जिनसे परमेश्वर उनके ईश्वर ने उसे उनके पास कहला भेजा था" इत्यादि २—

परन्तु अन्तिम अर्थात् ५२ वें पर्व में जो वृत्तान्त लिखा है वह सब से बढ़कर है; क्योंकि यद्यपि यह कहानी बार २

* इसी प्रकार सामुयेल की पुस्तक के १६ वें औ १७ वें पर्व में दाऊद और साऊल के परिचय के दो भिन्न वृत्तान्त दिये है जिसे पाठक लोग स्वयं देख लेवें ।

लिखी गई है तथापि इस पर्व का लेखक यही समझता है कि पाठक लोग इस विषय में कुछ नहीं जानते। इसकी पहली आयत यों है "ज़ेडकियाह् एक्कीस वर्ष का था जब राज्य करने लगा और उसने यरूसलम में ग्यारह वर्ष राज्य किया और उसकी माता का नाम हमूतल जो लिबनाही यरमियाह की बेटी थी" और उसने यहूयकीम की सारी क्रिया के समान परमेश्वर की दृष्टि में बुराई की क्योंकि यरूसलम और यहूदाह के विरोध में परमेश्वर के कोप के कारण ऐसा हुआ था कि उसने उन्हें अपनी दृष्टि से दूर किया। सिदक़याह राजा बाबुल के राजा के विरुद्ध फिर गया और उसके राज्य के नवें वर्ष की दसवें मास की दसवीं तिथि में ऐसा हुआ कि बाबुल का राजा नबूक़दनजर वह और उसकी सारी सेना यरूसलम के विरुद्ध आई और उसके सामने छावनी की और उस्के विरुद्ध चारो ओर गढ़ बनाये।

यह सम्भव नहीं है कि कोई एक मनुष्य और विशेषतः यरमियाह इस ग्रन्थ का लेखक हो इसकी भूलै ऐसी है कि कोई मनुष्य जब ग्रन्थ लिखने के उद्योग से लेखनी उठाता है कभी नहीं कर सकता। यदि हमने अथवा और किसी मनुष्य ने इस प्रकार असम्बद्ध या गड़बड़ लेख लिखा होता तो कोई भी उसे न पढ़ता लोग यही समझते कि इस्का लेखक पागल था अतएव ऐसे असम्बद्ध लेख का यही पता लगता है कि

किसी महामूर्ख संग्रहकर्ता ने अनेक फुटकर अप्रमाणिक कहानियों का संग्रह यरमियाह के नाम से कर दिया है, कारण यही है कि इस सग्रह में बहुत सी बातें यरमियाह और उसके समय की पाई जाती है।

यरमियाह की दोहरी बातें और झूठी भविष्यवाणी के दो उदाहरण हम और दिखलाते हैं, इसके उपरान्त बाइबिल की शेष पुस्तकों की परीक्षा करेंगे।

३८ वे पर्व से जान पड़ता है कि जब यरमियाह कारागार में था तो ज़ेडकियाह राजा ने उसे बुलवा भेजा और इस एकान्त सम्मेलन के समय यरमियाह ने ज़ेड़कियाह को दृढ़ता पूर्वक यही अनुमति दी कि वह शत्रुओं से हार मान ले। वह कहता है कि "यदि (१७ वीं आयत) तू निश्चय बाबुल के राजा के अध्यक्षों के पास जायगा तो तेरा प्राण बचेगा"

किन्तु ज़ेडकियाह ने यरमियाह से कहा कि (२९ वीं आयत) "यह वचन कोई न जाने और तू मारा न जायगा परन्तु जो अध्यक्ष सुनें की मैंने तुझसे बात चीत की है और तेरे पास आके कहें कि तू ने राजा से जो कहा है सो हमे बता और हमसे मत छिपा और हम तुझे घात न करेंगे और राजा ने जो तुझे कहा है सो भी कह तब उनसे कहियो कि मैंने नम्रता से राजा की बिन्ती की कि वह मुझे यहूनतन के घर मरने को फिर न भेजे और सारे अध्यक्ष यरमियाह के पास

आये और उस्से पूछा और उसने उन्हें राजा की आज्ञा के समान सारे वचन कहे"—सो इस प्रकार इस ईश्वर के मनुष्य ने (जैसा वह प्रसिद्ध था) झूठ कहा या सच्ची वात को पूर्णताया उलट दिया जब उसने देखा कि ऐसा करने से मेरा काम निकलता है, क्योंकि यथार्थ में वह जेड़ाकियाह के पास नम्रता करने नहीं गया था और न उसने किया; वह बुलाया गया था इस लिये गया और सो भी उसने ज़ेडकियाह को यही अनुमति दी कि वह नबूक़दनज़र से अपनी हार मान ले ॥

३४ वें पर्व में यरमियाह की एक भविष्यवाणी ज़ेड़कियाह के प्रति यों है (२री आयत) कि परमेश्वर यों कहता है कि देख मै वाबुल के राजा के हाथ में यह नगर सौपता हूं और वह उसे आग से जला देगा और तू उसके हाथ से न बचेगा परन्तु निश्चय पकडा जायगा और तेरी आंखै बाबुल के राजा की आखै देखेंगी और वह मुंहे मुंह तुझ से कहेगा और तू वाबुल को जायगा तथापि हे यहूदाह के राजा ज़ेडकियाह परमेश्वर का वचन सुन परमेश्वर ने तेरे विषय में यों कहा है कि तू तलवार से मारा न जायगा तू कुशल से मरेगा और जिस रीति से तेरे पितर अगले राजाओं के लिये सुगंध जलाते थे तेरे लिये जलावेंगे और तेरे लिये यों विलाप करेंगे कि हाय प्रभु ! क्योंकि परमेश्वर कहता है कि मैने वचन कहा है" अब इस्की अपेक्षा कि ज़ेडकियाह बैबिलन के राजा की आंखै देखे

उससे मूँहो मुंह बात करे, और कुशल से मरे और जैसे उस के पुरखाओं के लिये किया गया वैसे उसके लिये भी सुगन्ध जलाया जावे ठीक इस का उल्टा हुआ, यथा ५२ वें पर्व की १० वीं आयत में देखो "और बाबुल के राजा ने जेडकियाह की आंखों के आगे उसके पुत्रों को घात किया और उसने दिबलः में यहूदाह के सारे अध्यक्षों को भी मार डाला और उसने ज़ेड़कियाह की आंखे निकाली और उसे पीतल की सीकरों से जकडा और बाबुल का राजा बाबुल में ले गया और उसके मरने लों उसे बन्दीगृह में रक्खा"। अब कहिये इन भविष्यवक्ताओं को फसादी और झूठे के सिवाय क्या कहैं?

यरमियाह को इन आपत्तियों में से कोई भी झेलनी न पड़ी उसपर नबूकद्नज़र की कृपादृष्टि हुई जिसने उसे पहरुओं के कप्तान के सुपुर्द करके यों कहा (३९ वें पर्व की १२ वीं आयत) कि "इसे अपने साथ ले जा और इस का सत्कार कर इसे किसी प्रकार की हानि न हो परन्तु जो कुछ यह तुझे कहे उसे कर"। इसके उपरान्त यरमियाह नबूकद्नज़र के पक्ष में हो गया और उसके लिये तथात्र मिश्रवालों के विरुद्ध जो यरूसलम के घेरे जाने के समय नगर की रक्षा को आये थे व्याख्यान करता फिरता था इतना तो इस दूसरे सत्त्यवादी भविष्यवक्ता और उस ग्रन्थ का जो उसके नाम से प्रसिद्ध है गुणकीर्तन हुआ॥

हमने एसयिआह और यरमियाह के ग्रन्थों का विशेप वर्णन इस कारण किया है कि इन दोनों का नाम राजाओं की पुस्तक तथा काल के समाचार की पुस्तकों में पाया जाता है परन्तु दूसरों का हाल इन में नहीं मिलता, शेप की पुस्तकों के विषय में जो भविष्यवक्ताओं के नाम से कहलाती है हम अधिक परिश्रम न करेंगे किन्तु भविष्यवक्ताओं के उल्लेख में उन सभों की परीक्षा साथही कर देंगे ।

इस पुस्तक के प्रथम भाग में हम यह दिखला चुके है कि बाइबिल में (Prophet) शब्द का अर्थ कवि है परन्तु इन कवियों की कविता को मूर्खों ने भविष्यवाणी मान रक्खा है यह बात पूर्णतया निश्चित हुई, न कि केवल इसी लिये कि भविष्यवक्ताओं की पुस्तकै पद्य में है परन्तु समग्र बाइबिल में कवि के लिये (Prophet) से अतिरिक्त कोई शब्दही नहीं मिलता । इस शब्द से बाजों के बजाने का भी अभिप्राय है जैसे बाइबिल में लिखा है कि एक दल Prophet (अर्थात् गवैयों) का निकला और वे लोग वीणा सरंगी इत्यादि बजाने लगे अगले ज़माने में जो मनुष्य गुप्त होनहार बातों का मर्मज्ञ समझा जाता था उसे लोग दर्शी कहते थे सामुएल भी इसी दर्शी के नाम से प्रसिद्ध था ॥

परन्तु आधुनिक अर्थानुसार Prophet शब्द का अर्थ भविष्य विपयों के ज्ञाता का समझा जाता है सो इसी

लिये नये अहद्नामे के रचयिताओं ने अपना मतलब सिद्ध करने के लिये पुराने अहद्नामे के कवियों को भविष्यवक्ता बना लिया ॥

इसके अतिरिक्त यह भी पाया जाता है कि ये कवि लोग जिन्हें बाइबिल वाले भविष्यवक्ता कहते है किसी के पक्ष और किसी के विपक्ष में भविष्यवाणी करते थे भला इस्का क्या अर्थ हो सकता है ? बस इस का यही अर्थ है कि कवियों की नाई जिसके पक्ष या विपक्ष में हुये उस्की स्तुति या निन्दा कर डाली। यहूदियों के दो भाग अर्थात् यहूदाह और एसरायल में विभक्त हो जाने के उपरान्त प्रत्येक्ष भागवालों के अलग २ भविष्यवक्ता (कवि) हुये जो परस्पर एक दूसरे को झूठा और फसादी का दोष लगाते थे इत्यादि—यहूदाह के भविष्यवक्ता (कवि) एसराएल के भविष्यवक्ताओं (कवियों) के विरुद्ध भविष्यवाणी (कविता) करते थे और इसी प्रकार एसरायल वाले यहूदाह के विरुद्ध थे इस्का उदाहरण रेहोबोआम और जेरोबोआम के समय में भली प्रकार पाया जाता है । जिस भविष्यवक्ता ने जेरोबोआम की बनाई हुई बेतूल की बेदी के विरुद्ध भविष्यवाणी (कविता) की थी वह यहूदाह के पक्ष का था जिनका राजा रेहोबोआम था परन्तु घर लौटते समय इसे एसरायल की पक्ष का एक भविष्यवक्ता (कवि) मिला जिसने उसे कहा "क्या तू ईश्वर

का वह मनुष्य है जो यहूदाह की ओर से आया है वह बोला हां" तब एसराएल के दल के भविष्यवक्ता (कवि) ने उससे कहा कि मै भी तेरे नाईं भविष्यवक्ता * (कवि हूं) मुझे ईश्वर के वचन द्वारा एक दूत ने कहा है कि मै तुझे अपने साथ अपने घर ले आऊॅ जिसमें कि तू रोटी खाय और पानी पीये, परन्तु (१८ वीं आयत में लिखा है) यह उसने उससे झूठ कहा। अब आगे इस किस्से में लिखा है कि यह यहूदाह का भविष्यवक्ता (कवि) फिर लौटकर यरूसलम न पहुचा क्योंकि वह इसराएल के भविष्यवक्ता के "हिकमत-अमली" की कारण सड़क पर मरा हुआ पाया गया---इस पर भी वह इसराएल का भविष्यवक्ता सच्चा और यहूदाह का झूठा कहलाता था; भई वाह ! ! !

राजाओं की दूसरी पुस्तक के तीसरे पर्व में एक किस्सा भविष्यवाणीओं का भानमती का दिया है जिस्से इन भविष्यवक्ताओं की प्रकृति भली प्रकार झलकती है। एक वेर यहूदाह के राजा यहूसफ़त् और इसराएल के राजा जोरम ने कुछ दिनों के लिये आपस का वैरभाव परित्याग करके मेल कर लिया था, और इन दोनों ने अदूम के राजा के साथ मिलकर मोआव के राजा पर चढ़ाई की थी। जब इनकी सेना मिल मिला कर चली तो उस किस्से में लिखा है कि इन्हें पानी की बड़ी

* अर्थात् यहूदाह के दल का हूं।

दिक्कत हुई जिस पर यहूसफत ने कहा कि "क्या यहां कोई परमेश्वर का भविष्यवक्ता नहीं है जो हम उसके द्वारा परमेश्वर से बूझें" तब इसराएल के राजा के सेवकों में से एक बोल उठा कि हां इलीशा है (यह यहूदाह का भविष्यवक्ता था) तब यहूदाह के राजा यहूसफ़त ने कहा कि परमेश्वर का वचन उसके पास है तब, इस किस्से में लिखा है कि ये तीनों राजा इलीशा के पास गये, और जब (यहूदाहदल के पक्षपाती इलीशा ने इसराएल के राजा को देखा तो उसे कहा कि "मुझे तुझ से क्या काम है तू अपने पिता के भविष्यवक्ताओं और माता के भविष्यवक्ताओं के पास जा। इसरायेल के राजा ने कहा नहीं क्योंकि परमेश्वर ने इन राजाओं को इस लिये एकत्र किया है कि वह हमें मोआब के राजा के हाथ में सौंपें* इस इलीशा को कहा कि "सेनाओं के परमेश्वर की सौं जिसके आगे मैं खड़ा हूं यदि यहूदाह के राजा यहूसफ़त के साक्षात् होने को न मानता तो निश्चय तेरी ओर न ताकता और न तुझे देखता। इससे एक दलवाले भविष्यवक्ता के हृदय की तुच्छता औ उस की कृपणता झलकती है—अब भविष्यवाणी का सामान और ढंग देखिये—

१९ वीं आयत—तब इलीशा ने कहा कि एक बीण बजवैया मेरे पास लाओ और ऐसा हुआ कि जब उसने बीणा

* अर्थात् पानी की कमी के कष्ट के कारण।

बजाई तो परमेश्वर का हाथ उस पर आया। यह भानमती का खेल चला जैसे आज कल कहीं २ मीरासी मियां डफला बजा कर अपने साथियों के सिर गाजीमियां को बुलाते है, ख़ैर—तब इलीशा ने क़हा (सम्भव है कि बजवैये के ताल में अपनी लै मिलाई हो) कि परमेश्वर यों कहता है कि इस तराई को गड़हों से भर देओ। भई वाह! यह तो वही मसल हुई कि "टांय टाय फिस" वीणा लाओ, सारंगी लाओ, तम्बूरा लाओ, ढोल लाओ पचास सामान जुहाओ और अन्त में यह निकला कि कूआं खोदो—यह तो साधारण मनुष्य भी जानता है कि पानी कूआ खोदने से मिलता है परन्तु इलीशा की तो वही मसल है कि "प्यास लगे पर कूआं खोदो" कहां तो सेना मारे प्यास के मरी जाती है कहा फरसा कुदाली ले खोदने चलो—ऐसे भविष्यवक्ता से तो नोनिया अच्छे जो झट पट कूआं खोद देवे ॥

परन्तु जैसे प्रत्येक मदारी या भानमतीवाले एकसां प्रसिद्ध नहीं होते वैसेही ये भविष्यवक्ता भी थे, क्योंकि यद्यपि वे सब, विशेषत' वे जिनके विषय में हम कह चुके है, झूठ बोलने के लिये तो प्रसिद्ध थे ही पर बाज़ २ शाप देने में भी बड़े धुरन्धर थे इस विषय में इलीशा सब से प्रसिद्ध था यह वही इलीशा है जिसने ईश्वर के नाम पर ४२ लड़कों को शाप दिया था जिन्हें दो भालू फाड़ के खा गये। ये लड़के कदा-

चित इसराएल के दल के होवें परन्तु ऐसे शाप देनेवालों का झूठ बोलना बहुतही सम्भव है सो इलीशा के उस किस्से पर क्या विश्वास होगा ॥

भविष्यवक्ताओं की एक और श्रेणी थी जो प्रायः स्वप्नों से दिल बहलाव किया करते थे परन्तु यह नहीं मालूम होता कि वे लोग दिन को स्वप्न देखते थे कि रात को। यद्यपि यह पूर्णतया निर्दोषी तो नहीं है पर वैसे भारी अपराधी भी नहीं हैं इस श्रेणी के इज़ेकियेल और दानियल है—पहला प्रश्न उनकी पुस्तकों पर यही होता है कि क्या वे वास्तव में उन की बनाई हुई है ?

इस का कोई प्रमाण नहीं मिलता परन्तु जहां लों हमारी अनुमति है हम को यही विश्वास होता है कि यह उन की बनाई है। मेरे इस विश्वास के यह कारण हैं प्रथम इन ग्रंथों में स्वतः कोई ऐसा प्रमाण नहीं मिलता कि जिस से वे इज़ेकिएल अथवा दानिएल की लिखी प्रतीत नहीं; जैसे मूसा, जोशुआ और सामुएल इत्यादि की पुस्तकै ये प्रतीति कराती हैं कि वे मूसा, जोशुआ और सामुएल की लिखी नहीं हैं ॥

दूसरे यह कि ये पुस्तकै उसी समय की लिखी प्रतीत होती है कि जिस समय में ये ग्रन्थकर्ता हो गये हैं ॥

तीसरे यह कि ग्रन्थ के लिखावट के ढग से स्पष्ट प्रतीत होता है कि यह उस अवस्था में लिखी गई हैं जिस में इज़ेकियल औ दानियेल उस समय कष्ट में पड़े थे अर्थात् कारागार में॥

यदि ये बाइबिल के अनेक टीकाकार और याजक लोग जिन्हों ने व्यर्थ अपना समय इस ग्रन्थ के पहेलियों के बूझने में लगाया है इजेकिएल और दानियल के साथही कैद हुये होते तो इस प्रकार के लेखों को समझने में उनकी बुद्धि निस्सन्देह तीव्र हो जाती और उन्हें व्यर्थही इस प्रकार अपने बुद्धि को कष्ट देना न पड़ता क्योंकि तब उन्हें यह ठीक जान पड़ता कि जैसे इज़िकियेल और दानिएल ने कारागार में रह कर अपने मित्रों को संकेत से पत्र लिखा है वैसेही उन्हें भी करना पड़ता ॥

ये पुस्तकें और सभों से भिन्न है क्योंकि केवल यही स्वप्न इत्यादि की हालों से भरी हैं इस विभिन्नता का कारण यही है कि इस के लेखक लोग दूसरे देश में नज़रबंद की नाईं कैद थे अतएव उन्हें छोटी बातें भी तथा अपने राज्यनैतिक अभिप्राय और विचार साङ्केतिक शब्दों और वचनों द्वारा अपने मित्रों के पास पहुँचाना पड़ता था ॥

वे लोग स्वप्न वा स्वप्नाभास * देखने का बहाना करते थे क्योंकि स्पष्ट भाषा में पत्र लिखना उन्के प्राण को भय में डालना था जानना चाहिये कि जिन पुरुषों को वे पत्र लिखे गये थे वे उन्हें समझते थे और दूसरे तद्भिन्न लोगों के समझने के लिये वे न थे परन्तु ये परिश्रमी टीकाकार और याजक लोग

---

* स्वप्नाभास—Visions.

तब से अपने बुद्धि को उस बात के समझने के लिये परिश्रम दे रहे हैं जो उनके समझने के लिये नहीं लिखी गई और जिससे उसका कुछ भी सम्बन्ध नहीं। इज़कियेल और दानियेल दोनों प्रथम वेर की चढ़ाई में कैद करके बाबिलन् को भेजे गये अर्थात् ज़िडिकियाह के समय की द्वितीय गिरफतारी के नौ वर्ष पूर्व। यहूदी लोग उस समय भी बहुत थे और उनका बल यरूसलम में अधिक था, यह स्वभाविक बात है कि जो मनुष्य इज़ीकियेल और दानियेल सरीखी अवस्था में पड़े होंगे वे अवश्य अपने वचन तथा अपने देश के छुटकारे के विषय मे विचारते होंगे। अतएव यह पूर्णतया सङ्गत है कि जिन स्वप्न और स्वप्नाभासों के वृत्तान्तों से ये पुस्तकें भरी है वह सब उनके तत्समय के पत्र व्यवहार करने की गुप्त रीतें और गुप्त सांकेतिक चिन्ह है—यदि यह नहीं है तो फिर ये किस्से, कहानिया, क्या व्यर्थ बकवाद है? या कारागार का गाढ़ समय व्यतीत करने के लिये हवा के किले हैं?।

इजिकियेल अपना ग्रन्थ विशेष जीवधारीयों * के स्वप्न तथा चक्र के भीतर चक्र के स्वप्नाभास से आरम्भ करता है जिसको वह लिखता है कि उसने बँधुवाई के भूमि में किबार नदी के पास देखा था। क्या यह सङ्गत नहीं है कि इन जीवधारियों से उसका लक्ष यरूसलम के मन्दिर से था जहां इन

* जीवधारी=Cherubims

जीवधारियों की मूर्तियां वनी थीं और चक्र के अन्दर चक्र से स्पष्ट राजनैतिक अभिप्राय है अर्थात् यरूसलम के छुटकारे की युक्ति का विचार, इस पुस्तक के अन्तिम भाग में वह अपने तईं यरूसलम तथा मन्दिर में पहुँचा हुआ समझा है तब वह पुन. किवार नदी का वृत्तान्त लिखकर यों कहता है (४६ वें पर्व की २ री आयत) कि यह आन्तिम स्वप्नाभास वा दर्शन किवार नदी के स्वप्नाभास वा दर्शन की नाईं था जिससे यह अभिप्राय है कि ये सब बनों के स्वप्न और दर्शन यरूसलम के छुटकारे के विपय में है बस और कुछ नहीं।

इन सब लेखों को घुमा फिराकर भविष्यवाणी का अर्थ निकालना वा सैकडों हज़ारों वर्ष के उपरान्त के हाल और समयों के बातों का लक्ष कहना बाइबिल के टीकाकारों और याजकों की बुद्धिमत्ता है॥

इस से भारी कोई दूसरी मूर्खता नहीं हो सकती कि ये हिज़किएल और दानियेल नामक दोनों पुरुप अपने देश को गँवाय तथा अपने मित्रों और अपने आत्मीय सम्बन्धियों को शत्रुओं के हाथ में सौप कर और स्वयं भी बंधुवाई और भय में होकर २।३ हज़ार वर्ष पूर्व अपेनमृत्यु के बाद के वृत्तान्तों को बैठ कर विचारें।इस की अपेक्षा यह स्वभाविक जान पड़ता है कि वे अपने तथा यरूसलम के छुटकारे का उपाय विचारते हों सो यही मुख्य प्रयोजन इन विचित्र ग्रन्थों के लेख का जान पड़ता है॥

यदि लेखक का यह अभिप्राय था तो निस्सन्देह आवश्यकतावश उसे ऐसे साङ्केतिक भाषा और शब्दों में लिखनाही पड़ा परन्तु यदि इन ग्रन्थों के लेख को कोई भविष्यवाणी कहे तो यह सरासर झूठ है। देखो हिज़किएल के २९ वें पर्व की ११ वीं आयत में मिस्र के बारे में यों लिखा है कि "किसी मनुष्य और किसी पशु का पाव उस में से न जायगा और चालीस वरस लौ उस में कोई न बसेगा" यह ऐसी बात है कि आज तक मिस्र के विषय में कभी नहीं हुई अतएव यह प्रत्यक्ष झूठ है और उन्हीं पुस्तकों की नाईं है जिन्की समालोचना पहले हम कर चुके है अब इस विषय को तो यहीं पर समाप्त करते है ॥

इस ग्रन्थ के प्रथम भाग में हम यूनस तथा ह्वेल मछली के किस्से का हाल लिख चुके है यदि यह किस्सा वास्तव में लोगों को विश्वास दिलाने के लिये लिखा गया है तो अत्यन्त हास्यास्पद और मूर्खतामय है इस किस्से से तो बाइबिल के भविष्यवक्ताओं का द्वेष तथा ईर्षासम्पन्न हृदय का भाव प्रगट होता है।

प्रथम तो इस किस्से से यह झलकता है कि यूनस ऐसा भविष्यवक्ता था जिसने ईश्वर की आज्ञोल्लंघन की थी और जिस काम के लिये वह ईश्वर द्वारा नियत किया गया था उसे

छोड़ कर जेनिटाइल * लोगों के जहाज पर जो जोप्पा नगर से टार्सेस नगर को जाता था चढ कर भागा मानो वह इस तुच्छ उपाय से अपने तईं किसी ऐसे दृढ़ किले में समझता था जहां ईश्वर उसे नहीं पा सकता था। भई वाह यह तो इसं भविष्यवक्ता के विलक्षण बुद्धि का नमूना है खैर जब वह जहाज पर चढ़ के भागा तो समुद्र में बड़ा भारी तूफान आया और जहाज डूबने लगा तब जहाज के कर्मचारी और खलासियों ने यह समझ कर कि हमारे जहाज में कोई पापी वा ईश्वर का अपराधी घुस आया है उसे चिट्ठी डाल कर पकड़ना विचारा; सो चिट्ठी यूनस के नाम निकली। परन्तु इस के पूर्व वे बिचारे जहाज को हलका करने के लिये अपना माल असबाब कपड़ा लत्ता सब समुद्र में फेंक चुके थे परन्तु यूनस किसी महामूर्खाधिराज की नाईं जहाज के किसी कोने में घुर्राटे ले रहा था। जब चिट्ठी द्वारा यूनसही ईश्वर का अपराधी ठहरा तो उन्होंने उसे जगाकर पूछा कि तू कौन है और कहां जाता है उसने कहा कि मै इब्रानी हू; इससे उस किस्से ने यह अर्थ निकाल लिया कि उसने अपने तईं अपराधी स्वीकार किया। परन्तु उन जिनेटाइल लोगों ने उसे उसी क्षण निर्दय हो कर मार डालने की अपेक्षा (जैसे बाइबिल के भ-

* यहूदी लोग अपने से भिन्न जातियों को काफर मूर्तिपूजक और जेनिटाइलस कहते थे।

विप्यवक्ताओं ने किसी जेनेटाइल के प्रति किया होता अथवा जैसे सामुयेल ने आग का राजा से किया वा जैसे मूसा ने अनेक स्त्री और बच्चों की जान ली थी) उन्होंने अपनी जान पर खेल कर उसको बचाने का उद्योग किया; क्योंकि उस में लिखा है कि तौ भी (अर्थात् यूनस के यहूदी ओ विदेशी और उन के समग्र माल असबाब के हानि तथा आपत्ति के कारण होने पर भी) इन लोगों ने जहाज को किनारे लाने का बहुत ही उद्योग किया परन्तु आंधी बडी तेज थी और समुद्र की लहरै ऊँची उठ रही थीं अतएव उन का परिश्रम व्यर्थ हुआ इतने पर भी वे किसी प्रकार यूनस को वध करना वा कष्ट देना नहीं चाहते थे क्योंकि उस में लिखा है कि उन्हों ने चिल्ला कर प्रभु से यों कहा "ऐ प्रभु हम तेरी विनती करते है कि तू हमें इस मनुष्य के लिये डूबने न दे और निरपरावी का रुधिर हमारे गले न डाल क्योंकि हे प्रभु जैसा तूझे भाया तैसा तू ने किया" अर्थात् उन का यह अभिप्राय था कि यूनस के नाम की चिठ्ठी निकलने पर भी वे उसे अपराधी समझने में राजी न थे कि कदाचित् वह निरपराधी हो परन्तु वे समझते थे कि उसके नाम की चिठ्ठी जो निकली है सो ईश्वर की इच्छा है या उसे ऐसाही भाया है। इस प्रार्थना के ढंग से जान पडता है कि जिनेटाइल लोग एक ईश्वर को मानते थे और वे लोग यहूदियों के कथनानुसार मूर्तिपूजक नहीं

जान पड़ते । अस्तु इतने पर भी आंधी शान्त न हुई और जहाज के डूबने का भय बढता ही गया सो उन्होंने लाचार हो कर यूनस को समुद्र में डाल दिया और उसे एक मछली समूचा और जीवित ही निगल गई ।

अब यूनस ने मछली के पेट में जाकर आंधी से रक्षा पाई तब लिखा है कि उसने वहां ईश्वर से प्रार्थनाकी—और यह प्रार्थना सुफल हुई तब उस किस्से में लिखा है (हम यहां बाइबिलही के शब्द ज्यों के त्यों लिखते है) कि " तब ईश्वर ने मछली से कहा और उसने यूनसको सूखी पृथिवी पर उगल दिया" ।

अब यूनस को दूसरी आज्ञा निनवा में जाने की हुई सो वह गया और अब वह शिक्षकरूपेण वहां पँहुचा । पाठक लोग यह समझते होंगे कि इतने कष्ट उठाने पर और फिर इस प्रकार आश्चर्यमय बचाव पर यूनस ने दूसरों पर करुणा और दया करना सीख लिया होगा परन्तु यहा तो इसका विपरीत हो यह पुरुष निनवे नगर में यह डंका देता हुआ पहुंचा कि चालीस दिन के उपरान्त निनवे का नगर नाश हो जायगा ।

अब इस के आगे इस धर्मज्ञ और कृपासागर बाइबिल के भविष्यवक्ता का स्वच्छ और दयासम्पन्न हृदय झलकता है जो किसी प्रकार शैतानी योग्यता से कम नहीं है ।

जब यूनस इस प्रकार उस नगर में भविष्यवाणी का डका बजाचुका तो उस किस्से में लिखा है कि इस पुरुष ने उस नगर के पूरव ओर कहीं जाके डेरा किया, क्यों? क्या अपने आश्चर्यमय बचाव पर एकान्त में जाकर ईश्वर का धन्यवाद करने के लिये? नहीं, नहीं वहतो वहा बैठ कर अत्यन्त उत्कंठा के साथ यह आसरा देख रहा था कि, कब ईश्वर उस नगर को नाश करता है। अस्तु तदुपरान्त लिखा है कि नीनवानिवासीयों ने पश्चात्ताप कर के अपनी चाल सुधारली सो इश्वर ने बाइबिल के लेखानुसार इस बात का, अत्यन्त पश्चात्ताप किया और जो कुछ दण्ड उसने उन नगरनिवासियों के लिये विचारा था न दिया, तब तो यूनस अत्यंतही अप्रसन्न हो कर परम क्रोधांध हुआ। उसका हठीला हृदय यही विचारता था कि नीनवा नगर जड मूल से नाश हो और उस के निवासी युवा वृद्ध स्त्री बाल बच्चे पर्य्यंत सभी विनष्ट हों जिस में उस की भविष्यवाणी व्यर्थ न जाय निम्नलिखित वृतान्त से इस भाविष्यवक्ता का और भी द्वेष प्रगट होता है। बाइबिल में लिखा है कि उसी रात ईश्वर ने उस्के डेरे के पास एक वृक्ष ऊगाया जिससे यूनस को सूर्य की तीव्र किरणों से रक्षा प्राप्त हुई परन्तु उस के दूसरे ही दिन वह सूख गया।

तब तो इस भाविष्यवक्ता के क्रोध की सीमा न रही, यहा लों कि वह आत्महत्त्या करने पर प्रस्तुत हुआ और यह

बोला कि "इस जीने से तो मरना भला है"। तब एक प्रकार का वादविवाद ईश्वर और इस भविष्यवक्ता में हुआ। ईश्वर ने कहा "क्या इस वृक्ष के लिये तेरा क्रोध करना उचित है? और यूनस ने कहा "कि हां मेरा तो मरना भी उचित है" तब ईश्वर ने कहा तुझे इस वृक्ष पर जिस्के लिये तूने कुछ भी परिश्रम न किया और न उगाया तुझे दया हुई यह एकही रात में ऊगा और एक ही रात में सूख गया, तो क्या मै इस वृहत् नीनवे के नगर को जिस में साठ हजार ऐसे निवासियों से अधिक है जो अपने दहने और बायें हाथ तक नहीं जानते नाश कर डालूँ, इस किस्से में कटाक्ष और शिक्षा दोनो है। कटाक्षरूपेण तो यह बात बाइबिल के समग्र भविष्यवक्ता ओं के चाल चलन तथा इस सत्त्य पुस्तक के उन समग्र आज्ञाओं पर जिन से स्त्री पुरुष लड़के बाले मारे गये आक्षेप है जिनसे बाइबिल की समग्र पुस्तकै भरी है जैसे नूह का प्रलय, सदूम और गमूरा नगरों का नाश, कनानियों का उत्पाटन तथा दूधपिते बच्चों और गर्भिणी स्त्रीयोंकी हत्त्या इत्यादि—क्योंकि जब ईश्वर एक बेर यह कहता है कि जहां साठ हजार से भी अधिक ऐसे निवासी है कि दहने और बाएं हाथ को नहीं पहचान सकते (अर्थात् बच्चे) उन्हें मै कैसे नाश करूं, तो यह कैसे सम्भव हो सकता है कि बाइबिल की लिखीं हुई वे सब हत्त्यायें जिन्हें हम पहले कह चुके है ईश्वर की आज्ञा से हुई

हों; क्योंकि ऐसा करने से तो ईश्वर का किसी जाति विशेष पर पक्षपात झलकेगा ॥

शिक्षा इस में इस प्रकार निकलती है कि ज्यों २ मनुष्य बुराई की भविष्यवाणी करता है त्यों २ वह लोगों की बुराई अधिक चाहता है वह अपनी भविष्यवाणी की यथार्थता के घमंड में अपना दिल पत्थर सा कर लेता है और अत्त्यन्त सन्तोष वा अप्रसन्नता के साथ अपनी भविष्यवाणी की सत्त्यता वा असत्त्यता की राह देखता है इत्यादि—सो यह पुस्तक भी भविष्यवक्ताओं पर आक्षेप के साथ समाप्त होती है इतना तो यूनस के पुस्तक का वर्णन हो चुका ॥

बाइबिल के काव्यबद्ध भाग के लिये जो भविष्यवाणी कहलाती है हम प्रथम भाग में लिख चुके है, तथा हमने इस भाग में भी लिखा है कि बाइबिल में कवि के लिये भविष्यवक्ता शब्द है और इन कवियों की विलणक्ष उपमा और उत्प्रेक्षा इत्यादि को क्रिश्चियन लोगों ने भविष्यवाणी मान ली है जो उन लेखक विचारों का स्वप्न में भी विचार न था। ये लोग भिन्न २ आयतों को अपनी इच्छानुसार अर्थ लगा कर अपने श्रोताओं को सुना देते थे और इतने पर भी यही कहते हैं कि हम बाइबिल समझते है ! धन्य इनकी बाइबिल और धन्य इन की बुद्धि ॥

अब कुछ वे पुस्तकें परीक्षा करने से रह गई है जो छोटे

भविष्यवक्ताओं की पुस्तक कहलाती हैं परन्तु जब हम बड़े भविष्यवक्ताओं का चरित्रोद्घाटन कर चुके है तो इन छोटे विचारों को कष्ट देना कुछ आवश्यक नहीं है, अतएव इन विचारे कीट पतङ्गों को चुपचाप घास में सोने दो।

अब हम समग्र बाइबिल रूपी जङ्गल का परिभ्रमण कर चुके और इस के सब वृक्षों को जड़ समेत काट कर युक्ति और प्रमाण रूपी कुल्हाड़ी से गिरा चुके। यह लो ये कटे कटाये वृक्ष क्रिस्तानों के सामने पड़े है यदि उनसे हो सके तो पुनः जमावें। जमाना तो क्या है कदाचित ये उन्हें धरती में खोस के खड़ा कर दें परन्तु अब ये ऊगनेवाले नहीं। इस भाग को तो हम यहीं समाप्त करते हैं और इस ग्रन्थ के तीसरे भाग में नये नियम की पुस्तकों की परीक्षा आरम्भ करते है।

इति ॥

—※—

नवीन पुस्तकें।

रामरसायन बालकाण्ड (अर्थात पद्माकर कविकृत वाल्मीकि रामायण का भाषा छन्दोबद्ध अनुवाद १)

सुखशर्वरी उपन्यास ।)

रुक्मिणी परिणय नाटक ।)

कमिलनी उपन्यास ।)

हम्मीर हठ ।)

चैतचन्द्रिका (अलंकार का ग्रन्थ) ।≠)

बलभद्र कृत नखसिख ≠)

बसन्तमंजरी ≢)

छन्दप्रभाकर १॥)

बिहारीसतसई (हरि कविकृत टीका सहित) १॥)

भाषाभूषण (अलंकार का ग्रन्थ) ≠)

ग्वाल कविकृत षट ऋतु वर्णन ≠)

ईसाईमतखंडन ।

तीसरा भाग ।

अर्थात्

जिस में ख्रीष्टमतावलम्बियों के धर्म्म की यथार्थ दशा झलकाई गई है, और जिसे बाबू रामकृष्णवर्म्मा सम्पादक भारतजीवन ने उनलोगों के हित के लिये जो इस धर्म्म के पूर्णतया भेदू नहीं हैं प्रकाश किया है ।

यह पुस्तक बाबू रामकृष्णवर्म्मा सम्पादक भारतजीवन के पास बनारस में मिलेगी ।

काशी ।

राजराजेश्वरी प्रेस में छापा गया ।

सन् १८८४ ई० ।

प्रथम बार १०००]

[मूल्य /)

ईसाईमतखण्डन ।

—○*○—

तीसरा खण्ड ।

नया नियम ।

ईसाई लोग कहते हैं कि नये नियम की नेह पुराने नियम की भविष्यवाणीयों पर बनी है, यदि यह ठीक है तो जोदशा पूर्व खंड में भविष्यवाणी की हो चुकी है सो इस खड में इस की भी होगी इस मे कोई आश्चर्य नहीं कि किसी स्त्री को विवाह होनेके पूर्व गर्भ होजाय और उसका पुत्र निरपराध मारा जाय अतएव हम यह विश्वास करते है कि मरियम नाम्नी कोई स्त्री अथवा यूसफ और मसीह नामक पुरुष संसार में हुये हों। यहा हमको इस पर विचार नहीं करना है कि ये लोग वस्तुतः थे या नहीं कदाचित् हों भी तो फिरक्या? सम्भव है कि ये लोग अथवा इनके जैसे लोग हुये हों परन्तु हमारा तो यहां तर्क ही दूसरा है हमारा झगड़ा तो नये नियम के लिखित मसीह के क़िस्से और तज्जनित ईसाइयों की शिक्षा पर है। यह क़िस्सा तो—अत्यन्तही लज्जास्पद है । इस में यह वृत्तान्त दिया है कि कोई युवती स्त्री विवाह होने के पूर्व अर्थात् जब उसकी मँगनी हो गई थी किसी पवित्र आत्मा द्वारा गर्भिणी की गई और इस पर यह विलक्षण वहाना (लूकाके प्रथम पर्व की

३९ वीं आयत में) लिखा है कि "पवित्र आत्मा तुझ पर उतरेगा और अतिमहान परमेश्वर के सामर्थ्य की छाया तुझ पर होगी"। इतने पर भी अर्थात् इन सब घटनाओं पर विचार न कर के यूसफ ने पीछे से उसके साथ विवाह कर लिया और उसे पत्नी करके माना और उस पूर्व मूल पवित्र आत्मा का मानो प्रतिपक्षी हुआ। यहतो उस किस्सेका तात्पर्य स्पष्ट वचनों में हुआ सो जब इस की यह दशा है तो संसार भरमें विरला ही कोई पुरुष होगा जिसे इस वृत्तान्त पर लज्जा न आतीहो *।

विश्वसनीय वातों में निर्लज्ज वृत्तान्तों के आनेसे उसका झूठाहोना प्रतीत होता है क्योंकि इश्वर के गम्भीर विश्वास में ऐसी २ तुच्छ वातें न आना चाहियें जिस में हास्य और लज्जा उत्पन्न हो।

मसीहविषयक ऐतिहासिक वृत्तान्त जो नये नियम में दिया है वहुत कम है अर्थात् केवल दोही वर्ष का हाल दिया है और ये सब वातें एकही देश में हुई हैं अतएव जितनी विभिन्नता और समय स्थानादिक का विरोध पुराने नियम में मिलता है उतना नये नियम में संभव नहीं। पुराने नियम के सामने नया नियम मानो एकही अक का प्रहसन है जिस में

* मसीहकी कुआरी माता मरियम के औरभी कई लड़की और लड़के थे मत्तीके १३ वें पर्व की ५५ वीं और ५६ वीं आयत देखो।

प्रहसन पात्र को ऐक्य के विरोध का विशेष भय नहीं रहता तौ भी इस में कई एक ऐसे विरोधी वृत्तान्त है जिन से मसीह का यह किस्सा बिल्कुल झूठ प्रमाणित होता है ।

यह बात अत्यन्त निश्चित है कि किसी किस्से के किसी भाग का मिलान कई लेखकों के एकसां होने पर भी वह किस्सा सत्य नहीं हो सकता क्योंकि उस किस्से का कदाचित् वह भाग सत्य हो परन्तु इस से समग्र किस्से की सत्यता कैसे प्रमाणित हो सकती है परन्तु यदि इन्हीं वृत्तान्तों के वर्णन में भिन्न २ ग्रन्थकारों के लेखों में विरोध पाया जाय तब तो वह किस्सा निस्सन्देह असत्य ठहरा ।

मसीह का इतिहास ४ पुस्तकों में पाया जाता है जो-मत्ती, मर्कूस लूका और यूहन्ना की लिखी कहलाती है । मत्ती के प्रथम पर्वके आरम्भ में मसीह की एक वंशावली दी है; और लूका के ३ रे पर्व में भी मसीहकी वंशावली लिखी है । यदि इन दोनों का मिलान ठीक हो तो भी इस वंशावली के सत्यहोने का सन्देह निवृत्त नहींहोता कदाचित यह बनावटीहो:—परन्तु इनके विरोधहोनेसे इसकी असत्यता पूर्णतया प्रमाणित होती है ॥ यदि मत्ती का कहना सचहै तो लूकाका कहना असत्य है और जो यदि लूका का कहना सत्यहै तो मत्तीका कहना असत्य ठहरा परन्तु न तो लूका से बढ़ कर मत्तीके विश्वास का प्रमाण है और न मत्ती से बढ़कर लूका का पाया

ता है अतएव इनदोनों के विश्वास करने का कोई प्रमाण नहीं है। सो जब पहलेही वृत्तान्त के वर्णन में इनदोनों की यह दशा है तो आगे चलकर इनके वचन पर क्या विश्वास हो सकता है यहांतो " प्रथमग्रासे मक्षिकापातः " हुआ।

सत्त्य सदा सत्त्यही है विशेषतः यदि इलहाम का विश्वास किया जाय तब तो किसी प्रकार इसके वर्णन में विभिन्नता न होनी चाहिये। अतएव ये " प्रेरितलोग " यातो असत्त्य-वादी थे या ये पुस्तकें दूसरों की लिखी है और उनके नामसे प्रसिद्ध कर दीगई है जैसे हम पुराने नियम के पुस्तकों का हाल देख चुके है। मत्ती की पुस्तक के पहले पर्वकी छठवीं आयत में दाऊद से वंशावली आरम्भ हुई और मसीहके पिता तथा मरीयम के पति से लेकर मसीह पर्यंत लिखी है इस प्रकार २८पीढ़ी दी है। लूका के पुस्तक में भी इसीप्रकार दाऊद से लेकर मसीह तक ४३ पीढ़ी में वंशावली है इसके अतिरिक्त केवल दाऊद और यूसफ दोही नाम तो दोनों वंशावली में मिलान खाते है हम पाठकों के समझने और मिलान करने के लिये दोनों ग्रंथ के अनुसार वंशावली लिखते हैं।

मत्ती के लेखानुसार वंशावली	लूकाके लेखानुसार वंशावली
१ मसीह	१ मसीह
२ यूसफ (मरियमकापति)	२ यूसफ (मरियमकापति)
३ याकूब	३ हेली
४ मत्तान	४ मत्तात

मत्ती के अनुसार वंशावली	लूका के अनुसार वंशावली
५ इलीअसर	५ लावी
६ इलीहूद	६ मल्की
७ अकींम	७ यन्ना
८ सदुक	८ यूसफ
९ असूर	९ मत्तातियाह
१० इलियकीम	१० अमूस
११ अबिहूद	११ नहूम
१२ सरूबाबल	१२ इसली
१३ सियालतियेल	१३ नग्गाई
१४ यहूयकीन	१४ मात
१५ यूसियाह	१५ यत्तातियाह
१६ अमून	१६ समई
१७ मनस्सी	१७ यूसफ
१८ हिसकियाह	१८ यहूदाह
१९ आहस	१९ यूहन्ना
२० यूताम	२० रेसा
२१ युस्सियाह	२१ सरूबाबल
२२ यहूराम	२२ सियालतियेल
२३ यहूसफत	२३ नेरी
२४ असा	२४ मल्की
२५ अबियाह	२५ अद्दी
२६ रहबिआम	२६ कोसाम
२७ सुलेमान	२७ अल्मोदाम
२८ दाऊद	२८ ईर

लूका के अनुसार वंशावली.

२९ यूसी
३० अलीअसर
३१ यूराम
३२ मत्तात
३३ लावी
३४ समऊन
३५ यहूदाह
३६ यूसफ
३७ यूनान
३८ इलीयकीम
३९ मलिया
४० मैनान
४१ नातन
४२ दाऊद

अब यदि ये मत्ती और लूका नामक पुरुषों ने इस प्रकार आरम्भही से मसीह के इतिहास लिखने में इतना गड़ बड़ किया है तो हम यह पूछते है आगे चल कर उनके उन विचित्र लेखों पर विश्वास करने का क्या प्रमाण है ? यदि उन का विश्वास इस साधारण मानुषिक वंशावली पर नहीं होता तो हम लोग उनके इस लेख पर कैसे विश्वास करें कि वह ईश्वर का पुत्र था और पवित्र आत्मा से उत्पन्न हुआ था और यह वृत्तान्त कोई ईश्वरीय दूत उस की माता से एकान्त में कह गया था। जब उन्हों ने एक वंशावली में प्रत्यक्ष गड़बड़ लिखा है तो हम दूसरे वंशावली का कैसे विश्वास करें । जब उसकी मानुषिक और स्वाभाविक वंशावली कल्पित है तो हम क्योंकर यह न विचारें कि उसकी यह स्वर्गीय वंशावली भी कपोलकल्पित रचना है और सब का सब आद्यन्त सत्यतारहित है । क्या कोई बुद्धिमान पुरुष किसी अस्वाभाविक असम्भव कहानी का

विश्वास करके अपनी भविष्य प्रसन्नता को जोखिम में डालेगा ? उस पर विशेषता यह कि इस के रचयिता लोगों की सत्यता पहलेही प्रमाणित हो चुकी है क्या यह अतीवोत्तम और पूर्णतया निष्कंटक नहीं है कि हम इस प्रकार असम्भव बुद्धि विरुद्ध और निर्लज्ज कहानियों के पीछे न दौड़ कर एक सच्चे निर्विकार ईश्वर का विश्वास करें ?

प्रथम प्रश्न इस नये नियम की पुस्तकों पर यही होता है कि क्या ये उन्हीं लोगों की लिखी है जिन के नाम से ये प्रसिद्ध है ? क्योंकि इसी जड़ पर न उन विचित्र बातों का विश्वास किया जाता है जो इनमें लिखी है ?

इस विषय के पक्ष या विरोध में कोई साक्षात प्रमाण नहीं मिलता अतएव ऐसी अवस्था मुं अनिश्चयता होती है; और अनिश्चयता विश्वास का विरोधी है अतएव इन पुस्तकों के विश्वास का कोई निश्चय नहीं ।

परन्तु इसे जाने दीजिये ये चारों पुस्तके जो मत्ती, मर्कूस, लूका और यूहन्ना की लिखी कहलाती हैं यथार्थ में इन की लिखी नहीं हैं इन चारों पुस्तकों के इतिहास की गड़बड़ अवस्था तथा एक पुस्तक के लिखित वृत्तान्त का दूसरे में न पाया जाना और एकही विषय पर मत की विभिन्नता इत्यादि देखने से जाना जाता है कि इन लोगों ने अपनी २ इच्छानुसार इस किस्से को इस की घटना के अनेक वर्ष उपरान्त

लिख लिया है यह लेख एकही समय में ऐक्य भाव से रहनेवाले लोगों का जैसे कि मसीह के शिष्य कहलाते थे नहीं पाया जाता तात्पर्य यह कि जिन लोगों के नाम से ये पुस्तकें प्रसिद्ध है उन की लिखी नहीं है और इन की भी वही अवस्था है जो हम पुराने नियम के पुस्तकों की अवस्था दिखला चुके है ।

ईश्वरीय दूत के इस किस्से का जिसे ईसाई लोग कहते है कि पवित्र आत्मा से गर्भ हुआ था मर्कूस और यूहन्ना के पुस्तक में नामोल्लेख तक नहीं पाया जाता और मत्ती तथा लूका इसे भिन्न २ रीति से वर्णन करते है। मत्ती कहता है कि यह दूत यूसफ को दिखलाई पड़ा और लूका कहता है कि मरियम को दिखलाई पड़ा परन्तु चाहे वह मरियम को दिखलाई पड़ा हो वा यूसफ को दोनों की गवाही इस विषय में नहीं ली जा सकती। क्योंकि यहां दूसरों की गवाही होनी चाहिये थी और न कि वे आपही अपने गवाह हो जावें यदि आज कल के दिनों में कोई कुमारी कन्या गर्भवती पाई जाने पर कसम खाकर भी यह कहे कि उसे पवित्र आत्मा से गर्भ हो गया है तो क्या कोई उसे विश्वास करेगा ? कभी नहीं, तो हम किस प्रकार इसी बात को इस मरीयम नाम्नी कुमारी कन्या के विषय में विश्वास करें जिसे हम ने कभी नहीं देखा और यह भी नहीं जानते कि इस किस्से को कब कहां और

किसे कहा। यह कैसी आश्चर्यमय और असंगत बात है कि जिस विषय को हम साधारण बात में भी नहीं मान सकते उसी को मुख्य जड़ मान कर इस विलक्षण ईसाई धर्म की रचना हुई है यह विश्वास तो पूर्णतया असंभव और असगत है।

हेरोदेश राजा का यह किस्सा कि उसने दो वर्ष से छोटे सब लड़कों को अपने राज्य में मरवा डाला केवल मत्तीही के पुस्तक में लिखा है बाकी तीनों पुस्तकों में उस का नामोल्लेख तक नहीं है यदि यह बात सच होती तो यह वृत्तान्त सब लेखकों को विदित होता और यह कोई ऐसी बात नहीं है कि तीन २ इतिहास लिखनेवाले इसे छोड़ जावें। इस ग्रन्थ का रचयिता लिखता है कि मसीह मारे जाने से बच गया क्योंकि कोई ईश्वरीय दूत यूसफ और मरियम को सावधान कर गया कि वे उसे लेकर मिस्र के देश को भाग जावें परन्तु यह ग्रन्थकार यूहन्ना के लिये जो दो वर्ष से छोटा था कोई उपाय लिखना क्यों भूल गया ?। यूहन्ना विचारा पीछेही छूट गया और मसीह भाग गया परन्तु इतने पर भी यह जीताही बच गया। अब पाठक लोग स्वय विचारें कि इस किस्से में सत्यता का कितना लेश है॥

इन चारों ग्रन्थकारों में से किसी दो का लेख इस विषय में शब्दानुसार ठीक नहीं मिलता जो वे कहते है कि मसीह के क्रूस पर चढाने के समय लिखा गया था: इस के अति-

रिक्त मरकूस कहता है कि वह पहर दिन चढ़े अर्थात् ९ बजे क्रूस पर खींचा गया और यूहन्ना कहता है कि १२ बजे क्रूस पर चढाया गया अस्तु—

वह लेख जो मसीह के क्रूस पर चढ़ने के समय लिखा गया था इन चारों पुस्तकों में यों है कि—

मत्ती...............यह मसीह यहूदियों का राजा है.

मर्कूस...............यहूदियों का राजा.

लूका...............यही यहूदियों का राजा है.

यूहन्ना............. यसू नासरी यहूदियों का राजा.

यद्यपि यह बात अत्त्यन्त तुच्छ है तौ भी इस से यह स्पष्ट विदित होता है कि इन ग्रन्थों के लेखकलोग (चाहे जो हों) उस समय और उस जगह उपस्थित न थे इन प्रेरित नामक पुरुषों में से केवल १ पुरुष जान पडता है जो कि उपस्थित था। उसका पथरस नाम है, सो जब उसे लोगोंने धरा और कहा कि तु मसीह के साथियों में से है तो (मत्तीके २६ वें पर्व के ७४ वीं आयत में लिखा है) कि "उसने धुत्कार दिया और कसम खा कर कहा कि मै इस मनुष्य को नहीं जानता" । इतने पर भी ये लोग चाहते है कि हम इसी पथरसका विश्वास करें जो उन्हींके लेखानुसार झूठ बोलने का दोषी ठहर चुका। भला हम क्यों और कैसे इस का विश्वास कर सकते हैं ?

मसीहके क्रूस पर चढ़ाये जाने के साथही जो कुछ ये लो-

ग हुआ वतलाते हैं उसका भिन्न २ प्रकार से चारों पुस्तकों में वर्णन किया है

मत्ती की पुस्तक में लिखाहै कि दोपहर से तीसरे पहर लों उस समस्त देश में अंधकार छा गया—मन्दिर का पर्दा ऊपर से नीचे लों फट्गया—और धरती कांपी—और पर्वत् तड़क गये—कबरै खुलगई—और बहुत पवित्रलोग जो सोते थे तिनकी लोथैं उठीं—और उसके जी उठनेके पीछे कबरों में से निकल के पवित्र नगर में गये और बहुतों को दिखाई दिये। इस प्रकार तो मत्तीने अपनी कलम धर घसीटा है परन्तु दूसरे ग्रन्थकार लोगोंने इतनी हिम्मत नहीं की है।

मर्कूस के पुस्तक का ग्रन्थकार क्रूसका हाल लिखते समय भूंडोल या पहाडों के फटने या कबरों के खुलने अथवा मुर्दों के जी उठने वा चलने फिरने का कुछ वृत्तान्त नहीं देता है। लूका का ग्रन्थकार भी इन विषयों पर मौन धारण किये हुये है। यूहन्ना के पुस्तक का ग्रन्थकार तो यद्यपि मसीह के क्रूस पर चढाये जाने से लेकर गाडे जाने पर्य्यंत लों छोटे २ हाल भी लिखता है तथापि अन्धकार, मन्दिर का पर्दा, भूकम्प, पर्वत, कब्र या मुर्दे जिन्दों के विषय में कुछ नहीं लिखता है।

यदि ये बातें सच होतीं और यथार्थ में हुई होतीं और यदि इन के लेखक इन वृत्तान्तों के होने के समय हुये होते

और यदि यथार्थ में वे ४ शिष्य मत्ती, मर्कुस, लूका और यूहन्ना वहां होते तो सच्चे इतिहासलेखक की नाईं यह कभी सम्भव न था (विशेषतः उनके इल्हाम पाने पर) कि वे ऐसी भारी बात को लिखने से छोड़ जाते माना हमने कि ये बातें यथार्थ में हुई थी तो फिर यह कोई ऐसी तुच्छ बात न थी कि तीन २ ग्रन्थकार लोग ऐसी भारी बात को न लिखें। यदि ये कल्पित लोग यथार्थ मे मसीह के शिष्य थे और भूकम्प भी हुआ था तो निस्सन्देह यह इस के साक्षी होते क्योंकि वे इस से अनुपस्थित तो होही नहीं सकते फिर कब्रों का खुल जाना और मुर्दों का जी उठना तथाच नगर में घूमना तो भूकम्प से भी भारी बात है। भला भूकम्प का होना स्वाभाविक और सम्भव है और इस से कुछ प्रमाणित नहीं होता परन्तु इन कब्रों का खुल जाना तो परम आश्चर्य्यमय है जो विशेष कर उन के वचनों को प्रमाणित करता॥ यदि यह बात सत्य होती तो कई पर्व के पर्व इस विषय में रंगे गये होते और सभी ग्रन्थकारों ने अपना २ राग छेडा होता सो कहीं भी नहीं पाया जाता। विचारने की बात है कि जब उन्होंने अत्यन्त सारहीन और तुच्छ २ बातों का सविशेष वर्णन किया है कि मसीह ने यह कहा और मसीह ने वह कहा तो ऐसी भारी

बात को सत्य होने पर लोग कैसे छोड़ देते? जिसे केवल एकही लेखक ने बड़ी बे परवाही से कलम की घसीट में लिख

मारा है और बाकी लेखकों ने जिसका नामोल्लेख तक भी नहीं किया है।

झूठ बोल देना अत्यन्त सरल है, परन्तु कहे उपरान्त उस झूठ का निर्वाह करना अत्यन्तही कठिन हो जाता है। मत्ती के ग्रन्थकार ने यह तो हमे बतायाही नहीं कि वे पवित्र लोग जो जी उठे और नगर में गये कौन थे फिर उनका क्या हुआ और किसने २ उन्हें देखा ? ग्रन्थकार की इतनी हिम्मत न पड़ी कि वह लिखता कि हमने उन्हें देखा उसने यह भी न लिखा कि वे नर थे या मादे, नगे ही निकल आये या पांचो कपड़े पहिने थे ? और कपड़े कहां से पाये; या वे पुनः अपने पुराने घरों को गये या नहीं ? और वहां जाकर अपने स्त्री पति, माल असबाब पर दावा किया ? और उनसे कैसा बरताव हुआ ? या उन्होने अपना माल पाने के लिये और अपने लुटेरों पर अमानत ख्यानत की अदालत किया या नहीं ? या उन्होंने पृथ्वी पर रह कर पुनः अपना पुराना रोजगार आरम्भ किया ? या वे पुनः मर गये, या जीते ही जी कब्रों मे जाकर आपसे आप गड़ गये ? इन सब प्रश्नों का क्या उत्तर है ?।

परम आश्चर्य की बात है कि इन पवित्र पुरुषों का एक झुंड का झुंडही जी उठे और किसी को न मालुम हो कि वे कौन थे और किसने उन्हें देखा तथा उन के विषय में फिर न किसी ने कुछ कहा और न उन्हों ने किसी से बात चीत

की ! यदि वे वेही भविष्यवक्ता लोग होते जो इन के लेखानुसार भविष्यवाणी कर गये थे तो ये वहुत कुछ बकवाद करते अपनी भविष्यवाणी पर टीका कर गये होते जो कदाचित् मूल से भी कठिन होती—यदि ये मूसा, या हारून, जोशुआ सामुयेल या दाऊद होते तो समग्र यरूसलम में एक भी यहूदी न बचता जो ईसाई न हो जाता । यदि बप्तिस्मा देनेवाला यूहन्ना होता या उसी समय के पवित्र लोग होते तो सब कोई उन्हें पहिचान सकता और वे उपदेश देने में इन प्रेरितों से कहीं चढ़ बढ़ गये होते ! परन्तु नहीं इन सब बातों के बदले ये पवित्र लोग यूनस के वृक्ष की नाईं रातही को पैदा हुये और सवेरेही सूख गये—यहां लों तो इस किस्से का गुण वर्णन हुआ ।

और इस के उपरान्त मसीह के पुनः जी उठने का किस्सा चला इस में भी इन लेखकोंका ऐसा परस्पर विरोध पाया जाता है कि जिस से स्पष्ट जान पडता है कि उन में से कोई भी उस समय उपस्थित न था ।

मत्ती की पुस्तक में लिखा है कि जब मसीह कब्र में गाड़ा गया तब यहूदियों ने जा कर पिलातूस राजा से प्रार्थना की कि वह कब्र पर पहरा बैठा दे कहीं ऐसा न हो कि उस के शिष्य रात को आकर उस्के लोथ को चुरा ले जायँ, सो पिलातूस राजा ने उन की इस प्रार्थना को स्वीकार करके पहरा

बैठवा दिया और कब्र के मुँह पर जो पत्थर ढका था उसपर मोहर करवा दी—परन्तु दूसरे पुस्तकों में इस प्रार्थनापत्र या मोहर या पहरेदारों के विषय में कुछ भी नहीं लिखा है उन के हिसाब से ये सब बातें कुछ भी न थीं। मत्ती तो इस पहले किस्से को और भी बढ़ा ले गया है जैसे हम आगे चलकर लिखेंगे और जिस से इन पुस्तकों की कपोलकल्पना भली प्रकार विदित होगी।

मत्ती की पुस्तक के २८ वें पर्व की पहली आयत में लिखा है कि "विश्राम दिन के पीछे अठवारे के पहले दिन जब पौ फटने लगी मरियम मिगदाली और दूसरी मरियम कब्रको देखने आईं"। मर्कूस कहता है कि यह सूर्य निकले की बात है और यूहन्ना लिखता है कि उस समय अँधेरा था। लूका लिखता है कि मरियम मिगदाली और यूहनह और याकूब की माता मरियम तथा और कई एक स्त्रीयां कब्र देखने गईं, और यूहन्ना कहता है कि केवल मरियम मगदाली ही गई थी। वाह! क्या खूब गवाही मिलती है! ये सब लेखक मरियम मगदाली को खूब जानते हैं यह स्त्री प्रसिद्ध जान पड़ती है जो सभोंने इसका नाम लिख मारा है।

आगे चलके दूसरी आयत में मत्ती लिखता है कि "देखो बड़ा भूँइडोल हुआ क्योंकि प्रभूका दूत स्वर्गसे उतरा और आके उस पत्थर को कब्रके मुँह पर से ढुलका के उस पर बैठग-

था"। परन्तु दूसरी पुस्तकों में भूडोल और ईश्वर के दूतका पत्थर ढुलकाने और उसके बैठनेके विषय में कहीं कुछ नहीं लिखा है; सो उनके हिसाब से कोई दूत बैठा न था। मर्कूस कहता है कि यह दूत दहने हाथ की ओर कब्र के भीतर बैठा था। लूका लिखता है कि दो दूत थे और दोनों खडे थे, यूहन्ना कहता है कि दोनों बैठे थे एक सिहाने और एक पैर की तरफ।

मत्ती कहता है कि कब्रके बाहर जो दूत पत्थर पर बैठा था उसने दोनों मरियम से कहा कि मसीह जी उठा। सो वे झट पट लौट गईं। मर्कूस कहता है जब उन स्त्रीयों ने पत्थर लुड़का हुआ देखा तो आश्चर्य में हुईं और कब्र में गईं सो कब्र के अंदर दाहनी तर्फ जो दूत बैठा था उसने उन्हें यह हाल कहा। लूका कहता है कि दोनों खडे दूतों ने कहा; और यूहन्ना कहता है कि स्वयं मसहि ने मरियम मगदाली से कहा और वे कब्र में नहीं गईं परन्तु झुक कर देखती थीं। यदि इन चारो पुस्तकों के ग्रन्थकर्ता लोगों ने किसी न्यायालय में जाकर इस प्रकार परस्पर विरोधमय साक्षी दी होती तो कदाचित् इस अपराध में उन का कान काट लिया गया होता और छ छः महीने के लिये जेलखाने भेज दिये गये होते और यह दण्ड उनके लिये कुछ अनुचित भी न था। खेद का विषय है कि इतने पर भी यह साक्षी मानीजाती है और येही

पुस्तकै संसार भर में यह कही जाती है कि ईश्वर के इलहाम और आज्ञा से लिखी गई है ।

मत्ती की पुस्तक का लेखक इस वृत्तान्त के उपरान्त एक ऐसा हाल लिखता है जो किसी दूसरी पुस्तक में नहीं पाया जाता और जिस के विषय में हम पहले कह चुके हैं कि आगे लिखेंगे।

वह लिखता है कि तब (अर्थात् पत्थर पर बैठे हुये दूत और स्त्रीयों के वार्तालाप के अनन्तर) देखो उन दूतों में से (अर्थात् जो रक्षाके निमित्त कब्र पर नियत किये गये थे) कितनों ने नगर में आकर प्रधान याजकों को सब समाचार सुनाया तब उन्हों ने प्राचीनों के सग इकट्ठे होके परामर्श किया और उन सिपाहियों कों बहुत रुपये देके कहा कि "कहियो रात को जब हम सो गये थे तब उस के शिष्य आके उसे चुराले गये । और यदि यह अध्यक्ष के कानलों पहुँचे तो हम उसे समझा के तुम्हें बचालेंगे" सो उन्हों ने रुपैये लेकर जैसे सिखाये गये थे वैसाही किया और इस बात की चर्चा आजलों यहूदियों में है ।

इस आजलों लेखसे यह सिद्ध होताहै कि यह मत्ती की पुस्तक मत्ती नामक पुरुष की लिखी नहीं है और जिस समय तथा जिनबातों का वृत्तान्त इस में दिया है उनकी घटना के बहुत दिन उपरान्त इस की रचना हुई है क्योंकि इस लेख- से यह स्पष्ट सूचित होता है कि उक्त घटनाओं और लेखक

के समय में बहुत काल का अन्तर जान पड़ता है। अपने समय के घटित वृत्तान्तों का वर्णन इस प्रकार के शब्दों में करना असंगत होगा अतएव इस लेखका तात्पर्य तभी ठीक खुलता है जब हम कई पीढियों का अन्तर बीच में विचारें क्योंकि इस प्रकार के बोलचाल या लेख से बहुत प्राचीन समय का चित्त में ज्ञान होता है।

इस किस्से की मूर्खता भी देखने ही योग्य है क्योंकि इस से प्रतीत होता है कि मत्ती की पुस्तक का लिखनेवाला कोई महा मूर्ख था। वह ऐसा वृत्तान्त लिखता है जिसकी संभावना में स्वतः विरोध पाया जाता है क्योंकि जिन पहरुओं का यह कथन है कि हमारी निद्राकी असावधानता में मसीह का शरीर चोरी गया और हम निद्रासुप्त होने के कारण चोर को पकड़ न सके; पर साथ ही यह भी विचार मन में होता है कि उसी निद्रा और सोनेके कारण वे कदापि यह कह नहीं सकते कि कैसे और कौन उसे चुरा ले गया;—इतने पर भी लेखक ने इन पहरुओं से यह कहलवाया है कि मसीह के शिष्य उसे चुराले गये यदि कोई पुरुप किसी काम किये जाने की तथाच कार्यकर्ता और कार्य किये जाने की रीति की साक्षी देवे और यह भी कहे कि मै उस समय गाढ़ निद्रा में था तो क्या उस की साक्षी विश्वासयोग्य होगी; हां ऐसी साक्षी ईसाइयों के नये और पुराने नियम में हो सकती

है परन्तु जहां सत्यता की आवश्यकता है वहां ऐसी शाक्षीयों से काम नहीं चल सकता ॥

अब हम इन पुस्तकों के उस भाग की परीक्षा करते हैं जहां इस कल्पित जी उठने के उपरान्त मसीह के (कल्पित) दिखलाई देने का वृत्तान्त दिया है।

मत्ती की पुस्तक का लिखनेवाला २८ वें पर्व की ७ वीं आयत में कहता है कि उस दूतने जो कब्र के पत्थर पर बैठा था. दोनों मरीयम से यह कहा "देखो मसीह तुम से आगे गलील को गया है वहां तुम उसे देखोगे; देखो मै ने तुम से कहा है" और यही लेखक ८ वीं औ ९ वीं आयत में यही बात दूत के कहने के उपरान्त मसीह द्वारा उन स्त्रीयों को कहलाता है सो वे उसी क्षण यह सब हाल उस के शिष्यों से कहने के लिये उसी क्षण दौड़ गईं और १६ वीं आयत में लिखा है कि "तब वे ग्यारह शिष्य गलील में उस पहाड़ पर जो यसू ने उन्हें ठहराया था गये और उसे देख कर दण्डवत् की" ॥

परन्तु यूहन्ना की पुस्तक का लेखक कुछ दूसराही वृत्तान्त सुनाता है वह अपने २० वें पर्व की १९ वीं आयत में लिखता है "फिर उसी दिन (अर्थात् जिस दिन मसीह जी उठा) जो अठवारे का पहिला था सांझ के समय में जब उस स्थान के द्वार जहां शिष्य लोग इकट्ठे थे यहूदियों के डर से बंद थे

तब यसू आया और उन के बीच में खड़ा हो के उनसे कहा तुम को कल्याण"।

मत्ती के लेखानुसार ये ग्यारह शिष्य मसीह के नियत स्थान तथा पर्वत पर मिलने के लिये गलील को जाते थे और उसी समय यूहन्ना के लेखानुसार ये लोग यहूदियों के डर के मारे कहीं एकान्त में एकत्रित हुये थे जो पहले से नियत न था।

लूका का ग्रन्थकार जो लेख लिखता है उस से ओर मत्ती के लेख से विशेष विरोध पाया जाता है। लूका स्पष्ट लिखता है किं जिस दिन मसीह जी उठा उसी दिन संध्या समय यह कमेटी यरूसलम में हुई थी और ग्यारहो शिष्य वहां थे—लूका के २४ वें पर्व की १३ वीं ३३ वीं आयत देखो॥

अब यह कदापि सम्भव नहीं है कि इन पुस्तकों के लेखक इन ग्यारह शिष्यों में से हों; हां यदि हम यह मान लें कि वे जान बूझ कर झूठ बोले हैं तो सम्भव हो सकता है; क्योंकि यदि मत्ती के वृत्तान्तानुसार ये ग्यारह शिष्य मसीह से भेंट करने के लिये तन्निर्दिष्ट पर्वत पर गलील प्रदेश में गये तो इन ग्यारहों में से दो तो लूका और यूहन्ना हुये पर लूका का ग्रन्थकार स्पष्ट कहता है और यूहन्ना भी यही बतलाता है कि यह कमेटी उसी दिन यरूसलम में हुई; फिर यदि लूका और यूहन्ना के अनुसार ये ग्यारहो शिष्य यरूसलम में एकत्र

हुये थे तो मत्ती भी अवश्य वहा ठहरा तो फिर मत्ती का यह लिखना कैसे संगत हो सकता है कि ग्यारहो शिष्य गलील प्रदेश के पर्वत को गये; इस प्रकार के परस्पर विरोधी लेख से इन ग्रन्थकारों तथाच ग्रन्थों की असत्त्यता स्वयं प्रगट होती है ॥

मर्कूस का ग्रन्थकार गलील की कमेटी का हाल कुछ नहीं लिखता परन्तु वह सोलहवें पर्व की बारहवीं आयत में यह लिखता है कि मसीह उन में से (अर्थात् ११ शिष्यों में से) दो को जो कि गांव को चले जाते थे दूसरे रूप में दिखाई दिया उन्हों ने जाकर औरों को कह दिया पर, उन्हों ने उन की भी प्रतीति न की" । लूका भी एक ऐसी कहानी कहता है कि जिस में इस कपोलकल्पित जी उठने वाले दिन मसीह संध्या तक फँसा रहा जिस से गलील के पर्वत के जाने का वृत्तान्त बिल्कुलही उड़ जाता है । वह लिखता है कि इन में से दो (परन्तु कौन दो कुछ नहीं मालूम) उसी दिन इम्माऊस नाम एक गाव को जो यरूसलम से साठ स्तादियुम (साढे सात मील) पर था जाते थे और उन्हें मसीह भेष बदले हुआ दिखाई दिया जिसे उन लोगोंने न पहचाना वह उन लोगों के साथ संध्या तक रहा और उन के साथ रोटी खाई तब उन के आंखों के सामने गायब हो गया और उसी दिन संध्या समय यरूसलम में जहां ये ग्यारहों इकट्ठे थे फिर दिखाई दिया ।

यह कैसा परस्पर विरोधी लेख है कि जिस ये लोग मसीह का कपोलकल्पित जी उठना कहते हैं; केवल एकही बात में तो इन लेखकों का मिलान पाया जाता है अर्थात् सब के सब उस का जी उठना छिपे २ बतलाते है क्योंकि चाहे गलील के पर्वतों की कन्दराओं में हो और चाहे यरूसलम के किसी ताले बन्द मकान में हो दोनोंही प्रकार से छिपाव ठहरा। अब विचारना चाहिये कि इस छिपाव का क्या कारण है प्रथम तो यह कि यदि छिपाव न रखते तो लोगों को मसीह के जी उठने का क्या प्रमाण देते दूसरे यह कि यदि प्रकाशरूप से उस का जी उठना कहते तो सब लोग उन्हें झूठा कहते अतएव उन विचारों को लाचार होकर इसे गुप्तही रखना पड़ा।

यह जो हाल लिखा है कि ५०० लोगों ने मसीह को देखा सो पौलूस कहता है और न कि वे ५०० मनुष्य जिन्हों ने स्वयं देखा था सो यह केवल एक मनुष्य की साक्षि है सो भी उस मनुष्य की जो उन्हीं के लेखानुसार इस बात के होने के समय रत्ती भर विश्वास नहीं करता था, माना हम ने कि कोरिन्तियों के १५ वें पर्व का लेखक पौलूस है जहां इन ५०० मनुष्यों का हाल दिया है तो यह साक्षि भी उस मनुष्य की साक्षि की नाईं है जो न्यायालय में कसम खाकर उस विषय पर साक्षी देवे जिसे वह पहले कसम खाकर झूठ कह चुका है। प्रत्येक मनुष्य को अधिकार है कि ज्यों २ वह प्रमाण और

बुद्धि की बातें पावें त्यों २ वह अपनी राय बदल सकता है परन्तु यह अधिकार वास्तविक और प्रत्यक्ष बातों में नहीं हो सकता ॥

अब हम मसीह के स्वर्गारोहण के विषय में लिखते है इस में तो यहूदियों का भय किसी प्रकार नहीं हो सकता; यह ऐसी बात है कि यदि सत्य होती तो सब से अधिक प्रमाण योग्य ठहरती कि जिस से इन शिष्यों के वचन पर लोगों का अधिक विश्वास जमता । जो बातै एकान्त में हुई है चाहे पर्वत की कन्दरा में हुई हों चाहे यरूसलम के तालेबन्द मकानों में हुई हों यदि सत्य भी होतीं तथापि सर्व साधारण में विश्वासयोग्य न थीं अतएव अत्यन्त आवश्यक था कि इस अन्तिम वृत्तान्त की सत्यता में सन्देह का झगड़ा न लगा रहता अर्थात् जैसा हम प्रथम भाग में कह चुके है कि इस की सत्यता ऐसी होनी चाहिये थी जैसे दोपहर का सूर्य, भला और नहीं तो इतना तो सर्वसाधारण को विदित होता कि जैसे उस्का क्रूस पर चढाया जाना प्रसिद्ध है, अस्तु जाने दीजिये—

पहिले तो मत्ती का ग्रन्थकार इस विषय में चूं भी नहीं करता और न यूहन्ना का लेखक इस का नाम लेता है । जब यह दशा है तो भला क्या कभी सम्भव है कि यदि यह बात सत्य होती तो क्या ये ग्रन्थकार लोग जो तुच्छ से भी तुच्छ बातों को लिखते आये है इस को लिखना छोड़ देते ?

मर्कूस का ग्रन्थकार इस पर साधारण रीति से कलम खींच गया है मानो वह इस झूठे किस्से को लिखते २ थक गया हो या उसे लज्जा से ग्लानि हो गई हो। यही हाल लूका के ग्रन्थकार का भी है, और इन दोनों में भी इस बात का प्रत्यक्ष मेल नहीं खाता कि यह अन्तिम बिछोह किस स्थान पर हुआ।

मर्कूस की पुस्तक में लिखा है कि जब ये ग्यारहो शिष्य भोजन कर रहे थे तो मसीह उन्हें दिखाई दिया (इस से उस का अभिप्राय यरूसलम की सभाका है जहां कि ग्यारहो इकठ्ठे हुये थे) तब जो जो बातें सभा में हुईथीं उनका वृत्तान्त वह लिखता है और इसके उपरान्त ही कहता है (जैसे कोई पाठशाला का छात्र कोई छोटी मोटी कहानी समाप्त करता हो) कि "सो तब प्रभू उन से बातचीत करने के उपरान्त स्वर्ग में चला गया और ईश्वर के दहने हाथ बैठगया" परन्तु लूका का लिखनेवाला कहता है कि वह बैतुनिया नगर में से स्वर्गको चढ़गया जैसा लिखा है कि "फिर वह (अर्थात मसीह) उन्हें वहां से बैतनिआं शहर से बाहर लेगया और उनसे वहां अलग हुआ और स्वर्गको चढ़ गया ऐसी २ व्यर्थ की बातों को विश्वास करना मानो ईश्वर पर अविश्वास करना है।

अब हम चारों पुस्तको की समालोचना कर चुके जो

मत्ती, मर्कूस लूका और यूहन्ना की लिखी कहलाती है और जब यह विचारते है कि क्रूस पर चढ़ाये जाने से स्वर्ग चढ़ जाने पर्यन्त केवल तीनही चार दिन का अन्तर है और ये सब बातें यरूसलम ही के आस पास हुई है तो हम देखते है कि कदाचित् ऐसी कोई दूसरी कहानी न मिलेगी जिस में इतनी अज्ञता विरोध और असत्यबातै पाई जाती हों जैसी कि इन पुस्तकों में लिखी हैं जब हमने इस ग्रथका प्रथम भाग लिखना प्रारम्भ किया था तो हमें यह आशा न थी और न यह ध्यान ही था कि इतनी ग़लतियां इन पुम्तकों में पाई जावैगी उस समय मेरे * पास बाइबिल या नया नियम देखने को न था और न कहीं जल्दी में मिल सकता था इसका हेतु यह था कि मुझे अपनी बीमारी के कारण अपने जीवनका ही भय हो रहा था और मेरी यह इच्छा थी कि मै अपने पीछे कुछ न कुछ इस विषय में छोड़ जाऊं अतएव जो कुछ शीघ्रता में बनपड़ा था थोड़ेही में लिख दिया था उस समय जो २ बातै लिखी गईं थीं केवल स्मरण से लिखी थीं परन्तु वे सब सही हैं और जो कुछ उन में लिखा है सब सत्त्य और चिरस्थापित सिद्ध बातें हैं अर्थात् पुराना और नया नियम दोनों असत्त्य है तथा न मसीह को ईश्वर का पुत्र मानना उसकी क्रोधशान्ति के लिये मसीह का मरना और इस विचित्र विश्वास पर मुक्ति पाना सब ऐसी बातें है जो ईश्वर की ईश्वरता में बट्टा लगाती है।

* मेरे—Thomas Paine

सत्य धर्म तो केवल एक ईश्वर का मानना और उस के अनुकरण में भलाई और दूसरों पर कृपा करना है यही मेरा विश्वास है ईश्वर मुझे इस विश्वास पर दृढ़ रक्खे ।

हां इष्ट विषय तो रहाही जाता है । यद्यपि इतने दिन बीतने के उपरान्त यह निश्चय करना असम्भव सा हो रहा है कि इन चारों पुस्तकों के वास्तविक रचयिता कौन थे (केवल इसी से इनकी सत्यता पर सन्देह होना उपयुक्त है) तथापि इस बात को प्रमाणित करना कुछ भी कठिन नहीं है कि जिन लोगों के नाम से ये पुस्तकै प्रसिद्ध है वास्तव में इन्की लिखी नहीं है इन पुस्तकों के विरोध से ये दो बातै प्रगट होती हैं ।

प्रथम तो यह कि जिन विषयों का उल्लेख ये ग्रन्थकार लोग करते है उन विषयों के ये लोग नेत्रसाक्षी वा कर्णसाक्षी नहीं हो सकते नहीं तो ऐसा विरोध न पाया जाता—इस से यह विदित होता है कि ये बातै मसीह के शिष्यों की लिखी नहीं है क्योंकि वे लोग तो सदा मसीह के साथ थे ।

दूसरे यह कि इन ग्रन्थकार लोगों ने (ईश्वर जाने जो हों) मिल कर ये बातै नहीं लिखी हैं परन्तु प्रत्येक लेखक ने अपना २ लेख स्वतत्र लिखा है। यदि कोई कहे कि उन लोगों ने ईश्वरीय प्रेरणा से ये बातें लिखी है तो भला ईश्वरीय प्रेरणा में यह विरोध कैसै हो सकता है ? यदि ये चारो मनुष्य इन विषयों के नेत्रसाक्षी या कर्णसाक्षी हुए होते तो बिना

आपस की मिलावट के उन का लेख समय और स्थान के विषय में तो अवश्य मेल खाता यदि वे लोग इस विषय को स्वयं जानते होते तो ऐसा कभी नहीं होता कि एकही बात को एक मनुष्य तो पर्वत में हुआ बताता और दूसरा किसी नगर के मकान में, अथवा एक पुरुष कहता कि यह बात सूर्योदय पर हुई और दूसरा कहता कि रातही को हुई क्योंकि जहां कहीं हो जिस समय यह बात हुई होगी तो इन सभों को एकसां ज्ञान होना चाहिये।

तो अब यह विचारना चाहिये कि यह ईसामसीह के जी उठने का किस्सा कैसे बन गया। प्रायः ऐसा होता है कि पहिले कोई मनुष्य किसी झूठी बात को साधारण रीति से प्रचार करता है और होते २ यह बात ऐसी पक्की हो जाती है कि उस पर लोग सच्चा सही विश्वास करने लगते हैं। मसीह के जी उठने और दिखाई देने का किस्सा ठीक वैसाही है जैसे प्रायः भोलेभाले लोग भूत पिशाच के विषय में कहा करते है अथवा जब कोई निरपराधी मनुष्य मारा जाता है वा जब किसी की अपमृत्यु होती है। प्रथम किसी मनुष्य ने किसी भूत प्रेत का हाल कहा दूसरे नें उस पर कुछ और बांधा तीसरे ने कुछ और बढ़ाया चौथे ने उस पर नया प्रपंच खड़ा किया योंही होते हवाते जितनी मुंह उतनी बातें हो जाती है बस ऐसेही मसीह का किस्सा भी है जो इन पुस्तकों में लिखा है।

मसीह के पुन. दिखलाई देने के किस्से में कुछ तो स्वाभाविक और कुछ असम्भव बातों की खिचड़ी है । लिखा है कि जब द्वार बन्द था तो वह अचानचक अन्दर चला आया और फिर लोप हो गया और फिर दिखाई दिया; तब उसे भूख लगी, और उसने व्यालू किया । परन्तु जैसे इस प्रकार के किस्से कहनेवाले पूर्णतया साङ्गोपाङ्ग निर्वाह नहीं कर सकते वही दशा यहां भी है। ये ग्रन्थकार कहते है कि जब मसीह जी उठा तो वह अपने पुराने कपड़े कब्र में छोड़ गया परन्तु यह कहीं भी नहीं लिखते कि जब वह पुनः दिखलाई दिया तो कौन से कपड़े पहने था या नङ्गा घूमता था और यह भी नहीं लिखते कि जब वह स्वर्ग में चढ़ गया तो उन कपड़ों को उसनें क्या किया, उतार कर फेंक दिया या उन्हें पहनेही चला गया । इलियाह भविष्यवक्ता के समय उन लोगों ने चलाकी करके उसका कुर्ता फेंकवा दिया है भला वह आग के रथ में जिस पर इन के कथनानुसार इलियाह स्वर्ग पर चढ़ गया था क्यों न जल गया परन्तु ऐसी अवस्था में सदा मान लेनेही से काम चलता है सो हम लोग भी मान लें कि उसने कोई इन्द्रजाल का खेल किया होगा ।

जो लोग क्रिस्तानों का इतिहास पूरा २ नहीं जानते वे कदाचित् समझते होंगे कि नये नियम की पुस्तकें मसीह के समय से अर्थात् ठीक उसकी मृत्यु के उपरान्त से चली आती

है परन्तु यहां तो बातही दूसरी है मसीह की मृत्यु के ३०० वर्ष उपरान्त लौं नये नियम का तो नामोल्लेख तक भी न था।

ये पुस्तकै जो मत्ती, मर्कूस, लूका और यूहन्ना की लिखी कहलाती हैं किस समय दृष्टिगोचर हुईं वह ठीक पता नहीं लगता है उन पुस्तकों मे कोई ऐसा लेख नहीं है जिन में उन के लिखे जाने का सन् या ग्रन्थकर्ता का नाम दिया हो। यही पुस्तकै यदि किसी दूसरे के नाम से प्रसिद्ध होतीं तो भी किसी प्रकार की दिक्कत न पड़ती क्योंकि जिन के नाम से वे प्रसिद्ध है उन का उन से कोई विशेष सम्बन्ध नहीं पाया जाता जो वे उन्हीं के नाम से कहलावें। किसी गिरजे वा किसी बड़े भारी क्रिस्तानों के अधिष्ठाता के पास असली कापी नहीं है और यदि होती भी तो वे उस के असलीयत का क्या प्रमाण दे सकते है। जिस समय ये पुस्तकै लिखी गईं उस समय छापे की कल न थी अतएव इन की प्रसिद्धी का मार्ग केवल हाथ की लिखी हुई कापियोंही से था जिसे लेखक जहां चाहे तहां बदल सकता था और उसे असली कापी बतला सकता था भला क्या हम यह विचारलें कि यह बात उस परम बुद्धिमान् जगदीश्वर की बुद्धि के संगत हो सकता है कि वह अपनी इच्छा और आज्ञाको मनुष्यों पर ऐसी तुच्छरीति से विदित करे कि जिसे जो चाहे सो बदल डाले और जिसका कुछ पता न लगे। हम लोगतो ईश्वरके बनाये हुये एक साधरण

घास के टुकड़े को भी न बना सकते हैं न बदल सकते हैं न किसी प्रकार उसकी ठीक नकल उतार सकते है तो भला जिन वाक्यों को मनुष्य अपनी इच्छानुसार वदल सकता है वा बना सकता है वह कैसे उसका वचन कहलाने के योग्य है ?।

मसीह का जो समय वे लोग बतलाते है उसके साढ़े तीन सौ वर्ष उपरान्त ऐसे २ अनेक छोटे मोटे ग्रन्थकार जिन्का हाल हम कह रहे है उत्पन्न हुयेथे और उस समय गिरजा विभाग का एक प्रकार अधिकार जमने लगाथा सो उसके अधिकारियों ने एक संग्रह आरम्भ किया जो अब नये नियम के नाम से प्रसिद्ध किया इसेभी उन लोगोंने चुन २ कर आपस के मेल से यह ठहरा लिया कि किसे ईश्वर का वचन कहना चाहिये और किसे नहीं। बस इसी प्रकार ईस नये नियम की जड़ हुई है।

इस गिर्जा सम्बन्धीय धर्म नियत करने का मुख्य अभिप्राय अपना अधिकार, आमदनी और रोब जमानेका था अत एव यह बात मन में आती है कि जिन २ लेखों को उन्होंने उस संग्रह में से अत्यन्त कौतुकसम्पन्न और विचित्र देखा इन्हें तो ईश्वर का वचन कह कर अपनी अनुमती दी—अतएव प्रमाण के स्थानापन्न उन लोगों की अनुमति ठहरी और सत्यता के स्थान में कपोलकल्पना हुई।

उस समय जो लोग अपने तई ईसाई कहते थे उन में भी

बडा झगड़ा उठा था न कि केवल शिक्षा के विषय पर परन्तु पुस्तकों की सत्यता और प्रमाणित होने पर भी । मसीह से ४०० वर्ष उपरान्त St. Augustine और नामकदो प्रसिद्ध पुरुषो में जो झगड़ा हुआ था उस में Favste कहता था कि "जो पुस्तकैं मत्ती, मर्कूस, लूका यूहन्ना के नाम से प्रसिद्ध है मसीह के शिष्यों के वहुत दिन उपरान्त लिखी गई है ।

इन्के लेखक न जाने कौन है परन्तु यह जान पडता है कि इन ग्रन्थों के रचयिताओं ने इन्हें मसीह के शिष्यों के नाम से इसलिये प्रसिद्ध किया है कि वे भली प्रकार जानते थे कि सर्व साधारण लोग उनकी लिखी हुई वातोंका विश्वास कदापि न करेंगे, और इनग्रन्थो में ऐसे परस्पर विरोधी वातों का वर्णन भरा हुआ है कि किसी प्रकार न सम्भव होता है न मेल खाता है" आगे चलकर यही मनुष्य उन लोगोंको जो इंजील के पक्ष में हैं और उसे ईश्वर का वचन मानते है यों कहता है कि "इसप्रकार तुम्हारे पूर्वजों ने हमारे प्रभूके ग्रन्थ में वहुत सी वातैं मिला दी है जो यद्यपि उनके नाम से प्रसिद्ध हैं तथापि उस्की शिक्षा से नहीं मिलते । इस में कोई आश्चर्य नहीं है क्योंकि हम कईवेर प्रमाणित कर चुके हैं कि ये वातै न तो स्वयं उस्की लिखी है और न उस्के शिष्यों की, परन्तु उसका अधिक भाग किस्से कहानी और सुनी सुनी वातों पर कल्पित है जिसे न जाने किसने इस प्रकार रचा है कि कुछ भी मेल नहीं

खाता पर तौभी वे हमारे प्रभूके शिष्यों के नाम से छपी हैं सो उनमें इन झूठे लेखकों ने अपनी भूल और झूठी बातें भरदी हैं।

इन दोनों लेखों से पाठकों को विदित होगा कि नये नियम की सत्यता और प्रामाणिकता पर तभी सन्देह होगया था जब इन्हें ईश्वर का वचन क्रिस्तानों ने ठहराया था। परन्तु इन्होंने अपने मतलब के आगे सब प्रकार आंखे बंद करली थीं। इन्होंने चमत्कारिक घटनाओं का ढेर जमा दिया और लोग चाहे चित्त से विश्वास न करें परन्तु औरों के दिखाने के लिये कहने लगे कि हम विश्वास करते है परन्तु अब वह समय आया है कि उनके एक भी चमत्कारिक घटना की दाल नहीं गलती और दिन पर दिन क्रिस्तानी धर्म का विश्वास उठताही जाता है।

जब हम यह विचारते है कि मसीह के होने और इस नये नियम के बनने में २०० वर्ष से अधिक का अन्तर हैतो बिना ऐतिहासिक प्रमाण के यह मन में आता है कि इन के लेखकी सत्यता सान्दिग्ध हैं।

अब हम यह विचारते है कि मत्ती, मर्कूस, लूका और यूहन्ना के लेखकों ने अपना नाम ग्रन्थकर्ताओं में क्यों नहीं लिखा, तो इसका कारण यही जान पड़ता है कि वे लोग अपनी मूर्खता से भली प्रकार अभिज्ञ थे और यह जानते थे कि यदि हम अपना नाम प्रकाश करेंगे तो सर्वधाधारण में ऐसी

मूर्खता की बातों से हमारा बड़ा उपहास होगा। फिर इन ग्रन्थों में कोई ऐसी बुद्धिमत्ता की बात नहीं है कि सर्वसाधारण लोग न बना सकें। महाकवि कालिदास की सी कविता करना कालिदासही का काम था अथवा यूकलिड सरीखा ग्रन्थ बनाना युकलिडही का काम था अतएव उन से छोटी बुद्धि का आदमी ऐसे भारी कामों में हाथ लगाकर पार नहीं पा सकता परन्तु नये नियम की तो विलक्षण दशा है जो साधारण बुद्धिक मनुष्य भी ऐसी हजारों बातें बना सकता है। बाइबिल के शिक्षकों की बुद्धि प्रायः उतनीही है कि जैसे दो दो चार अथवा तीन दुनी ६, बस इतनीही विद्या होने से चाहे जो मनुष्य नये नियम सरीखा ग्रन्थ बना सकता है।

जिस किसी मनुष्य को जितना अधिक मौका जाल करने का मिलता है उतनीही अधिक उस्की इच्छा जाल करने की ओर झुकती है जैसे यदि कोई मनुष्य कालिदास सरीखी कविता कर सकता है तो उसे कालिदास के नाम से कोई ग्रन्थ बनाने में कोई नाम नहीं है क्योंकि वह उसे अपने नाम से बना सकता है यदि उस में इतनी बुद्धि नहीं है तो वह कृतकार्य नहीं हो सकता परन्तु नये नियम सरीखे पुस्तक बनाने में जाल्साजी की अधिक सम्भावना होती है क्योंकि यदि कोई भी लेखक अपने नाम से उन वृत्तान्तों को लिखता जिन्हें हुए दो तीन सौ वर्ष बीत चुके हों तो कोई भी उसका विश्वास नहीं

करता अतएव उसने अपना नाम नहीं दिया, परन्तु उसकी खोज यहां कौन करता है, क्रिस्तानों को तो अपना मतलब साधने से काम ठहरा सच झूठ के निर्णय से क्या प्रयोजन।

हम पहिले कह चुके है कि उन दिनों में और प्रायः अब भी मूर्ख और भोलेभाले लोगों में यह किस्सा कहा जाता है कि ऊंचे से गिरे, पानी में डूबे, आग से जले या फांसी दिये हुये अथवा और किसी अपमृत्यु से मरे हुये लोग भूत हो कर घूमा फिरा करते है अतएव मसीह का इस प्रकार जी उठने का विश्वास अथवा भूत प्रेतों के दिखलाई देने और दूसरे के शरीरों में पैठने का विश्वास लोगों को सहज में हो गया हो तो क्या आश्चर्य्य है; इसी बे-सिर पैर की बात पर मत्ती मर्कूस, लूका और यूहन्ना नामक चारो ग्रन्थ की जड़ है। प्रत्येक लेखक ने इस किस्से को या इसके वृत्तान्त को जैसा सुना वैसा लिख दिया और मसीह के किसी शिष्य का नाम जिसे लोगों की जबानी सुना कि उस समय उपस्थित था ग्रन्थकर्ता नें रख दिया। बस इसी प्रकार तो इन परस्पर विरोधी बातों के लेख का पता लगता है क्योंकि यदि ऐसा नहीं है तो फिर इन चारों ग्रन्थों में झूठी और फ़रेब की बातों के अतिरिक्त और कुछ भी नहीं है।

यह भी स्पष्ट झलकता है कि ये ग्रन्थ किसी अर्द्ध-यहूदी और अर्द्ध-क्रिस्तान के लिखे है यह बात इस से विदित होती

है कि उनमें प्रायः भविष्यवक्ताओं और उस प्रसिद्ध नर-हत्याकारी मूसा का उल्लेख दिया है, क्रिस्तानों ने इन उल्लेख रूपी छिद्रों को यों रफू किया है कि पुराने नियम की भविष्यवाणियों की पूर्ति नये नियम में होती है योंहीं जिन २ लेखों पर ज़रा भी गुंजाइश पाई कि उन्हें पूर्ति बतला दी जैसे कितने चोर सैकड़ों टूटी फूटी सड़ी पुरानी तालियों का गुच्छा इसलिये अपने पास रखते है कि लोगों के तालों में किसी प्रकार लगा कर खींच खांच खोल लेवें। हौवा औ सर्प का किस्सा जो मूर्खता से भरा है भविष्यवाणी मान लिया गया है। इस में यह लिखा है कि वह तेरे सिर को कुचलेगा और वह तेरी अँगुली काटेगा भला इस्में कौन सी नई बात है मनुष्य सर्प को सिर में मारताही है क्योंकि उसी भाग में चोट लगने से वह बेकाम हो जाता है और सर्प प्राय. एड़ी में काटताही है क्योंकि अधिक ऊंचे जल्दी नहीं पहुंच सकता। एसैयाह ने आहज़ राजा के प्रति जो झूठा वाक्य कहा था कि एक कुआरी गर्भवती होगी और बेटा जनेगी * वह मसीह के उत्पत्ति के विषय में खींच खाच कर मान लिया गया है। यूनस

* हम इस पुस्तक के दूसरे भाग में भली प्रकार दिखला चुके हैं कि एसैयाह ने ये वचन आहज़ के प्रति इसलिये कहे थे कि यह वृत्तान्त उस बात का चिन्ह होगा कि तू अपने शत्रुओं से लड़ाई में न हारेगा पर अन्त में वह विचारा हार ही गया।

और ह्वेल का किस्सा भी एक प्रकार का रूपक या चिन्ह माना गया है। यूनस तो मसीह हुआ और उस की कब्र ह्वेल मछली; क्योंकि मत्ती के १२ वें पर्व की ४० वीं आयत में उन्होंने स्वयं मसीह के मुंह से यह बात उसी के विषय में कहलाई है कि "जैसे यूनस तीन रात और तीन दिन मछली के पेट में रहा वैसेही मनुष्य का पुत्र भी तीन दिन और तीन रात पृथ्वी के भीतर रहेगा" परन्तु उन्हीं के लेखानुसार मसीह केवल एक दिन और दो रात कब्र में रहा अर्थात् लगभग ३६ घंटे के और न कि ७२ घंटे; अर्थात् शुक्रवार की रात शनीचर का दिन और शनीचर के रात भर क्योंकि यह उन्हीं का लेख है कि अतवार को सूर्य निकलने के पूर्वही जी उठा परन्तु जैसे उत्पति की पुस्तक में सांप का काटना और लात खाने का वृत्तान्त है अथवा एशैयाह के पुस्तक में कुआरी और उस्के पुत्र का लेख है वैसीही इस्की दशा भी है यहां तक तो नये नियम के ऐतिहासिक वृत्तान्त और शास्त्री के विषय में हुआ अब आगे पौलूस की पत्रियों का हाल सुनिये।

नये नियम में १४ पत्रिया पौलूस की लिखी कहलाती हैं। हम यहां इस बात का विचार नहीं आरम्भ करते कि ये पत्रियां वस्तुतः पौलूस की लिखी है या नहीं क्योंकि चाहे जो इनका लेखक हो वह अपनी शिक्षा को प्रमाणों से पुष्ट करता है। वह इस बात का बहाना नहीं करता कि मैं भी मसीह के

के जी उठने और स्वर्ग पर चढ़जाने का साक्षी हूँ किन्तु वह प्रत्यक्ष कहता है कि मै इन बातों का विश्वास नहीं करता था।

पौलूस के इस किस्से में कोई आश्चर्य और चमत्कारिक बात नहीं है कि डिमास्कस नगर को जाते समय मार्ग में उस पर विजली गिरपडी; उसके प्राण बच गये इसमें भी कोई आश्चर्य नहीं क्योंकि सैकड़ों मनुष्य इस प्रकार बचगये है और इस में भी कोई विचित्र बात नहीं है कि वह तीन दिनतक न कुछ देख सका और न खा पी सका क्योंकि जिनपर बिजली गिरती है उनकी प्रायः यह दशा हो जाती है। जो सहचर उसके साथ थे उन्हें इतनी चोट नहीं आई क्योंकि लिखा है कि वेलोग उसे शेष की यात्रा में लेगये; वे लोग भी इस बात का वहाना नहीं करते कि उन्हें किसी का दर्शन हुआ था।

उनके वृत्तान्तानुसार जान पडता है कि इस पौलूस नामक पुरुषकी चालचलन में कुछ पागलपन और तीव्रता अधिक थी; जिस उद्दंडता के साथ वह मसीह के शिष्यों को मारने के लिये पीछे पड़ा था उसी उद्दंडता के साथ अन्त में उपदेश भी करता फिरता था। विद्युत्पात से उसके विचार में तो भेद पडगया परन्तु उसका शरीर ज्योंकात्यों था और चाहे वह यहूदी हो चाहे क्रिश्चियन् परन्तु उसकी उद्दंडता दोनों अ-

वस्था में एक सी थी । ऐसे पुरुषों का शिक्षा के विषय में विशेष प्रमाण नहीं दिया जाता क्योंकि वे परम अवधि को प्राप्त होते हैं, जैसे कार्य में वैसे विश्वास में ।

पौलूस लिखता है कि मसीह इसी शरीर से जी उठा; इससे वह मसीह की अमरता प्रतिपादन करता है । किन्तु हम कहते है कि सैकड़ों हजारों मनुष्य इसी कथन से दूसरा अर्थ समझेंगे और उनकी तथा हमारी समझ में यह वृत्तान्त मसीह की अमरता प्रतिपादन नहीं करता प्रत्युत उसकी अमरता के विरुद्ध साक्षी देता है । विचारने की बात है कि यदि कोई मनुष्य इस शरीर से मर गया और फिर उसी शरीर में जी उठा तो यह बात स्पष्ट है कि यह फिर मरेगा । उसी शरीर में जी उठना कुछ पुन मृत्यु का अवरोधक नहीं हुआ; यदि किसी मनुष्य को किसी कारण वस कुछ देर के लिये मूर्छा आ गई और वह फिर सचेत हो गया, तो क्या इससे यह सिद्ध होता है कि उसे फिर कभी मूर्छा आवेगी ही नहीं, अतएव मसीह की अमरता प्रतिपादन करने के लिये उसके शिष्यों को पुनरुज्जीवन के अतिरिक्त कोई दूसरा वहाना जो ऐसा भद्दा न पड़ता खोजना चाहिये था ।

इसके अतिरिक्त आशा और पसन्द क्या यही कहती है कि हमारा शरीर ऐसाही रहे? या इससे अधिक सुभीते का शरीर हमें न मिलना चाहिये? हम देखते हैं कि इस संसार में अनेक

जीव ऐसे है जिनके शरीर को वह वह शक्तियां प्राप्त है कि जिन्हें पाने को हम तरसते हैं। पक्षियों को देखिये कि जिस दूरी को वे दो चार मिनिट में आसानी से लांघ जाते हैं उतनी दूर चलने में हमें घण्टों लगजाते है। मछलियां किस फुर्ती और सुभीते के साथ जल में तैरा करती है। एक साधारण घेंघे ही को देखिये कि जिस कूपमें मनुष्य पड़ा पड़ा मर जावे उसी कूयें की दीवाल से चिपक कर यह कैसे सहज में ऊपर चढ़ आता है, मकड़ी मकान के कोठे पर से किस वहार के साथ खेलती कूदती कूद कर लटकती हुई नीचे उतर आती है। मनुष्य की शारीरिक शक्ति इतनी कम है और उसका यह शरीर ऐसा भारी है कि अनेक आनन्दों से वह बंचित रह जाता है तो भला हम क्योंकर पौलूस के कहने को सत्य मान लें कि मसीह इसी शरीर से जी उठा ? जैसा विषय वह लिखता है उसके लिये यह शरीर उपयुक्त नहीं है।

और सब विचार तो जाने दीजिये. अमरता का अर्थ क्या यही न कि हमको यह ज्ञान रहे कि हम जीवित है तो फिर इस ज्ञान के लिये इसी शरीर और इसी लहू माँस की क्या अवश्यकता है ?

हम लोगों का आकार सदा एकसां नहीं रहता और न आज हमारे शरीर में वही लहू माँस है जो २० या ३० वर्ष

पहिले था पर यह ज्ञान तो हममें बनाही है की हम हैं, या हम जीवित है। यहां लों कि हाथ पैर जिनसे मनुष्य के शरीर का प्रायः आधा हिस्सा बना है इस ज्ञान के लिये आवश्यक नही है ये भलेही काट लिये जांय पर हमारे "हम है" इस ज्ञान में बाधा नही होती, और यदि इनके स्थान में पर इत्यादि लग जॉय तो हम नहीं समझते कि हमारा वह ज्ञान बदल जायगा। तात्पर्य्य कहने का यह कि हमारा यह शरीर, या इसका घटना बढ़ना हमारी आत्मा के "जीवित ज्ञान" से कोई सम्बन्ध नहीं रख सकता आत्मा के जीवित रहने का ज्ञान कुछ उसी शरीर पर निर्भर नहीं है यह बात इस संसार में भी देखी जाती है देखो तितली पहिले किस अवस्था में रहती है प्रथम यह एक प्रकार का कीड़ा रहता है पृथ्वी पर रेंगा करता है फिर कुछ दिनों तक बिना खाये पीये मृतवत् अवस्था में पड़ा रहता है इसके उपरान्त वह खासी सुन्दर विचित्र तितली होकर उड़ने लगता है। प्रथम की अवस्था उसमें कहींभी कुछ नहीं रहती, सब बातें बदल जाती है, उसकी शक्तियां नवीन हो जाती है परन्तु यथार्थ में यह तितली वही कीड़ा है। तो जब इस अवस्था मे जीवात्मा के लिये उसी शरीर का रहना आवश्यक नहीं है तो मृत्यु के उपरान्त विचार मसीह को कोई उत्तम शरीर देना उचित था।

इस ग्रंथ के प्रथम भाग में हम कह चुके हैं कि ईश्वर

का सच्चा और यथार्थ वचन यह चराचर संसार है। देखिये अभागे कीड़े से सुन्दर तितली के दशा को प्राप्त होना हमे शिक्षा देता है कि इस शरीर को परित्याग करने के उपरान्त यदिचेत् हमारे काम इस संसार में उत्तम हों तो हम अवश्य कोई उत्तम शरीर पावेंगे।

प्रथम कोरन्तियों के १५ वें पर्व में जो पौलूस कुछ मंत्र सा कह गया है उसका कुछ भी अर्थ नहीं है, जैसे घंटे के टन् टन् का कुछ भी अर्थ नहीं होता उसी प्रकार पौलूस के इस लेख का भी कुछ अर्थ नहीं—पाठक गण स्वयं देखें कि इस का क्या अर्थ है,वह कहता है कि "सब मांस एकही जैसे मांस नही है। आदमियों का मांस एक प्रकारका है, पशुओं का दूसरे प्रकार का और मछलियों का भिन्न प्रकार का तथाच चिड़ियों का भिन्न प्रकार का" फिर क्या? कुछ नहीं।

इतना तो कोई भी मांस पकानेवाला बावर्ची भी बता सकता है' फिर वह कहता है "आकाशी देहें भी है और पार्थिव देहें भी हैं परन्तु आकाशियों का तेज और है और पार्थियों का और है" फिर क्या? कुछ नहीं। फिर उस ने क्या भेद दिखलाया? फिर वह कहता है "सूर्य्य का तेज और है चन्द्रमा का तेज और है और तारों का तेज और है। फिर क्या? कुछ नहीं. हां इतना आगे कहता है "क्योंकि तारों का तेज भिन्न भिन्न है" विचारे को [illegible]

कारण भी तेज में विभिन्नता होती है। वाह! और यह भी उसे कह देना था कि चन्द्रमा की अपेक्षा सूर्य अधिक तेज चमकता है। बस जैसे मदारियों के मन्त्र होते है, उससे विशेष इस में कुछ भी नहीं है, मदारियों का यह ढंग है कि विचारे विश्वासियों को भुलावा देने के लिये दस बीस वाक्य बे मतलब के जोड़े रहते है और उन्हीं को तमाशा देखने वालों के साम्हने बकने लगते है, वे विचारे घबडाते है कि इसका क्या अर्थ है। बस जैसे उन मदारियो का रंग वैसाही इन पांथे पुरोहितों का ढंग—

कहीं कहीं पर पौलूस ने मसीह का पुनरुज्जीवन प्रतिपादन करने के लिये वनस्पतियों का उदाहरण दिखलाया है। वह कहता है कि "अरे मूर्ख जो तू बोता है यदि वह मर न जाय तो कभी न जमे"। बस इसका उत्तर जैसे को तैसा यह हो सकता है कि "अरे मूर्ख पौलूस! यदि बोया हुआ बीज मर जावे तो कभी न जमे, क्योंकि जीवित बीजही जमते हैं"। पर यहां इस रूपक से काम नहीं चल सकना। बीज का उगना कुछ पुनरुज्जीवन नहीं है किन्तु रूपान्तर में प्रत्यागमन है।

पौलूस तथा दूसरों के पत्रियों की बुनियाद केवल इन्हीं चार ग्रंथों पर है, मत्ती, मर्कूस, लूका और यूहन्ना। तो जब उन्हीं चारों का विश्वास न रहा तो इनका कौन कहे—जब नेहहीं बोदी है तो मकान कैसे ठहर सकता है?

अब हम इस नये अहद्नामे को भी समाप्त करते है; जो जो प्रमाण उन ग्रंथों के बनावटी सिद्ध करने के लिये उल्लेख किये गये है वे उन्हीं ग्रंथों से लिये गये है । सो ये प्रमाण दोहरी तलवार का काम देते है—यदि उन प्रमाणों का कोई विश्वास नहीं तो जिन पुस्तकों मे से वे प्रमाण लिये गये हैं उनका भी कोई विश्वास न ठहरा, और यदि उन प्रमाणों को यथार्थ मानिये तो अब बाइबिल की सत्यता क्यों कर पुष्ट करते है !

अब पाठकगण स्वय इस बात पर विचार कर लेवे कि बाइबिल का लेख कहातक विश्वास के योग्य है, और उस धर्म्म की क्या दशा है जिस्की जड़ यह बाइबिल है ।

इति

—०*०—

सूचीपत्र ।

पुलिसवृत्तान्तमाला	=)	सुखसर्वरी	।)
सच्चासपना	=)	अलकशतक और तिलशतक	=)
अङ्गदर्पण	=)	अन्योक्तिकल्पद्रुम	।=)
अङ्गादर्श	।)	अष्टयाम (देवकृत)	≡)
इश्कनामा	=)	उपलम्भशतक	=)
कुण्डलिया	/)॥	कविकुलकण्ठाभरण	=)
कविकीर्त्तिकलानिधि	=)	चरणचन्द्रिका	=)
चेतचन्द्रिका	।=)	छन्दोमञ्जरी	॥)
देवयानी	≡)	वृन्दविनोदसतसई	।)
दृष्टांततरङ्गिणी दृष्टान्तकेदोहे	=)	नखसिख (शेखरकृत)	=)
प्रियाप्रीतमविलास	।)	प्रबोधपचासा	/)
पजनेसप्रकाश	।)	वामामनरञ्जन	।)
बुढ़ियावखान	/)	वीरोल्लास	।)
विरहदिवाकर	≡)	वसन्तमञ्जरी	≡)
बिहारीसतसई (सटीक)	१॥)	बद्रीनाथयात्रा	/)॥
बदमाशदर्पण	/)॥	बरवै नायकाभेद और नखसिख	=)
भाषासत्यनारायण	=)	भाषाभूषण	=)
भावविलास (देवकृत)	।=)	भवानीविलास (देवकृत)	।=)
भड़ौआसंग्रह चारो भाग	॥=)	मनोजमञ्जरी चारो भाग	१=)
मानसविनोद	।)	महेश्वरविलास	१)
रतनहजारा	॥)	रसराज	।)
रघुनाथशतक	≡)	लोकोक्तिरसकौमुदी	।=)
विक्टोरियारानी	=)	विज्ञानमार्त्तण्ड	।)

मैनेजर भारतजीवन बनारस—सिटी ।

संक्षेप सूचीपत्र ।

रामरसायन बालकाण्ड (अर्थात पद्माकर कविकृत वाल्मीकि रामायण का भाषा छन्दोबद्ध अनुवाद) १)

रामरसायन (अयोध्याकाण्ड) १॥

सुखशर्वरी उपन्यास ।)

रुक्मिणी परि ।)

कमलिनी उ ।)

हम्मीर हठ ।)

चित्रचन्द्रिका (॥)

बलभद्र कृत नखसिख =)

वसन्तमंजरी =)

बिहारीसतसई (हरि कविकृत टीका सहित) १॥)

भाषाभूषण (अलंकार =)

ग्वाल कविकृत षट्ऋतु वर्णन =)

मदनमंजरी नाटक ।=)

सज्जादसम्बुल नाटक १) समयाट सीसन ।)

ईसाईमतखण्डन (तीन भाग) ॥)

वीरनारी नाटक ।)

वीरवामा गीतिरूपक =)

बाबू रामकृष्णवर्मा

भारतजीवन प्रेस बनारससिटी ।

श्रीः

क्या इसी को सभ्यता कहते हैं ?

प्रथम अङ्क ।

प्रथम गर्भाङ्क ।

नवकुमार का मकान ।

(नवकुमार और कालीनाथ बैठे हैं)

काली०—क्या कहते हो भई ?

नव०—और भाइ क्या कहूं । दादा तो इतने दिन बाद वृन्दावन से लौट आये। अब मुझे घरसे बाहर निकलना कठिन है ।

काली०—क्या सर्वनाश । फिर अब इसका क्या उपाय होगा ?

नव०—अब उपाय क्या ? सभा में देखता हूं एबालिश (Abolish) करनी पड़ी ।

काली०—वाह तुम क्या पागल हुए हो ? भला ऐसी सभा कोई कभी एबालिश् (Abolish) करता है ? इतने तूफान से नौका को बचा लाके, घाट के पास आकर क्या पतवार छोड़ना चाहिए ? जब हमारी सबस्क्रपशनलिष्ट (Subscription list) अति पुअर (Poor)

थी, तब हमलोगों ने अपने पास से रुपया देके सभा को सेव (Savo) किया था, अब—

नव०—अजी वह सब क्या मैं जानता नहीं जो तुम फिर नये सिरे से कहने आये? तो भइ मैं क्या इच्छा पूर्वक सभा उठा देने चाहता हूं? परन्तु मैं करूं क्या? बाबा आज कल ऐसे हुए हैं कि यदि मैं दस मिनिट भी घर से बाहर गया तो बस उसी समय मेरी खोज लेने लगते हैं। तो भाई अब सभा में एटेण्ड (Attend) करने का क्या उपाय है। (दीर्घनिश्वास।)

काली०—क्या उत्पात है। तुम्हारी बात सुन के भाई गला जैसे सूख गया है। अजी नवकुमार वह कुछ है?

नव०—हश (Hush) । इतना चिल्ला के बात न करो, कदाचित् कुछ ब्राण्डी (Brandy) होगी।

काली०—(सहर्ष) जष्ट दि थिङ् (Just tho thing !) तो लावो देखें।

नव०—ठैरो देखता हूं (चारो ओर देख कर) बाबा अभी भीतर से नहीं आये होंगे (चिल्लाकर) अरे दासू—

(नेपथ्य में) जी आता हूं।

काली०—आज रात को भाई एक बार तुम को अवश्य जाना होगा। (स्वगत) हा', ये बुड्ढा क्या अकाल का मेघ हो कर हमारा प्लेज़र (Pleasure) नष्ट करने

आया है ? ये नवकुमार हमारा सरदार है और म-
निम्याटारस् में (Money matters) विशेष साहाय्य करता
है, इसके छुट जाने से हमारा सर्वनाश होवेगा इसमें
सन्देह नहीं है।

(दास् का प्रवेश)

नव०—बाबा कहां हैं रे ?

दास्०—जी वे अभी भीतर से नहीं आये हैं।

नव०—तब वो बोतल और गिलास जल्दी ले आ तो।

(दास् का प्रस्थान।)

काली०--अच्छा नवकुमार, कहो तो तुमारे बाबा बड़े
वैष्णव हैं न ?

नव०—(दीर्घ निश्वास परित्याग करके) इस दुःख की
बात को भाई क्यों पूछते हो ? नगर भर में कदाचित्
दूसरा कोई ऐसा भक्त न होगा।

(बोतल इत्यादि लेकर दास् का पुनः प्रवेश)

काली० —इधर दे।

नव०—जल्दी लो भाई। अब वह रावन भी नहीं है, वह
सोने की लंका भी नहीं है।

काली०—नहीं रहा तो क्या हुआ। यह तो है (बोतल
दिखाता है) हा, हा, हा ! (मद्य पीता है।)

नव०—अरे फिर यह क्या करते हो !

नव०—नहीं जी नहीं। (चिन्ता करके) गरानहाटे में कोई महाशय परम वैष्णव थे न ? उनका नाम तुम्हें स्मरण आता है ? वही जी जिसका लड़का हमारे साथ एकही क्लास (Class) में पढ़ता था।

काली०—मैं भाई गरानहाटे में प्यारी और उसकी छोकरी बिन्दी को छोड़ कर और किसी को भी नहीं जानता हूं।

नव०—कौन प्यारी जी ?

काली०—अजी मोटी प्यारी। यह क्या ? क्या तुम मोटी प्यारी को नहीं जानते हो ? भाई एक दिन मैं और मदन दोनों उसके घर गये थे, कितना मज़ा उडाया सो तुमसे क्या कहूं। हां अब क्या कहूंगा सो ठीक करो।

नव०—(चिन्ता करके) हां ठीक है। देखो काली तुमारे एक चचा परम वैष्णव थे न ? जो बृन्दाबन में जाके मरे थे।

काली०—हां एक ओल्ड फूल (Old fool) था तो सही उसका नाम कृष्णप्रसाद था।

नव०—तब ठीक है। तुम उन्ही का परिचय देना बाप का नाम न कहना।

काली०—हा, हा, हा!

नव॰—दुर पागल, हँसता क्यों है ?

काली॰—हा, हा, हा। अच्छा सो तो हुआ, अब वैष्णवों की दो एक पोथी का नाम तो सीखना ही पड़ेगा।

नव॰—तभी तो। मैं तो इस विषय में परम पण्डित हूं। अच्छा ठहरो (चिन्ता करके) श्रीमद्भगवद्गीता—गीतगोविन्द—

काली॰—गीत क्या ?

नव॰—जयदेव का गीतगोविन्द।

काली॰—अच्छा—श्रीमती भगवती का गीत और विन्दा-दूती का गीत—

नव॰—हा, हा, हा। तुम्हारी भई क्या चमत्कार मेमरी (Memory) है।

काली॰—क्यों, क्यों ?

नव॰—हश (Hush) बाबा आते हैं। देखो भाई अच्छी तरह से प्रणाम करना।

(धर्म्मदास का प्रवेश)

काली॰—(प्रणाम)।

धर्म॰—चिरजीवी हो पुत्र तुमारा नाम क्या है ?

काली॰—जी, मेरा नाम श्रीकालीनाथदास है। महाशय

आप स्वर्गीय कृष्णप्रसाद महाशय को जानते होंगे। मैं उन्हीं का भ्रातृपुत्र—

धर्म्म०—कौन कृष्णप्रसाद ?

काली०—जी बांसवेडे वाले।

धर्म्म०—हां, हां, हा। तुम स्वर्गीय कृष्णप्रसाद महाशय के भ्रातृपुत्र हो, जो वृन्दावन प्राप्त हुये थे।

काली०—जी हां।

धर्म्म०—जीते रहो पुत्र। वैठो (सब वैठते है) तुम अब क्या करते हो ?

काली०—जी, कालेज (College) में नवकुमार के साथ एक क्लास (Class) में पढा था, अब कुछ काम काज की चेष्टा करता हूं।

धर्म्म०—अच्छा, वेटा तुमारे स्वर्गीय चचा मेरे परममित्र थे। तो मैं तुमारा ताया हुआ।

काली०—जी हम

धर्म्म०—(स्वगत) अहा! यह लडका जैसा सुन्दर है वैसा ही सुशील भी है। और क्यों न होगा कृष्णप्रसाद का भ्रातृपुत्र है न ?

काली०—ताया जी, आज नवकुमार भैया को मेरे साथ जाने की आज्ञा दीजिये—

धर्म्म०—क्यों वेटा तुम कहां जाओगे ?

काली॰—जी हम लोगों की ज्ञानतरंगिणी विषम स्थान है। सभा है वहां आज मीटिङ्ग (Meeting) अच्छा काम। जी, की रे मन में को भेजकर ान)।

धर्म॰—कौन सभा कहा बेटा ?

काली॰—जी ज्ञानतरंगिणी सभा।

धर्म॰—उस सभा में क्या होता है ?

काली॰—जी, हम लोगों के कालेज (College मत अंग्रेजी ही की चर्चा होती है सो हम लोगों को जातीय भाषा भी थोडी सी जाननी चाहिये, इस लिये यह सभा संस्कृतविद्या आलोचन करने के निमित्त स्थापन की है। हम लोग प्रति शनिवार को इस सभा में एकत्र हो कर धर्मशास्त्र का आन्दोलन करते हैं।

धर्म॰—तो अच्छा करते हो। (स्वगत) अहा, क पाप्रसाद का भ्रातृपुत्र है न ? और इस नवकुमार का भी तो मेरे ही स्त्री से जन्म है। (प्रकाश) तुमारा शिक्षक कौन है बेटा ?

काली॰—जी भिनाराम वाचस्पति महाशय, जो संस्कृत कालेज के प्रधान अध्यापक हैं—

धर्म॰—अच्छा बेटा, कहो तो तुम लोग कौन कौन पुस्तक अध्ययन करते हो ?

बाबाजी – (पास आकर) अजी तुम लोग बतला सकती हो यहां ज्ञानतरंगिणी सभा कहां है ?

दूसरी – तरंगिनी कौन ? (सखी का हाथ पकड़ के हँसना) बाबा जी क्या तुमारी वैष्णवी का नाम तरंगिनी है ?

पहिली – बाबा जी, क्या तुमारी वैष्णवी खो गई है ? तो रास्ते २ रोते फिरने से क्या होगा ? जो होना था सो हो गया अब क्या करोगे भाई ? अब हमारे साथ आना हो तो कहो – कोंरी वामा वैष्णवी बन सकेगी ?

दूसरी – क्यों न बन सकूंगी ? पांच सूकी मिलनेही से बन सकूंगी, क्या बिचार है बाबा जी ?

पहिली – बाबा जी क्या कहेंगे ? चल हम बाबा जी को हरिबोल कहते कहते ले जावें। हरिवोल, हरिवोल।

बाबाजी – (स्वगत) क्या विपद् है। राधे कृष्ण ! (प्रकाश) नहीं तुम लोग जाओ मेरा अपराध क्षमा करो।

दूसरी – हां हम तो जावेंहीगी तुम को क्या तरंगिनी के सिवाय और कोई नहीं भाती है ? अच्छा हम जाती है और तुम यहां खड़े २ रोवो।

(बाबा जी के मुंह के पास हाथ हिला कर गाती हैं)

"प्यारे ने मेरी वैष्णवी प्यारी को खोया"।

(दोनों वार बिलासिनी जाती हैं)

बाबाजी – आह क्या उत्पात् है। इतनी यन्त्रना भी आज कपाल में थी ! कहां सभा है और कहां क्या है। केवल मुझे ही इतनी यन्त्रना आज होनी थी। (परिक्रमण करके) और जो घर फिर जाऊं तो धर्म्मदास जी क्रुद्ध होंगे। मैं अब बड़े विपद् में पड़ा। अब क्या करूं ? (चिन्ता करना, सामने देख कर) हां अच्छा हुआ ये जो पुरुष आता है इस्से पता लगेगा इसके पीछे पीछे प्रकाश में चला जाऊं – नहीं, श्री बाबा, ये तो सारजन साहब हैं, रोंद फिरने निकले हैं, यहां चुप करके खड़े रहने से कदाचित् चोर जान कर पकड़ें ? परन्तु अब जाऊं कहां ? (सोचकर) सोई ठीक है इसआड़ में खड़ा हो जाऊं – अरे बाबा यह क्या यह तो आही पड़ा (ज़ोर से भागता है।)

(सारजन और चौकीदार लालटैन हाथ में लिये आते हैं)

सार० – हालो (Hallo) ! चौकीडार ! अबी एक आडमी उडर डौड के गया न ?

चौकी० – नहीं साहब हम तो कुछ नहीं देखा।

सार० – भागगट् गिया, हाम् डेका। टोम् जल्डी डौड़ के जाओ, उट्टरफ डेको, – जाओ – जाओ – जल्दी जाओ इन सूअर।

चौकी० – (दूसरे तरफ जाकर) कौन है रे खड़ा रह।

सार० — डाम् य्योर आइज् (Dam your eyes) — इडार यू फूल (You fool)

चौकी० — (डर के) हां साहब इधर ? (ज़ोर से जाता है)

सार० — (क्रोध से) आह ! इफ आइ क्यान् क्याच हिम् ! (Ah ! If I can catch him) —

नेपथ्य में —पकडो पकड़ो — उहुहुहुहु —

नेपथ्य में—मैं जाता हूं बाबा, अब न मार बाबा, दोहाई बाबा, तेरे पैरों पड़ूं बाबा ।

नेपथ्य में — साला चोट्टा, तेरे वास्ते दौड़ते २ हमारा जान गया ।

नेपथ्य में — उहुंहुंहुंहुं — बाबा मैं चोर नहीं हूं बाबा, मैं वैष्णव हूं बाबा !

(बाबा जी को लेके चौकीदार का प्रवेश)

सार० — आ यू (You) टुम् चोट्टा है ?

बाबा जी — (डर कर) नहीं साहब बाबा, मैं कुछ नहीं जानता हूं, मैं — ज्ञा, ज्ञा, ज्ञा, —

सार० — ह्याङ् योर (Hang your) ग्ये, ग्ये, ग्ये, — चुप रहो इउ बुडी नीगर् (Bloody Nigger) डिकलाओ टुमारा ब्याग (Bag) में क्या है ? (बलपूर्वक माला लेकर अपने गले में पहिनता है) हा, हा, हा, ह ! बाप रे बाप, — हाम बड़ा हिण्डू हुआ — राढेक्रिसुके हा, हा, हा !

बाबा जी—(डर कर) दोहाई साहब की, मैं गरीब वैष्णव हूं, मैं कुछ नहीं जानता हूं दोहाई बाबा मुझे छोड़ दो। (जाने का उद्योग करता है)

चौकी०—खड़ा रह साला।

बाबाजी—दोहाई कम्पनी की दोहाई कम्पनी की।

सार०—होल्ड इयोर टं, इउ ब्लाक ब्रूट (Hold your tongue you black brute) इस बेग में और क्या है डिकेगार। (झोली बलपूर्वक लेता है और उसमें से चार रुपैये गिरते हैं)।

सार०—थाट्स् राइट्। इउ सूटी डेवल् (That's right you sooty devil) किस्का चोरी किया? चौकीदार इस्को ठाना में ले चलो।

बाबाजी—दोहाई साहब की, मैंने चोरी नहीं की है, मुझको छोड़ दो—दुहाई धर्म्मावतार, मैं वो रुपया नहीं मांगता हूं।

सार०—सो नहीं होगा, टुम् ठाने में चलो—क्या? टुम् जायगा नहीं? अलबट् जाने होगा।

चौकी—चल् वे थाने में चल।

बाबाजी—दोहाई कम्पनी की—मैं रुपया नहीं चाहता हूं, तुम चाहे वो रुपया ले जाके जो इच्छा होसो करो, बाबा, परन्तु मुझे छोड़ दो बाबा।

सार०—(हँसकर) क्या ? टोम् नह्ं मांटा। (अपने जेब में रुपैया रखकर चौकीदार से) वेल् देन् (Well then हम् डेकटा उस्का कुच् कसूर नई, उस्को छोड़ डो।

बाबाजी—(खुश होकर) जय महाप्रभु।

चौकी०—(बाबाजी से चुपके से) तुम हमको तो कुछ नहीं दिया अच्छा जावो, चला जावो।

बाबाजी—न भइया, मैं एक बार ज्ञानतरंगिनी सभा में जाऊंगा।

चौकी०—हां उस मकान में, वह बड़े मजे की जगह है।

सार०—डेको चौकीडार रुपया का बाट्—(होंठ पर पर उंगली रखता है)।

चौकी०—जो हुकुम खाविन्द।

सार०—मम्। इज़् दि ओअर्ड, माइ बाय्। (Mum is the word my boy) अाच्छा चलो।

(सारजन और चौकीदार जाते हैं।)

बाबाजी—राधेकृष्ण ! आः ह बचगया; आज किस कुलग्न में घर से निकला था ! कहो कि रुपैये चार पास थे और सारजन को भी हाथ पसारने का रोग था तभी तो रक्षा हुई नहीं तो आज हाजतह्री में रह ना पड़ता कि क्या होता क्या मालुम है।

(होटेल से सन्दूक ले के दो मुसलमान मुटिये आते हैं।)

यह क्या ? राधिकृष्ण—क्या दुर्गन्ध है। - ये यहां क्या लाते हैं ?

(हट के खड़ा होता है।)

पहिला —उह आज कितनी चीजें भेजी है। वे हिसाब भेजी है मेरी गरदन टूटी जाती है।

दूसरा—देख भइया यह हिन्दू कमबख्तों ने ही दुनियादारी का मजा लिया। कमबख्तों के क्या आराम के दिन है भइ।

पहिला —मर् बेवकूफ ये हरामखोर कमबखतों का क्या दीन है ? ये न माने अल्ला न मानें देवता।

दूसरा—लेकिन् इन्हीं हरामखोर कमबख्तों के बदौलत तो हमारे पांचघरों का पेट पलता है शाम होते ही कमबख्त् चमगीदड़ों के माफिक आके गिरते हैं कितना खाते हैं, कितना पीते है, कौन कह सकता है।

पहिला—ओ कादर मियां हम लोग क्या यहां सारीरात खड़े रहें दरवानजी को पुकारो न। ओ दरवानजी, दरवानजी। अबे ओ गँवार साले कहां गया ? — ओ दरवान जी; दरवान जी।

नेपथ्य से—कौन है रे।

पहिला - हम मुटिया हैं जी।

नेपथ्य से—आयो भीतर चले आयो (मुटिये जाते हैं)।

बाबाजी—(आगे बढ़कर स्वगत) क्या आश्चर्य ! ये सब काहे के सन्दूक हैं ? उः, थु, थु, राधेकृष्ण ! मुझे इस ज्ञानतरंगिणी सभा का हाल तो कुछ समझ ही में नहीं आता है ।

नेपथ्य में—ले बेले के फूल ।

नेपथ्य में—ले बरफ़ ।

(फूलवाला और बरफ वाला दोनों आते हैं)

फूलवाला—ले बेले के फूल – श्री दरवानजी, बाबू लोग आये हैं ।

नेपथ्य से—नहीं, अभी नहीं आये, थोड़ी देर बादआवो ।

बरफवाला—ले बरफ़—कहो जी दरवान जी !

नेपथ्य से—तुम भी थोड़ी देर बाद आवो ।

(फुलवाला और बरफ वाला जाते हैं ।)

बाबाजी—(स्वगत) क्या सत्यानाश है। मेरे तो कुछ समझ में नहीं आता ।

नेपथ्य में दूर से—ले बेले के फूल—ले बरफ़ ।

(नितम्बिनी और पयोधरी समाजियों के साथआती हैं ।)

नित०—काल भाई कासी बाबू ने मुझे इतनी ब्राण्डी (Brandy) पिलाई थी कि वह मेरा सिर अभी तक घूम रहा है । आज भइ मैं क्यों कर नाचूंगी येही सोचती हूं ।

पयो॰ - मेरे यहां भी भाई कल सदानन्द बाबू ने खूब धूम मचाई थी। आज कल भई सदानन्द बाबू बड़े अच्छे आदमी हुवे हैं ऐसा दूसरा मिलना कठिन है।

सारंगी वाला - चलो भितर चलें। ओ दरवान जी!।

नेपथ्य में - कौन है ?

पयो॰ - पहिले दरवाजा खोलो फिर कौन है देखना।

नेपथ्य से - ओ आप लोग हैं, आइये।

(सब जाते है।)

बाबाजी - (आगे बढ़कर स्वगत) यह क्या चमत्कार है! येतो देखता हूं कसबी हैं। क्या सत्यानाश! मैं इतनी देर में समझा क्या व्यापार है। नवकुमार देखता हूं बिलकुल बिगड़ गया है धर्मदास जी यह सब सुन कर क्या कुछ बाकी रक्खेंगे ?

(नवकुमार और कालीनाथ का प्रवेश)

नव॰ - हा, हा, हा—श्रीमती भगवती का गीत! तुमारी भाइ क्या चमत्कार मेमरी (Memory) है! हा, हा, हा।

काली॰ - अरे यो सब खराब किताबें क्या मैं कभी खोलता हूं या पढ़ता हूं जो याद रहेंगी।

नव॰ - (बाबाजी को देखकर) ये क्या, अजी ये तो बाबाजी हैं! क्यों भई काली मैंने कहा था न कि बाबा

किसी न किसी को अवश्यही मेरे पीछे पीछे भेजेगें।
जो हो, हमारा परम भाग्य है कि इसको हमने देख लिया।

काली० – कहो तो वैष्णव साले को पकड़ के थोड़ासा फाउल कट्लेट् (Fowl cutlet) या मटन चप् (Mutton chup) खिला दूं – साले का जन्म सुफल कर दूं—

नव० – चुपकरो जी चुपकरो। ये भाई ठट्ठे की बात नहीं है। (आगे बढ़कर) कहिये बाबाजी आप यहां कहां से आये ?

बाबाजी – नहीं कुछ नहीं, यहां एक काम था इसी लिये इधर से जाता था सो दिल में आया कि नवकुमार बाबू का सभाभवन भी देखते चलें,।

नव० – ठीक ठीक, तो चलिये भीतर चलिये न ।

काली० – (धीरे नवकुमार से) अरे पागल् क्या करता है ? इसको भीतर ले जाने से क्या होगा ? हम लोग तो हरिवासर करने नहीं जाते हैं।

नव० – (धीरे काली से) आह चुप करो न । (बाबाजी से) ज़रा भीतर पदार्पण करने से अच्छा होता न।

बाबा जी – नहीं बाबू, मुझे दूसरे काम मे जाना है तुम लोग जावो।

(जाते हैं।)

काली० – कहो तो साले को पकड़ के दो एक घूसे च-
खाऊं।

नव० – दरवान।

दर० – महाराज।

नव० – वो लोग सब आ गये ?

दर० – जी महाराज।

नव० – अच्छा तुम जाओ।

दर० – जो हुकुम महाराज। (जाता है)

नव० – आज भई देखता हूं यह बाबा जी बड़ा उत्पात
करेगा। मैं जानता हूं इसने निश्चय उन लोगों को
भीतर जाते देखा होगा।

काली० – पुः (Pooh) तुम तो बड़े कावार्ड (Coward)
हो जी तुम में क्या मारल् करेज (Moral Courage)
नहीं है। उस से क्या डर है ? चलो।

नव० – नहीं जी नहीं तुम ये सब समझते नहीं हो।
चलो देखें कदाचित् उसको कुछ देकर उसका मुंह
बन्द कर सकें।

काली० – नान् सेनस् (Nonsense) इस से तो साले को
दो चार किक् (Kick) देकर एक बार बैकुण्ठको
न भेज दो डाम् ब्रूट (D-m brute) उस साले को

इस पृथिवी पर कौन चाहता है? उसका क्या कोई मिशन् (Mission) है?

नव० – दुर पागल, ये सब बच्चों की बातें नहीं है। चलो हम दोनों उसके पास जावें।

(दोनों जाते हैं)

इति प्रथमाङ्क।

द्वितीय अङ्क—प्रथम गर्भाङ्क।

स्थानसभा।

(कई बाबू आते हैं)

चैतन्य – नव और काली आज इतनी देरी क्यों करते हैं?

मोहन – मैं क्या जानू अजी उनकी बात छोड दो वो सब कामों में लीड् (Lead) किया चाहते हैं। और समझते हैं कि हमारे विना कोई कामही नहीं होवेगा।

शंभू० – ठीक कहतेहो भाई पर वे दोनों लिखना पढ़ना अच्छा जानते है।

मोहन – बिट्वीन आवरसेल्वस (Between ourselves) ऐसा क्या जानते हैं?

महेस – हां, हां, किस को कितना आता है मालूम है।

उस दिन जो नव ने चिट्ठी लिखी थी सो तो उन्हीं मैंने दिखाई थी, उस में लिण्डलि मरे (Lindly Murray) की क्या दुर्दशा की थी सो तो जानते हो ?

मोहन—इसपर भी थोड़ा सा प्राइड (Pride) है। देखो, काली उन से भी बढ़ कर है।

चैतन्य—आह, वे फ्रेण्ड (Friend) है इन सब बातों से क्या काम है ? वे है इसी से सभा चलती है यह भी जानते हो ?

महेश—ट्रूथ् (Truth) कहेंगे—इस में फ्रेंड (Friend) हो चाहे कोई हो।

मोहन—अच्छा, वह बात जाने दो; हम लोग भी तो मेम्बर है, फिर उन दोनों के लिये वेट (Wait) करने का क्या प्रयोजन है ?

शम्भू॰—हां ठीक है। हम लोगों का कोरम् (Corum) तो हो गया है अब सभा का काम आरम्भ करें न ?

महेश॰—हियर, हियर, (Hear Hear) मैं ये मोशन (Motion) सेकेण्ड (Second) करता हूं।

मोहन॰—हा, हा, हा, इस में मैं देखता हूं किसी को आबजेक्शन् (Objection) नहीं है—ब्रावो (Bravo) हा, हा, हा,।

महेश॰—(घड़ी देख कर) नौ बजने में पांच मिनिट

बाकी हैं। मालूम होता है नव और काली आज नहीं आवे गें। तो मैं चैतन्य बाबू को चेयरम्यान प्रोपोज़ (Propose) करता हूं।

सब०—हियर, हियर,! (Hear Hear)

चैतन्य०—(खड़े होकर) जेन्टलमेन् (Gentlemen) आप लोगों ने अनुग्रह करके मुझे जिस पद में नियुक्त किया है, उसका काम मैं जहां तक बनेगा प्राणपण से चलाऊंगा,—नाउ टु बिज़नेस् (Now to business)

सब—हियर, हियर,। (Hear Hear) (ताली बजाते हैं)।

चैतन्य—(चिल्लाकर पुकारता है) खानसामा—बेयरा—

नेपथ्य से- जी हजूर,।

चैतन्य—दो बोतल ब्राण्डी (Brandy) और तम्बाकू ले आ। (बैठकर) यदि किसी को बियर (Beer) पीना होतो कहो।

मोहन—इस समय कौन साला बियर (Beer) पीता है।

सब—हियर, हियर, (Hear, Hear)

(खानसामा और बेयरा—शराब और तम्बाकू लेके आते है।)

चैतन्य—सब बाबू लोगों को शराब दो (सब मद्य पीते है।) और बोतल और गिलास सब यहां रख दो

खान्—अच्छा बाबू। (बोतल इत्यादि रखकर जाता है

चैतन्य—बेयरा, नाचनेवालियों को बुलादेतो और थोड़ी सी बरफ ले आ।—

बेयरा—बहोत अच्छा। (जाता है)।

मोहन—मैं अपने नये चेयरम्यान (Chairman) का हेल्थ् (Health) पीया चाहता हूं।

सब—हियार, हियार, (Hear, Hear) (शराब पीकर) हिप् हिप् हुरे, हुरे, (Hip Hip Hurrah)

(नितम्बिनी, पयोधरी, और समाजी आते हैं)।

चैतन्य—अरे आवो, आवो बैठो। क्यों भइ पहचानती हो? अच्छी तो हीन?

नित॰—जैसा आपने रक्खा है वैसी ही हूं।

चैतन्य—मैंने तुम्हें कहां रक्खा, मेरे क्या इतने भाग हैं जो तुम्हें रक्खूं?

सब—ब्रावो हियर, (Bravo ! Hear) (ताली बजाते हैं)।

चैतन्य—अजी पयोधरी जरा खिसक के बैठो न॰।

पयो॰—नहीं, मैं अच्छी हूं।

चैतन्य—(दूसरे से) मोहन बाबू इस को थोड़ी सी पिलाओ न?

मोहन—आओ (सब शराब पीते हैं।)

मधू॰—(चौथे से) ओ साला—सोता है?

महेश॰—(जंभाई लेकर) नहीं जी नहीं, सोऊंगा क्यों? नव नहीं आया?

सब०—(हँस कर) व्रावो, व्रावो ! (Bravo ! Bravo !)

चैतन०—(पयोधरी का हाथ पकड़ कर) कुछ गाओ न भइ ।

पयो०—थोड़ी देर बाद गाती तो अच्छा होता।

चैतन्य—नहीं, नहीं, थोड़ी देर बाद क्यों ? शुभ काम में देर करने का क्या प्रयोजन है ?

पयो०—अच्छा फिर गाती हूं।

गीत।

"मन मोहन को मुख देखतही ।
मेरे नैंनन मे छवि छाइ रही ॥
मन हीन भयो तन छीन भयो ।
पिया हेरत आप हिराय रही ॥
जब घूंघट दूर कियो मुखते ।
जब जोत में जोत समाय रही ॥
सोच किये क्या होत सखी ।
जब प्रेमफन्द विच आय रही" ॥

सब—क्या बात् साबाश्, जीती रहो जीती रहो ।

चैतन्य—ओ मोहन बाबू तुम कैसे साकी हो ?

मोहन—साकी क्या ?

चैतन्य—जो शराब पिलाता है उसको फ़ारसी में साकी कहते हैं।

शंभू—(गाकर) "गर यार न हो साकी"।
तो लावो (सब मद्य पीते हैं)।
चैतन्य—चुप करो तो, कोई ऊपर आता है।
मोहन—नव और काली होंगे।
(नव और काली आते हैं।)
सब—(खड़े होकर) हिप्, हिप्, हुर्रे।
काली—(मतवालों की तरह) हुर्रे, हुर्रे।
नव—बैठो भाइयो सब बैठो (सब बैठते हैं) देखो भाई आज हम लोगों को एक्सक्यूज् (Excuse) करना होगा हम लोगों को आज एक काम था इस से देर हुई।
शंभू०—(मतवालों के नाईं) द्याटस् ए लाई (That's a lie)
नव—(खफा हो कर) ह्वाट (What ?) तुम मुझे लायर (Liar) कहते हो ? तुम जानते नहीं कि मैं अभी तुम्हें शूट् (Shoot) करूंगा।
चैतन्य—(नव को पकड़ कर) हां, जाने दो, जाने दो, ट्राइफ्लिङ् बात के लिये बेकार झगड़ा क्यों करते हो ?
नव—ट्राइफ्लिङ् (Trifling)—उस ने मुझे लायर (Liar) कहा और तुम कहते हो ट्राइफ्लिङ् (Trifling) उसने मुझे हिन्दी में क्यों नहीं कहा ? उस्से कौन सुसरा खफा होता ? परन्तु लायर—यह क्या सहा जाता है ?

से आते ही बीबी जी के कपोल चुम्बन कर लिये इनको तो भागते बन न पड़ी । तिस पर उनने कहा, क्यों साहब लोग बहिन का चुम्बन करते हैं हम यदि करें तो क्या दोष है ? ।

प्रसन्न०—छिः, छिः—

नृत्य०—छिः अंगरेजी पढ़ने से क्या आदमी इतना बेहया हो जाता है ?

हर०—और सुनो न, और क्या कहते हैं ?—

प्रसन्न०—तेरा भैया शराब पीके क्या करता है री ?

हर०—वे तो ज्ञानतरंगिनी सभा में भी नहीं जाते मैं बहिन के बदन में हाथ लगाते हैं, तो तू अपने भैया को लेती क्यों नहीं है ? मैं जाके नैहर में रहूंगी तेरा पति तो तुझे कभी बुलाता भी नहीं है।

प्रसन्न०—हां तू जाके अपने भैया को लेके रह ।

नेपथ्य से—छोड दो हमको ।

नेपथ्य से—तुमारे पांव पडूं बाबू इतना चिल्ला के न बोलो, बाबूसाहब उस कमरे में खाते हैं ।

नेपथ्य से—ड्याम् (Dam) बाबूसाहब मैं क्या किसी का तवक्का रखता हूं ।

कमला—वो लो छोटे भाई आते हैं ।

नृत्य०—आओ भई हम छिपके तमाशा देखें ।

हर०—(लम्बी स्वास लेकर) नहीं भई मुझे अब यह सब अच्छा नहीं लगता है। आः सारीरात मुंह से पियाज और शराब की दुर्गन्धि आती है और खुर्राटे तो ऐसे लेते हैं कि मुर्दा भी जाग पड़े। छिः !

कमला—आ, री, आ, (सब छिपके खड़ी होती हैं)

(नवकुमार को लेके दासू आता है)

नव०—(मतवालों की तरह) माइ गुड् फेलो (My good follow) दासू मैं तुझको रिफारम (Reform) किया चाहता हूं, समझा ?

दासू—जी बहोत अच्छा—

नव०—दासू—बियर—नहीं की ब्राण्डी लाओ।

दासू—बहोत अच्छा आप इस बिछौने पर सोइये मैं ब्राण्डी लाता हूं। (स्वगत) आज यदि यह जल्दी न सो जाय तो मैं देखता हूं कि आज महाभारत होगा यही। बाबूसाहब देखेंगे तो क्या कुछ बाकी रहेगी ?।

नव०—(बिछौने पर बैठ कर) लाओ ब्राण्डी—जल्दी लाओ।

दासू—जी लाता हूं। [जाता है।

नव०—(स्वगत) डाम बाबा, ओल्ड फूल् (Dam Baba old fool) अब वो दिन कोयेगा? मैं तो साफ रहते इस सभा को एबालिश (Abolish) नहीं करूंगा।

बुड्ढा जरा आंख तो बन्द करें फिर मुझे कौन ससुरा कुछ कह सकता है? हा, हा, हा, ओन्ट आई इंजाय माइ सेल्फ (Won't I enjoy myself) (चिल्ला कर) लाओ ब्राण्डी—लाओ—

हर०—(आगे बढ़ कर) क्या आपति है। बीबी जी!

प्रसन्न०—(आगे बढ़ कर) क्या है?

हर०—देखती हो बाबू जी उस कमरे में खा रहे हैं।

प्रसन्न०—तो मैं क्या करूं?

हर०—तू ज़रा जाके अपने भाई को चुप करने कह।

प्रसन्न०—(डर कर) नहीं नहीं मुझ से यह नहीं होगा।

हर०—(हंस कर) आः उसमें क्या दोष है? तू बच्चा तो नहीं है कि मर्द का मुंह देखने से डरेगी? जा, न।

नव०—लाओ—ब्राण्डी लाओ—

हर०—अरे। क्या दुःख की बात है। (बढ़कर) यह क्या करते हो? बाबू जी भीतर भोजन कर रहे हैं, जानते हो?

नव०—(चौंक कर) यह क्या पयोधरी,। आओ आओ। इस अभाजन को क्या तुम इतना प्यार करती हो कि इतनी रात गये पर भी निकुंज वन में आई हो—हा, हा, हा, आओ आओ। (उठता है।)

हर०—(प्रसन्न से) सुना क्या बकते हैं कुछ समझती हो?

प्रसन्न०—(हंस कर) ये भई तुम लोगों की आपस की बातें हैं मैं कैसे समझूं।

नव०—(टहलते २) आओ भई, मैं तुमारा डामड् स्लेव (Dam--d slave) हूं। आओ—(गिर पड़ता है)।

हरकामिनी—प्रसन्नमयी इत्यादि—(आगे बढ कर) अरी मा वह क्या हुवा? (रोती है)

नेपथ्य से—क्यों क्यों क्या हुआ?

(सौदामिनी आती है।)

सौदा०—(नवकुमार को देख कर) यह क्या, यह क्या, मेरे आंखो का तारा भूमि में पडा है? यह क्या हुआ? (रोती है।) उठो बेटा उठो हाय! यह क्या हुवा। प्रसन्न, जरा तू उन को तो जल्दी बुला ला। (प्रसन्न जाती है) हाय क्या हुवा!!

(रोती है।)

(प्रसन्न के साथ धर्मदास का प्रवेश।)

धर्म०—यह क्या?

सौदा०—यह देखो मेरा नवकुमार किस तरह पड़ा है। हाय! इसे क्या होगया!

धर्म०—(देख कर गुस्से से) क्या आपत्ति है, राधेकृष्ण हा दुराचार। हा नराधम! हा कुलाङ्गार!

सौदा०—(गुस्से से) यह क्या? इस होने से क्या म-

सुन पागल हो जाता है ? तुम मेरे प्यारे नवकुमार को इतने गुस्से क्यों होते हो ?

धर्म्म०—(गुस्से से) हां तेरा प्यारा नवकुमार ! उसको जन्मतेही थोडा सा नोन खिला के क्यों नहीं मार डाला—?

नव०—हियर, हियर—हुरे ।

सौदा०—यह क्या यह ऐसा क्यों बकता है क्या कोई भूत चढा है ?

धर्म्म०—तुझे क्या कुछ बुद्धि नहीं है देखती नहीं इसने मदिरा पी है ।

नव०—हियर, हियर ।

धर्म्म०—चुप् वेश्या ! तुझे क्या कुछ भी लज्जा नहीं है ?

नव०—डाम (*Dam*—) लज्जा,—ब्राण्डि लाओ ।

धर्म्म०—ले सुना ?

सौदा०—मेरे दूध के बच्चे को यह सब किसने सिखाया?

धर्म्म०—और कौन सिखावेगा ? यह कलकत्ता महा-पाप का नगर है—कलि अवतार की राजधानी है । यहां क्या कोई भला आदमी रहता है ?

सौदा०—सोई तो यह कौन जानता है ?

धर्म्म०—काल प्रातः काल ही मैं तुम लोगों के लेके श्री वृन्दावन जाऊंगा । इस कमबख्त को अब यहां न रक्खूंगा चलो हम अब जावें । इस सूअर को सोने दो ।

चौपट-चपेट

प्रहसन

(लंपटों की दुर्दशा का मनोहर चित्र)

जिसको

श्री किशोरीलाल गोस्वामी

ने बनाया।

"सन्तो जयन्ति भुवनेषु यथा खलाश्च
तद्वज्जयेयुरिति मे नतु मे मनीषा।
तद्दूषितः कविगिरोऽपि भवन्ति शुद्धा
तस्मात्खले पटु भवन्ति कदापि जिह्वा॥"

(नीति माला)

अजमेरः
राजस्थान यन्त्रालय में
मुद्रित हुआ।

सन १८९२ ई०

मूल्य ≡)

निवेदन ।

—— :000 ——

यह क्या कोई नहीं जानता कि हिन्दी भाषा की कैसी दुर्दशा दिनों दिन होती चली जाती है. इसका दोष हिंदुओं को छोड़ के और किसी को नहीं दिया जासकता. जब हमी लोग अपनी मातृ भाषा की ओर दृष्टिपात न करेंगे तो दूसरा कौन इस कंकाल मात्रावशिष्ट कलेवर भाषा का उद्धार करेगा ? यदि इस विषय को विस्तार से लिखें तो एक स्वतन्त्र पोथा बन जाय इससे "प्रकृत मनुसरामि" ।

हिन्दी के अभाग्यवश जब से भारतेन्दु बाबू हरिश्चन्द्रजी परलोक सिधारे हैं तबसे साहित्य की बड़ी दुर्दशा होरही है. गद्य तो जो है सो हई है पर पद्य की दशा ऐसी भयानक होरही है कि देखतेही शरीर कांप उठता है बहुत से मूर्खाधिराज कविता का श्राद्ध करने पर उतारू भये हैं. अस्तु और नाटक विद्या को तो कदाचित बाबू साहब अपने संग ही लेगये हैं. उनके पीछे दो एक रूपक कि जिनसे पन्ना भर भी रंगी, छोड़ के और आज तक कोई ऐसे नहीं बने जिससे हिन्दी भाषा की पुष्टि होय. यह अभाग्य नहीं तो क्या है ?

आज हम हिन्दी रसिकों को यह प्रहसन उपहार देते हैं, यह उत्तम है कि नहीं, इस बात का झगड़ा नहीं करते, केवल यही आशा है कि यदि रसिक लोग इसे सादर ग्रहण करेंगे तो हम अपने श्रम को सफल समझेंगे।

साथ ही हम उन महाशयों से निवेदन भी करते हैं जो साहित्य के परिचायक हैं, कि आप लोग कृपा करके ऐसे उद्योग में तत्पर होयं कि जिससे नागरी सर्वाङ्ग सुन्दरी होजाय याने "यद्भाव्यं तद्भविष्यति"।

निवेदक
श्रीकिशोरीलाल गोस्वामी
सम्पादक आर्य्य पुस्तकालय।

आरा १०—५—९१ ई०

———

पात्र गण ।

(पुरुष)

मदनमोहन – आरा का एक रईस ।

बंकूलाल – उक्त का मित्र और किसी राज दर्बार का निकाला भया दीवान ।

रजनी कान्त – मदन मोहन का मित्र एक डिगरैल वकील ।

बैजूबावला – भेष बनाये, बाबू अभयकुमार, आरा के ज़मीदार ।

गुणकाम – एक कामुक जुलाहा-यवन ।

स्वामीविशुद्धानन्द सरस्वती – एक प्रसिद्ध महात्मा और अभय कुमार के गुरु ।

दर्शक गण इत्यादि ।

(स्त्री)

कमलिनी – बाबू अभय कुमार की पत्नी है ।

गुलाब – उसकी दासी इत्यादि ।

स० मो०— ओह ! तुम मूर्ख हो. क्या जानो, शास्त्र में लिखा है "मंत्रौषधिवशः सर्पः" तो फिर क्या ?

वै० वा०—और आधा मुंह से क्यों रहने दिया ? "खलःकेनर्निवार्य्यते" अस्तु, आपने जो कहा सो कोई ऐसा वैसा वर्ण संकर वंश होता होगा असल सर्प नहीं. भई ! उसके काटने की मन्त्र वा औषधि हई नहीं, तो भला उसके आगे कौन ठहर सकता है ? बड़े २ गुनी और ओझा वैद्य भी कभी न कभी उसकी भयानक चपेट में आही जाते हैं. असल बात यह है कि क्या दावानल फूंक मारने से बुझती है ?

म० मो०—तो क्या हमारा अभीष्ट सिद्ध न होगा ?

वै० वा०—वैसाही दिखाई देता है. "असमर्थाहि शिष्यते"

र० का०—महाराज ! पागल की बातों का क्या ठिकाना !

चकू०— पर, भई ! यह तो पागलपने की बातें नहीं करता !!!

म० मो०—जो होय, पर उसके पागल पने में क्या संदेह है ?

वै०वा०——हां ! अपने भरसक दौड़ धूप करने में कसर न रक्खो. फिर देखना कैसा युद्धपर्व मचता है ।

म० मो०— सैकड़ों स्त्रियों को देखा है, पहिले तो सतीत्व की ध्वजा फहराती हैं, पीछे छिप २ के रुपये के लोभ से खो जाती है. हां यदि हमारे जमींदार नाहक यहां रहते तो ऐसा साहस हम लोग न करते. पर उन्हें तो पहिलेही भली देके हवा कर दिया

अथवा घर है ? उन का तो कुछ पताही नहीं है
मरे या बचे फिर क्या ।

वै० ना०—सतीगन द्रव्य लोभ से कुकर्म करवाती है यह तो आज नई बात सुनी. किन्तु सती नाम धारण करके अनेक कुलटा कुकर्म का स्रोत बहाया करती हैं, यदि यही कुलकलंकिनी सती कहावे तो हम हारे ।

बकू०—तो सच्ची सती कौन हैं ?

वै० ना०—उनकी महिमा से शास्त्र सागर भरे हैं देखो
"दुःशीलो दुर्भगो वृद्धो जड़ो रोगयुतोऽपि वा ॥
पतिः स्त्रीभिर्न हातव्यो लोकेप्सुभिरपातकी ॥ १
पति सुश्रूषण स्त्रीणां परो धर्मो ह्यमायया"
और सीता, सावित्री, दमयन्ती, शकुन्तला, अनसूया आदि रमणी रत्न इस की उज्ज्वल छवि है, जो पति की सतत तथा सर्वथा सेवा करती हैं, जिनकी दृष्टि में संसार नपुंसक—पितृ भ्रातृ पुत्र रूप या सखी वत् है वही सच्ची पतिव्रता नारी है. ये जो कभी असावधानता लंपट के फेर में पड़ जाती है तो डूब के, जलके, विष खाय के, गिरके, फांसी लगाय के या शस्त्रघात से मर कर अपने अमूल्य सतीत्व रत्न की रक्षा करती और सती लोक में पूजित होती है ।

म० सो०—ओ हो ! क्या सती ऐसी होती हैं ? तो क्या यह डोमनी भी वैसीही है ?

वै० ना०—एक बार परीक्षा करके देख लो सत्य चरित्रोदित मिलैगा, हूं ! "आप डूबाह सब डूबी जाता" तुम सब एकही तोपड़ी के हो. हा ! इस शहर के धनिकों का यह हाल !!! इन नर राक्षसों से

कुल कामिनी जनों का मनोरथ कैसे सधैगा ?
देखो बच्चा ! घर बैठे जो चाहो सो लम्बी चौड़ी हांकलो, पर बाहर पांव निकालतेही सिर पर शामत सवार होगी ।

म० मो०—(क्रोध से) क्यों बे पाजी पागल ! मुह सम्हाल के नहीं बोलता ? तू शिर चढ़ के इतना इतराता है ? गधा न जाने कहां का ।

वै० शा०—यह बन्दर घुरकी किसी और को दिखाना, देखना यही पागल तुम लोगों को उससे पूजा करैगा जो चरणों की रक्षा करता है. (पलायन)

छक्कू०—अरे पागल, भागा भागा साला ।

र० का०—धर मारे को, मार मारे को, भागने न पावे ।

म० मो०—छक्कू ! पकड़ो २ बदमाश को ।

छक्कू०—अभी ससुरे को पकड़ लाते हैं (दौड़ा)

(नेपथ्य में)

दोहा ।

बैठे रासभ सुरभरो पागल चला पलाय ।
टकराओ सिर सामुहें झखमारो खो खाय ॥

(दोनो सुनके क्रोध नाट्य करते हैं)

(छक्कू का पुनः प्रवेश)

छक्कू०—सरकार ! वह तो न जाने किधर नौ दो ग्यारह हो गया पक्षी की तरह उड़ गया क्या !

म० मो०—जाने दो, फिर देखा जायगा, अबकी आवै तो वध को मजा चखावें ।

र० का०— जरूर २ यह पाजी इसी लायक है ।

म० मो०—बैठो कुछ परामर्श करना है ।

बकूकू०—जो आज्ञा (बैठ गया)

म० मो०—पागल ने जो सेखी मारी उसे पूर्ण करना चाहिये ।

र० कां०—अवश्य २ ।

म० मो०—क्या एक छोकड़ी नहीं हाथ आवैगी ।

बकूकू०—क्यों नहीं, हुजूर !

म० मो०—जो कुछ खर्च होय, उद्योग करना चाहिये ।

र० कां०—उपाय हो ही रहा है. कलरात को उसके घर जाय जाय सकेंगे. जब से अभय कुमार निरुद्देश्य हुए हैं तब से वह घर में अकेली ही रहती है. केवल एक लौंडी है. जहां उस हरामजादी की मुट्ठी गरम की कि काम बन गया. (मन में) तुम ऐसे गधे न होते तो हम लोगों का घर कैसे भरता ।

बकूकू०—इस में क्या संदेह ! रुपये की जूती कौन सह सकता है? रुपये चाहिये. (मन में)

म० मो०—उसकी कमी क्या है! यह लो (दोनोंको नोट देताहै)

दोनों०—(देखे) पचास २ रुपये के हैं, और फिर देखा जायगा (मन में) यह तो सब अपना ही ठहरा. खूब बढ़ के हाथ मारो ।

म० मो०—अब तो बज गये स्नान का समय भया ।

बकूकू०—तो हम लोगों को आज्ञाहै न?

म० मो०—अच्छा फिर शीघ्र मिलना ।

दोनों०—जो आज्ञा ।

(एक ओर से बकूकू और रमनी और दूसरी ओर से मदनमोहन जाते हैं)

पटाक्षेप

इति प्रथमाङ्क

द्वितीय अङ्क।

राज पथ।

(वृक्षावलियों से छिपता हुआ वैजूबावला आता है)

राग जोगिया।

वै० बा० – (गाता है) देखा जगत तमाशा सांचो देखा०
बाहिर बने धरम मूरत सब भीतर धोखा खासा॥
मूंड़ मुड़ाय भये सन्यासी कंठी तिलक लगाये।
सौ सौ रांड़ सांड़ के झूले अङ्ग भभूत रमाये॥
तंत्र मंत्र की जन्त्र बतावें झाड़ फूंक मन मानी।
फांसैं गोरखधन्धा में जन रचि पचि कोटि कहानी॥
दया धर्म और दान सत्य व्रत छमा कहीं नहिं पाई।
क्रूरता लंपटता माया छल पाखंड अधिकाई॥
बाहर उजला भये भीतर मल भेद कहो को जाने।
झूंठसांच नहिं लखात दोऊ उरझि सुरझि भरमाने॥
कुलटा बनी सती जहं बिहरैं सौ २ यार रमाये।
सती सहै दुःख असह अनेकन आंखिन नीर गिराये॥
चलै कपट की खान बान यह चारों ओरै पासा।
देखा जगत तमाशा सांचो देखा जगत तमासा॥

(घूम कर) हा! इस कराल कलिकाल में संसारी जीवों का परित्राण पाना कठिन होगया। जितना उसमें घुसके प्रकाश की वासना करते हैं उतना और अंधेरे में धसे जाते हैं. भारत के चारों कोने घूमें किन्तु धर्म में, विद्या में, ऐक्य में, स्वाधीनता में, वाणिज्य में, शिल्प में, सामाजिक, राजनैतिक, आध्यात्मिक उन्नति में, सभी जगह गड़

यह और गोलमाल मच रहा है। उनके स्थान में केवल हिंसा, चातुरी, छल, अभिमान, पाखंड, मूर्खता, उदरम्भरता, पराधीनता, दास्यकर्म और शठता छा गई है. पहिले समझा था कि भारतवर्ष में अब भी धर्म कर्म का बड़ा आदर है, इसके अवलोकनार्थ प्रधान २ पवित्र तीर्थों में यथेष्ट पर्य्यटन किया पर, हा! कह हिन्दुओं के प्रधानतम तीर्थ काशी में जो २ कर्मकांड देखा उसे स्मरण करतेही रोमांच होता है, अन्तरात्मा कांप उठती है, और हृदय विदीर्ण होने लगता है. एक दिन आत्माराम ब्रह्मचारी के दर्शन को गये देखा कि वह विभूति रमाये रुद्राक्ष लटकाये, धूनी जलाये, आसन लगाये बैठे हैं. देख के भक्ति हुई और समझा कि यह अवश्य धर्म के तत्वको जानते होंगे पर ढोलके भीतर पोल!!! अनेक लोगों से बड़ी प्रशंसा सुनी थी, अंत तो जल्दी दर्शनार्थ गये. हा! वही ब्रह्मचारी वा बहुरी बाबा खून के मामले में पकड़े गये. शोक! महाशोक!! उस समय हमारी गति कैसी भई होगी इसे मनस्वी पाठक अनुभव कर सकते हैं. हा! धर्म ध्वजिकों की यह लीला! हरे! २ शिव शिव!! वृन्दावन में एक ब्रह्मचारी जी लोगों को खूब ही ठग रहे थे!!! सब जगह ऐसेही भयानक दृश्य देखने में आये. हम यह नहीं कहते कि केवल प्रतारकों ही से पृथ्वी पूर्ण है किन्तु अधिकांश लंपटों ही का समावेश विशेष देखा. मथुरा में एक वेदान्ती

वाला की बड़ी प्रशंसा सुन के वहां की भी धूल उड़ाई. एक दिन उन के आश्रम में जाय के देखा कि एक चालीस वर्ष के वृद्ध मृगचर्म पर नगे बैठे हैं और इधर उधर बहुत से स्त्री पुरुष बैठे हैं. धूनी जलती और गांजे की चिलम चलती है. यहां स्त्री का क्या काम ? अस्तु, धीरे २ परमहंस जी से अनेक कथा वार्त्ता हुई फिर धीरे २ "अहं ब्रह्म" का विचार उपस्थित भया. "हम हाथ नहीं, हम पांव नहीं, हम आंख नहीं, हम कान नहीं, हम अंग नहीं, हम कुछ भी नहीं, इत्यादि "अनंतर देह तत्व, स्त्री तत्व, कामिनी रहस्य, रतिकल्प ज्ञानकांड, आदि सातों कांडों की इति श्री हुई. अंत में अन्नमय १ प्राणमय २ मनोमय ३ आनंदमय ४ विज्ञानमय ५ आदि कोष की समालोचना भई. फिर बाबाजी ने मधु कोष देख के वायु कोष आरंभ किया. क्या सर्व नाश ! बूड्ढे के अपान कोष में क्या समूचा अहंतत्व घुस गया है ? भहाभड़ फैर दग रही है क्यों नहीं !!! चुप न रहा गया. कहा कि बाबाजी ज़रा लंगोट कसके अपने अहं को कसलो. नहीं तो बिलकुल निकल भागैगा. बस ! अब आओ सो जाओ कहां ! बाबाजी तो आग बबूला होगये और सोहं छोड़ के "कस्त्वं" बोल उठे फिर पाजी, लुच्चा, हरामजादा, प्रभृति सहस्रनाम का उच्चारण किया. बस गाली की गोली के संग उन के लाल २ नेत्रों और रोम २ से "सोहं" टपकने

लगा. इतने भी सामना बेटर देश के 'दे' 'दाव' की तरही पढ़ दी अद्दा। स्वामी नारायणदास जी और बाबा विशुद्धानन्द जी के दर्शनों से जिनका चित्त प्रसन्न हुआ था, इन्हीं से रहते हैं सभी वेषधारी कलुषित नहीं हैं अन्यथा भारतवर्ष की ऐसी अधोगति क्यों होती ? (ठहर के) इधर संसारी गृहस्थों का आदर्श [illegible] देश के लोगों [illegible] होजाते हैं. इन लोगों ने एकदम से पापका खोलदी बढ़ा दिया है. व्यभिचार, भ्रूणहत्या, मद्य-पान आदि तो साधारण बात होगई हैं आश्चर्य तो यही है कि अब भी नाश नहीं होता।

(नेपथ्य में)

हे माई, दुपट्टा, धोती, [illegible] ।।

(चौंकके) हैं। यह क्या! दुकान लगाता है क्या? तो इन्हीं [illegible] की [illegible] में [illegible] क्या [illegible] करता है [illegible] भी [illegible] है।

([illegible])

[illegible] —([illegible])

[illegible]

साड़ी लगी गोटा किनारी रंग के संवारी मोर
की भारी पहिरें छबीलीनारी !!! (परिभ्रमण)।

बै० बा०—यह साला गुलला भारी बदमाश दीख पड़ता है

गुल०—ले साड़ी दुपट्टा बनारसी, जिसे पहिरें हिन्दू फारसी, (स्वगत) इतनी कोशिश से भी बदजात हाथ नहीं आती. भई हिन्दुओं की औरत बड़ी पाक दामन होती है। अभी कोई मुसलमानी होती तो बात की बात मे हाथ आजाती. खैर मिहनत खुशनसीबी की मा है इससे न चूकना चाहिये. ऐ दिलरुबा! क्या गुलाम गुमनाम पर रहमदराज़ न फरमाओगी? अल्लाह तुम्हें ज़रा भी दर्द मालूम होता! खैर खुदा हाफिज है। या तो तुम्हारी क़दमबोसी हासिल करूंगा वर्ना फांकशी करूंगा. या अल्लाह!

बै० बा०—(स्वगत) इस हत्यारे यवन का मन तो इसके सतीत्व नाश करने का है. हरे कृष्ण! देखना बच्चा! भले घर बायना दिया है. किस बिरते पर तत्ता पानी? इसकी ऐसी तैसी।

गुल०—(अभय कुमार के घर के द्वार पर जाय के) ले साड़ी, दुपट्टा, धोती, अंगिया, चोली, कुरती बनारसी बूटेदार ओढ़नी, क्यों रानी बहू? साड़ी खरीदोगी? (ज़ोर से बार २ पुकारता है) (अभय के घर का द्वार खुलता है. गुलाब बाहर आके खड़ी होती और घबराता परदे की

ओट में खड़ी होती है और साम्हने गठरी रख के गुलफाम खड़ा होता है)।

चं० ल०—ओ गुलाब ! मियां से कपड़े ले के दिखाती सही ! चुपकी क्यों खड़ी है ?

गुल०—(आल्हाद से गठरी आगे सरकाय के) लेओ, सभी हाजिर ! हैं. हमी दिखाते हैं. एक महल्ले के रहनेवाले से शरम कैसी ? महाजनी टोला का कुछ रिश्ता भी तो होना चाहिये। (एक२ करके सब कपड़े दिखाता और चं० ल० अड़ से से देखती है)।

चं० ल०—(एक सादी धोती पसन्द करके गुलाब से) पूंछ न इसका दाम क्या है ?

गुला०—हां जी इसका दाम क्या है ?

गुल०—लेओ, बीबी रानी ! तुम से और दाम !! छिः २ !! जो होगा पीछे लेलिया जायगा ऐसी जल्दी क्या है ?।

चं० ल०—(स्वगत) ओ हो ! इस सत्यानाशी का मन कैसा भयानक नरक कुण्ड है ? हाय ! न जाने प्रियतम कहां अन्तर्धान होरहे हैं. और मैं यह यमयातना अकेले घर में भोग रही हूं हे परमेश्वर ! प्रभो ! इन निगोड़ों से तुम्हीं हमारे सत् को बचाओ. नाथ ! इस दासी का यहां कोई रक्षक नहीं है. मदन, बकू, रजनी आदि

तो लून सोख ही रहे हैं. उस पर यह मुआ दाल भात में मूसरचन्द कहां से कूद पड़ा ? (रोकर) हा ! मैं प्राण रहते तो इस जघन्य नरक में गोता न मारूंगी. ईश्वर और धर्म अवश्य रक्षा करेंगे और जो मैं सच्ची पतिव्रता, पतिगतप्राणा होऊंगी, जो मेरा सच्चा अनुराग पति के पाद पद्म से होगा तो अवश्य वह समय पर दुष्टों से मेरा उद्धार करेंगे. (दीर्घ निश्वास लेके) हा ! वह न जाने कहां क्या कर रहे हैं हमारी दशा उन्हें विदित नहीं है, नहीं तो वह क्षण भर भी न रुकते. नाथ ! दासी ने क्या ऐसा अपराध किया है जो व्याधा के बीच हरिणी की भांति छोड़ के चले गये ! मैं अवतक केवल तुम्हारे चरण कमल के दर्शन की लालसा ही के भरोसे जी रही हूं. क्या तुम दासी को दर्शन देके कृतार्थ न करोगे ? मैं रामायण के नित्य पढ़ती हूं:—

जाकर जापर सत्य सनेहू ।
सो तिहिं मिलै न कछु संदेहू ॥

तो क्या तुम दर्शन दोगे ? (ठहर के) अहा ! धन्य ! वैजू बावला ! धन्य ! वह विचारा साधू अकारण हमारी रक्षा कर रहा है. क्या ! उसने जो आज परामर्श दिया है तदनुसार ही कर्तव्य करूं ? यह तो मुझ से न होगा. तो फिर छुटकारा कैसे होगा ? (सोच के) तो इसमें क्षति ही क्या

है ? जाल फैलाऊं देखूं उल्लू फंसता है कि नहीं

गुला०—क्यों चुप चाप हो प्यारी ! बोली भी न ।

चं० ल०—गुलाब ! पूछ इनके जी का भाव क्या है, सुन के कहूं ।

गुल० – (इतस्ततः करके) वल्लाह ! हो कुछ नहीं. "दर्दे दिल किससे कहूँ कोई भी गमख्वार नहीं. चुपका रहता हूँ भला. जहर कैफ़ खुदा के वास्ते गुला को हमदर्दी में कबूल करने से कोई हर्ज वाकः होगी ? ,

चं० ल०—(स्वगत) मर सत्यानाशी ! तेरी क्या मा बहन बैठ रह गई ? छिः धिक्कार है ऐसे मुसल्मानो पर ! (प्रकट) तुम बड़े नापाक ग़ाल हो. जबतक तुम पूर्ण पवित्र न होगे तबतक हम तुम्हारा स्पर्श कैसे करेंगी ? यदि हमारे यहां आने की इच्छा हो तो एक काम करो ।

गुल०—बिल्लाह ! वह क्या काम है ?

गुला०—कर सकोगे ?

गुल०—लाहौलवला कूवत ! इसके पूछने की ज़रूरत क्या है ? बन्दा क्या नहीं कर सकता ? (नमस्ता-नातर) ।

गुला०—हमारी बहू रानी कहती हैं कि तुम हिन्दू बनजाओ ।

न०—अस्तग़फ़रुल्लाह ! यह क्योंकर हो सकता है ? अगर मुम्किन हो तो कहो उस मुसल्मान पर लानत है जो ऐसी नाजनी के लिये हिन्दू न बनै।

गुला०—सुनो—आज सांझ डाढ़ी और मूछ मुड़ाय के चुटिया रखाय के प्रात बेर स्नान करो, और कल दिन भर निर्जल निराहार करके सन्ध्या समय यहां आओ. फिर देखना कि कैसी तुम्हारी खातिरी की जाती है।

गुल०—अल्हम्दुलिल्लाह ! यह कितनी बड़ी बात है. यह तो हम चुटकी बजाय के कर डालेंगे. परी से मोहब्बत करने के लिये पहले आग में जलना होता था और यह तो थोड़ीसी बात है, हां कुछ कपड़े !

पं० स०—कुछ नहीं. वही एक सादा जोड़ा रक्खा है. अब जाओ, यह दाम लो (देती है)।

गुल०—हैं ? यह क्या ! इसकी क्या जुरूरत रही और (लेता है) (गुलाब से) क्यों ! खाना पहले कितना लालच दिया पर न मानी अपना नुकसान किया अब क्या करोगी ?

गुला०—(हंस के) हम क्या करें बाबू ! मियां बीबी राजी तो क्या करै गांव का काजी पाजी।

गुल०—जानी ! एक जोड़ा धोती तुम्हें भी देंगे. जरा दिल-रुबा की एक झलकी न दिखा दोगी ?

ा०—(रिसरि) दम ! इस वक्त चले जाओ मिया।
(किवाड़ बन्द करके दोनों अंदर चली जाती हैं)

०—यस ! अब टाली कहा जाती है. वह मारा मैदान रहा !! (बगल बजाय के उछल पड़ता है) ।

"जहार आई है भर दे याद ये गुलगूं मे पैमाना"
(बार २ गाता हुआ गट्ठर उठाके चला जाता है) ।

वा०—(दृक्षों की ओट से निकल के) साला मुसल्ला किधर गया ? मारे जूतियों के सिरगंजा कर देते खैर. (ठहर के) वाह, प्रिये तुम धन्य हो, तुम्हारे सतीत्व की परीक्षाही के लिये हम निरुद्देश्य हैं. यह न जानों कि हम तुम से दूर हैं. प्रत्युत छाया की भांति तुम्हारी काया के सङ्ग २ हैं. धन्य तुम निःसंदेह सती रत्न हो. अब तुम्हारे परीक्षोत्तीर्ण होने में कसर नहीं है. ईश्वर सानुकूल है तो जल्दी तुम्हें गले लगावेंगे. आज भर और धीरज धरो. नहीं तो दुष्टों को दण्ड कौन देगा? अब शीघ्र तुम्हारा पति विरह मिटैगा और दुष्ट गण अपने किये का फल चक्खेंगे. (जाता है)

इति द्वितीयाङ्क ।

— —

तृतीयाङ्क।

(चंपकलता का अंतः पुर)

(कर पर कपोल धरे चं० ल० विचार मुद्रा में बैठी है)

चं० ल०—मैंने चारों पापियों को न्योता दिया है, किन्तु भय से कलेजा धड़क रहा है, एक तो मैं अबला दूसरे अकेली उन चारों पिशाचों से कैसे बच पाऊंगी? अहा! इस समय परोपकारी साधु बैजू बावला आता तो बड़ा काम निकलता मैंने उसी के परामर्श से पति के न रहने पर भी ऐसा दुःसाहसिक काम करने का संकल्प किया है. दीन बन्धो! करुणा निधान! तुम अबला सती की तुम्हीं रक्षा करने वाले हो. (दीर्घ निश्वास ले के) आह! मेरा मन ऐसा कलुषित हो गया? यह क्यों? मैंने तो कभी स्वप्न में भी कुपथ की परछाईं नहीं देखी. तब एक पागल की ओर मेरा मन क्यों खिंचा जाता है? वह तो सच्चरित्र है कभी आंख उठाय के भी मेरी ओर नहीं देखता, तो फिर मेरा मन ये डाघ क्यों हो रहा है? (सोच के) हैं यह क्या? मैं क्या स्वप्न देख रही हूं? तो व्यर्थ का संकल्प विकल्प कैसा? वैसाही मुख वैसाही अङ्ग लक्षण तो है पर स्वर में कुछ विभेद है. यह कैसा व्यापार है? क्या वही तो बहुरूपी नहीं बने हैं? नहीं! वे यहां क्यों आने लगे! यह मेरा सर्वथा भ्रम है। (आंसू भर के) इन फूटे करम में क्या स्वामी

सहवास का सुख विधाता ने लिखा है ? वर्ष दिन से प्यारे का पता ठिकाना नही है. अभी मेरी उमर केवल पंद्रह वर्ष ही की है. न पिता माता हैं, न सास ससुर हैं, न भाई या देवर जेठ हैं जो मेरी रक्षा करते. प्रभूत धन की अधीश्वरी होने पर भी मुझे यह दुख !! पति बिना संसार का सब सुख शूल सा चुभता है. हा ! नाथ ! श्री चरणों में दासी ने ऐसा कौन गुरुतर अपराध किया है जो बिना कहे सुने त्याग के चले गये (आंसू गिर पड़े) पति परमेश्वर ! जान जाने जो कुछ दोष भया हो तो अज्ञान जान के क्षमा करो. नाथ स्त्रियो के गुरु पति है सो दासी में जो त्रुटि हो उसे शिक्षा दे के पूर्ण करते. (ठहर के) अहा ! उन के निरुद्देश्य होने के चार साल पीछे बैजू बावना आया, तभी से—उसे देख के मेरा मन ——छिछि !! कैसी लज्जा और घृणा की बात है? राम ! २ अब ऐसी बात मुख से न निकालूंगी सतीधर्म्म को मानसिक पाप भी असती बनादेता है मन से पाप कल्पना करना भी सतीत्व का नाशक है, हा ! आज मेरी बुद्धि ऐसी मलिन क्यों हो गई ? हाय मै तो स्वामी भिन्न किसी की ओर आंख उठाय के ताकती भी नहीं, तब ऐसा हाल क्यों हो रहा है? किन्तु यदि मैं सच्ची सती होऊंगी तो मेरा मन कभी कुमार्ग में न जायगा (चिंता करती है) ।

(बैजू बावला का प्रवेश)

बै० बा०—हे ! आज इस प्रकार शोक सुद्रा में बैठी क्या सोच कर रही हो ?

चं० ल०—(चमक के) अहा ! तुमारी बड़ी उमर है अभी तुमारी ही बात सोचती थी सोहे तुम आ गये बैठो (उठके कुशासन देती है) क्यों भई ! उन दुष्टों के आने पर मैं अकेली क्यों कर क्या २ करूंगी ? तुमने तो कुछ उपाय भी नहीं बताया ।

बै० बा०—इतनी उतावली क्यों होरही हो, दयामय जगदीश्वर सब के सहायक हैं वही तुम्हारी रक्षा करेंगे, सुनो (कुछ कान में कहके) अब समझीं ?

च० ल०—(आश्चर्य से) अहा ठीक २ तो क्या तुम न रहोगे ? ।

बै० बा०—नहीं, हम किसी प्रकार नहीं रहसकते तुम से जो बने सो करना, द्रौपदी के पत रखने वाले श्री कृष्ण तुम्हारी अवश्यमेव रक्षा करेंगे ।

च० ल०—(नैराश्य से) हा ! मुझे बड़ा डर लगता है, एक तो मैं युवती स्त्री ठहरी, पर पुरुष के सन्मुख कैसे होऊंगी, दूसरे यह लोग भारी पतित हैं ।

बै० बा०—सतीजन को लज्जा क्या ? उन की दृष्टि में सभी पितृ भ्रातृ पुत्र कल्प हैं, रहा दुष्टों का भय, सो उसका कुछ डर न करो, साहस पर निर्भर हो के शशक ने सिंह का विनाश किया था,

देखो विपत्ति में सब तरह से साहस कर के अनेक काम करना पड़ता है, जिस में सतीत्व बचे. यदि इस बार साहस कर के उन दुष्टों को उचित शिक्षा न दोगी तो वो हत्यारे बार २ दुःख दिया करेंगे. यहां तक कि तुम्हारा जीना कठिन हो जायगा ।

चं० ला०—अच्छा मैं साहस करूंगी । यदि तुम भी यहां कहीं छिपे रहो तो उत्साह भंग न होगा दैवात् कोई उत्पात खड़ा हो जाय तो तुम रक्षा करना

वै० ना०—ईश्वर ही एक मात्र दिन का बन्धु है. और कई कारणों से हम नहीं रह सकते अब तुम्हारी इच्छा जो चाहो सो करो, (गमनोद्यत) ।

च० ला०—(गर्व पूर्वक) अच्छा अब जाओ, देखना कि सती जन किस रीति से अपने अमूल्य सतीत्व धन की रक्षा करती और अत्याचारियों को दण्ड देती है, तथा जिस प्रकार आत्मरक्षा में समर्थ है अभी से मैंने अपनी अङ्गिया में एक तीक्ष्ण छुरी रक्खी है (दिखाय के फिर रख लेती है) गड़बड़ से यह मेरी विशेष सहायता करैगी. पापी लोग कदापि हमारे पवित्र अंग में हस्तार्पण नहीं कर सकेंगे । (मुख लाल और आंखें सुर्ख तथा भृकुटी, स्वर तीव्र और प्रस्वेदकण चमकने लगते हैं) दयामय रक्षक है ।

वै० ना०—(स्वगत) धन्य प्रिये ! धन्य ! सती धन की महिमा गाने में वेद भी असमर्थ हैं. तुम निःस्व-

न्देह अपने प्राणपति को पाओगी. (प्रकट) अब हमें निश्चय हुआ कि तुम अपना कर्त्तव्य पालन कर सकोगी. भली वीर रमणी ऐसाही करती है (स्वगत) धन्य ! प्रिये, धन्य ! परीक्षा की शेष सीमा पर तुम पहुंच गई. प्यारी जया ! तेने मुझे फिर अपने प्रेम जाल में फंसा के संसारी किया. आज से हम तेरे आनन्द के लिये कौन दास हुये (अश्रु संवरण न करने से पलायन कर जाता है) ।

ज० ल०—(आश्चर्य से) हैं ! भागे २ यह क्यों ? हाय दई ! मैं क्या स्वप्न देख रही थी ? यह क्या बात है ? फिर मेरा मन क्यों बिगड़ गया ? अहे ! यह पागल कौन है ? निश्चय हो न हो यही हैं वे अवश्य वोही हैं. वैसी आकृति प्रकृति तो देखती ही थी । आज वैसा कमनीय बात स्वर भी सुना. तो उनके रहते २ मैं हत चेतन होगई थी ? उसी समय क्यों न चरण पकड़ के अपराध क्षमा कराया ? हाय ! मैं बड़ी अभागिन हूं कि आगे की परोसी थाली में लात मारी. आज क्या विधाता वह सुदिन देंगे कि मैं उनके चरण की सेवा करूंगी ? मेरा जन्म व्यर्थ गया, बाल्यावस्था में पिता माता ने, ससुरार आने पर सास ससुर ने तो मुझे त्याग किया ही था, अब पति परमात्मा भी मुझे अनाथिनी बना के न जाने क्यों वे कहे सुने किधर रम गये. (ठहर के) ठीक २ पागल और कोई नहीं है, वही हैं. नहीं

तो मेरा मन कभी विचलित न होता. यह प्रकृत पागल नहीं, प्रत्युत मुझ पागलिनी के पागल है. (आनन्दाश्रुपात) यदि ऐसाही है तो अब अधिक जली को क्यों जला रहे हैं ?—— आह ! इतने दिनों पीछे निगोड़ी सुध अब आई. (जाती है और एक खंड पत्र लेके फिर आती है) "यदि पोपिनी है तो निश्चय त्याग करेंगे" ठीक है मुझे निर्देश करके ही प्यारे ने ऐसे वज्र बाण मारे हैं. किसी हत्यारे——हा २ उन्हीं मदन आदि हत्यारों ने मेरी ओर से उन्हे कुछ खटका दिला दिया होगा. हाय 'किमकार्य्यंकदर्य्याणां" उसी से हमारी चाल चलन पर सन्देह करके नाथ घर द्वार छोड़ के चले गये होंगे. हा! इतने दिन पीछे आज इस पत्र का मर्म समझी स्वामिन इस में तुम्हारा कुछ दोष नहीं है. लोगों के कहने सुनने से जगत्पूज्य श्री रामचन्द्र जी ने भी सीता सती को कलंकिनी का कारिख लगाय के छोड़ दिया था. "दिनन के फेर से सुमेर होत माटी को". (रोती है)

(दासी का प्रवेश)

गुलाब——बहूरानी ! यह क्या ! तुम रात दिन रोते गलपच काटा सी बनगईं न खाना न पीना इस से कैदिन बचोगी ?

च० ल० – गुलाब इस ताप दग्ध हृदय में अमृत छिड़कने वाली एक तू ही है तेरे सग रहने से मुझे मा,

बाप, सास का सुख मिलता है, तेरे ढाढ़स दे
से जी ठंडा होता है, पर फिर चिंता आ
घेर लेती है।

गुलाब—घबराओ मत भगवान सब रक्षा करेंगे।

चं० ल०—हारी उन्हीं का तो भरोसा ही है, और तैने क
कुछ कम मेरी रक्षा की है?

गुलाब—मैंने क्या किया है? मैं तो अपना निमक अ
करती हूं, हां देखो न! पापी सत्यानाशी मुझे
कितनी पट्टी और लालच दे रहे हैं, उन
मुह में सारे जमाने का खे भरूं. उठो
रोओ डर क्या है? अभी गुलाब मरी नहीं है
इस के जीते तुम्हें कौन कलंकी लगा सकता है
चलो दो पहर भया, नहा धो के रसोई करो
आज दो दिन निराहार हो गये. बुरा हो
दुखदाईयों का!

चं० ल०- गुलाब! दासी होने पर भी तैने मेरी मा की गद्दी
पाई नीच कुल मे बाल विधवा स्त्री ऐसी सत
होना कम देखा जाता है उस अभाव को तूं
मिटा दिया अस्तु (दीर्घ निश्वास ले के) गुलाब
बैठ एक बात पूछूं।

गुलाब—(बैठ के) कहो क्या पूछोगी? ऐं! तुम इतनी
लंबी सास क्यों लेरही हो, यह देखो फि
रोने लगी।

चं० ल०—(गुलाब का हाथ थाम के) ओह! पागल के
जब-से देखा है—मेरा मन—ओह! —हे हा
——हे राम क्या बात है?।

गुलाब—(चं० ल० का आसू पोछ के) चुप हो ! रानी धीर न धरो, मैं सब समझ गई. भय से इतने दिनो तक तुम ने कुछ नही कहा था, उन्होने भी मुझे डांट के मना कर दिया था. पर जब तुमने अपने चोर को चीन्ह लिया तो मैं क्यों छिपाऊ? बहू! जिन्हें गोदी खिलाय के इतना बड़ा किया वही—अच्छा अभय कुमार पागल बना है.

चं० ल:—(आल्हाद से गुलाब के गले में लपट के) मा!— तो बस अब सदेह न रहा. मुझे पहिले ही निश्चय था कि मेरा मन कुपथ में कभी न आयगा. अच्छा आज सब घर झार बुहार के साफ करो. सध्या को पापियों का न्योता न है (हास्य)।

गुलाब—भेंट पूजा का पुजापा भी संजोया धरा है। टोकड़ा की कसर है, दश जूती———(हास्य)।

च० ल०—अच्छा! हम भी चलके घर का धंधा देखें।

गुलाब—हां जी! अब सोच फिकिर छोड दो।

(दोनो दो ओर से गई)

पटाक्षेप

इति तृतीयाङ्क।

— —

चतुर्थांक।

(चंपकलता का घर)

(गुलाब आती है)

गुलाब—(स्वागत) बस! अब सब काम निपट गया. एक टोकरी गोबर मट्टी भी ले आई हूं. अलकतरा की नाद और घोटा गुडकी अधरी भी आड़ में

रक्खी है. अब मही का तेल अलकतरा में डाल के गोंद का ढकना ढक दूं (जाती है और फिर आके बैठती है) बस ! २ अब ठीक ठाक मामला है. दोगलों की अकिल तो देखो ? गिरस्त की बहू बेटियों पर ऐसी बुरी नजर ! सो भी कोई कुलटा कुचाली नहीं है, खासी निर्मल गङ्गा जल है. उसके बिगाड़ने को इतना बखेड़ा ? गल जायगे, सत्या नाशी गल जायगे (नेपथ्य में द्वार का खट् २ शब्द) (झुंझलाय के स्वगत) यह पाजी गुलफू बेटा आया जांय किवाड़ खोल के उसका सराध करें. (जाती है और गुलफाम को लेके फिर आती है) ।

गु० फा०—वल्लाह ! बहू रानी तो नजर ही नहीं आतीं।

गुलाब —वे रसोई बनाती होंगी, तुम यहीं आंगन में बैठो।

गु० फा०—(भूमि मे बैठ के) गुलाब ! आज हमारी कैसी खुशी का वायस है ! लिल्लाह ! ज़रा जानी को इधर तो बुला लाओ।

गुलाब—(स्वगत) मियां का जरा कोई मुंह तो देखे मूछ डाढ़ी मूंड़ घुटाये चुटिया रखाये हिन्दू का बच्चा बन रहा है सो जूती मिगोड़े के शिर पर ! (प्रकट) सोई तो ! मोरी की ईंट चौबारे लगी ! !

गु० फा०—गुलाब ! क्या कहूँ, जबसे दिलरुबा की तीखी नजर दिल में घुस गई है, तब से दुनियां का सब ऐशो आराम हराम है. दिन गिरिये वो रात

जारी में फंसती है बक़ौले– "न मरते हैं न जीते हैं यही हालत हमारी है" रोगही कपड़े बेचने के मिस से इधर की फेरी किया करते थे मगर खुदा के फज़्ल से कल दस्तयाबी नसीब हुई खुदारा अब तो दिल बेताब हो रहा है. तुम्हारे कहने बमूजिब देखो मैंने सब काम कैसी खूबसूरती से अदा किया, लिहाजा, जाना की फरमाबर्दारी मे फर्क न पड़े, यही मेरी दिली आरजू हैं. लिल्लाह ! आज वे खाने दाने के रूह मुर्ग बिस्मिल की तरह छटपटा रही है. इनशा अल्लाह ताला ! वस नाजनी की सूरत देखते ही रूह तर होजायगी. या अल्लाह अब इस तरह दिल क्यों धड़क रहा है ? "बिना देखे सितमगर के बुरी हालत हमारी है" (अंगड़ाई लेता है) ।

ाय – मियां ! घबराओ न, खूब आसूदः होगे, जो ता क़यामत याद रहेगा. (स्वगत) ओह ! मांस पिंड विशेष गर्भस्राव की बातें तो देखो ? मेढुकी को भी जुकाम हुआ. मन में आता है कि अपनी जूते के तले से सब मकड़ी झाड़ दूं मेढुकी चली नाम जगाने !

(नेपथ्य में द्वार खटखटाता है)

का० —(सभय) ऐं ! यह क्या गुनाह ! कौन किवाड़ खटखटाता है ?

ा० —क्या जाने, भई ! जहां तुम तहां हम. देख आवे ।

(जाती है, और क्षण भर में फिर आती है)

का० – क्या माजरा है ?

गुला०—अरे बुरा भया, लुको २ नहीं तो प्रान जांयगे।

गु०फा०—(सभय) क्या है क्या आ-आ-आ- (घिग्घी बन्ध गई)।

गुला०—रजनी कान्त आते हैं।

गु०फा०—(थरथराय के) ऐ! रजनी कांत! कयामत आई हाऊ है, साला कच्चाही खा जायगा, वह भी यहां आया? लाहौलबलाकूवत! ऐ गुलाब! कहां लुकै! खुदा के वास्ते जान बचाओ। (पैर पर गिर पड़ा)।

गुला०—घबराओ मत! इस बुखारी में (देखाये) लुको।

गु०फा०—हाय! भेंड़ बकरी की कोठरी वा पिंजड़े में सैर (आतुरता से) अच्छा यही सही।

(वह भखड़रिया में घुसता है और गुलाब बाहर की साकल बन्द कर देती है और फिर जाय के रजनी कान्त को ले आती है)।

रजनी०—क्यों गुलाब! हमारा चाद कहां छिपा है।

गुला०—(हंसके) घोर रजनी के क्रोड़ में।

रजनी०—चल वाह तू भी ठिठोली करती है?

गुला०— हमारी तो बोलीही ऐसी है (बैठने को चटाई देती है)।

रजनी०—(बैठके) सच बता, रानी बहू कहां हैं?

गुला०—रसोई घर में।

रजनी०—क्यों गुलाब! पहिले कितना लालच दिया, खुशामद किया तब तू न पिघली देख हमने ऊपर ही ऊपर हाथ मारा, अब तेरी भी गोटी मारी गई।

गुला०-(हाथ मट्ठी करके) ऐसी गोइंद गुलाब थूकती भी नहीं पर हां मिया बीबी राजी तो क्या करैगा पाजी काजी ?

रजनी० - जो होय ! पर आज रजनी में चंपा खिलैगी ।

गुला० —(हंस के) पर उसका रस भ्रमर ले सकता है ?

रजनी०—पर, सबुर की डार में मेवा फलती है ।

गुला०—पर सेवा से मेवा मिलती है, और जरद बाग का मुंह काला और हाथ पांव नीला पीला !

(नेपथ्य में कपाटाघात)

रजनी०-(चमक के) यह क्या ? कौन दरवाजा भड़काता है ?

गुला०-दीवानजी के आने की बात तो थी ।

रजनी०—(सभय) क्या कहा ? छक्कू लाला भी यहां मरैगा ? राम ! २ हाय ! तुम काफर से हमें बचाओ ओ गुलाब हम कहां लुकें ? हाय ! चंपा के यह चरित्र ! कहा भी है, स्त्री चरित्र विशेषत: युवती चरित्र देवता भी नहीं जान सकते ।

गुला०—हम क्या जानै कि वह भी आज ही मुह काला करने आवैगा ? तुम लुक रहो वह अभी रफा दफा हो जायगा ।

रजनी०—कहां लुकें, गुलाब ! जल्दी बताओ ।

(नेपथ्य में भड़ाभड़ कपाटाघात)

गुलाब--तुम इसी कोने में बैठो हम तुम्हें सड़ी का दीहा बनाय के उस पर दिया बाल देगी ।

रजनी०—(पश्चात्ताप से) अच्छा भई जो चाहे सो करलो (रजनीकांत कोले मे बैठता और गुलाब पीछल मट्टी से उसे ढक के गोंद की पाई शिर पर औघाय के उस पर एक दीपक बाल देती है और हसे है) ।

चं० ल०—(परदे की ओट से) ओ गुलाब ! दीमान जी की अच्छी पधरावनी करना मैं तब से ऊपर जाती हूं ।

गुला०—अच्छा ! (गुलाब जाती है और दीमान जी को लाकर पीढ़े पर बैठाती है) ।

लकू०—गुलाब ! रानी अच्छा कहा महमहा रही है ? ।

गुला०—उपवन में, क्यो तुम्हारी लार टपक पड़ी ? (स्वगत) इत्यारी का वामन होके चांद पकड़ना चाहता है पर ये नहीं सोचता कि इसमें कितनी पैजार पड़नी होगी. (प्रगट) ठहरो वह सिंगार करती है ।

लकू०—गुलाब ! आज बिना मेघ के अमृत वर्षा ।

गुला०—चातक का सैाभाग्य ।

लकू०—हहहह !!! (हसके) क्यों न हो, चंपा की सह-चरी गुलाब में क्या कम मजा है ? बूढी होने से क्या भया मन तो बूढा होता नहीं, और यो भी कि पुराना चावल खूब खिलता है. तुम्हारी बातों से रस टपक रहा है. भई जो तुम पहले रानी होके हमारा भुगतान कराती तो घर भर देते. देखो आज तुम्हारी रानी के लिये एक सेट जड़ाऊ गहने लाये हैं (आगे डब्बा रख देता है

गुला०—अभी रहने दो, खा पी लो, तब उनहीं को देना (स्वगत) रह बच्चे इसका मजा हाथों हाथ मिलेगा।

कक्कू०—भई! अब नहीं रहा जाता "शिताब आ कि नहीं ताब जुदाई का" जरा लुगादो, भई, इहसान होगा।

(नेपथ्य में द्वार खटखट)

कक्कू०—(घबराय के) गुलाब! आज तो नये २ रङ्ग देखने में आते हैं (स्वगत) हाय रे सतीत्व!

गुलाब—हम क्या जानै, रग ढंग?

(अवगुंठनवती चपलता परदे के पास खड़ी होती है)

चं० ल०—कक्कूलाल! आरा के प्रधान आते हैं।

कक्कू०—क्या सर्वनाश! मदना साला तो नहीं! बुरा भया. (सभय) तो हमारी जान कैसे बचेगी?

गुलाब—क्यों डर क्या है! दोनों मिलके मजा उड़ाना।

कक्कू०—हाय! तुम ऐसी मीठी छुरी निकली? इस समय ठट्ठा रहने दो, एक म्यान में दो छुरी नहीं रहतीं तिसमें भी वह भारी बदमाश है. तुम्हारे पांव पड़ू चल्या! कहीं लुका दो।

(नेपथ्य में द्वार भड़भड़)

गुला०—डर क्या २ आओ इस कोठरी में।

चं० ल०—गुलाब! देखना! (गई)।

(कक्कू को लेके गुलाब नेपथ्य में जाती है)

(नेपथ्य में से)

गुला०—इस में बैठो।

कक्कू०—(बैठ के झट खड़ा होजाता है) इसतेरी ऐसी तैसी यह तो चोटा गुड़ की नांदहै सब कपड़े बिगड़गये।

गुला० —अंधेरे में न सूझा होगा, खैर दूसरी बालटी में बैठो।
(छक्कू किरामिन के तेल भरे अलकतरा की न में गोता खाता है और गुलाब ऊपर से गोद करखा मिलाय के उसके सिरसे नहवा देती है औ वह मारे दुर्गंधि के भाग के रङ्गभूमि में आता और पीछे २ गुलाब एक ओर से और चम्पकल दूसरी ओर से अवगुंठन किये हंसती आती हैं)

छक्कू० —कुटनी रांड़ हरामजादी ऐसा ठट्ठा कोई करता है

गुला० —खबरदार ! ज़बान सम्हाल के बोलना नहीं तो मारे झाडुओं के सिर गञ्जा करदेती हूं, पाज कुत्ते यह तेरी नानी की मौरूसी नही पिल्ला का बच्चा ।

चं० ल० - गुलाब ! अच्छा ये न मानेंगे, तू जा मदन मोह को लेआ (नेपथ्य में द्वार खटखट) ।

छक्कू० - (गुलाब के पैरों पर गिरके) अब क्षमा करो गुलाब हमने बहुत झख मारा जो तुम्हें कच्ची पक्की कह अब जो चाहो सो करो, जहां कहो वहां लुकैं ।

चं० ल० - गुलाब ! एक काम कर ! दिमान जी के गले एक रस्सी डाल के गाय के खूंटे में बांध दे, तो जानैंगे कि कोई भेड़ा बन्धा है ।

गुलाब _ ठीक सोचा, इनकी सूरत भी वैसी ही बनगई आओ बाबू साहब तुमारे गले में रस्सी बाधें ।

छक्कू० - जो चाहो सो करो, अब तो पड़े राम कुकु के पाले ! (गुलाब उसे खूंटा से बांध देती है और छक्कू भेड़ा की तरह औंधा पड़ जाता है)

गुला० – अब ठीक भया मदन मोहन को बुला लाऊं (गई) ।

चं० ल० – "जैसी जाकी चाल है सो तैसा फल लेय" (गई) ।

कुकू० – (स्वगत) हाय ! यहां आने ही में इतनी विद्दत भई उससे सम्भोग करने से न जाने क्या २ सहना पड़ता हाय ! यह भी भाग्य में बदा था ? हरे ! हरे ! शेष में भेड़ा बकरा बने ! छि ! २ ।

(मदन मोहन को लेके गुलाब आती है)

म० मो० – आज हमारा सुप्रभात और भाग्य प्रसन्न तथा अनुकूल है. जो सहस्त्र मुख से भी नही कह सकते !

गुला० – यह हमारी रानी के भाग्य की खूबी है कि सोने की चिड़िया हाथ आई इस पलङ्ग पर बैठिये ।

म० मो० – (निवार की पलङ्ग में बैठके) तुम्हारी रानी तो सदा सौभाग्यवती है, यह हमारे भाग्य की महिमा है रत्न किसी को नहीं खोजता उसी को सब ढूंढते फिरते है ।

(अवगुंठना वृता चं० ल० आय के परदे के पास खड़ी होती है) ।

गुला० – पर वह बन्दर के हाथ आईने की तरह सब के पास शोभा नहीं पाता जौहरी ही उसका जौहर जानता है ।

म० मो० – अह ! प्रौढ़ा होने पर तुम इतनी रसिक हो तो तुम्हारी रानी न जाने कैसी सुढह होगी ।

चं० ल० – तुम्हारे लिये कुछ जल पान के लिये मगवाया जाय ? ।

म० मो० – नहीं २ उसकी क्या आवश्यकता है ? तुम्हारे वचनामृत ही से हम तृप्त होगये ।

चं० ल० – तो भी कुछ थोड़ासा. (झट जाती है और खाद्य द्रव्य गुलाब को देती है गुलाब मदन मोहन को खिलाती है और वह कुछ खा पी के पुनः खाट पर बैठजाता है और गुलाब फिर पान देती है)

म० मो० – (पान खाय के) आओ राजा पास बैठो, दूर मुंह छिपाये क्यों खड़ी हो ?

चं० ल० – ऐं तुम हमारे फुफेरे भाई होते हो, ऐसे पत्थर पड़ेगे ? बहिन के मङ्ग यह बात ' ।

म० मो० – हा ! बहम की बात जाने दो, बाहम बैठ के मजा उड़ाओ कैसा भाई और कैसी बहिन ! ।

चं० ल० – (धीरे से) तो एक काम करोगे ?

म० मो० – तुम्हारे लिये जान साहबा जान हाजिर है. एक नहीं दो करेंगे, जो कहो सो करें ।

चं० ल० – (स्वगत) तुम मरो तो मैं बचू (प्रकट) देखो मैं अवला ठहरी निर्बुद्धि वश एक दिन एक प्रतिज्ञा कर बैठी हूं उसे पूरी करो तो – – (रुक गई) ।

म० मो० – हंसके कहो भी क्या चांद का टुकड़ा लोगी ?

चं० ल० – जो मुझे घोड़े पर चढ़ावे – – – ।

म० मो० – (हंसके) बस इतनी ही बात । हम एक नहीं सौ घोड़े पर तुम्हें चढ़ावेंगे. अभी लो (उठना चाहता है) ।

चं० ल० – बैठो ! २ वैसे घोड़े पर अपनी अम्मा को चढ़ाना पर तुम घोड़ा बनो और मैं चढ़ू यही मेरा प्रण है ।

म० मो०। छिः ! तुम निरी छोकड़ी हो. खैर प्रीति का घोड़ा बड़े भाग्यो से बनना पड़ता है, तुम्हें न चढ़ावेंगे तो किसे चढ़ावेंगे ।

ल० – (स्वगत) चढाओ अपनी नानी, दादी को (प्रकट गुलाब से) क्यों चाबुक क्यों नहीं लाती?

गुला० – अभी लाई, (लाती है और घोड़े का साज ले आती है तथा मदन मोहन को ज़ीन लगाम काठ कस के घोड़ा बनाती है और पलंग के नीचे से अचानक बैजू बावला निकल आता है और गुलाब के हाथ से चाबुक छीन के झट घोड़े पर चढ़ बैठता है और दोनों आश्चर्यित हो के अट्ट हास्य करती हैं,)

बै० बा० – (चाबुक प्रहार कर के) चल साले खच्चर ! क़दम चल !

म० मो० – हाय, बापरे ! मरे २ ऊं हूं ऊ (रोता है और उठना चाहता है और चं० ल० तथा गुलाब हंसती हैं)

बै० बा० – चलवे खोपड़ी के सरपट चल (घन २ प्रहार)

म० मो० – बैजू बावला तेरे पैरों पड़ूं छोड़ दे, भैया ! अब ऐसा काम कभी न करेंगे. हायरे मरेरे (आक्रोश)

बै० बा – बैजूबावला, कैसा बे? अपने बाप को नहीं चीन्हता ? निमक हराम साला पाजी न मालूम कहां का (प्रहार कर के) क्यों दिल रुबा के संग यारी न करोगे ? चल क़दम चल (प्रहार)

म० मो० —(चीन्ह के समय, रोते २) बाबू अभय कुमार ! सर्वनाश ! हमने झख मारा जो इस ओर पैर बढ़ाया. आज से " मातृ वत्परदारेषु" इस पर विशेष ध्यान रक्खेंगे और चं० ल० हमारी अब धर्म का

माता हुई. और आप पितृकल्प!!! हम नाक रगड़ी ते हैं. अब प्रान छोड़िये. (रोदन)

अभय०—दुष्ट ! तेरी बात का क्या ठिकाना जब कि तू अपनी भगिनी के ऊपर डीठ गड़ा बैठा था. और अब तू थूक और चाट! (मदन मोहन का तथा करण) (प्रहार कर के) और एक बार कदम चल !

म० मो०—(बेदम हो के) हाय रामरे मरे . बाबू जी; अब यथेष्ट भया. जैसा काम वैसा परिणाम !!! हमने अपने किये का पूरा २ फल भर पाया. अब छोड़िये नहीं तो प्रान निकला चाहते हैं. हाय बापरे मरे मरे मरे (रोदन)

अभय०—सुन पतित! तुलसी दासजी कहते हैं ।

अनुजवधू भगिनी सुतनारी ।
सुन सठ यह कन्या समचारी ॥
इनहिं कुदृष्टि विलोकै जोई ।
ताहि वधे कछु पापन होई ॥

और भी "आततायी वधार्हण." इसलिये तेरे प्राण लेने में कुछ भी पाप न होता पर जा साले "चेंटी मारे पानी हाथ" जीता छोड़ता हूं खबरदार ! जो फिर किसी की बहू बेटी पर कुदृष्टि की है तो मार ही डालूंगा.

(अभय पदाघात करता है और गिरते पड़ते मदन मोहन पलायन करता है)

अभय०—(रजनी को देख के) क्यों प्रिये ! यह नये टाइप

का चिरागदान क्या जर्मन वा चीन की दूकान है ? (हास्य)

चं० ल०— (हंस के) वाह! यह लैंप अमेरिका की उन्नति का नमूना है.

अभय० – भई! अमेरिका वाले भी बड़े बुद्धि सागर हैं कि सजीव दीप दान बना दिया. अहा! इस के तो हाथ पैर भी दीख पड़ते हैं ज़रा देखें तो सही. (पदाघात करते २ रजनी को खोलता है) अच्छा ! (कह! कह कह!) वकील साहब! बन्दगी! जनाब भी यहां नामला करने तशरीफ़ लाये हैं ? (धन २ प्रहार)।

रजनी० – हाय बाप रे मरे, बाबू साहब हमने सारे ज़माने का खे खाया जो इधर पांव बढ़ाया, बुरा हो पाजी मदना का, उसी दुष्ट ने यह सब आफत बिसाहा, अब छोड़ दीजिये, हम कसम खाते हैं।

अभय० – ज़रा मज़ा चक्खो राजा! (प्रहार)

रजनी० – हाय मेरी जान न मारिये मैं नाक रगड़ता हूं चम्पा मेरी धरम की मा बहिन है. अब कभी ऐसा काम न करेंगे. हाय राम, मरे! २ छोड़ दीजिये.

अभय० – क्यों हौसिला पूरा होगया ? पाजी! हरामज़ादा अजवंश ! थूक और चाट! (उसका तथा करण) ले जीता छोड़ते हैं, फिर जो कहीं कुछ गड़बड़ किया तो मारही डालेंगे (पदाघात करता है और गिरते पड़ते रजनी लंबा होता है)

(चं० ल० से) वाह प्रिये! तुम बड़ी सुघड़ हो

तुम्हारे शौक़ की चीज़ अभी तक रक्खे है,
वाह ! अब तो यह भेड़ा मोटा ताजा होगया है
लाओ इसी से पहों गार भी बहलावें ।

चं० ल० – पर देखना इसके सींग बड़े २ होगये हैं ।

अभय० – तब पहिलें कोड़े से इसकी खुजली मिटादें. (शाय
के प्रहार करता है और छक्कू चिल्लाता है तब
उसे झोल के घसीट लाता है और फिर २ प्रहार
करके) वाह सारी जमायत यहीं जमा है ?
काज़ी जी भी पहुंचे हैं ? (प्रहार) साले भेड़ा
कब से भया ? (प्रहार) दुष्ट, पतित, कुकर्मी ।

छक्कू – हाय बाप रे मरे ना । चंपकलता अपने धर्म के
बेटे की जान बचाओ अब कभी ऐसा काम
न करेंगे ।

गुलाब – वाह रे धर्म पुतर जुधिष्ठिर का अवतार है क्या ?

चं० ल० – खैर छोड़ दीजिये अपने किये का आप फल
भोगेगा ।

अभय० – (मार के) नाक रगड़ और थूक चाट (छक्कू
का तथाकरण और लात खाते २ पलायन)
(चंपक लता से) क्यों प्यारी इसमें कौन जानवर
बन्द है ?

चं० ल० – (हंसके) यह एक वन मानुष का बच्चा है अभी
पोस नहीं मानता इसी से पिंजरे में बन्द है ।

अभय० —(देखके) तुम ठगी गई, यह तो गुलफा चाला है,
निकल पाजी, बाहर ! भले घर बायना दिया है.

अपनी अम्माजान से इस कलाम न होगा ? वर्ण-
संकर नालायक ! निकल बाहर !

गु० फा०—(कांपते २ और रोते २) हमारी जान न मारिये.

अभय०—निकल उल्लू के पट्ठे बाहर ! (हाथ पकड़ के
बाहर खींच लाता है और खूब प्रहार करता है)

गु० फा०—(चिल्लाय के सरोदन) या अल्ला हाय मेरी
खाला ! अब मरे, जान गई अम्मा, या रसू-
लिल्लाह ! बाबू साहब आज से ही पन्ना मेरी
अम्माजान भई. अब गुलाम को जां बक्सी
कीजिये. कसम खुदा की अब इधर कभी
नजर न करूंगा. हाय जान गई (चीत्कार
और रोदन) ।

अभय०—(प्रहार करके) नाक रगड़ और थूक चाट !
(गुलफाम का तथाकरण और पदाघात खाय
के गिरते पड़ते पलायन)

(चपलता से) क्यों प्रिये !

चं० ल०—(अभय के चरणों पर गिर के सरोदन) क्यों
नाथ ! दासी का अपराध था जो उसे छोड़के वे
कहे सुने चले गये ?

अभय—(चं० ल० को उठाय के हृदय में लगाय के उस
का अश्रु मार्जन करते २) मेरी हृदयेश्वरी ! सती-
कुल-गौरव-कारिणी प्रियतमे ! आज तुम्हें
हृदय में धारण करके चिर विरह और
अनेक अनुतापाग्नि को शान्त किया. प्यारी !
तुम्हारा क्या अपराध है ? इसमें मेरीही मूर्खता

थी जो बिना छानबीन किये लोगों के कहने पर ध्यान दे के तुम्हे असह्य कष्ट दिया. तुम्हारे आगे लज्जा से हमारी आंख नहीं ठहरती. प्यारी तुम मेरा अपराध क्या क्षमा करोगी ? (गाढ़ालिंगन और कपोल चुंबन) ।

चं०ल०—तुम्हारा क्या अपराध है ? यह मेरे फूटे कर्मों का दोष था. अस्तु. और दासी की इतनी योग्यता है जो तुम्हें क्षमा करे ? छिः ऐसी बातें कह के क्यों मुझे कांटों में घसीटते हो ? (आंसू गिरे)

अभय०—(अश्रुमार्जन करके) प्रिये ! प्राणेश्वरी ! अब प्राण रहते कभी क्षण भर भी तुम से न्यारे न होंगे जो भया सो भया अब मन से खेद दूर करो ।

चं०ल० – (प्रसन्नता से) मैं नहीं जानती थी कि मेरा फिर भाग्योदय होगा, नाथ ! दासी को अब क्या कष्ट है ? श्री चरण के दर्शन मात्र से सब दुःख दूर हो गये. देखो मैंने तुम्हे छोड़ के कभी स्वप्न में भी पर पुरुष का ध्यान नहीं किया. वाह ! तो भी तुमने खूब अग्नि परीक्षा की. (गुलाब की ओर दिखा के) पर इस ने मेरी बड़ी रक्षा और सहायता की यह मेरी जननी के समान है।

अभय० – गुलाब ! मैं भी तुम्हे जननी की भांति मानता आता हूं. आज से तू दासी कर्म से मुक्त भई घर वालों की तरह रहा करेगी और यह ले (सोने की अंगूठी दे देता है)

गुलाब० – (ले के) बबुआ। लौंडो ने तो अपना निमक पाला था, इस मे विशेष बात क्या भई. दासी का करम बड़ा टेढ़ा होता है

चं०ला – नब क्या ऐसी होती है ? हां मैं भी आज तेरी बाञ्छा पूरी करूंगी यह ले (सोने का हार उ-तार के दे देती है) ।

गुलाब०—बहू रानी ! चिरजीओ, दूधन नहाव पूतन फलो यह जुगल जोड़ी सलामत रहे. अच्छा आज ऊपर बिछौना कर दूं. (गई) ।

चं०ल०—नाथ ! शूद्र कुल में यह रत्न है ।

अभय०— निःसन्देह गुलाब से दासी कुल गौरवान्वित भया अस्तु रात बहुत गई. चलो प्यारी शयन करें ।

चं०ल०—वाह ! मैने जो चर पच के भोजन तयार किया है जरा खा लो तो मैं भी जूठन पाऊं ।

अभय०— अच्छा चलो. (दोनो गये)

पटाक्षेप ।

इति चतुर्थ अङ्क ।

पंचमाङ्क ।

(एक उद्यान मे मदन मोहन—रजनी कान्त—और छक्कूलाल २विश पर बैठे है)

म०मो०—दिमान जी ! आज बहुत ज्वर चढ़ा है. गांठ २ में पीड़ा और सिर घूमता है ।

छक्कू० –(हेपत् हस के) जी हां हुजूर ! मौसम खराब है. यही हालत मेरी भी है. कल रात को आपने कुछ श्रम किया होगा !

रणनी०—अम क्या करेगा. दुधाही ऐसी चली है. हमारा
शरीर आज अस्वस्थ हो रहा है।

म०मो०—समझा था कि बाग़ में कुछ चित्त लगेगा
चलटा घुमटा आने लगा।

रणनी०—ठीक है. सुना है कल बाबू अभय कुमार आगये

म०मो०—(कानों पर हाथ रख के) राम! २ अब उस
का खयाल जी से दूर करो।

छकू०—(मन में) क्या अब भी कुछ हवस है? (प्रकट
ठीक है अब बाज के मुंह का निवाला कौ
लेगा ?

रणनी०—किसे अपनी जान भारी पड़ी है (स्वगत) अभी
तक हाड़ २ दर्द हो रहा है।

म०मो०—(स्वगत) यह ईश्वर ने बड़ी दया की कि
हमारा हाल कोई नहीं जान सका।

(सिर मुंडे गुलफाम का प्रवेश)

(सब उसकी सूरत देख के हंसते और आश्च-
र्य्यित होते हैं)

म०मो०—गुलफाम! हिन्दू तो मुसलमान होते थे पर मुस-
लमान को हिन्दू होते आजही देखा. क्यों मियां!
किसी आर्य्य समाजी ने तो चुटिया रख के हिंदू
नहीं बनाया है?

रणनी०—जी वह तो खुद हिन्दू नहीं है।

म०मो०—(गु० फा० से) तो किस तीर्थ में मूंड मुंडाया ?

गुल०—जी हुजूर, अर्ज करता हूं:—

सवैया ॥

घोड़ा हुजूर बने जिहिं ठौर,
सुधीन लगाम लगाके ललाम है ।
छक्कू छली हू छके जितही,
बनि भेंड़ा भली विधि कीनो सुनाम है ।
मूछनि दीप धरयो रजनी थिर,
चित्र विचित्र अनेक कलाम है ।
त्यों तेहि तीरथ राम बन्यो,
सुठ सुघड़ भसुवड़ यही गुलफाम है ॥१॥

(सब अट्ट हास्य करते हैं)

शा०सें०—क्यों यह बात है ? भई वाह ! इस छतीसी स्त्री ने सब को ठीक किया अहा ! बाबू साहबही वेजूबावले का रूप बने थे. खूब किया. अब हम लोगों की आंख फूटी उत्तम फल मिला. सती पत्नी का ऐसाही प्रताप है ।

छक्कू०—सरकार ! यह चोट कयामत तक स्मरण रहेगी ।

रजनी०—ठीकही है "करै बुराई सुख चहै, तो कैसे सुख होय ?"

गुलफाम०—जैसा काम वैसा इनआम——

(नेपथ्य में)

इसका है "चौपट चपेट" नाम

सब०—(सुनके घबरा कर) अरे ! बाबा विशुद्धानन्दजी आते हैं. भागो, नहीं तो शाप दे देंगे तो पता भी न लगेगा. (एक ओर से यह चारों जाते हैं। और दूसरी ओर से स्वामी विशुद्धानन्द सरस्वती और बाबू अभय कुमार आते हैं) ।

विशु०—"अन्तः प्रच्छन्न, पापानां शास्ता वैवस्वतोयमः"

अभय० – सत्य है, उत्कट पाप का फल पापियों को यहां भी मिलता है अतएव "इहैवनरकः स्वर्गः" कहा है।

विशु० – कहा भी है:—

त्रिभिर्वर्षैस्त्रिभिः पक्षैस्त्रिभिर्मासैस्त्रिभिर्दिनैः ।
अत्युत्कटैः पुण्य पापैरिहैव फल मश्नुते ॥१॥

अभय०—धन्य ! प्रभो ! श्रीमान् के चरण के प्रताप से सत का सतीत्व बच गया, और मुझे पुनः हृदय रत्न प्राप्त भया. यह गुरू का अनुग्रह है.

विशु०—बेटा ! सर्वशक्तिमान जगदीश्वर अपने भक्तों की सर्वदा रक्षा करते हैं. उन्ही के अनुग्रह से हम लोग भी शक्तिसंपन्न हैं तुम्हारा मंगल भया, यह हमें परमानन्द है, और जो कहो सो करें.

अभय०—श्रीमान की दया दृष्टि से दासको सब कुछ पर्य्याप्त है किन्तु यदि अतिशय कृपा है तो कुछ प्रसाद दीजिये।

विशु०—हां ! पुत्र ! निःसंदेह मांगो? भगवान भवानी पति तुम्हारी वासना पूरी करेंगे.

अभय०—गुरुवर्य्य ! विशेष कुछ नहीं केवल यही किः—

सेवैं सती पति पाद पङ्कज सत्य धर्म निभावहीं।
लिय हिये गहि प्रेमसों प्रिय प्रेम धार बहावहीं ॥
राजा प्रजा निज धर्म रत ह्वै सुयश छिति छिन छावहीं।
चहुं ह्वैं सुमंगल मंगला महि सस्य बहु उपजावहीं ॥१॥

विशु०—तथास्तु। (दोनों जाते हैं)

धीरे २ परदा गिरता है, नेपथ्य में बाजा बजता है, और रंग भूमि में पुष्प वृष्टि के संग आनन्द छाजाता है।

इति पंचमांक ।

इति ।

२१

श्रीहरिः

कलिकौतुकरूपक ।

जिस में

बड़े बड़े लोगों की बड़ी बड़ी लीला

विशेषतः

नगरनिवासियों के चरित्र दिखलाये गये हैं ।

प्रेमपुष्पावली, मन की लहर, शृङ्गार-
विलास जुआरी खुआरी आदि के लेखक
ब्राह्मण सम्पादक ईश्वरावलम्बित प्रसिद्ध
प्रतापनारायणमिश्र लिखित

और

श्रीमदनचन्द्र खन्ना की आज्ञानुसार
बाबू रामकृष्णवर्म्मा भारतजीवनाध्यक्ष
के व्यय द्वारा मुद्रित ।

काशी भारतजीवन यन्त्रालय में मुद्रित हुआ ।

1904

दूसरी बार १०००] [मूल्य =)

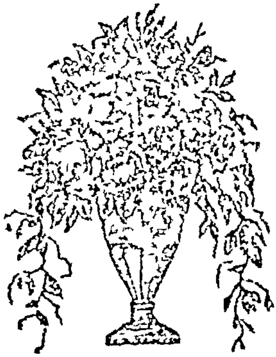
॥ समर्पण ॥

प्यारे !

क्या यह कौतुक न देखोगे ? जिसके अभिनयकर्ता बहुत, पर दर्शक केवल हमीं तुम । वाहरे खेल । देखनेवाले तो आँखें मूंदे बैठे हैं, तुम भी न देखोगे तो यों ही भोर न हो जायगा । वाह तुम्हारे मन का न सही तो हमारी बात टालोगे ? अवश्य देखिए । अपने लोगों की कभी कोई बात टाली भी है कि आजही नई रीति निकालोगे । हाँ हाँ साच को आंच क्या ! यही तो चाहते हैं कि तुम तमाशा देखो और हम तुम्हें देखें !

माघ शुक्ल द्वितीया बुधवार
श्री हरिश्चन्द्राब्द १

तुम्हाराही ।
प्रतापमिश्र—कानपुर ।



देखो ! ! !

यह रूपक बहुत शीघ्रता एवं अव्यवस्थितचित्तता में लिखा गया है अतः इसके दोष क्षमा हो केवल आशय पर ध्यान रखिये ।

क्यों भाई सब प्रकार के ग्रन्थ बनाओगे पर आचरण न दिखाओगे ? इधर भी ध्यान दीजिए !

हम केवल लिखने मात्र को हैं सर्व्व अधिकार हमारे प्रेमाधार श्री बाबूमदनचन्द्र खन्ना महोदय को है हां कोई सम्मति दीजिए तो हमें पर पुस्तक लीजिए तो उन से,

ईश्वरावलम्बित मिश्र ।

नाटकपात्र ।

पुरुषपात्र ।

लाला किशोरीदास = नाटक का नायक और एक कलिकालिक भला मानुष ।

मुंशी शंकरलाल = उर्दूभक्त	किशोरी के मित्र ।
पंडित चंडीदत्त = बिगड़ैल दिहाती	
बाबू मायादास = अंगरेजी बाबू	

गप्पूमल = सीधा बनिया
ब्रह्मानन्द = एक पंडित
} किशोरी के परिचयी।

रसिकविहारी = किशोरी की स्त्री का एक मित्र

पदमचन्द्र = किशोरी का गोद लिया हुआ लड़का

बालगोविन्द = पदम का मित्र
कैंचासिंह = एक कुमारगी
शेरासिंह = तथा
भुशुंडीदास = बकुलाभक्त
प्रेमचन्द्र = सच्चा देशभक्त
शिवनाथ = प्रे० का मित्र हिन्दी पत्रसम्पादक
नब्बू = एक भंडुवा।

स्त्री पात्र।

श्यामा = किशोरी की स्त्री
चंपा = श्यामा की सखी
लश्करी जान = वेश्या।

श्रीहरि

कलिकौतुकरूपक ।

प्रेमएव परो धर्म्मः ।

नान्दी ।

जासु गुप्त कर्तव्य कछु समुझत न कोउ जान ।
हमरो तुम्हरो जगत को करै सो प्रभु कल्यान ॥ १ ॥

प्रथमदृश्य ।

[किशोरीदास के घर श्यामा चम्पा और बैठी है]

स्यामा—बहिन ! तूतो आज कल ऐसो बे मुरौअत हो गई है कि कुछ कहना ही नहीं । बराबर कपड़े पहिनती जाऊं हूं । ठहर ठहर कहती जाऊं हूं पर तू किस को सुनै है ।।

चम्पा—करूं क्या बीबी । वे पिराग जो जाने वाले थे इसी से जल्दी थी नहीं तो भला तेरे बिना चली जाती ।।

स्या०—परी चल । मुझ से चाल करे है ! पेवू खरीदने में जल्दी न थी, परकम्मा के पास तुलसिया से पञ्चायत

करने में जल्दी न थी, मेरी राह देखने में जल्दी थी।।

चं०—(नम्रता से) मेरी रानी तू नाहक उदास होय है! रास्ता जाने उन्हें रेल पर की जल्दी ही थी पर तुलसिया कई दिन पीछे मिली थी तू ही बता उस से न बोलती तो बनै थी ?।

स्या०—हां भाई। उस से न बोलती तो न बनती, उनको धीरज न देती तो बनती, बिचारे कितनी दूर से ***

चं—(भौं हिला के) क्या बकै है। कौन बिचारे।।

स्या०—(मुस्किराके) वही ई ई जो राह भर ठिठक ठिठक कर चलैं थे, कभी कभी बहाने से खड़े भी हो रहै थे, उड़तो हो जाय है। जाने है मैं कुछ जानूं ही नहीं! (ग्रीवा हिला के) तू लाख छिपावे तो क्या। कहीं प्यार की आख भी छिपै ? अहा तू पैकू ले थो उसके पास वाले बिसाती की दुकान की याद कर। परकम्मा की याद कर। क्यों और बताऊ। खोरे की के दिए हैं हि। हि। हि। जो तो चाहै था कि वहीं पर सब कलई खोल दूं पर मैंने कहा नहीं जो इस वखत न बोलें यह रंग पर है।।

चं०—(स्वगत) यह तो सब पते ही की कहै है अब कैसे छिप सकै है। और इस से छिपाना ही क्या (प्रगट) फिर भाई आंखैं तो देखनेंही को बनी है। पर तू धनी

का साँप करै तो क्या बस ! वही कहावत है कि चोर को सब चोर ही दीखै है ।।

स्वा०—सच कहै जो भरी भीड में देखते देखते राह चलतों के मन चुरावे उससे बढके चोर कौन ।।

चं०—और जो खास घरवाले से असल बात चुरावे सो ?।

स्वा०—सो तो बीबी दुनियां की रीति ही है । जो जैसी करै सो तैसी पावे । वे मेरे आगे भगत बने हैं तो मै भी उन्हें छकाऊं हूं इसमें क्या ? पर तू तो मुझी को ठगै है फिर भला चोर मैं कि तू ।।

चं०—अरे बीर एक बात थी, नहीं तो तुझ से मैं कुछ छिपा सकूं हूं कि मुझ से तू ? कहीं दाई से पेट छिपै है । यों तेरे लाला ऐसे भोले भाले भलेही न जानो !।

स्वा०—बीबी की बात । इस जमाने में कोई भोला भी होय है । सब जानै है कि जवानी दिवानी कहावै है, जब हमी को चैन नहीं है तो बेयरवानी को कौन ? पर जब तक एक बात परदे में रहै अच्छा ही है न !।

चं०—(आक्षेप से) वाह रे परदेवाली ।।

स्वा०—नहीं तो क्या तेरी तरह मन्दिर मन्दिर का चन्ना-मित लेती फिरूं हूं ?

चं०—नहीं तू तो पुजारिन बनी घरी में बैठी रहै है न ! हि । हि।।

स्वा०—(मन में) जान पड़े है पुजारी जी को खबर इसे भी है। पर जबतक आपही न खोलें तबतक का परोजन ? (प्रकाश) बहन यह तो होतीही रहैगी पर यह तो बताओ तुम सन्तान की फिकर क्यों नहीं करो हो अभी तो उमर है ।।

चं०—जी ई! फिकर तो सब करैं है पर अपने बस की बात है ? जनमपत्तरी भी बहुतों को दिखाई पाठ पूजा भी कई बेर कराई वे आज दोसे रुपया देने को तिआर हैं पर करैं क्या ? ए जी। हम तो जानैं हैं सब भाग से ही होय है। हमारे तौ तीन पीढ़ो से गोदही लेते आवैं हैं सो देखो जायगो अभी तौ हम आप लड़का हैं।

स्वा०—(मनमें) लड़का भी ऐसो कि खिलौना खेले है। कोई ले के न पड़े तौ नींद न आवे (प्रगट) सुनैं हैं गंगाजी पर कोई बाबा जी आये है सो हाथ की रेखा देखैं है उन्हीं को दिखाई होती !

चं०—तू भी बाबा जी को जाने है ? भाई बड़े पहुंचे। एक दिन मैं गई सो कहैं क्या हैं कि सन्तान तौ लिखो है पर गिरस्त से नहीं—मै तो सुनके रह गई !

स्वा०—हिहिहिहि तौ तो ले रोज सेवा किया कर तेरे स-न्तान होगो, मैं कहूं हूं।

चं०—चल लुच्चो। हँसी ही में रहै है !

स्या०—हॅसी की बानही है—ले देखो तो—फ़कीर कहावें हैं, मडे २ तिलक लगावें है और ऐसी २ बातें करें हैं।

च०—अरी ऊपर से बहुत बने है वे सब ऐसेही होय हैं।

स्या०—और क्या। मेरे घरी में न देख ले।

चं०—भाई हमें तो ऐसा मिला नहीं है। अपने रुजगार व्योहार और कचेहरी दरबार ही में रहैं है—रोटी खाने और बारा एक बजे तक सो रहने के सिवा घर से कामही नही रक्खें है—मै चाहूं सो करूँ।

स्या०—(आपही) तभी तो तू खुली खिलै है (प्रगट) बहन यह तो हुआ पर यह तो कहो, मगा पर वाले कौन हैं ?

चं०—(मुसकराकर) क्यों क्या तेरा भी मन ?

स्या०—भला अच्छी सूरत किसे नहीं भावे।

चं०—हां रानी सूरत में तो मोहनी है, और इधर रुख भी बहुत करै हैं घर को तरफ से आवे भी हैं रोज! पर अभी तो गली घाटही की मुहब्बत है, देखूं हुलसिया कबतक (अंगड़ाई ले के स्यामा पर देहालेप)

स्या०—बहन हो तो भागवान्। (नेपथ्य में सीटी का शब्द सुनके स्यामा चकित होती है)

चं०—(स्वगत) मालूम होय है कोई इसी का मित्तर हैं तो हम काहे को बैठें (प्रकाश्य) ले रानी अब जाने दे कल फिर आऊंगी रात होती आवे है।

स्या०—बैठो बीबी – आज तो घर का भी डर नहीं है, (आंचल खींच के) पान खा ले फिर चली जाइयो।

चं०—(बैठती है स्यामा पान लगाती है—नेपथ्य में)

एक स्वर से—कहो यार। सब खैर है ना—अब तो कोई खरखशा नहीं रहा।

दूसरे स्वर से—हां भाई तुम्हारी दया है "कोटि विघ्न संकट विकट कोटि दुष्ट इक साथ। तुलसी बल नहिँ कर सकैं जो सहाय रघुनाथ" *।

(चम्पा का पान खा के प्रस्थान और स्यामा का नेपथ्य तक जाके रसिकविहारी के गले में हाथ डाले हँसते २ प्रवेश और दोनों का उपवेशन)

रसिकविहारी—धन्न भाग कि आज दरशन तो हुए हमने तो जाना था कि कहीं कल्ह की तरह न हो!

स्या०—कल्ह क्या तुम आये थे ?

रसिक०—भला आता क्यों नहीं ? मैं तो तीन बेर आया था पहिली बार सीटी बजाई पर कुछ फल न हुआ—फिर आया तो टहला किया बड़ी देर तक नग्गू खलीफा की दुकान पर बैठा गाया किया पर कुछ उम्मेद पूरी होने के लच्छन न देखे—फिर आया तो कुण्डी

---

* गोस्वामी तुलसीदासजी।

खटकाई भीतर से किसी ने कहा कौन है? तो चुपका चला गया !

स्त्री०—राम २। ऐसा जानती तो कहीं न जाती ! मै ता जानू थी कि आज मेले गए होंगे इससे मै भी दुर्गा देवी देखने चली गई !

रसि०—भला तुम जानती हो—मेलेठेले मे मेरा जी लगता है। हमारे ता तुम्हीं मेला हो "लाखों तरह को सैर तमाशा बहार हो। पर दिल वहीं लगे है जहा अपना यार हो *।

स्त्री०—(भाव से) यह हमें भी सिखा दो।

रसिक०—(भाव से) सिखलाई क्या दोगी ?

स्त्री०—(हँस के शिर झुका लेती है)

रसिक०—(स्वतः) अहाहा । "गज़ब करना है भोलापन किसी का" † सच कहा है "तही बाला ज़मीनो आ-समां हो जांयगे दम मे । उठाकर आँख ऽदा से जब वुह काफ़िर सर निगूं होगा" ‡ (प्रगट) अच्छा कहो (गलेमे हाथ लगाके लाखो तरह को इत्यादि कहता है)

स्त्री०—(नखरे से) कैसे । लाखों— तरह—की (शीघ्रता से) बहार हो ?

र०—(चूम के) यों नहीं (पुनः पाठ)

स्त्री०—(झिझक के) जाओ !

* कोई कवि। † कोई कवि। ‡ ग्रन्थकार।

र०—(सिर हिला के) क्यों प्यारी ! जो किसी के घर कोई आता है तो उसमे इसी तरह जाओ २ कहती हैं ?

स्या०—(लिपट के) यह कौन कहै है तुम तो ******

नेपथ्य में—किवाड़ खोलो भी भो !

रसिक०—(स्वयं) अब ! बुरा हुआ !!

स्या०—(अंगुली से इशारा करती है)

र०—(डरता हुआ चलते २ मन में) ऐसा न हो कि खुशाल के यहां कासा हाल हो ! अभी झाड़बाजी होने लगे तो कुछ न बने (गया)

नेपथ्य में—खोलो—(कुछ ठहर के) राम रमापति कर धनु लेहू । खैंचहु चाप मिटै सन्देहू ॥

स्या०—(आलस्य के स्वर से) आवैं हैं ऐं (स्वगत) हां घर से धन लेव और उसी कने जाओ इसमें सन्देह मिटा रक्खा है ! लाला । सब तुम्हारे दोहे समझूं हूं तुम डाल डाल तो मैं पात पात (जाना किशोरीदास के साथ आना और बैठना)

स्या०—(आलस्य से) बड़ी देर की । मै तो सो गई थी।

किशोरीदास—हां गोपीरमणजी की कथा में बैठ गया अहा क्या अच्छी बाँचते है कि उठने को जी नहीं करता ! !

स्या०—(आपही आप) उठने को जी कैसे करै। वो पर तो छुरेनिया रांड भुतनी हो के चिपटी थी ! क्यों पियारे

गोसाईं जी को बदनाम करो हो ? (प्रगट) क्यों नहीं ! एक तो भगवान की लीला । सो भी विरजवासियों के मुंह से—दिन को होती तो मैं भी जाती । (ठहर के) व्यालू रक्खो है ।

कि०—मुझे लाला प्रियाचरण ने जबरदस्ती खिला दिया है इससे भूंख नहीं है । और उन्हीं के यहां रहसमें जाना भी है, जागना पड़ेहोगा तो तबीयत बिगड़ जायगी । तुम खा लो ।

स्वा०—भला तुम्हारे बिना मैं कैसे खालूं ? धरम छोडूं ।

कि०—नहीं नहीं । हम कहते जो है । जाना है नहीं तो कुछ खा लेता । ।

स्वा०—दुपहर के गए तो अब आए हो रातभर को फिर जाओ हो लो इकल्ली मैं कैसे रहूंगी ? ।

कि०—पड़ोसी को भेजदूंगा और मैं भी जल्दी आजाऊंगा । पर गए बिना नहीं बनती आपस का वास्ता ठहरा ठाकुरजी का काम है । कोई डर थोड़ो है ? (जाना चाहता है) स्वा०—(प्यार से) तो भई जल्दी आइयो ! (शीघ्रता से) और मेरा हार ? ।

कि०—हां हां भूले ही जातेथे (निकाल के देताहै) पसंद न हो तो फिर भो सकता है—जाता हूं (चलते हुए मन में) अबतो रात भर को छुट्टी है ! यहभी हार के सबब खुश रहेगी ।

स्या०—भई जल्दी आइयो।

कि०—हां हां (प्रस्थान)

स्या०—(एक ओर से जाके दूसरी ओर से रसिकविहारी के साथ आती हुई) यह तो अच्छी बला टली, चलो ऊपर चलें रात भर को गया!।

र०—और लड़का?

स्या०—उः। लड़के का क्या। कहीं सुला दूंगी। चलो भी।

(दोनों का प्रस्थान और पटाक्षेप)

द्वितीय दृश्य।

(किशोरीदास का बैठक)

(किशोरी- ब्रह्मानन्द और गप्पूमल बैठे हैं)

गप्पूमल—तो पण्डित जी। जब डाकदरी दवा न थी तब क्या कोई आराम न होता था?

ब्रह्मानन्द—लाला यह मैं कब कहता हूं कि मरना जीना कोई औषधि रोक सकती है न मेरा यही सिद्धान्त है कि डाकदरी दवाही सदा सेवनीय है वरंच जब तक अत्यावश्यक न हो तबतक मद्यादिक अखाद्य वस्तुओं से सम्मिलित पदार्थों से आर्य्य जाति को घृणाही उचित है मेरा तो इतना मात्र कथन है कि आजकल भारत

के अभाग्य से विद्या लुप्तप्राय हो गई है अतः केवल उदरम्भर वैद्यों की बात न मान के अन्य उपाय से कार्य्यसिद्धि न हो तो उक्तौषधि का अवलम्बन दूषित नहीं है शास्त्र की आज्ञा है "शरीमाद्यं खलु धर्म्मसाधनम्"।

किशोरीदास—आप ठीक कहते हैं पर मेरी समझमें तो जब मरना हई है तो क्या आज क्या चार दिन पीछे। फिर क्यों ऐसी चीजें ग्रहण करें जो अपने यहां मना है।।

ब्र०—हां सच्चे धर्म्माभिमानी को तो यही समुचित है पर हमारे लाला लोग (मुसकरा) गृहस्थ ठहरे किस किस विषय का विचार रक्खें।

ग०—क्या महराजजी गिरस्त जान बूझ के जीती मक्खी खाते है?

ब्र०—यह तो न कहिये गृहस्थ तो आज काल होटलों में जाय के प्रत्यक्षही मद्यमांसादि भक्षण करते है उस से भी कुत्सिततर बिलायती शक्करका क्रय विक्रयादि करते हैं जिसमें निस्सन्देह हड्डी का संसर्ग है केवल आप ऐसे दो चार धर्मिष्ठों की बात और है।।

ग०—बाबाजी। धर्म का तो किस मुँह से नाम लें पर हां जहां तक हो सकता है जान बूझ कर बचा देते है।

कि०—यही चाहिए भी।

ब्र०—आपही ऐसे सत्पुरुषों से तो पृथ्वी स्थिर है, नहीं रसातल को न चली जाय!

कि०—हां पण्डितजी इसमें सन्देह नहीं है । आज काल लोगों ने पापकर्म को खेल समझ लिया है। इसी से तो दिन दिन नाश भी होता जाता है। (नेपथ्य में कुछ दूर-पर) बहार आई है भरदे बादए गुलगूं से पैमाना।

रहे लाखों बरस साकी तेरा आबाद मैखाना* ॥

कि०—(स्वगत) आवाज़ तो बाबू मायादास की है, आए तो इक़रार पर, आः । इस वक़ इन कमबख़्तों ने बुरी काव काव फैलाई है (प्रकट) सुनिए पण्डित जी ! यह कलियुग का प्रभाव। गावेंगे भी तो वही मद्य और वेश्याओं के गीत। नारायण का नाम किसी बहाने न निकले। (मायादास का औचक प्रवेश।)

ब्र०—हां यही तो गाना रह गया है।

मायादास—क्यों पण्डितजी । गाना क्या कोई बुरा काम है ? यह तो सामवेद का अंग है।।

कि०—अहा ! आप गाते थे ? तो क्या बुरा है, अंगरेजी पढ़े ही न।

मा०—तो क्या। अंगरेज़ी पढ़ना पाप है ? ॥

कि०—पढ़ने को कौन कहता है कि पाप है पर अङ्गरेजी ढंग के लोग पापपुण्य का विचार ही कब करते हैं! कहने से बुरा मानोगे भला और गीत तुम्हें नहीं आते ?

* मूनिस।

मा०—ओह। निकल गया इससे क्या होता है ?।

कि०—क्यों नहीं होता। सब पाप पुण्य मन वचन और कर्म्महो से होते हैं न। परमेश्वर का नाम लेना धर्म है, तो अपावन नाम लेना पाप क्यों नहीं ? हिन्दू हो के ध्यान नहीं रखते, भई धर्म की गति बड़ी सूक्ष्म है जरा विचार कियाकरो।

मा०—(स्वगत) पण्डितवा को बह जाने दो बचा। फिर बतावैंगे (प्रगट) थैंक्स। आगे से ध्यान रक्खूंगा, पर भई इतना विचार तो भला हम ऐसों से कहां हो सकता है यह तो आपही से भक्तों का काम है !

म०—(मन में) इसकाल में तो इतना आग्रह किस से हो सकता है अवश्य कुछ दाल में काला है 'निस्सारस्य पदार्थस्य प्रायेणाडम्बरो महान्'(प्रकाश) तो लाला साहब! मुझे आज्ञा हो, तो मैं जाँउ सन्ध्योपासन का समय निकट है।

ग०—(स्वत:) अहा धन्य है। धर्म का विचार हो तो इतना हो।

कि०—ज़रा ठहरिए। पान तो खाए जाइए (नेपथ्य की ओर देख के) महरा।

मा०—पान तो मेरे पास है (निकाल्त के म० और ग० को देके कि० से) लीजिए !

कि०—मैं तो आप जानते हैं बाज़ार का पान नहीं खाता।

सा०—हां हां। मुआफ़ कीजिएगा (आपही आप) तुम तो खाओगी बचा लश्करीजान का जूठा। आने तो दो।

नेपथ्य में उच्चस्वर से—आया लालाजी!!!

कि०—अब काम नहीं है (शिष्टाचार के उपरान्त ब्रह्मानन्द का जाना और चण्डीदत्त और शंकरलाल का आना)

चण्डीदत्त—(गप्पू को देखके आप ही आप) यो सार कंटकु कहां ते मरा आय।

शंकरलाल—लालासाहब। कुछ तख़लिये में अर्ज़ करना है।

कि०—कहिए न। सब घरी के तो हैं।

ग०—मुझे हुकम दीजिए तो भगवती के दरशन करआऊं!

कि०—जाने कहूं। कभी कभी आया तो कीजिए।

ग०—साहब आप ऐसे सज्जनों के दरशन बिना भाग कहां होते हैं (गया)

कि०—हां मुंशी जी! अब फर्माइये क्या चाहते थे?।

शं—कुछ नहीं जी गपुआ को दफा करना चाहते थे (धोती से बोतल निकाल के) यही कहना था! कहो! और सब मुआमिला तैयार है न?

कि०—सो तो मीर साहब चारही बजे रख गये थे (नेपथ्य से मांस की रकाबी लाता है)

चं० - फिर का झक मारे का देर करथौ!

कि०—सिर्फ उन्हीं की देर है (नेपथ्य में कड़ों का शब्द सुन के) लीजिए। अहा! तन में जान आ गई फिर पांव की आहट सुनकर' यार ही तो खुशनसोब।

(लश्करीजान और नब्बू का प्रवेश)

लश्करोजान—कौन खुशनसोब है बेटा?

शं०—बस "लब पर है जिसके जाम बगल में हबीब है।
उस के सिवाय भी और कोई खुशनसीब है?"

सब—यह इनके बेटा बोले ह। ह। ह! ह!

चं०—तो फिर 'अब बिलम्ब केहि काज'।

लश्क०—इस भॅडुए को गँवारो बोली न गई।

चं०—तौ का। हम तुरुक आहिन?

शं०—क्यों साहब! हमलोग तुरुक है जो उर्दू बोलते है?

चं०—उर्दू छिनारि कै बोलिया सब सार तुरके आहिन।

(सब हँसते है—शंवारलाल लज्जित होते हैं)

कि०—तो भाई किवाडें बन्द करो अब देर नाहक है।

नब्बू—मै हुजूर लगाता आया हूं।

सब—हहह सदा से ....(सब खाते पोते और नहकते हैं।)

लश०—(अपने पात्र में चण्डोदत्त को पिला के) अब तो बचा तुरुक हुये?

चं०—ई खिरिया। हम तुरुक, हमार पुरखा तुरुक! कौन्यो सारे का मिलै कहां?

कि०—क्यों जानसाहब! हमको नहीं?

ल०—तुम्हारा ? (उपानह प्रहार) यह है (सब हँसते हैं)

कि०—अहाहा । खोपड़ी तर हो गई । पुरखे तर गए ।।
(लिपट के) 'अजब लुत्फ़ है यार की जूतियों का'।

शं—मैं मुश्ताक़ हूं प्यार का ।

लश०—'जूतियों का । तो ले ।' (प्रहार—सब हँसते हैं)

मा०—भई सच तो यह है कि इसका सा मजा किसी में नहीं । अगरचि हम एथीष्ट हैं खुदा और नर्क वैकुण्ठ वगैरह को नहीं मानते सिर्फ़ लोगों के दिखलाने को चन्द बातें हिन्दुइज्म की सी रखते हैं पर इस वक्त सच्चे जी से कहते हैं कि अगर इस जिन्दगी में या मरने के बाद कहीं कोई मज़े की हालत है वैकुंठ मुक्ति या हैविन जो चाहे उसे कहो तो इसी वाइन में है और कुछ हो अपना तो माटो यही है Eat drink and be merry, tomorrow we shall die.

शं०—दरीं चि शक ! 'वह चीज़ जिस्के लिये थी हमें बिहिश्त अज़ीज । सिवाय बादए गुलफामें मुश्क बू क्या है' 'जिसने न पी शराब वह इनसानही नहीं; अगर सच पूछो तो यह एक ऐसी उम्दा चीज़ है जो इन्सान को फ़िरिश्ता बना देती है, शराब को वही बुरा कहते हैं जो दिल के साफ नहीं होते 'जाहिदों को इसलिए मैं पीने से इनकार है । ता न इन बदबातिनों के खोल दे जौहर

शराब।' इसके न पीनेवाले सिर्फ़ ज़िन्दगी की लज़्ज़तही से महरूम नहीं रहते बल्कि उकबा भी बिगाड़ते हैं 'दोज़ख ज़रूर जांयगे मुनकिर शराब के। आतश से कब बचा है कोई ग़ैर आब के'।

सब—अहाहा। क्यों नहीं। बेशक।

कि०—यह तो जाहिर बात है, बराण्डी में अंगली डुबो के दिये में दिखाओ शराब खुद जल जायगी उंगली में आच न आने देगी—भाई दूसरा दौर भी न चल जाय।

सब—हां यार। (पुन: पान और उन्माद-प्रदर्शन)

शंक०—(पात्र भर के) भई वाह। है मए सुर्खकी यों जलवा गरी शीशे में। जिस तरह कोई उतारे है परी शीशे में।'

मा०—(लश्क० के गले में हाथ डाल के) अबे परी शीशे में नहीं। बगल में।

कि०—भई बड़े अहमक़ है जो इस्को निन्दा करते है नहीं तो जिसे बड़े बड़े देवता, ऋषि, मुनि, पीर पैगम्बर सदा से पीते आए है वह निन्दाके लायक है? और कुछ हो। पाप पुण्य नुकसान फायदा चाहे इसमें लाखहो पर मज़ा ऐसा है कि सब भुला देता है। हमको लोग भगत जी कहते है पर इसवक़् तो 'जात पात कंठी तिलक धर्म कर्म तन प्रान। लोक और परलोक सब बोतल पर कुरबान'।

शं०—अजी अपना तो यही अक़ीदा है 'करे हज़ार तरह

चं०—भाई घर में सिरिफ़ पोले। पर मज़ा बज़ारे मां है।

सब०—हां हां! हां! तो चलो न।

कि०—बेशक! यहां गरमी भो है—बग्गी मँगावें!

शं०—अजी चले भी चलो! कौन देखता है? नहीं तो ए: (माया को गिरा के उसके पांव अपनो कमर में लगा के वेश्या को उस्को छाती पर बिठा के चण्डी से) हां हँाको बग्गो। (सब हँसते है।)

कि०—राह में न बोलना। कोई मिले तो बात न करना। और दूर निकल चलो जहा कोई न देखे!

शं–हां ठीक है—'तब लुत्फ जिन्दगी हो जब चम्न हो चमन हो। ऐसी नज़र हो साकी पहलू में गुलबदन हो'। अजी नहीं। और कोई देखेगा भी तो क्या जानेगा कि शराब पिए है?

जवनिकापतन।

तृतीय दृश्य।

सड़क और बाग़।

(पदमचन्द किताबों का बस्ता लिये चलता हुआ)

पदमचंद (आपही आप) कल हमारे दोस्त गनेन्द्रो बाबू ने जो कहा था कि स्कूल लाइफ़ बड़ा अच्छा होता है, हकीकत में यह मज़ा और उमर में काहे को होता

होगा। अभी सिर्फ आठ बजा होगा पर हम नक्शा देखने के बहाने खा पी के दुरुस्त हो आए। अब तीन बजे तक हम चाहे जहां जायं चाचा साहब के हिसाब पढ़ो रहे हैं बल्कि चार बज जाय तो भी कह सकते हैं कि नया हिसाब सीखते रहे। खच की कमी ही नहीं, जहां किसी दोस्त से कोई चमकती हुई किताब मांग के घर में दिखा दी जो चाहा सो ले लिया। कबूतर बुलबुल और पतङ्ग वगैरह का खर्च उन दोस्तों से निकलही आता है जो हमें प्यार की नज़र से देखते हैं! हम जिस से जिस चीज को फरमाइश करें भला वुह इनकार कर सकता है? क्या स्कूल में क्या घर में क्या मुहल्ले में क्या शहर में जिधर देखो हमीं हम तो है! स्कूल में तो हमें कोई गाली भी दे तो थर्डक्लास के स्टुडेण्ट मियां आशिकअली उसे कच्चा खा डाले! घर में चाचाजी से तो खैर दो दो दिन मुलाकातही नहीं होती पर चाची हमें कोई फूल की छड़ी से छुवे तो उसे कोस कोस मार डालें! आहा! हम लाखों गाली देते है तो भी जी से ज्यादा चाहती है! बाज़ार में कोई हमें टेढ़ी आंख से देखे तो सही—उस्ताद लट्ठासिंह लट्ठ पी लें! पचासों लावनीवाज जो उनके चेले हैं मानो हमारे गुलाम हैं जिसकी तरफ़ हम जा पड़ें कोई भांग लिये हाज़िर है कोई इमिरती लिये खड़ा है कोई रबड़ी

लिये मोजूद है । क्यों नहीं ! 'गैर को अपना बनाना कोई हम से सीख जाय' (सोच के) पर हाय राजा गम्‌ू ! एक तुम्ही हमें अब तक बातों में टालते हो ! हम घर से जो कुछ चुराते है तुम्हीं को नज़र करते है, यार लोगों से जो कुछ लाते है तुम्हीं को खिलाते है पर तुम नहीं पसीजते । हाय रे तेरे चिकन के कुरते ! हाय रे तेरी बांकी टोपी ! हाय रे तेरे गाल का तिल ! जी चाहता है तुझे दम भर आँखों से दूर न करें ! याद रक्खो तुम्हें राह पर लाके न छोड़ा तो नाम नहीं (कुछ ठहर के) आज तो पढ़ने जाने का दिल नहीं है ! बिहारी बाबू के बैठक को चलें वहां शतरंज में जो भी बहनेगा और कुछ लावेंगे भी क्योंकि वे हमें देखे जोते हैं । देखें कोई फ्रेण्ड मिले तो उससे अर्जी लिखवा के भेज दें—नहीं तो क्या डर है मा-ष्टरजी तो हमाराही दम भरतें है (बालगोविन्द बस्ता दाबे आके पीछे से पदम को आंख बन्द कर लेता है)

पदम—(झिड़क के) कौन है बे । छोड ।

बालगोविन्द – क्यों रज्जा गाली ! अच्छा ! (छोड़ देता है)

पदम—नहीं यार । हमने जाना शुबरतिया है (हँस के) दोस्त एक इल्‌नेस की अर्ज़ी तो लिख दो—आज तो सैर करने का इरादा है !

बाल०—हमारे यहां आने कहो तो लिख दें ।

पदम—तुम्हारी बात से इन्‌कार किस साले को है ।

बाल॰—(बस्ते से सामग्री निकाल के लिखता हुआ) तुम्हारा काम तो हम बड़ी खुशी से करेंगे—कहो तो हम भी हाज़िरी लिखा के छुट्टी ले आवें।

पदम—हां यार मजा होगा—तो हम बाबू के यहां मिलेंगे—अभी तो देर है ठहरो—जाना ! (दोनों वृक्ष के तले बैठते हैं)

बा॰—कल तो हमने तुम्हारे वास्ते मेला भर छान डाला पर तुम तो बाबू ईद के चाँद हो गये ! तुम्हारे गनेसी मिले थे। तुम्हें पूछते भी थे कल तो कुछ औरही ठाठ थे—

प॰—सच ! ! ! हम तो उन्हीं की फिकर में गये थे पर न पाया !

बा॰—हां हमने तुम्हें न पाया तुमने उन्हें न पाया सच कहा है। 'यों तो दुनियां में है सब कुछ क्या यहां मिलता नहीं। पर जिसे दिल चाहे वह आरामे जां मिलता नहीं।'

प॰—(नेपथ्य की ओर देख के) अरे यह तो चाचा आ रहे हैं तो छिप रहूं नहीं कहेंगे कहां फिरता है (प्रस्थान)

(किशोरीदास का प्रवेश)

कि॰—(आपही आप) हाय। आज गङ्गाजी पर भी दरशन न हुये। प्यारी। इतना तो न तरसाया करो ! देखें आज

मिघरानीजी क्या सन्देशा देती है, आसार तो अच्छे हैं पर गृहस्थ का वास्ता ठहरा, धीरेही धीरे होगा। इस वक़्त उन्हीं की तरफ़ चलें आज कुछ ज़्यादा लालच दिखाना चाहिये (बाल० को देख के) तुमने आज क्यों देर की? तुम्हारे दोस्त को तो घण्टा भर हुआ गये।

बा०—(सलाम करके) हां बाबू जी देर हो गई (कि० जाता है प० आता है)

पदम—तो जल्दी आना।

बा०—हां जी ग्यारह बजे तक आवेंगे। पण्डितजी का सबक़ भी तो याद नहीं है—भई हिन्दी पढ़ने में तो दिल नहीं लगता—कोई मज़ेदार बातही नहीं।

प०—तो उरदू क्यों नहीं पढ़ते—हमारी तुम्हारी क्लास साथ ही पड़ती है मज़ा रहेगा—अहा। चहारदर्वेश वाला यह शेर मेरे जी में खटकता है 'नहीं मुहताज जेवर का जिसे खूबी खुदा ने दी। कि जैसे खुशनुमा लगता है सब को चाँद बिन गहने'।

बा०—वाह क्या कहना है—उरदूही पढ़ेंगे (जाता है, पद० टहलता है) (नेपथ्य में) 'क़द छोटा हस्तो पेशानी आँख रसीली चेहरा गोल। किसी तरह से, सनम गोशे में जो की घुड़ी खोल।'

प०—(मन में) मालूम होता है कोई आता है स्कूल की तरफ़ चलें, नहीं छेड़ेगा। (चलना नाट्य करता है)

(कैंचासिंह का प्रवेश)

कैंचासिंह—(स्वगत) आज भज्जू बाबू से बारा आने पैसे मिले है भई ! भैरों बाबा उसे जीता रक्खे, बिचारा अब तक माने जाता है और तो पुराने लोग जानो बोलते सरमाते है - साले सयाने क्या हो गए हैं चूतड़ों से से बात करते है । पर वाहरे कैंचासिंघ । तुम्हारे सामने सभो की आँख भपतो है (पद० को देख के दूर हो से) छित् । छित् । छित् ! वाह राजा पद्दो !!! मरते है । 'ज़रा इधर रुख फेर सितमगर ओ कालो जुल्फों वाले । ओ बेदरदे, इधर टुक देख तु क्यों मारे डाले ।' (पद० फिर के देखता है, यह छातो पर हाथ धर के) रज्जा । मर गए । देखो कब से तुम्हारे वास्ते हैरान है इतनो रुखाई तो न किया करो और क्या ! (हाथ जोड़ के) 'खुदा के वास्ते मिलिए किसो करीने से । मैं खाक छान रहा हूं कई महोने से ॥' (पद० चलता है) भागो ना। सुने जाओ बाबू !!!

प०—(चलते चलते बेपर्वाही से) स्कूल को देर होती है जो!

कैं०—तेरे स्कूल को ऐसो तैसो ! हम किसो स्कूलवाले को डरते है। (शोघ्रगति)

पदम —भई देर होती है (बढ़ता है)

कैं०—(दौड़ के हाथ पकड़ के) कहते जाते है सुनेजाओ सुनतेहा नहीं—ऐसे—

पद०—(सिटपिटाने का नाट्य करता हुआ स्वत;) अब इससे कुछ नहीं चल सकती। अभी नरसों मनुआ को चपतिया चुका है। यहां इस वक्त हमारा हिमायती ही कौन है! जीतेंगे थोड़ी!।।

कैं०—(खूब घूर के) बाबू डरते क्यों हो। क्या कोई खाये लेता है। कोई साला तुम से बोले तो आँखें निकाल लें! तुम जानते हो कैंचासिंह किसी से डरते नहीं, पर राजा! तुम्हारे तो तावेदार है। और तो क्या है हुकुम हो तो सिर काट के रखदें (गले में हाथ डाल के) हम से तो न फटे फटे फिरा करो – देखो हां।

पद०—नहीं बाबू तुम से तो हमें किसी तरह इनकार नहीं है पर (हाथ जोड़ के) मिहरबानी करके राह में न छेड़ा करो।

कैंचा०—फिर क्या करें बाबू! बीस २ चक्कर लगाते हैं मुहल्ले मे तुम्हारे दरशनही नहीं होते! हमारे घर तुम आते नहीं, फिर भला राह में भी न बोलें तो दिल मानता है! आया करो राजा! हम भी तुम्हारी सब तरह खिजमत करेंगे।

पद०—(स्वगत) यह मौका तो इसी की सी कहने का है, नहीं करेंहींगे क्या। (प्रगट सलज्ज) नहीं आया करेंगे अब जाने दो।

कैं०—ज़रा बैठो। फिर जाना (बलपूर्वक बैठाता है) नहीं आज न जाओ तो कोई हर्ज है ?

पद०—(स्वगत) जांयगे हई नहीं इस से क्यों बिगाड़ें जब तक बालगोविन्द आते हैं इसी के जी की सही। कुछ लिए थोड़ी लेता है। उलटा खुश होगा—(प्रगट) हर्ज तो कुछ नहीं है जुर्माना देना पड़ेगा ! गैरहाजिरी लिखी जायगी।

कैं०—क्या जरीमाना होता है बाबू ?

पद०—(मन में) इस वक्त जो कहेंगे देगा (प्रकाश) चार आने !

कैं०—दे देना बाबू आज मुद्दत में मिले हो हमारी तुम्हारी पहिली जान पहिचान हुई है हमारे ही उधर चलो (कुछ देता हुवा मन में) यह तो हमें मालूम है सुमना को कई दफे एक एक आना दिया है पर क्या हुवा ठेक जमती है।

पद०—यह क्या करना है ? यह तो है।

कैं०—है नहीं तो क्या बाबू। तुम्हारे कुछ कमी है ! पर रहने दो, चार आने तो जरीवानेही के हुए बाकी खर्च के काम आवेगा हमारी तुम्हारी मुहव्वत है। कभी हमें खिलाओगे तो क्या इनकार करेंगे।

पद०—यह तो ठीक है ! पर पर वक्त काम क्या है !

कैं०—काम न सही—हमारी खातिर से रहने दो।

पद०—खैर (जेब में रखता है।)

कैं०—(मन में) अब क्या है ! (प्रकट) यहां क्या करते हो ! चलो कहीं सैरही करैं बाबू ।

पद०—हां ज़रा ठहरो—एक लड़के की राह देखते हैं—आ ले तो चलैं ?

कैं०—खैर यहां क्या है। 'राजी हैं हम उसी में जिस में तेरी रजा है' आजाने दो फिर बाग चलैंगे (नेपथ्य की ओर देख के मन में) अरे ! यह कौन ! शेरवा। बुरा हुवा, ज़रूर छेड़खानी करेगा । अभी कल तकरार होते २ बची है । भई यहां से टहलें, जीतेंगे हई नहीं नाहक में यार के आगे किरकिरी होगी (प्रगट) आओ राजा तब तक चुनिया की दुकान से पानही खा आवैं।

पद०—तुम ले आओ, हम यहीं बैठे है।

कैं०—(मन में) यह मौका जिद्द का नहीं (प्रगट) तो जाना नहीं। हमारी कसम (गया)

पद०—(उस्के चलते) नहीं जी ! तुम्हारे बिना। (स्वगत) यह तो कोई अजब अहमक मालुम होता है । एकही दिन में यह बेतकल्लुफ़ी ! पहलवानी न दिखावै तो बचा को उंगलियों पर नचाऊं।

(शेरासिंह का प्रवेश)

शेरासिंह—(आप ही आप) फुलुआ साले से धमका के चार आने लिये थे सो तो गद्दीखाने के काम आये ! अब

और खर्च की टट्टी जमाना चाहिये (पद० को देख के) है। अभी इसके पास कैंचा बैठा था सो कहा उड़ गया! अच्छा चचा फिर समझेंगे। तब तक आओ उस के यार ही से कुछ ऐंठें (पास जा के) बाबू इसवक्त कुछ दिलाओ। हम नसे में है।

पद०—भाई इस वक्त मेरे पास क्या है ? पढ़ने जाता हूं। फिर दूंगा।

शेरा०—अबे क्यों उड़ता है। शेरासिंह अंधे नहीं है, अभी अपने चहोते से लिया है ! मैं देखता रहा हूं! बोल देता हैं कि किशोरी नाना से सब पते की कहूं जाके।

पद०—(मन में) इससे यों न गला छूटैगा (प्रकट) शेरासिंह । तुम तो ऐसे बिगड़ते हो कि कुछ कहना ही नहीं यह ॥) है सो लेव ! घर में कहने की क्या जरूरत है ! (देता है)

शे०—अच्छा यही सही लाव (चलता हुआ आपही) वाह रे । खोपडीभंजन ! तुम्हारी ही बदौलत तो हम बास्साह है । 'न हाकिम का खटका न रैयत का गम। अरे वाहरे लड़ और वाहरे हम' ले अब ।) और किसी से मिल जांय फिर तो शेरासिंह दुनिया को नहीं समझते (जाता है) (भक्तों के भेष में भुशुडोदास का प्रवेश)

भुशुडोदास—(माला झटकाते हुये स्वगत) अहा ! सच

है 'बाना बड़ा दयाल का तिलक माल औ छाप'। क्यों न हो ! परलोक में तो जो सुख होंगे सो होहींगे पर यहां हम से बढ़ कर आनन्द हो किस को है । पढ़े लिखे तो हम रामजी का नामही है पर बड़े बड़े पंडित आदर करते हैं, जिस लाला की दुकान में हम जा बैठें आइये भगतजी आइये भगतजी कहता- जीभ सिखाता है ! सीताराम सीताराम सीताराम । हां थोड़े से नई उमर के अंग्रेज़ीबाज हमारे चरित्रों पर शङ्का करते हैं। अरे हरिदासों के चरित्रही क्या । सुग्रीव के चरित्र कैसे थे ! विभीषण के वैसे थे । सीताराम ३ ! ठः ! 'राम २ कहि जे जमुहाहीं । तिनहिं न पाप पुंज समुहाहीं' फिर हम तो सौ सौ माला फेरते हैं हमें पाप बनाही रहा । और पाप पुण्य के करनेवाले हम कौन ? इन्द्रियों का धर्म है ! सो जड हैं ! फिर क्या ? सीताराम ३ ! लोक में हमें कोई कुछ कही नहीं सकता ! क्या हमें अपनी बदनामी का डर न होगा ! आज कल तो भला मानुस वही कहाता है जो अपनी या दूसरों की बुराई आँखों देखा करै पर कान न हिलावे ! सीताराम ३ । और सर्कारी राज में कोई किसी का करही क्या सकता है ! बहुत होगा लोग कानाफूसी करैंगे ! सो इस्से क्या ? जब साक्षात् कृष्णचन्द्रही को चोरी लगी है तो हम

कौन है—अजी बड़ों की तो ऐब भी एक शोभा है। सीताराम २। (ठहर के) अरे बदनाम तो मूरख होते हैं जिन्हें अपना ऐब छिपाना नहीं आता ! अपने राम तो देखनेवाले की भी आँख में धूल डाल सकते है। आज तक किसी ने कुछ जाना ? सब प्रभु की दया। सी० २! (पदम को देख के) अहा ! इसकी सुन्दरता पर तो अपने राम मुद्दत से निछावर है। यह भी तो जानता है पर चतुर है ना। इसी से घात नहीं लगती। और सच पूछो तो यह जब मिला है चार जने के आगेही मिला है नहीं तो कितना चतुर है ! सी० २। (सोच के) हां हां इस समय ठाकुरजी के मन्दिर में कौन होगा ? घर मे तो ठाकुरद्वारा ठहरा सिवा व्योहारियों के जाही कौन सक्ता है ! हमीं पूजा के लिये खोलेंगे तब न। सीताराम २। (प्रगट) पदम बेटा। कई दिन से झांकी करने नहीं आये ! कल भगवान् घोड़े पर चढ़े थे दर्शन तो कर आते। कैसी सुन्दर छवि है। तुम्हारा प्रसाद भी रक्खा है। सीताराम सीताराम सीताराम सीताराम।

पद०—पढ़ने को देर होगी भगतजी चलता तो ! अच्छा फिर आऊंगा।

भुशुं०—जरा देर से चले जाना ! इस समय चलते तो खुश होते। एक बाबाजी आवेंगे उनको जलतरंग भी सुनने

हो लायक है सीताराम २ । (स्वगत) इस पनोखे नाम से ज़रूर हो चलेगा क्योंकि तमाशों का सौखीन है, फिर तो काम हुआ धरा है 'भइ सहाय सारद मैं जाना' सीताराम सीताराम सीताराम ।

पद०—क्या यह कोई नया बाजा है ? भगतजी ! तो तो ज़रूर सुनेंगे (स्वगत) इस वक्त बचा को पूजा से फ़ुरसत कहा जो देर तक बिठा सकें । दूसरे बाबाजी आवेंगे !

भुशुं०—हां बेटा गले की नसों से बजाया जाता है इसी से कहते है चलो ।

पद० — अच्छा । चलो । (दोनों चलते हैं कैंचा आता है)

कैंचा०—(मन में) आह ! क्या हुआ ? किधर गया ? वा-हारे भगतजी । तुम तो हमारे भी गुरू घंटाल निकले । और कोई होता तो कसम महावीर सामी की खोपड़ा रँग देते पर नहीं तुम्हारी बदौलत और बहुत से पंछी हाथ आते है ! तो चलें फिर देखा जायगा ।

(एक ओर से कैंचा दूसरी ओर से भुशुं० के साथ पदम जाता है)

जवनिका गिरती है ।

चतुर्थ दृश्य ।

शिवनाथ का घर ।

(शिवनाथ प्रेमचन्द्र और गप्पूमल बैठे हैं)

शिवनाथ—क्यों भई। हम न कहते थे । भला इन्ही लक्षणों से देशोन्नति करेंगे । आठ दिन में केवल दो घण्टे तिसमें यह दशा है। और क्या आशा की जाय ।

प्रेमचन्द्र—हां अभी तक तो किसी के दर्शन तक नहीं हुये! एक लाला गप्पूमलही है जो अपना वचन निवाहे जाते हैं (मन में) हम ऐसे भोले भाइयों से भी बहुत कुछ आशा कर सकते है जो बहुत तीव्रबुद्धि न होने पर भी साधुमना और हितकारी नियमों पर यथाशक्ति चलनेवाले होते हैं।

गप्पूमल—हें हें पण्डितजी । भला हम भी किसी काम के है। न कुछ बोल सकैं न कुछ कर धर सकैं ।

शिवनाथ—महाशय। केवल बकवादियों की अपेक्षा फिर भी आप प्रशंसनीय हैं जो समय पर आ तो जाते हैं उपदेशों पर ध्यान तो देते हैं। औरों से क्या आशा की जाय । गत सभा में देखा ! बाबू नारायणदत्त ने कैसा उत्तम व्याख्यान दिया था कि किसी मत का क्यों न हो अवश्य भक्त हो जाय ! भला इस ऐक्यवर्धिनीसभा में ऐसे सत्यानाशी लेक्चरों का क्या काम—यह तो मत

सम्बन्धिनी सभाओं की शोभा समझी जाती है। पर करें क्या बिचारे ने साथ तो बाल्यावस्था से ऐसोंही का किया है न! जिनका पूर्ण सन्तोष केवल इसमें है कि हमारी बात सब से न्यारी हो, कोई उत्तर न दे सके हां। तिसपर शोभा यह कि जब प्रेमचन्द्र भाई ने वारान्तर के लिये ऐसी बातें करने का निषेध किया तो स्थान से बाहर हो गये। मैं जानता हूं बाबू रूपकिशोर को भी उन्हीं ने बहकाया—आगे कासा उत्साह उनमें भी नहीं देख पड़ता।

शम्भू०—वे तो तभी से नाराज हैं जब से प्रेमचन्द्र महोदय को सभापति की पदवी मिली—ऊपरसे नारायणबक्स जी ने भी कुछ कहो हो तो क्या अचरज है।

शिव०—हां? आरम्भ से उनको भीतरी मनशा यही थी कि सभापति मैं बनूं पर जो केवल अपने नाम मात्र के मरभुक्खे हों जिनके मन वचन और कर्म सहजही सर्वप्रिय न हों वे लोग क्या निरे अमीरही होने से सब योग्यता के पात्र हो जायँगे? सभापतित्व के लिये सर्वथा योग्य हमारे मित्र के बिना है कौन!

प्रेम०—मैं बड़े आनन्द से अपना अधिकार उन्हें दे दूंगा और सभा की सेवा के लिये सर्वभाव से प्रस्तुत हूं। यदि वे केवल इसीलिये रुष्ट हैं तो मनाना चाहिये!

शिव०—नहीं जी! जभी उनको हां में हां न मिलाई जायगी तभी वे भौं चढ़ावेंगे ऐसों से सभा को लाभ हो क्या हो सक्ता है। मुख्योद्देश्य तो अपना यह ठहरा कि आपस में एका बढ़े और प्रत्येक हिन्दू भाई को विपत्ति-कार्य्य में सहायता दो जाय, उस्का ऐसों से आसरा ही अमूलक है फिर ऐसो खुगीर की भरती से क्या प्रयोजन! वे लाख रुष्ट हो। हमने कोई अपराध नहीं किया जो पांव पड़ने जाँय।

प्रेम०—भाई अपराध न सही पर पांव पड़ने में कोई हानि है? हम स्वदेशी भाइयों का तो दासत्व करने में अपना सौभाग्य समझते हैं—उन्हें बिगाड़ना हमारी सम्मति नहीं है—सभा के मित्र रहैंगे तो कभी न कभी कुछ न कुछ देश का हितही करेंगे!

शिव०—यह आपका सौजन्य है पर निश्चय रखिये क्षुद्र-मनस्क लोग नम्रता दिखलाने से और भी अहङ्कारवश हो के उर्द के आटे को भांति ऐंठते हैं। मित्रवर! अभी भारत की अधिक दुर्दशा होनी है अभी आपके विचार किसे भावेंगे।

प्रेम०—भाई कुछ हो, हमें तो सब की सब कुछ सहना पर बके जाना, चिताये जाना, और दूसरों को भी ऐसे ही उपदेश करना कि कायर कपूत कहाय दांत दिखाय भारत तम हरी' आगे इच्छा परमेश्वर की!

गप्पू०—पण्डितजी ! बाजे बाजे लोग तो कहते हैं कि ईश्वर की इच्छा मानना निकम्मों का काम है उद्योगही से सब कुछ है।

शिव०—भाई उद्योग तो मनुष्य का परम कर्तव्य है पर सच्चे आस्तिक को तो यावत् विषय ईश्वरेच्छाही से जानना चाहिएँ, केवल उद्योग से यदि कार्य्यसिद्धि भी हुई तो अहङ्कार हो जाता है, न हुई तो संताप नहीं मिटता और प्यारे की इच्छा पर चलने वाले शोक के स्थान पर भी शांतिलाभ करते हैं। इसके अतिरिक्त जब बड़े बड़े उद्योगी भी कभी कभी कृतकार्य्य नहीं होते तो ईश्वरेच्छा सर्वोपरि क्यों न मानें ! निरी हार जीत के लती चाहें जो बकैं पर वास्तव में यही सत्य है कि उसकी इच्छा और आज्ञा बिना पत्ता भी नहीं हिल सकता !

(रसिक बिहारी का प्रवेश)

र०—यह लीजिए। अभी तक कोई साहब आएही नहीं।

शिव०—हां कुछ काल और भी मार्गप्रतीक्षा करना चाहिए—हम तीन जने तो नियत समय के भी आध घंटा पहिले से बैठे हैं ! आपने भी तो बड़ी देर की ?

रसिक०—जी हां कचहरी चला गया इससे देर हो गई।

प्रे०—क्यों भाई कुशल तो है ! (स्वगत) परमेश्वर करैहरी

से सब की रच्चा करै, स्वदेशियों का धन और माल विशेषत: वहीं स्वाहा होता है, कचहरी शब्द का अर्थही है केश हरनेवाली अर्थात् मूड लेनेवाली।

रसिक—मुझ पर तो आपकी दया है। ला० किशोरीदास का मुकद्दमा देखने चला गया था।

शिव०—हां हां क्या हुआ ?

रसिक—होने को क्या था। सारा माल असबाब कुर्कही हो गया था, कैद बाकी थी उसका भी तीन बरस के लिए हुकुम हो गया—हाकिम को जब यकीन हो गया कि यह बेईमान है तो कैसे बच सक्ते है! आप जानते है खर्च हजारों का, आमद सैकड़ो की भी नहीं ले के देने की नीयत नहीं! रण्डी शराब बिना चैन नहीं उसका नतीजा और क्या होता।

गप्पू०—राम राम! वे तो बड़े सज्जन थे यह किस का हाल कहते हो।

रसिक—उन्हीं का जिन पर अभी पन्द्रह दिन भी नहीं हुए सुखवासी लाल के यहा वे भाव की पड़ चुकी है एक दिन नशे में अपनी पोहतानी ही का धर्म लिया चाहते थे वह तो कहिए ईश्वर उसका सहायक था नहीं तो जो न होता सो थोड़ा था।

गप्पू०—है हैं लाला ***

रसिक—हां हां बार बार नाम न लीजिए बीसियों रांड बेवाओं का रुपया हजम कर डाला। ७००) रु० होटल वालों का था उसको भी घोंटे ही जाते थे।

शिव०—तो क्या ७००) पर यह हाल! घर में हजारों का ज़ेवर था सो!

रसिक—सात सै तो सिर्फ एक का था सब मिलाके २५००) का देना था! और गहने का हाल आप नहीं जानते उनकी बीबी थोड़ी सुलचणा थी! कुछ हुलसिया कुटनी और चंपिया दोनो कोई उनकी सखी थी उसे खिलाया! कुछ पुजारी जी और महिरा जी वगैरः उनके दोस्तों ने उड़ाया (मन में) कुछ अपने राम के भी हाथ आया (प्रगट) साल भर से भाई के यहां पड़ी हैं सो वहा भी चरित्र खुल गए हैं इस से बड़ा आदर होता है!—कुछ रुपया आप का भी तो है!

शि०—अजी हमारा क्या है कोई १६) के लगभग होंगे चार बरस हुए पत्र का मूल्य नहीं दिया—उसका हमें भीखना क्या—ऐसों पर तो उलटे दया आती है वो विचारे हितकारी कामों में व्यय करना जानतेही नहीं।

रसिक—जानते क्यों नहीं—यों कहिए हराम की कौड़ी हराम में न उठे तो जाय कहा। वंटाटार कैसे करें।

शि०—खैर जी। कैसे ही हों इस समय वह दुःखित हैं

अतः दयापात्र ही हैं स्वदेशी ठहरे। भला उनके लड़के को क्या दशा है?

र०—लड़का तो ऐसों के होता ही कहां है, गोद लिया था उसने भी मुफ़्त का माल पाया जैसा चाहा वैसा उड़ाया तीन बरस हुए घर से लड़ के न जाने कहा कहां बूड़ा। हाल में उड़ती सी खबर सुनी है कि सिन्ध में किसी के यहां सईसी करता था सो उसने भी निकाल दिया है तब से किसी तवायफ़ के पास नौकर है।

शि०—हाय हाय! क्या देश का अभाग्य है। क्या दुर्व्यसन का फल है। महा खेद तो यह है कि लोग दूसरों की दशा देखते हैं। आप भी नाना दुःख उठाते हैं। तो भी नहीं समझते। हां इस पर तुर्रा यह कि उपदेशकों को अपना शत्रु ही समझते हैं!

प्रे०—सच है भाई। बरञ्च बाजे बाजे तो उपदेशक भी केवल पराए छिद्र ही ढूंढ़ने में, केवल अपना हठ ही निबाहने में और केवल विषय सुखानुभव ही में इतिकर्तव्यता समझते हैं!

शि०—हां! भुशुण्डीदासही को न देखिए कैसा सुन्दर भेष, कैसी सुन्दर बोली बानी, कैसे सुन्दर उपदेश—पर आचरण! हाय हाय। ऐसे धूर्तों से तो वे भले जो खुल्लम खुल्ला जो चाहते हैं करते हैं, इन की भांति धर्म के

धिकार का टट्टी तो नहीं बनाते। न जाने परमेश्वर का इतना कोप विचारे भारत पर क्यों है जो ऐसे ही ऐसे नराधमों की संख्या अधिक होती है सच्चे हितेच्छुक तो टुटे टुटे मिलते हैं सो भी सर्वथा असहाय ! (शोक नाट्य के उपरान्त) यद्यपि देशभाइयों का दुःख देख के दया आती है पर ऐसे लोग जिन से सर्वसाधारण का अनिष्ट संभावित है (झिड़क के) अवश्य दण्डनीय हैं।

रसिक—यहां तो आज कल की रवाज के अनुसार कुछ हो नहीं सकता, सच तो सब को विष लगता है। बराबर देख लो पर प्रसिद्ध भेषधारियों को कुछ कहा मत करो ! नहीं तो नास्तिक कहाओगे। क्या हवा बिगड़ी है कि कुछ कहते सुनते नहीं बनता !

गप्पू०—क्यों साहब ! संसार में कोई छल बल करके पापों के दण्ड से बच जाय तो उसे परलोक ही में जो कुछ होना चाहिए सो होता होगा ? हमारी जान में तो ऐसों को जरूर ही नरकयातना होती होगी।

प्रेम०—अजी परलोक की तो परमेश्वर जानें क्या होता है पर यहां उनका चित्त ही उनके लिए नरक से अधिक है। रोग, शोक, चिन्ता, लज्जा, भय, कुवासना इत्यादि थोडे दुःख हैं ? यह कहो कि जो लोग ऐसी बातों के अभ्यासी हो जाते हैं वे अपने स्वभाव का दासत्व छोड़

नहीं सकते। हे प्रेमस्वरूप अब तो हमारे आर्य्य संतान को सुमति दान करो। कुछ तो यह सच्चे सुख दुःख को पहिचानें।

रसिक (शिव से घड़ी देख के) अब तो हम जानते हैं कोई न आवैगा—सभा बरख़ास्त होने का समय भी तो बीत गया।

गण्य०—हां पण्डित जी। अब तो हुकुम दीजिये! जाऊं।

शिव०—हां मित्र। अति काल तो बहुत हुआ रोक नहीं सकता गृहकार्य्य में हानि न हो पर (नम्रता से) आप अवश्य आ जाया कीजिये दूसरों को देखा देखी सदाचरण से विमुख होना ठीक नहो!

ग०—नहीं साहब आपलोगों की बातें सुनने से मन को सन्तोष होता है मैं कभी आने में कुताही न करूंगा जबतक सभा है मैं तन मन धन से उस्का सेवक हूं।

प्रेम०—मित्र मेरे। हमारीही तुम्हारी न सभा है हम और आप परस्पर स्नेह भाव रक्खैंगे तो एक बार नही सौ बार उद्योग करेंगे और उस्का फल लाभ करेंगे कोई कुछ कहे पर हमें आप अपना किङ्कर समझिये इसी में सब कुछ है।

ग०—अहा धन्य सत्संग (प्रणाम करके प्रस्थान)

रसिक०—आप अपने पत्रमे किशोरी का हाल लिखेंगे न?

(स्वगत) हम तो जिस दिन से तकरार हुई है उसी दिन से उसके जानी दुश्मन हैं। इसलिये इन लोगों को सुहबत में आते हैं कि जरूर यह उसको धूल उड़ावेंगे क्योंकि इनसे किसी की सच्ची बुराई का हज़म होना मुश्किल है।

शिव०—भाई दूसरों को यह हाल सुनके शिक्षा हो इसलिए हमारा धर्म है कि लिखें—पर हमें दुःखग्रस्त देशियों पर हँसना अच्छा नहीं लगता, कुछ हो अपनेही है।

रसिक—नहीं लिखना तो ज़रूर चाहिए। (मन में) तुम न लिखोगे तो किसी को कुछ दे के लिखावेंगे। हमें तो इसको धूल उड़ाना है। (प्रगट) तो हम भी जाते हैं।

शिव०—जाने कहूं। पर कमर बांधे रहिए। इसी में हमारा तुम्हारा देश का कल्याण है।

रसिक—(प्रणाम करके चलता हुआ स्वयं) हमारे मन की सी न करोगे तो आनेवाले पर थू। (गया)

शिव०—हमें कुछ इनके चरित्रों पर भी शंका है किसी क्लिष्टित का वृत्तान्त प्रसन्नता से कहना और उसकी निन्दा पर अधिक जोर देना सत्पुरुष का काम नहीं है।

प०—हां निन्दा और खुशामद तो सभी को बुरी है पर भाई अपने लोगों का मुख्य कर्तव्य यह है कि देशभ्राताओं को दुराचार से घृणा न करके उन्हें छुड़ाने का उ-

योग करें ! पर क्या करूं मैं न ऐसा धनी हूं न बली जो किसी की पूर्ण रूप से सहायता कर सकूं मेरी सुनता ही कौन है केवल आपही से मेरा वश है जो अनुरोध-पूर्वक चाहता हूं कि मेरे बिचारों में सब प्रकार साथ दीजिए। लोगों को उनके सच्चे सुख का मार्ग दिखाने और दुष्कर्म एवं तज्जनित क्लेश का ठीक ठीक अनुभव कराने का प्रयत्न करते रहिये जिसमें किसी भाई को ऐसी दुर्दशा सुनने का अवसर न आवे। यदि कुछ और लोग भी दृढ़ता के साथ एकचित्त हो के कटिबद्ध हो जांयगे, किसी दशा में अपने अनुष्ठान से विरक्त न होके धर्म धर्म। प्रेम प्रेम ! की धूम मचाए रहैंगे तो कहां तक भारतवासी राह पर न आवैंगे।

शिव०—प्यारे ! मैं तो तुम्हाराही हूं तुम्हारे बिचार तो मेरे लिये वेदवाक्य ठहरे, तुम्हारी किस बात से बाहर हो सकता हूं ? यहां भी तो तुम्हारी भांति सदा यही प्रार्थना रहती है कि—

तजि दुखप्रद दुर्व्यसन पुरुष बनिता अरु बालक ।
मन क्रम बच सों होहिं सुखद आज्ञा प्रतिपालक ॥
निज गौरव पहिचान सजग रवि कपटी जन सौं ।
यारहि सबै सब काल देश हित तन मन धन सौं ॥
भारत में चहुंदिशि प्रेममय धवल धुजा फहरत रहै ।
बाणी प्रताप हरि मिश्र की सुहृद हृदय आदर लहै ।१।

प्रेम०---एवमस्तु ! एवमस्तु । परमेश्वर आप के ऐसे उत्तम मनोर्थ पूर्ण करें ! ! । (दोनों का जाना और पटाक्षेप)

ओरस्तु ।